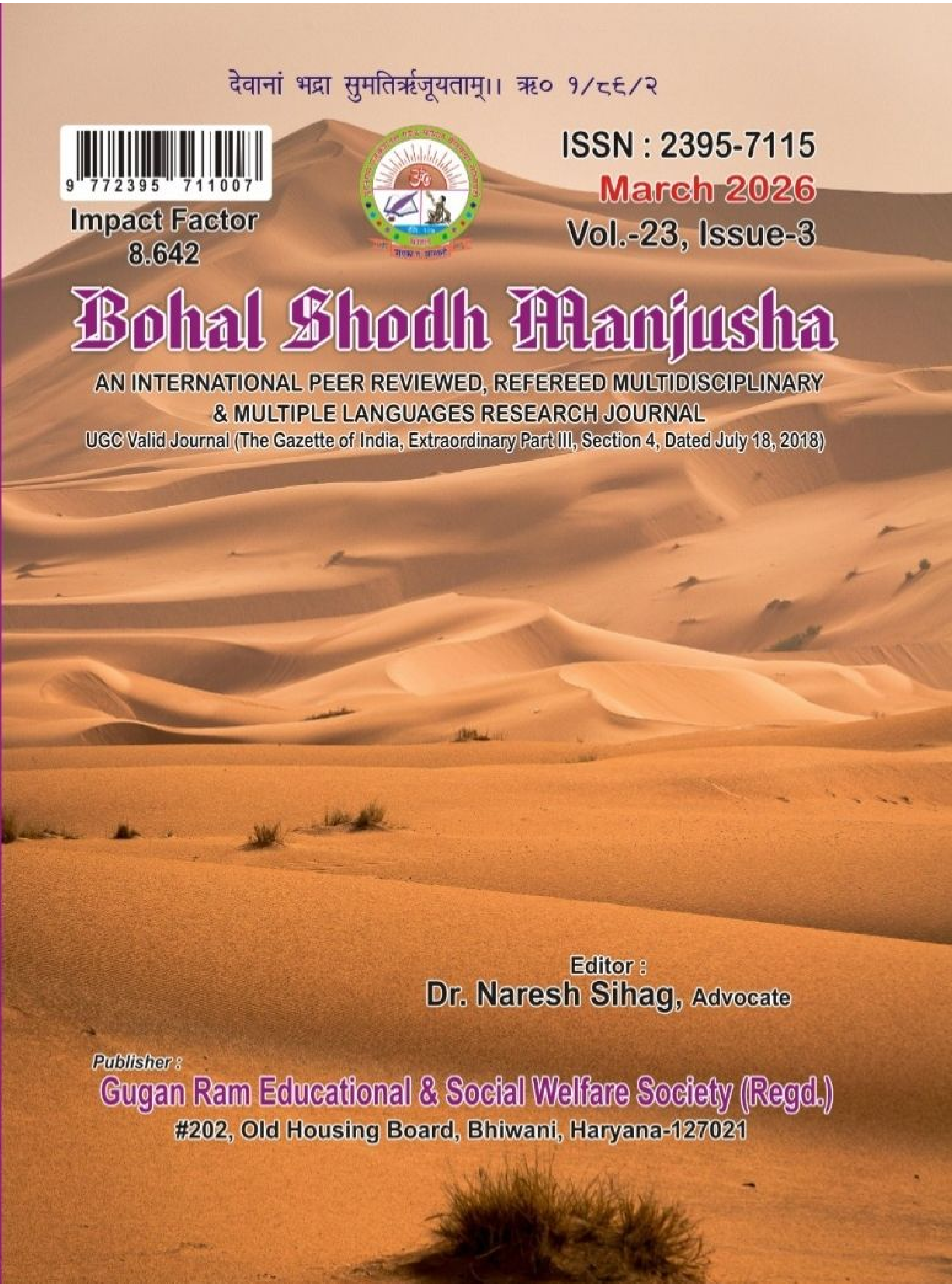

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
March 2026
Vol.-23, Issue-3
Impact Factor 8.642

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
#202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

Bohal Shodh Manjusha March 2026 Editor : Dr. Naresh Sihag, Advocate

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 23 I SSUE-3(part-one) (मार्च 2026) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व शिक्षा अधिकारी,
साहित्यकार,
चरखी दादरी (हरियाणा)

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि.
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी
हिन्दी विभाग, त्रिभुवन वि.वि.
काठमाण्डू, नेपाल।

डिल्लीराम शर्मा संग्रौला
विभागीय प्रमुख, संस्कृत, पत्रकारिता, हिंदी
पद्मकन्या बहुमुखी कैंपस, काठमांडू, नेपाल।

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. इस्पाक अली
पूर्व प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब।

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. शबाना हबीब
गवर्नमेंट कॉलेज फॉर वूमैन
त्रिवन्तपुरम, केरल।

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत विभाग
हरियाणा सरकार।

प्रो. नरेन्द्र सोनी
सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,
हरियाणा सरकार।

पठान चिन्ना जानी
सहायक प्राध्यापक
सी.एच.एस.डी. सेंट थेरेसा
महिला महाविद्यालय (ए)
एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
श्रीराम कॉलेज,
नई दिल्ली।

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार व अनुवादक,
यूक्रेन।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. शिवकरण निमल
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान
एसपीसी राजकीय महा. भीम, राजस्थान।

डॉ. नीलम आर्या
संस्कृत विभाग
उत्तर प्रदेश।

डॉ. रोहतास
एस.जी.पी.जी.आई.एम.एस.
लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

डॉ. वैशाली सिंह
सहायक प्राध्यापक
शिक्षा विभाग, एस.एम.टी. अनार देवी
टी.टी. कॉलेज, बखराना
(कोटपुतली) राजस्थान।

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
भारत कला भवन
वाराणसी, उत्तर प्रदेश।

डॉ. रवि सुण्डयाल
हॉयर एजुकेशन डिपार्टमेंट
जम्मू कश्मीर।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. रेखा रानी
गवर्नमेंट रणबीर कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :- उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	**पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)**
खाता धारक का नाम	:	**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी**
बैंक खाता संख्या	:	**1182000109078119**
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमणिका - मार्च 2026

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहाग	10-10
2.	"भारतीय ज्ञान परंपरा में प्राचीन ज्ञान का आधुनिकीकरण"	डॉ० राजू देसाई	11-16
3.	"वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में मीना अग्रवाल के साहित्य का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन"	सुमन देवी, प्रो० पूरन चंद टंडन	17-19
4.	"नवीन शिक्षा नीति और सामाजिक न्याय : शिक्षा में समान अवसर और समावेशन की संभावनाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन"	डॉ. राजेश कुमार शुक्ला	20-23
5.	"खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार का अध्ययन"	डॉ. राजनिधि सिंह	24-27
6.	आदर्शवाद - एक सुधारवादी दृष्टिकोण	पूजा	28-30
7.	भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में लोकचेतना का स्वरूप	प्रतिभा दुबे, डॉ० ओमप्रकाश द्विवेदी	31-33
8.	Social Media Language and Its Impact on Modern English Communication	Divya	34-39
9.	Khurali–Martial Art in the light of Sahendravilasa	Dr. S.Madhurambika	40-42
10.	"सहरिया जनजाति का प्रकृति प्रेम"	डॉ० करन सिंह	43-47
11.	भारतीय ज्ञान परंपरा में हिन्दी साहित्य की भूमिका	डॉ. ज्योति पटेल	48-50
12.	पूर्वी सिंहभूम जिले के सबर आदिम जनजाति - एक मानवशास्त्रीय अध्ययन	राजेश समीर कच्छप	51-56
13.	The Role and Relevance of Clinical Sociology in Contemporary Society	Karunarathne Rasika R A, Praveena D	57-60
14.	બાબાસાહેબ આંબેડકરના વિચારોની આજના સમયમાં પ્રસંગિકતા.	ડૉ. મનીષ પટેલ	61-63
15.	समकालीन हिन्दी उपन्यासों में युगबोध	डॉ. शैलेषकुमार भरतसिंह झाला	64-67

16.	वणजारे: गुरु पंथ खालसा के अमर प्रहरी (इतिहास, शहादत और परंपरा)	डॉ. रणजीत सिंह 'अर्श'	68-78
17.	महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना	डॉ.मंजू	79-81
18.	आत्मनिर्भर भारत : अवसर, चुनौतियाँ एवं नीतिगत पहल	परम सिंह बरडे	82-84
19.	'आप न बदलेंगे' एकांकी में मध्यवर्गीय गृहणी के पारिवारिक संघर्ष और तनाव	डॉ. जिनु जॉन	85-87
20.	कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह और समन्वयवादी दृष्टि	Dr. Anupama	88-93
21.	ਮਾਨਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਤਿੜਕਣ ਦਾ ਸਿਰਜਕ -ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ	ਸੋਨਾ ਸਿੰਘ	94-98
22.	नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री :सत्ता , स्वायत्तता और संघर्ष	डॉ.स्वालियाबेगम आर. कोप्पल	99-102
23.	श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर के प्रमुख दर्शनीय स्थल	गणेश नारायण शर्मा, डॉ. अदिति शर्मा	103-109
24.	भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन की महत्त्व	RADHARANI RAJAK, DR. AJAY KUMAR	110-112
25.	पाणिनी व्याकरण में ध्वनि विज्ञान	डॉ० नकुल पाण्डेय	113-116
26.	आर्थिक विकास एवं सतत विकास	डॉ. राजकुमारी परिहार	117-122
27.	Interwoven Destinies: Caste, Gender, and Hope in Masaan	Parul Bordoloi	123-126
28.	मणिपुर में अन्याय के विरुद्ध खड़ी 'मइरापाइबी' (विशेष संदर्भ : हिन्दी-अनूदित मणिपुरी कहानियाँ)	ज्योतिका बशिष्ठ	127-130
29.	Modernity, "Ethnic Consolidation" and "Cultural reproduction": The Role of Bhumkas in strengthening Gond Tribal Community Identity in Contemporary Society.	Amisha Mishra	131-134
30.	विवेकी राय के उपन्यासों में लोक संस्कृति का स्वरूप और सामाजिक संदर्भ	स्वप्नाली आत्माराम सोनवणे, प्रो.डॉ. संघ प्रकाश मारुती दुड्डे	135-137
31.	कृत्रिम बुद्धिमत्ता के दौर में मौलिक अधिकारों का बढ़ता उत्कर्ष	पवन कुमार,	138-142

	व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच उभरता संघर्ष	प्रो. (डॉ.) रमेश चन्द्र राय	
32.	वैश्वीकरण के दौर में गाँधीवाद की प्रासंगिकता	डॉ. मो० हेदायतुल्लाह	143-147
33.	वैदिक संस्कृति में वनस्पति विज्ञान	डा. मीनू तलवाड़	148-150
34.	ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना दृष्टि : अस्मिता की खोज तथा प्रतिरोध की अभिव्यक्ति	प्रिंस गुप्ता	151-156
35.	झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की स्थिति: एक अध्ययन	डॉ. अमित कुमार	157-161
36.	एआई के दौर में एक इतिहासकार की सामाजिक भूमिका	Jatin	162-165
37.	सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के संचालन में ई-गवर्नेंस की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ० विजयलक्ष्मी देवांगन	166-170
38.	नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री का परिवर्तित स्वरूप	नेहा	171-175
39.	आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना	राहुल कुमार	176-180
40.	"आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पूर्व हिंदी आलोचना में कबीर"	डॉ. प्रशांत सिंह	181-186
41.	చిగురు నవలిక – సమీక్ష	డా. పి. శర్వాణి	187-189
42.	आधुनिक समाज और तीसरे जेंडर के जीवन की त्रासदी	डॉ० प्रियंका सिंह	190-195
43.	विकसित होता समाज और नारी अस्मिता के प्रश्न	डॉ० दीपमाला	196-199
44.	समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता-प्रतिरोध: एक अध्ययन	Dr.Jisha M N	200-202
45.	ਸੰਤੋਖ ਧੀਰ ਰਚਿਤ ਕਹਾਣੀ 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ': ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਦੰਰਭ ਅਤੇ ਸਮਕਾਲ	ਸਵਿਤਾ ਰਾਣੀ	203-207
46.	दोहरा अभिशाप में दलित जीवन की त्रासदी	डॉ.अनीश के.एन.	208-212
47.	पुराण साहित्य में अवसाद निवारण के उपाय	डॉ० कुमुद कुमार पाण्डेय	213-216
48.	ચતુર્વિધ યોગ અને તેનું ફળ	કંચનબહેન કાંતિભાઇ બારીઆ	217-222
49.	अमृतलाल वेगड़ के यात्रा-वृत्तांतों में 'प्रकृति चित्रण' के परिप्रेक्ष्य में	बबिता	223-225
50.	**Between Tradition and Exploitation: Historical Origins, Colonial Impact, and Socio-Cultural Practices of the Bedia Community in Central India**	Abhya Singh	226-231

संपादकीय

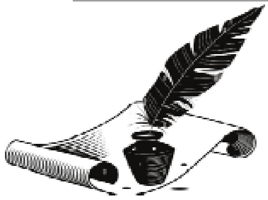

प्रिय विद्वत्जन, शोधार्थियों एवं पाठकगण,

हर्ष के साथ प्रस्तुत है **बोहल शोध मंजूषा** का मार्च 2026 अंक। ज्ञान-विमर्श की सतत यात्रा में यह अंक एक और महत्त्वपूर्ण पड़ाव है। शोध की परंपरा तभी सार्थक होती है जब वह केवल शाब्दिक विस्तार न होकर समाज, समय और संवेदना से गहरे रूप में जुड़ी हो। इसी दृष्टि से **बोहल शोध मंजूषा** अपने प्रत्येक अंक में समकालीन विषयों को गंभीरता और शास्त्रीय अनुशासन के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास करता रहा है।

शोध की गुणवत्ता बनाए रखना किसी भी पत्रिका की सबसे बड़ी जिम्मेदारी होती है। इसी उद्देश्य से प्राप्त शोधपत्रों को विशेषज्ञ निर्णायक मंडल के पास समीक्षार्थ भेजा गया। समीक्षकों के सुझावों के आधार पर आवश्यक संशोधन करवाए गए, ताकि शोधपत्र अकादमिक मानकों पर खरे उतरें। हमारा विश्वास है कि समालोचनात्मक दृष्टि और प्रमाणिक संदर्भों के साथ प्रस्तुत लेख पाठकों को नवीन चिंतन की दिशा देंगे।

मार्च 2026 अंक में कुछ ऐसे शोधपत्र भी सम्मिलित हैं जो परंपरा और आधुनिकता के अंतर्संबंध को नई दृष्टि से देखने का प्रयास करते हैं। भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की पुनर्व्याख्या, लोक और शास्त्र के संवाद, तथा आधुनिक समाज में नैतिकता के प्रश्नों पर गहन विमर्श किया गया है। इन आलेखों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि शोध केवल अतीत का विश्लेषण नहीं, बल्कि वर्तमान का मूल्यांकन और भविष्य की दिशा-निर्देशन भी है।

हमें यह भी अनुभव हो रहा है कि डिजिटल युग में शोध लेखन की चुनौतियाँ और अवसर दोनों बढ़े हैं। एक ओर संदर्भ-सामग्री सहज उपलब्ध है, तो दूसरी ओर मौलिकता बनाए रखना और स्रोतों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में हम सभी शोधार्थियों से अपेक्षा करते हैं कि वे शोध नैतिकता (Research Ethics) का पूर्ण पालन करें, संदर्भों का यथोचित उल्लेख करें तथा अकादमिक ईमानदारी को सर्वोच्च प्राथमिकता दें।

हम यह मानते हैं कि किसी भी शोध पत्रिका की प्रासंगिकता उसके पाठकों और लेखकों के सक्रिय सहयोग पर निर्भर करती है। **बोहल शोध मंजूषा** निरंतर आपके सुझावों, आलोचनाओं और रचनात्मक सहयोग की अपेक्षा करता है। आपके सुझाव ही हमारी आगे की दिशा तय करते हैं और पत्रिका को और अधिक उपयोगी बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

अंत में, मैं संपादकीय मंडल, समीक्षकगण, तकनीकी सहयोगियों तथा उन सभी विद्वानों का हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो सका। विशेष धन्यवाद उन शोधार्थियों को, जिन्होंने समयबद्ध रूप से संशोधन कार्य पूर्ण कर पत्रिका की गरिमा बनाए रखने में योगदान दिया।

आशा है कि **बोहल शोध मंजूषा** का यह मार्च 2026 अंक शोध-जगत में सार्थक संवाद स्थापित करेगा और ज्ञान-विस्तार की दिशा में एक प्रेरक कदम सिद्ध होगा।

आप सभी के सतत सहयोग एवं विश्वास के लिए पुनः धन्यवाद।

– **संपादक**

बोहल शोध मंजूषा

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 11-16
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

“भारतीय ज्ञान परंपरा में प्राचीन ज्ञान का आधुनिकीकरण”

डॉ० राजू देसाई
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),
पीएम श्री उत्कृष्ट शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय खरगोन मध्य प्रदेश

सारांश:

भारतीय ज्ञान परंपरा का देश की सांस्कृतिक संरक्षण एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय ज्ञान परंपरा में वेद, उपनिषद, स्मृति, दर्शन शाख, धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र, शिक्षा शाख आदि का विशाल ज्ञान तत्त्व समाहित है। हमारी ज्ञान परंपरा भारतीय जनसंख्या को, मानव पूंजी के रूप में परिवर्तित करने में सहायक रही है, जिससे देश के संपूर्ण विकास में महत्वपूर्ण योगदान मिलता रहा है। इसके विपरीत, आधुनिक प्रौद्योगिकी, कंप्यूटिंग और नेटवर्किंग के माध्यम से इसके उपयोगकर्ताओं को उन्नत उपकरण और ज्ञान प्रदान करता रहा है, जिससे आज हमारे कार्य में दक्षता और सटीकता में बढ़ोतरी हो रही है। इस क्रम में यह हमारी प्रौद्योगिकी शिक्षा को और अधिक रोचक और प्रभावी बना रहा है, जिससे शिक्षकों और छात्रों, दोनों को लाभ हो रहा है। तकनीक की मदद से आज हमारे शिक्षक, व्यक्तिगत पाठ योजनाएँ बना रहे हैं और छात्र, ऑनलाइन संसाधनों का उपयोग करके, अपनी शैक्षणिक गति से आत्मनिर्भर हो रहे हैं। जब भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिक प्रौद्योगिकी का संयोजन होता है, तो यह शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति को और अधिक आसान और प्रभावी बना देता है। प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षा कार्य को अधिक सुलभ, आकर्षक और गतिशील बनाया जा सकता है, जिससे जहाँ एक तरफ समाज में सकारात्मक परिवर्तन और दूसरी तरफ शिक्षा प्रक्रिया को आधुनिक एवं सुव्यवस्थित किया जा सकता है।

बीज शब्द : संस्कृति, ज्ञान परंपरा, प्रौद्योगिकी, तकनीक, शिक्षण विधियाँ

प्रस्तावना:

हमारा देश भारत सांस्कृतिक रूप से धनी देशों की श्रेणी में आता है। हमारे देश की सांस्कृतिक विकास के पथ-निर्माण का कार्य, हमारी ज्ञान परंपरा करती है, जिसकी सहायता से देश की संस्कृति को संरक्षित, सुरक्षित और विकसित किया जाता है। भारतीय ज्ञान परंपरा के अंतर्गत वेद, वेदांत, उपनिषद, स्मृति से लेकर विभिन्न प्रकार के दर्शन शास्त्र, धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र, शिक्षा शाख, नाट्य शास्त्र आदि के ज्ञान का अथाह ज्ञान भंडार हैं। हमारी ज्ञान परंपरा हमारे देश की जनसंख्या को उत्पादक जनसंख्या के रूप में परिवर्तित करती है, अर्थात् ज्ञान की सहायता से देश के जनसमूह को मानव पूंजी के रूप में परिवर्तित करती है। ज्ञान की प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति अपनी अंतर्निहित शक्तियों का आभास कर देश के

विकास की प्रक्रिया में योगदान देता है। अतः हम कह सकते हैं कि हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा समृद्धशाली परंपराओं में से एक है।

आधुनिक प्रौद्योगिकी से हमारा तात्पर्य कंप्यूटिंग और नेटवर्किंग के अभिसरण से है, जो उपयोगकर्ता को, उन्नत उपकरणों और इसके उपयोग के आवश्यक ज्ञान पर विकेंद्रीकृत नियंत्रण प्रदान कर, सशक्त बनाती है। प्रौद्योगिकी, हमारी शक्तियों के विस्तार में सहायक होती है और कार्य को सरल और रुचिकर बनाने का कार्य करती है। प्रौद्योगिकी की सहायता से व्यक्ति अपना सर्वांगीण विकास कर देश के विकास में योगदान देता है। शिक्षक हमारे समाज का वह पथप्रदर्शक है जो ज्ञान की परंपराओं को हमारी नवीन जनसंख्या या जनसमूह तक पहुंचाता है। इस प्रक्रिया में जब हमारे शिक्षक प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हैं, तो उनका शिक्षण रुचिकर और छात्र के लिए उपयोगी सिद्ध हो जाता है। इसके द्वारा छात्र अपनी शिक्षा के अंतरिम लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होता है। शिक्षा में प्रौद्योगिकी के एकीकरण से शिक्षकों को जीवन्त लाभ प्राप्त होता है। मशीनें, इंसानों से कहीं ज्यादा तेज होती हैं, इसलिए ऐसे काम, जिनके लिए बहुत ज्यादा मैन्युअल काम और बारीकी से ध्यान देने की जरूरत होती है, उन्हें तकनीक की मदद से आसानी से पूरा किया जा सकता है। तकनीक बेहतरी और सटीकता सुनिश्चित करती है। इसके अलावा, कुछ क्षेत्रों में तकनीक के इस्तेमाल से लागत पर गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त करने में मदद मिल सकती है। जब हमारी पारंपरिक शिक्षा के साथ प्रौद्योगिकी को जोड़ा जाता है, तो प्रौद्योगिकी के द्वारा शिक्षा के व्यावहारिक उद्देश्य या अनुप्रयोगों के लिए, वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग किया जाता हैं और शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती हैं। जब शिक्षा के उद्देश्यों को, प्रौद्योगिकी की सहायता से प्राप्त करते हैं, तब हम छात्रों के व्यवहार में निर्धारित परिवर्तन कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी की सहायता से शिक्षक व्यक्तिगत पाठ योजनाएँ बना सकते हैं, जो प्रत्येक छात्र की अनूठी सीखने की शैली, गति और जरूरतों को पूरा करती हैं। छात्र क्रमशः ऑनलाइन संसाधनों और उपकरणों के भरपूर प्रयोग से एक निश्चित गति से, समय पर, अपने पसंदीदा कार्य में सफल होता है। शिक्षा में प्रौद्योगिकी के एकीकरण से, शिक्षकों को जीवंत सहयोगात्मक शिक्षण स्थान बनाने की सुविधा मिलती है, जहाँ छात्र डिजिटल सामग्री के साथ बातचीत कर सकते हैं, चर्चाओं में शामिल हो सकते हैं, और उन गतिविधियों पर काम कर सकते हैं, जो उन्हें बेहतर ढंग से समझने में मदद करती हैं। स्वामी विवेकानंद के अनुसार, "हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।" नीति के अनुसार, "बुद्धि बलं तस्य" - (परिकृष्ट बुद्धि ही सच्चा बल है।)

भारतीय ज्ञान परंपरा

भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में, 'भारतीय' शब्द, भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक और सांस्कृतिक इकाई को संदर्भित करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा में ज्ञान प्रणालियों की एक समृद्ध और विविध श्रृंखला शामिल है। जिसमें दर्शन, विज्ञान, प्रौद्योगिकी और कला से संबंधित ज्ञान प्रणालियाँ शामिल हैं। परंपरा लोगों या समाज के एक समूह के भीतर प्रतीकात्मक अर्थ या अतीत में कोई विशेष महत्व रखने वाले विश्वासों या व्यवहारों को कहते हैं। परंपराएँ हजारों वर्षों तक बनी और विकसित हो सकती हैं। इसी कारण यह माना जाता है कि परंपराओं का एक प्राचीन इतिहास होता है। साधारण शब्दों में कहें तो परंपरा वह ज्ञान, तकनीकी जानकारी, कौशल एवं प्रथाएँ हैं जो एक समुदाय के भीतर पीढ़ी दर पीढ़ी विकसित, कायम और हस्तांतरित होती हैं, जो अक्सर इसके सांस्कृतिक या आध्यात्मिक पहचान का हिस्सा बन जाती हैं। भारतीय ज्ञान प्रणालियों में ज्ञान, विज्ञान और जीवन दर्शन शामिल है जो अनुभव, अवलोकन, प्रयोग और कठोर विश्लेषण से विकसित हुए हैं। मान्यता और व्यवहार में लाने की इस परंपरा ने हमारी शिक्षा, कला, प्रशासन, कानून, न्याय, स्वास्थ्य, विनिर्माण और वाणिज्य को प्रभावित किया है। भारतीय ज्ञान परंपरा एक ऐसी कच्ची सड़क के सामान

है जिस पर कई तरह के पत्थर मिलते हैं, पर साथ ही निर्धारित स्थान तक पहुंचने का मार्ग भी बनाती है। हमारे भारत की बात करें तो यहाँ की परंपरा में इतना ज्यादा अदृश्य ज्ञान है कि एक निरक्षर भी अपने आप में एक वैज्ञानिक की तरह प्रतीत होता है। हमें यह परंपराएँ अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई हैं और उन्हें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई हैं, इस प्रकार इसका आगे की ओर स्थानांतरण होता आया है। इसके साथ ही इसमें पुराने जमाने में कई परिवर्तन किए गए हैं, आज भी परिवर्तन हो रहा है जो समय के साथ लगातार होते रहेंगे।

शिक्षा ही एक मनुष्य को ज्ञानवान बनाती है, इस संबंध में कुछ ग्रंथों और विचारकों के मत निम्न हैं:

उपनिषद के अनुसार - "सा विद्या या विमुक्तये" (जो मुक्ति के योग्य बनाएं वह विद्या, बाकी सब अविद्या ।)

महाभारत के अनुसार - "नास्ति विद्या सैम चक्षु" (विद्या के समान कोई दूसरा नेत्र नहीं है।)

भारतीय ज्ञान परंपरा की विशेषताएँ :

- भारतीय ज्ञान परंपरा की सहायता से हम छात्रों में चरित्र निर्माण का कार्य करते है।
- हमारी परंपरा से भावी पीढ़ी का आत्मविश्वास सशक्त किया जाता है।
- यह परंपराएँ अनुभव, अवलोकन, प्रयोग और कठोर विश्लेषण से विकसित हुई हैं।
- हमारी ज्ञान परंपरा समाज में उन्नति का कारण है।
- यह परंपराएँ हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा हैं और कुछ पारंपरिक पद्धतियों से जुड़े ज्ञान से लोगों की आजीविका चलती है।
- यह परंपराएँ शास्त्रीय ग्रंथों, पांडुलिपियों और मौखिक संचार के रूप में उपलब्ध हैं।

उद्योग और आत्मनिर्भरता:

आधुनिक प्रौद्योगिकी में दो शब्दों का मिश्रण है, जिसमें आधुनिक से हमारा पर्याय नवीन या नया है और प्रौद्योगिकी व्यवहारिक उद्देश्यों या अनुप्रयोगों के लिए वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग है या वैज्ञानिक ज्ञान का व्यवहारिक जीवन में उपयोग है। ऐसा नहीं है कि सिर्फ बड़ी-बड़ी चीजें ही भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगी। भारत में बने कपड़े, हैंडीक्राफ्ट, भारत के इलेक्ट्रिक उपकरण, भारत के मोबाइल, हर एक क्षेत्र में, हमें इस गौरव को बढ़ाना है। आत्मनिर्भरता की पहली शर्त होती है-अपने देश की चीजों पर गर्व होना, अपने देश के लोगों द्वारा बनाई गई वस्तुओं पर गर्व होना। जब प्रत्येक देशवासी गर्व करता है, जब प्रत्येक देशवासी जुड़ता है तो आत्मनिर्भर भारत सिर्फ एक आर्थिक अभियान न रहकर एक राष्ट्रीय भावना बन जाता है।" प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के ये शब्द प्रत्येक भारतवासी की अंतःचेतना को स्पर्श करने वाले और उसमें स्पंदन पैदा करने वाले हैं ताकि प्रत्येक भारतीय उनके इस अभियान के साथ जुड़कर भारत को आत्मनिर्भर बनाने में अपना यथोचित योगदान दे सके। इस संवदेनशील संदेश में वही प्रेरणा व ऊर्जा दिख रही है जो आज़ादी की लड़ाई के दौरान महात्मा गांधी के चरखा और स्वदेशी अभियान में दिखायी दी थी। उस समय प्रत्येक भारतीय एक आत्मबल और ऊर्जा के साथ भारत को स्वतंत्र कराने के संकल्प के साथ आज़ादी की लड़ाई में शामिल हुआ था, आज भी ज्यादा से ज्यादा भारतीय भारत को आत्मनिर्भर बनाने के अभियान में नवजागरण अभियान की तरह जुड़ते दिखायी दे रहे हैं। जिस गति से प्रधानमंत्री का 'वोकल फॉर लोकल' मंत्र आगे बढ़ेगा आत्मनिर्भर भारत की तस्वीर उतनी ही भव्य होती जाएगी। हमारे रोजमर्रा का जीवन हो, इसमें पहिये से लेकर कंप्यूटर, दवाइयों से लेकर कपड़ों तक सब कुछ शामिल है। प्रौद्योगिकी की परिभाषा व्यवहारिक उद्देश्यों या अनुप्रयोगों के लिए वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग है। प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग करती है और उस वातावरण को बदलने के लिए इसे लागू करती है जिसमें मनुष्य रहते हैं।

थॉमस एडिसन ने दुनिया की पहली औद्योगिक अनुसंधान प्रयोगशाला बनाई और उन्हें प्रौद्योगिकी का जनक कहा जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि आधुनिक प्रौद्योगिकी कंप्यूटिंग और नेटवर्किंग के अभिसरण से है, जो उपयोगकर्ताओं को उन्नत उपकरणों और इसके उपयोग के लिए आवश्यक ज्ञान पर केंद्रीकृत नियंत्रण प्रदान करके सशक्त बनाती है। इसके साथ ही प्रौद्योगिकी नई मशीनों और उपकरणों का उत्पादन करने के लिए वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग है जिससे विभिन्न सेवाओं को प्रदान किया जा सकता है या अधिक उपकरणों को बनाने के लिए आगे नियोजन हो सकता है। प्रौद्योगिकी का मकसद दक्षता और गति लाना है। इसकी सहायता से व्यक्ति हर क्षेत्र में सर्वगुण संपन्न और गति के साथ कार्य करना सीखता है।

कॉक्स के अनुसार "मानव के सीखने की परिस्थितियों में वैज्ञानिक प्रक्रिया को प्रौद्योगिकी कहते हैं।"

आधुनिक प्रौद्योगिकी की विशेषताएं:

- आधुनिक प्रौद्योगिकी के द्वारा अध्ययन प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठ ढंग से किया जाता है।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी के द्वारा हम अपने कार्य को व्यवस्थित और क्रमबद्ध रूप में करते हैं।
- प्रौद्योगिकी के द्वारा शिक्षण प्रक्रिया प्रयोजन सहित होती है।
- प्रौद्योगिकी की सहायता से कार्य को गति से किया जाता है।
- कंप्यूटर की मदद से शिक्षक छात्रों को सिद्धांतों के व्यवहारिक पहलुओं को पढ़ा सकते हैं और दिखा सकते हैं।
- छात्र डिजिटल सामग्री के साथ बातचीत कर सकते हैं, चर्चा में हिस्सा ले सकते हैं, और उन गतिविधियों में काम कर सकते हैं जिनसेउन्हें सामग्री को बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलती है।
- इंटरनेट पर किसी विषय से जुड़ा भंडार होता है जो शिक्षकों और छात्रों के लिए सहयोगी होता है।

अतः शैक्षिक प्रौद्योगिकी का तात्पर्य शिक्षण और सीखने को बढ़ाने के लिए डिजिटल उपकरणों और संसाधनों के उपयोग से है अर्थात जब शिक्षण की प्रक्रिया में हम सॉफ्टवेयर, ऐप, ऑनलाइन पाठ्यक्रम आदि का प्रयोग कर शिक्षण की प्रक्रिया को रोचक और सरल बनाया जाता है। शैक्षिक प्रौद्योगिकी शिक्षकों को अधिक प्रभावी ढंग से पढ़ाने और छात्रों को अधिक कुशलता से सीखने में मदद करती है। शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उद्देश्य, किसी भी प्रकार की कक्षा में बेहतर शिक्षण और सीखने के परिणाम स्वरुप सूचना और संचार प्रौद्योगिकी उपकरणों के प्रयोग से है।

भारतीय ज्ञान परंपरा और आधुनिकीकरण

शिक्षा की प्रक्रिया में जब तकनीकी या प्रौद्योगिकी मिश्रण किया जाता है तो इसका प्रत्यक्ष प्रभाव हमारी शिक्षण प्रक्रिया पर पड़ता है । जब शिक्षण में मशीन एवं अभिक्रमित अनुदेशन का प्रयोग होता है तो वह शिक्षा तकनीकी कहलाती है, साथ ही शिक्षा उद्देश्यों को व्यवहारिक रूप से लिखना एवं उनकी प्राप्ति के लिए दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री का प्रयोग करने को भी शिक्षा तकनीकी कहा जाता है। शिक्षा तकनीकी को परिभाषित करते हुए एस. एस. कुलकर्णी ने लिखा है: "तकनीकी तथा विज्ञान के आविष्कारों एवं नियमों का शिक्षा की प्रक्रिया में प्रयोग को ही शिक्षा तकनीकी कहा जाता है। "भारत, विश्व में शिक्षा की विकासशील दुनिया में प्रौद्योगिकी का एकीकरण सिखाने के भविष्य को आकार देने में एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में खड़ा है। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रौद्योगिकी ने शिक्षा को और सुलभ बना दिया है। ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफार्म और शैक्षिक ऐप के साथ, छात्र इंटरनेट कनेक्शन के साथ कहीं से भी शिक्षण सामग्री और कोर्स वर्क तक पहुंच सकते हैं। सुलभता के अलावा प्रौद्योगिकी ने शिक्षा को और अधिक आकर्षक और रोचक बना दिया है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के द्वारा हम अपनी शिक्षा व्यवस्था और शिक्षण प्रक्रिया को

वैज्ञानिक, वस्तुनिष्ठ, सरल, स्पष्ट, आसान, रोचक, प्रभावी बना सकते हैं। जब हमारी शिक्षा व्यवस्था रोचक होती है तो हम छात्रों के व्यवहार में मान्य या वांछित परिवर्तन कर सकते हैं। शिक्षक छात्रों से संवाद करने और कक्षा से बाहर सहायता प्रदान करने के लिए ईमेल मैसेजिंग ऐप और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग का उपयोग कर सकते हैं। शिक्षा में प्रौद्योगिकी के महत्व को हम निम्न बिंदुओं में दर्शा सकते हैं:

आधुनिक शिक्षाः आधुनिक प्रौद्योगिकी ने हमारी शिक्षा के स्वरूप में परिवर्तन कर शिक्षा को कक्षा-कक्ष से बाहर लेकर आई और उसे ऑनलाइन कोर्सेज के द्वारा शिक्षा सबसे लिए का उदाहरण स्थापित किया। प्रौद्योगिकी के द्वारा वर्तमान समय में शिक्षा छात्रों, कामकाजी महिलाओं, पेशेवर लोगों के लिए भी उपलब्ध हो सकी है।

प्रौद्योगिकी का शिक्षा जगत में सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि प्रौद्योगिकी ने ज्ञान को सबसे द्वार तक पहुंचा दिया है। वर्तमान जगत में विद्यार्थी कहीं भी बैठकर शिक्षा प्राप्त कर अपनी निर्धारित लक्ष्यों तक पहुंच सकता है और अपने जीवन को सुंदर और सुगम बना सकता है।

प्रौद्योगिकी के जरिए छात्र वैश्विक स्तर पर सहपाठियों और शिक्षकों से जुड़ सकते हैं और अपने उद्देश्य को पूर्ण कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी ने सहयोगात्मक शिक्षण वातावरण को बढ़ावा दिया है और साथ ही सांस्कृतिक आदान-प्रदान को भी बढ़ावा मिल रहा है। अतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक प्रौद्योगिकी एक ऐसी विधि का विज्ञान है जिसके द्वारा हम शिक्षा के उद्देश्यों को व्यवस्थित रूप में प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही प्रौद्योगिकी हमें पथ निर्माण के लिए भी दिशा-निर्देश देती है।

भारतीय शिक्षा के आधुनिकरण में सरकार की पहल

शिक्षा किसी समाज के विकास की वह सीढ़ी है जिसके द्वारा हमारा समाज उन्नति कर विकसित हो सकता है। विकास की इस प्रक्रिया में आधुनिक प्रोद्योगिकी या डिजिटल लर्निंग प्लेटफार्म वह आधार है जो शिक्षा की पूरी प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठ और रोचक बनती है और इस प्रक्रिया में सरकार की अहम भूमिका में होती है क्योंकि देश का सर्वांगीण विकास सरकार के सहयोग के बीना असंभव है। इसी क्रम में सरकार द्वारा प्रदान सुविधाएँ निम्न है।

1) भारतीय राष्ट्रीय डिजिटल लाइब्रेरी (NDLI): एक डिजिटल लाइब्रेरी है जो पाठ्य पुस्तकों विद्यानो के लेखो, शोध प्रबंधो और अन्य शैक्षिक सामग्रियों सहित शैक्षणिक संसधानों के विशाल संग्रह को छात्रों तक पहुंचाने के लिए सरकार के द्वारा की गई पहल है, जो पूरी तरह से निःशुल्क है। इसे भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान (IIT) खड़गपुर द्वारा शुरू किया गया है। वर्तमान समय में NDLI में 8 करोड़ (80 मिलियन) से आधुनिक डिजिटल लाइब्रेरी उपलब्ध है।

2) स्टडी ऑफ एक्टिव लर्निंग फॉर यंग एसपायारिंग माइंडस (SWAYAM): स्वयं एक ऑनलाइन प्लेटफार्म है जो बड़े पैमाने पर ओपन ऑनलाइन कोर्स (MOOC) और अन्य डिजिटल लर्निंग रिसोर्स के प्रस्तुतीकरण का स्थान है इसकी सहायता से छात्रों को विडियो लेक्चर, असाइनमेंट और क्विज जैसी सुविधाएं दी जाती ही। वर्तमान समय में 2000 से अधिक पाठ्यक्रम इस प्लेटफार्म पर उपलब्ध है। स्वयं प्लेटफार्म का संचालन और प्रबंधन भारत सरकार के शिक्षक मंत्रालय द्वारा किया जाता है। इसका विकास और क्रियान्वयन "आल इण्डिया काउंसिल फॉर टेक्निकल एजुकेशन (AICTE) नेशनल प्रोग्राम ऑफ टेक्निकल लर्निंग एनहांस्ड (NPTEL), यूजीसी (UGC), इग्नू (IGNOU), और (NCERT) जैसे प्रमुख शैक्षिक संस्थान के सहयोग से किया जाता है।

3) DIKSHA (डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग): "दीक्षा" भारत में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (NCERT) द्वारा विकसित एक अभूतपूर्व डिजिटल प्लेटफार्म है। यह प्लेटफार्म छात्र शिक्षक और अभिभावको सभी के लिए महत्वपूर्ण है । वर्तमान समय में DIKSHA से भारत भर से 1.5 करोड़ से अधिक शिक्षक और 2 करोड़

से अधिक छात्र जुड़े हुए है। इस प्लेटफार्म पर 20,000 से अधिक शैक्षणिक संसाधन और पाठ्य सामग्री उपलब्ध है (कुमार र., 2024)

निष्कर्ष:

शिक्षा हमारे समाज के निर्माण की वह महत्वपूर्ण ईट है जिसकी सहायता से एक मजबूत समाज का निर्माण किया जाता है। शिक्षा की सहायता से व्यक्ति अपनी अंतर्निहित शक्तियों से परिचित हो पाता है और उसका विकास कर, समाज में विकास की ऊर्जा की लहर का संचार करता है। शिक्षा समाज मे होने वाले सकारात्मक परिवर्तनों का बढाता है और शिक्षा की सहायता से समाज की नकारात्मकता को समाप्त किया जाता है। जब हम शिक्षा के साथ प्रौद्योगिकी का मिश्रण करते हैं तो समाज में चमत्कारी परिणाम देखने को मिलता है क्यूंकि प्रौद्योगिकी की सहायता से शिक्षा को हम आधुनिक, रोचक और सबकी पहुंच व्यवस्थित और सरल बना सकते है। इसका उचित उदाहरण ऑनलाइन मौजूद शैक्षिक वीडियो है जो शिक्षा को सबके द्वार तक पहुंचा भी रही है और शिक्षण प्रक्रिया को रोचक बना रही है। अतः आवश्यक है की सब लोग इसको ज्यादा से ज्यादा अपनाकर आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा दे।

संदर्भ ग्रंथः

- कुमार र. (अगस्त 2024). कक्षाओं से स्क्रीन तकः डिजिटल शिक्षा के साथ सीखने का भविष्य, कुरुक्षेत्रः ई-लर्निंग. ग्रामीण विकास को समर्पित, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
- एलेक्स, एस. एम. (2008). भारतीय शिक्षा व्यवस्था का विकास, समस्या एवं समाधान, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
- खलील, एस. टी. (2023). भारतीय ज्ञान प्रणालीः अर्थशास्त्र कौटिल्य द्वारा. नोशन प्रेस, चेन्नई।
- कपूर, के., & सिंह, ए. के. (2005). भारतीय ज्ञान प्रणाली: खंड 2. डी. के. प्रिंट वर्ल्ड लिमिटेड, नई दिल्ली।
- कुरहेकर, ए. एस. (2024). भारतीय ज्ञान प्रणाली परिचय और संभावनाएँ, एच.वी.पी. मंडल प्रकाशन, अमरावती, महाराष्ट्र।
- महादेवन, बी., पवन, एन., & भट, वी. आर. (2022), भारतीय ज्ञान प्रणाली का परिचयः अवधारणाएँ और अनुप्रयोग, पीएचआई लर्निंग, दिल्ली।
- पचौरी, एम. (2011). भारत में आधुनिक शिक्षा. रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
- पाण्डेय, जी. (n.d.). शिक्षा तकनीकी, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
- पाठक, आर. के. (2008). भारतीय परम्परा में शैक्षिक चिन्तन, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर, नई दिल्ली।
- सलूजा, ए. (2023). भारतीय ज्ञान प्रणाली परंपराओं का अनावरणः परिप्रेक्ष्य और आख्यान. बुक रिवर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश (यूपी)।
- सतनाम, एस. (2008), कंप्यूटर शिक्षण, रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
- वशिष्ठ, वि. कु. (2012). भारतीय शिक्षा का इतिहास, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

मो.9425942563

E-mail:-drrajudesai2@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 17-19
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

"वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में मीना अग्रवाल के साहित्य का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन"

सुमन देवी
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, 124001
प्रो॰ पूरन चंद टंडन
शोध निर्देशक,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, 124001

सारांश :

इक्कीसवीं सदी के वैश्वीकरण ने न केवल अर्थव्यवस्था और तकनीक को बदला है बल्कि मानव मन की सरंचना को भी प्रभावित किया है। आधुनिक लेखिका मीना अग्रवाल का साहित्य इसी बदलते परिवेश में मनुष्य की बदलती मानसिकता, टूटते मूल्यों और आंतरिक संघर्षो का सूक्ष्म दस्तावेज है। उनके साहित्य में वैश्वीकरण से उपजी विसंगतियों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में प्रमुखता से उभरता है।

वैश्वीकरण ने वैश्विक गाँव की अवधारणा तो दी लेकिन व्यक्ति को उसकी जड़ों से काट दिया। मीना अग्रवाल के पात्र अक्सर अपनी पहचान खोने के डर और सांस्कृतिक संकरता के बीच मानसिक तनाव का सामना करते हैं। आधुनिकता की चकाचौंध में मनुष्य के भीतर बदला एकीकरण उनके कथा साहित्य का केन्द्र है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने संबंधों को औपचारिक बना दिया है जिससे व्यक्ति मानसिक रूप से एकाकी और अवसादग्रस्त महसूस करने लगता है।

इसके अतिरिक्त मीना जी यह भी दिखाया है कि कैसे बाजारवाद ने संवेदनाओं पर प्रहार किया हैं 'क्या अच्छा क्या बुरा, "अंदर धूप बाहर धूप' तथा 'कुत्तेवाले पापा' जैसे कहानी संग्रहों के अतिरिक्त मुक्तकों हाइकु आदि में बाजारवाद एवं पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव को दिखाया गया है। संयुक्त परिवारों का विघटन और वृद्धों की उपेक्षा नई पीढ़ी की 'अति–महत्वाकांक्षा' का परिणाम है, जो एक गहरे मनोवैज्ञानिक असंतुलन को जन्म देती है। वैश्वीकरण के युग में आधुनिक नारी के दोहरे संघर्ष–बाहरी आत्म निर्भरता और आंतरिक भावनात्मक असुरक्षा को लेखिका ने बड़ी कुशलता से चित्रित किया है। उनकी रचनाओं में स्त्रियाँ केवल विद्रोही नहीं बल्कि अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत मनोवैज्ञानिक पात्र है।

प्रस्तावना :

साहित्य समाज का प्रतिबिंब हैं। अतः समाज में जो घटित होता है, वही साहित्य में उकेरा जाएगा। साहित्य व समाज दोनों में ही समयानुसार परिवर्तन होता रहता है। वैश्वीकरण और उदारीकरण के युग में नारी की अस्मिता एक नवीन रूप में उभरकर आयी है। नारी विमर्श के स्थान पर देह विमर्श का जो दौर चला है।

वह नारी की अस्मिता व पहचान का 'नारी–मुक्ति' के आधार पर नहीं बल्कि 'मुक्त नारी' के आधार पर विश्लेषण किया जाने लगा।

वर्तमान में नारी विमर्श मात्र यौनिकता व देह पर केंद्रित होता चला गया, जिससे समाज में विवाह संस्था के प्रति अविश्वास, स्वछदता एंव नंगापन, कलब लाइफ व विवाह पूर्व तथा विवाहेत्तर प्रेम–संबंधो का बोलबाला होने लगा। राजेन्द्र यादव के अनुसार, "बाजार के द्वारा इस्तेमाल की गई देहकी लड़ाई औरत को निरंतर अकेला करती जाती है... देह उसे आसमानतक ले जाती है, कभी विश्व सुंदरी बनाती है तो कभी सुपर स्टार... उसी प्रकार बिकने वाली बुद्धि भी हर बार नई ऊँचाईयों नापती है।"

मनुष्य एक चिंतन शील प्राणी होने के नाते अपने आस–पास के वातावरण को जानना एवं समझना चाहता है तथा जिज्ञासु प्रवृत्ति के चलते वह निरंतर कुछ नया जानने का प्रयास करता है। स्त्री तथा पुरूष दोनों ही अनेक मानसिक उतार–चढ़ाव से गुजरते रहते हैं। जिसकारण प्रतिपल उनके मनोभाव बदलते रहते हैं। 'ज्वालामुखी भीतर के' कहानी में प्रकाश कार्यालय में किसी कारण से आए क्रोध को घर आकर अपनी मित्र आभा पर निकालता है जिस कारण दोनों की रिश्ता टूटने लगता है जिस पर अविनाश कहता है, कि क्रोध अपने लिए ऐसे व्यक्ति को शिकार बनाता है, जो उसके लिए सुविधा जनक हो।" वह अन्यत्र आभा को कहता है कि – "क्रोध हमेशा दुर्बल पर उतरता है, शक्तिशाली पर नहीं या फिर वह स्वयं उस व्यक्ति को अपना निशाना बनाता है, जो क्रोध में सोचने समझने की स्थिति खो बैठा होता है।"

आधुनिक लेखिका मीना अग्रवाल को साहित्य भी समाज से अछूता नहीं रह पाया है। वैश्वीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में आए परिवर्तनों एवं मानवीय संवेदनाओं के सूक्ष्म विश्लेषण में डॉ॰ मीना जी का अविस्मरणीय योगदान हैं। उनके साहित्य का मनौवैज्ञानिक अनुशीलन वैश्वीकरण से उत्पन्न हुए सामाजिक–सांस्कृतिक व आर्थिक परिवर्तनों के मध्य व्यक्ति के मन में चल रहे अंतर्द्वद्वों को उजागर करता है। उनके साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव सीधे तौर पर भौतिकवाद के बढ़ने और पारंपरिक मूल्यों के टूटने के रूप में देखा जा सकता है।

वस्तुतः मीना जी ने इस कहानी के माध्यम से वैश्वीकरण के दौर में स्त्री–पुरूषों में बढ़ती दूरी तथा प्रतिपल बदलते मनोभावों का चित्रण किया है। वे वैश्वीकरण के दौर में युवा पीढ़ी की अबोधता तथा कच्चेपन को अभिव्यक्त करते हुए लिखती है–

"आज के बच्चे
वैश्वीकरण युग,
मन के सच्चे"

वैश्वीकरण ने लोगों को विश्व नागरिक तो बना दिया है लेकिन इसने अपनी जड़ो से अलगाव की भावना पैदा की है। इनके साहित्य में पात्र आधुनिकता की दौड़ में अपनी पारंपरिक सांस्कृतिक पहचान और मनोवैज्ञानिक स्थिरता को खोते हुए दिखाई देते है।

शोभा नामक आईएएस से सेवानिवृत अधिकारी भ्रष्ट राजनीति में पदार्पण करने का फैसला करते हुए, राजनीति के लिए पैसों को महत्व देती हैं, और इसमें स्वयं को उच्च, आधुनिक एवं चतुर समझती हैं। वह साधना द्वारा भ्रष्टाचार को गलत बताने पर उसके प्रतियुत्तर में कहती हैं– "लगता है तुम समय से बहुत पीछे रह गई हो साधना। यह भी कहा जा सकता है समय बहुत पीछे छोड़ गया है तुम्हें अरे भाई, नेता जनता से जुड़ा हो उसकी इमेज अच्छी हो सेवा करता रहा हो गरीब लोगों की यह सब गए, गुजेर जमाने की बाते हैं। अब पॉलिटिक्स में यह सब नहीं चलता। कोई आदर्श नहीं रहा है अब न राजनीति का न जीवन का पैसा चाहिए और शक्ति चाहिए बस इसके सिवा कुछ नहीं। इस प्रकार लेखिका ने वर्तमान समय में मनुष्य के नैतिक मूल्यों को तो दिखाया ही हैं इसके अतिरिक्त वैश्वीकरण के कारण शहरी जीवन शैली में 'अकेलेपन' तथा भावनात्मक अलगाव आदि भी उनकी कहानियों में देखने को मिलता हैं। उन्होंने उपभोक्तावाद के बढ़ते प्रभाव के कारण रिश्तो में आई यात्रिकता को सहज भाव से उकेरा हैं। वैश्वीकरण ने महिलाओं के सामने नए अवसर तथा चुनौतियाँ दोनों प्रस्तुत की हैं। मीना अग्रवाल के साहित्य में महिला पात्रों की स्वतंत्र की स्वतंत्र चेतना, आर्थिक आत्मनिर्भरता और इसके कारण परिवार व समाज में उनके

मानसिक द्वंद्व का चित्रण मिलता है। लिंगभेद को समाप्त करना उनका प्रमुख उददेश्य रहा हैं। वे लिखती है–

"हमको अपने बराबर न तोला कभी
यह पुराना तरीका न बदला कभी
दिल की धड़कन से गीतों की धुन फूटती,
पति शासक नहीं मित्र बनता कभी।"

लैगिक असमानता स्त्री–पुरूष के जन्म से ही शुरू हो जाती है। भले ही समाज वैश्वीकरण के दौर में स्वयं को विकसित व आधुनिक समझता हो किंतु लैंगिक भेदभाव की मानसिकता अभी भी उनके मन में कायम हैं। मीन जी ने वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में सांस्कृतिक समरूपता का मनोवैज्ञानिक भय भी अपने पात्रों के माध्यम से उकेरा हैं। अपनी सांस्कृति को बचाने की छटपटाहट और वैश्विक संस्कृति के अपनाने के बीच का मानसिक संतुलन भी उनके लेखन का मुख्य विषय रहा है।

मीना अग्रवाल ने नारी विमर्श और नारी सशक्ति करण को प्रमुख रूप से उठाया है। उन्होंने आधीआबादी का सच' 'अंदर धूप बाहर धूप' भीतर के ज्वालामुखी 'कुत्तेवाले पापा' तथा 'क्या अच्छा क्या बुरा' जैसे कहानी संग्रह के साथ–साथ कविताओं व हाइकु संग्रह में भी नारी सशक्तिकरण के मुददे को उठाया है। वे लिखती है–

"सबला नारी
तलवार दुधारी
कभी न हारी।"

इस प्रकार वे आधुनिक शिक्षित नारी को सबला के रूप में प्रस्तुत करती है जो हर मुसीबत का डटकर सामना करना जानती हैं। डॉ॰ मीना अग्रवाल का साहित्य ऐसे समय का चित्रण करता है जहाँ परम्परा तथा आधुनिकता का संश्लेषण हो रहा हैं। अनके पात्रों में पुरानी पीढ़ी की सोच तथा नई पीढ़ी की आकांक्षाओं के बीच मनोवैज्ञानिक टकराव देखने को मिलता हैं। इसके अतिरिक्त महिला पात्रों के माध्यम से पितृसत्तात्मक विचारधारा को चुनौती देन और आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया को उकेरा गया है। वस्तुतः उनका साहित्य वैश्वीकरण की विभिन्न अवधारणाओं तथा रूपों को प्रस्तुत करने में सफल रहा है।

निष्कर्ष :

मीना अग्रवाल का साहित्य वैश्वीकरण के प्रभावों का केवल सतही चित्रण नहीं करता, बल्कि वह मनुष्य के अचेतन मन में पैठ कर उन दरारों को खोजता है जो विकास की अंधी दौड़ में पैदा हुई है। उनका लेखन समाज को यह सोचने पर मजबूर करता है कि भौतिक उन्नति के बीच हम मानसिक शांति तथा मानवीय संवेदनाओं को कहीं पीछे तो नहीं छोड़ रहे हैं। अस्तित्व का संकट, अकेला पन तथा अवसाद, नारी विमर्श व सशक्तिकरण बदलते पारिवारिक प्रतिमान तथा स्त्री–पुरूष मन का मनोविश्लेषण मीना अग्रवाल के साहित्य की मूल अवधारणा हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. डॉ॰ श्यामबाबू शर्मा, भूमंडलीकरण व समकालीन हिंदी कविता पृ॰ 323
2. डॉ॰ मीना अग्रवाल, ज्वाला मुखी भीतर के पृ॰ 91
3. डॉ॰ मीना "अग्रवाल, भीतर के ज्वालामुखी," पृ॰ 88
4. डॉ॰ मीना, "बातें करती हवा, पृ॰ 61
5. डॉ॰ मीना अग्रवाल, बातें करती हवा, हिंदी साहित्य निकेतन बिजनौर पृ॰ 72
6. डॉ॰ मीना अग्रवाल, अंदर धूप बाहर धूप, हिंदी साहित्य निकेतन बिजनौर पृ॰ 72
7. डॉ॰ मीना अग्रवाल, सफर में साथ–साथ, हिंदी साहित्य निकेतन बिजनौर, पृ॰ 57

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 20-23
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

''नवीन शिक्षा नीति और सामाजिक न्याय : शिक्षा में समान अवसर और समावेशन की संभावनाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन''

डॉ. राजेश कुमार शुक्ला
सहायक आचार्य
(समाजशास्त्र विभाग)
श्री किशुन महाविद्यालय खेजुरी, बलिया (उत्तर प्रदेश)

सारांश

नवीन शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा प्रणाली में एक ऐतिहासिक और संरचनात्मक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा को अधिक समावेशी, समानतामूलक, गुणवत्तापूर्ण और सामाजिक न्याय आधारित बनाना है। भारतीय समाज में शिक्षा लंबे समय से सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानताओं से प्रभावित रही है, जिसके परिणामस्वरूप समाज के अनेक वर्ग गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित रहे हैं। जाति व्यवस्था, आर्थिक विषमता, लैंगिक भेदभाव, क्षेत्रीय पिछड़ापन तथा शहरी–ग्रामीण अंतर ने शिक्षा की समान पहुँच में गंभीर बाधाएँ उत्पन्न की हैं। इस शोध–पत्र में नवीन शिक्षा नीति 2020 का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विस्तृत विश्लेषण किया गया है तथा यह अध्ययन किया गया है कि यह नीति किस प्रकार शिक्षा में समान अवसर और सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देती है। अध्ययन में गुणात्मक और विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग करते हुए नीति के उद्देश्यों, संरचनात्मक सुधारों, व्यावहारिक प्रभावों तथा क्रियान्वयन से जुड़ी चुनौतियों का गहन अध्ययन किया गया है। निष्कर्षतः यह पाया गया कि नवीन शिक्षा नीति सामाजिक न्याय की दिशा में एक सकारात्मक और दूरदर्शी पहल है, किंतु इसके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु सुदृढ़ आधारभूत संरचना, प्रशिक्षित मानव संसाधन, डिजिटल सुलभता, सामाजिक सहभागिता तथा सतत निगरानी प्रणाली की नितांत आवश्यकता है।

मुख्य शब्द – नवीन शिक्षा नीति, सामाजिक न्याय, समान अवसर, समावेशन, समाजशास्त्रीय अध्ययन, शिक्षा सुधार।

शिक्षा किसी भी समाज के समग्र विकास की आधारशिला होती है। यह केवल ज्ञान अर्जन का माध्यम नहीं है, बल्कि सामाजिक चेतना, आर्थिक सशक्तिकरण, सांस्कृतिक संवर्धन और लोकतांत्रिक मूल्यों के निर्माण का प्रमुख साधन भी है। शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सजग बनता है और समाज में सक्रिय भागीदारी निभाने में सक्षम होता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षा सामाजिक संरचना, शक्ति–संबंधों और संसाधन वितरण को प्रभावित करती है। इस प्रकार शिक्षा सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देने के साथ–साथ सामाजिक समानता की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय समाज विविधताओं से परिपूर्ण है, जहाँ जाति, धर्म, भाषा, लिंग, वर्ग और क्षेत्र के आधार पर गहरी

असमानताएँ विद्यमान हैं। इन असमानताओं का सबसे प्रत्यक्ष प्रभाव शिक्षा प्रणाली पर देखा जा सकता है। ऐतिहासिक रूप से भारत की शिक्षा व्यवस्था उच्च वर्ग और प्रभुत्वशाली जातियों तक सीमित रही है। पारंपरिक सामाजिक संरचना में शिक्षा को विशेषाधिकार माना जाता था, जिसके कारण समाज का एक बड़ा वर्ग शिक्षा से वंचित रहा। औपनिवेशिक काल में शिक्षा का उद्देश्य प्रशासनिक आवश्यकताओं की पूर्ति तक सीमित था, जिससे सामाजिक न्याय का प्रश्न और अधिक जटिल हो गया।

स्वतंत्रता से पूर्व शिक्षा का स्वरूप अभिजात्य वर्ग तक सीमित था, जिसके कारण समाज के व्यापक वर्गों को शिक्षा से वंचित रहना पड़ा। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान ने समानता और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को मौलिक अधिकारों के रूप में स्थापित किया, किंतु व्यवहारिक स्तर पर शिक्षा में समान अवसर उपलब्ध कराने की दिशा में अपेक्षित प्रगति नहीं हो सकी। इसी पृष्ठभूमि में वर्ष 2020 में लागू की गई नवीन शिक्षा नीति एक व्यापक सुधारात्मक प्रयास के रूप में सामने आई, जिसका उद्देश्य शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाना तथा सभी वर्गों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करना है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं औचित्य – भारतीय समाज में शिक्षा संबंधी असमानताएँ आज भी एक गंभीर सामाजिक समस्या बनी हुई हैं। ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के बीच शिक्षा की उपलब्धता और गुणवत्ता में भारी अंतर देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त, जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता, आर्थिक गरीबी और क्षेत्रीय पिछड़ापन शिक्षा की पहुँच को सीमित करते हैं। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक, दिव्यांग तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँचना आज भी एक चुनौती है। नवीन शिक्षा नीति 2020 इन सभी वर्गों को शिक्षा की मुख्यधारा में सम्मिलित करने का प्रयास करती है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि इस नीति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया जाए, जिससे यह समझा जा सके कि यह नीति सामाजिक न्याय की स्थापना में किस हद तक सहायक सिद्ध हो सकती है। यह अध्ययन नीति की व्यावहारिक उपयोगिता, सामाजिक प्रभाव और संभावित चुनौतियों को उजागर करने में सहायक होगा।

प्रस्तुत शोध अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य नवीन शिक्षा नीति 2020 का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण करना है, जिससे यह स्पष्ट किया जा सके कि यह नीति किस प्रकार सामाजिक न्याय, समान अवसर और समावेशन को बढ़ावा देती है। इसके अंतर्गत यह भी अध्ययन किया गया है कि नीति के माध्यम से शिक्षा में व्याप्त असमानताओं को कम करने की कितनी संभावना है तथा इसके क्रियान्वयन में कौन–कौन सी सामाजिक और संरचनात्मक बाधाएँ उपस्थित हैं।

प्रस्तुत शोध गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें द्वितीयक स्रोतों जैसे सरकारी रिपोर्ट, नीति दस्तावेज, शैक्षिक सर्वेक्षण, शोध पत्र, पुस्तकें तथा अंतरराष्ट्रीय संगठनों की रिपोर्टों का विश्लेषण किया गया है। विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति के माध्यम से नीति के सामाजिक आयामों को समझने का प्रयास किया गया है, जिससे इसके व्यापक प्रभावों का समग्र मूल्यांकन किया जा सके।

इस अध्ययन का सैद्धांतिक आधार सामाजिक न्याय सिद्धांत, समावेशन सिद्धांत तथा संरचनात्मक कार्यात्मकता सिद्धांत पर आधारित है। सामाजिक न्याय सिद्धांत के अनुसार समाज में सभी वर्गों को समान अवसर और संसाधन प्राप्त होने चाहिए। समावेशन सिद्धांत यह मानता है कि शिक्षा प्रणाली में समाज के सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए। वहीं संरचनात्मक कार्यात्मकता सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि शिक्षा सामाजिक स्थिरता, एकता और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इन तीनों सिद्धांतों के आधार पर नवीन शिक्षा नीति के प्रभावों का विश्लेषण किया गया है।

नवीन शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा व्यवस्था को 21वीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित करने का एक व्यापक प्रयास है। यह नीति शिक्षा की संरचना, पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति, मूल्यांकन प्रणाली और शिक्षक प्रशिक्षण जैसे सभी पहलुओं में सुधार का प्रस्ताव प्रस्तुत करती है। 5334 की नई संरचना प्रारंभिक बाल्यावस्था से लेकर उच्चतर माध्यमिक स्तर तक शिक्षा को अधिक व्यावहारिक और विकासोन्मुख बनाती है। बहुभाषिक शिक्षा, डिजिटल प्लेटफॉर्म, कौशल विकास और बहुविषयक अध्ययन के माध्यम से यह नीति शिक्षा को अधिक समावेशी, सुलभ और रोजगारोन्मुख बनाने का प्रयास करती है।

सामाजिक न्याय और शिक्षा – सामाजिक न्याय का तात्पर्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार, अवसर और संसाधन उपलब्ध कराना है। शिक्षा सामाजिक न्याय की स्थापना का सबसे प्रभावी माध्यम है क्योंकि यह व्यक्ति को सशक्त बनाती है और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देती है। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था, पितृसत्तात्मक संरचना और आर्थिक विषमता ने शिक्षा को सीमित वर्गों तक सीमित कर दिया, जिससे सामाजिक असमानताएँ और अधिक गहरी हो गईं। नवीन शिक्षा नीति इन ऐतिहासिक विषमताओं को कम करने तथा शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन के माध्यम के रूप में स्थापित करने का प्रयास करती है।

शिक्षा में समान अवसर : नीति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण – नवीन शिक्षा नीति शिक्षा में समान अवसर सुनिश्चित करने हेतु अनेक सुधारात्मक उपाय प्रस्तुत करती है। छात्रवृत्ति योजनाओं, डिजिटल शिक्षा मंचों, ग्रामीण विद्यालयों के सुदृढ़ीकरण तथा बालिकाओं और दिव्यांग छात्रों के लिए विशेष प्रावधानों के माध्यम से यह नीति शिक्षा तक पहुँच बढ़ाने का प्रयास करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से ये उपाय संसाधनों के न्यायपूर्ण वितरण को बढ़ावा देते हैं, जिससे सामाजिक समानता की दिशा में ठोस प्रगति संभव हो सकती है।

शिक्षा में समावेशन की संभावनाएँ – समावेशन का अर्थ है समाज के सभी वर्गों को शिक्षा की मुख्यधारा में शामिल करना। नवीन शिक्षा नीति बहुभाषिक शिक्षा, लचीला पाठ्यक्रम, डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता और कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से समावेशन को बढ़ावा देती है। इससे विशेष रूप से ग्रामीण, पिछड़े और हाशिए पर खड़े वर्गों को शिक्षा से जोड़ने में सहायता मिलती है। यह नीति शिक्षा को केवल शैक्षणिक उपलब्धि का माध्यम न मानकर सामाजिक सहभागिता और सामूहिक विकास का साधन बनाती है।

डिजिटल शिक्षा और सामाजिक न्याय – डिजिटल शिक्षा ने शिक्षा की पहुँच को व्यापक बनाया है, किंतु इसके साथ ही डिजिटल विभाजन की समस्या भी उत्पन्न हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों और गरीब वर्गों के पास तकनीकी संसाधनों की कमी के कारण वे डिजिटल शिक्षा से पूर्ण रूप से लाभान्वित नहीं हो पा रहे हैं। नवीन शिक्षा नीति डिजिटल अवसंरचना के विस्तार पर बल देती है, जिससे डिजिटल असमानताओं को कम किया जा सके और सामाजिक न्याय की स्थापना में तकनीक को सहायक बनाया जा सके।

लैंगिक समानता और शिक्षा – लैंगिक समानता सामाजिक न्याय का एक महत्वपूर्ण आयाम है। नवीन शिक्षा नीति बालिकाओं की शिक्षा को प्राथमिकता देती है तथा छात्रवृत्ति, आवासीय विद्यालय, सुरक्षित परिवहन और डिजिटल शिक्षा जैसे उपायों के माध्यम से बालिकाओं की विद्यालय में भागीदारी बढ़ाने का प्रयास करती है। इससे महिला सशक्तिकरण को बल मिलता है और सामाजिक संरचना में सकारात्मक परिवर्तन संभव होता है।

नवीन शिक्षा नीति अत्यंत प्रगतिशील है, तथापि इसके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। डिजिटल संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, आधारभूत संरचना की कमजोर स्थिति, सामाजिक रूढ़ियाँ तथा प्रशासनिक जटिलताएँ नीति के उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न करती हैं। इन चुनौतियों का समाधान किए बिना नीति के लक्ष्यों को पूर्णतः प्राप्त करना कठिन होगा।

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नवीन शिक्षा नीति 2020 सामाजिक न्याय, समान अवसर और समावेशन की दिशा में एक ऐतिहासिक पहल है। यह नीति शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाकर समाज के वंचित वर्गों को सशक्त करने का प्रयास करती है। यदि इसका प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए, तो यह नीति भारतीय समाज में व्याप्त असमानताओं को कम करने में निर्णायक भूमिका निभा सकती है।

सुझाव – नवीन शिक्षा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु यह आवश्यक है कि ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में डिजिटल अवसंरचना का विस्तार किया जाए, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सुदृढ़ बनाया जाए, छात्रवृत्ति योजनाओं की पहुँच बढ़ाई जाए, सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाए तथा सतत मूल्यांकन एवं निगरानी तंत्र विकसित किया जाए, जिससे नीति के उद्देश्यों की प्रभावी प्राप्ति संभव हो सके।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

- Bourdieu, P. (1990). The logic of practice. Stanford University Press.

- Government of India. (2020). National education policy 2020. Ministry of Education. https://www.education.gov.in
- Govinda, R. (2011). Who goes to school? Exploring exclusion in Indian education. Oxford University Press.
- Illich, I. (1971). Deschooling society. Harper & Row.
- Kumar, K. (2005). Political agenda of education: A study of colonialist and nationalist ideas. Sage Publications.
- NCERT. (2021). Educational reforms and challenges in India. National Council of Educational Research and Training.
- Nussbaum, M. C. (2011). Creating capabilities: The human development approach. Harvard University Press.
- Sen, A. (1999). Development as freedom. Oxford University Press.
- Sen, A. (2009). The idea of justice. Harvard University Press.
- Sharma, R. N. (2015). Sociology of education. Surjeet Publications.
- Tilak, J. B. G. (2007). Post-elementary education, poverty and development in India. Sage Publications.
- Tilak, J. B. G. (2018). Education and social equity in India. Oxford University Press.
- UNESCO. (2020). Global education monitoring report 2020: Inclusion and education – All means all. UNESCO Publishing.
- World Bank. (2020). World development report 2020: Learning to realize education's promise. World Bank Publications.
- Yadav, S. (2019). Education, inequality and social justice in India. Rawat Publications.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 24-27
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

''खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार का अध्ययन''

डॉ. राजनिधि सिंह
सह प्राध्यापक
(गृहविज्ञान विभाग)
शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

सारांश
खाद्य सुरक्षा और स्वच्छता किसी भी समाज के सार्वजनिक स्वास्थ्य का आधार होती है। सुरक्षित, पौष्टिक और स्वच्छ भोजन मानव जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने में केंद्रीय भूमिका निभाता है। वर्तमान समय में खाद्य जनित रोग वैश्विक स्वास्थ्य संकट का रूप ले चुके हैं, जिनका प्रमुख कारण अस्वच्छ भोजन, दूषित जल, अपर्याप्त स्वच्छता व्यवहार तथा खाद्य सुरक्षा के प्रति जागरूकता की कमी है। घरेलू स्तर पर भोजन की तैयारी, भंडारण और परोसने की प्रक्रिया खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में निर्णायक भूमिका निभाती है, क्योंकि अधिकांश खाद्य पदार्थों का उपभोग घरों में ही किया जाता है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य खाद्य सुरक्षा के प्रति लोगों की जागरूकता तथा घरेलू स्तर पर अपनाए जाने वाले खाद्य स्वच्छता व्यवहारों का व्यापक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शिक्षा स्तर, सांस्कृतिक परंपराएँ, जल एवं स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच खाद्य स्वच्छता व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि जन–जागरूकता अभियानों, पोषण शिक्षा कार्यक्रमों और स्वास्थ्य सेवाओं को सुदृढ़ किया जाए, तो घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार में उल्लेखनीय सुधार संभव है, जिससे खाद्य जनित रोगों में कमी लाई जा सकती है और सार्वजनिक स्वास्थ्य स्तर को बेहतर बनाया जा सकता है।

कुंजी शब्द – खाद्य सुरक्षा, जागरूकता, घरेलू स्वच्छता, खाद्य स्वच्छता व्यवहार, सार्वजनिक स्वास्थ्य

मानव जीवन में भोजन का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि भोजन न केवल शरीर को ऊर्जा और पोषण प्रदान करता है, बल्कि यह स्वास्थ्य, कार्यक्षमता और जीवन गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। सुरक्षित और स्वच्छ भोजन के अभाव में मानव शरीर अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो सकता है, जिससे न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य प्रभावित होता है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक विकास भी बाधित होता है। वर्तमान समय में खाद्य जनित रोग एक वैश्विक समस्या बन चुके हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, प्रतिवर्ष लगभग 60 करोड़ लोग असुरक्षित भोजन के कारण बीमार पड़ते हैं और लाखों लोगों की मृत्यु हो जाती है।

घरेलू स्तर पर भोजन की तैयारी, संग्रहण और परोसने की प्रक्रिया खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में केंद्रीय भूमिका निभाती है। घरों में अपनाई जाने वाली स्वच्छता प्रथाएँ भोजन की गुणवत्ता और सुरक्षा को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। यदि भोजन तैयार करने से पहले हाथ न धोए जाएँ, दूषित जल का प्रयोग किया जाए, अस्वच्छ बर्तनों में भोजन पकाया जाए, भोजन को ढककर न रखा जाए अथवा गलत तापमान पर संग्रहित किया जाए, तो भोजन में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होकर वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बन सकता है।

भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ एक बड़ी जनसंख्या सीमित संसाधनों में जीवन यापन करती है, वहाँ खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्वच्छता व्यवहार का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है। सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक असमानताओं के कारण विभिन्न वर्गों में खाद्य स्वच्छता व्यवहार में स्पष्ट अंतर देखा जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ जल और स्वच्छता सुविधाओं की कमी, निम्न साक्षरता स्तर और पारंपरिक आदतें खाद्य स्वच्छता व्यवहार को प्रभावित करती हैं, जबकि शहरी क्षेत्रों में व्यस्त जीवनशैली, फास्ट फूड की बढ़ती प्रवृत्ति और रेडी–टू–ईट भोजन पर निर्भरता स्वास्थ्य जोखिम को बढ़ाती है। इन परिस्थितियों में यह आवश्यक हो जाता है कि खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार का समग्र अध्ययन किया जाए, जिससे प्रभावी नीति निर्माण, जन–जागरूकता कार्यक्रमों और स्वास्थ्य हस्तक्षेपों की दिशा निर्धारित की जा सके।

खाद्य सुरक्षा और घरेलू स्वच्छता व्यवहार पर विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोधकर्ताओं द्वारा व्यापक अध्ययन किए गए हैं। **विश्व स्वास्थ्य संगठन (2021)** की रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि वैश्विक स्तर पर खाद्य जनित रोगों के लगभग 60 प्रतिशत मामले घरेलू स्तर पर अस्वच्छ भोजन प्रथाओं के कारण होते हैं। रिपोर्ट यह भी दर्शाती है कि नियमित हाथ स्वच्छता, स्वच्छ जल का उपयोग, सुरक्षित भोजन पकाने की विधियाँ और उचित भंडारण तकनीक अपनाकर इन रोगों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा जागरूकता का अध्ययन करते हुए पाया कि अधिकांश परिवारों में भोजन से संबंधित स्वच्छता प्रथाओं की जानकारी अपर्याप्त है। उनके अध्ययन में यह भी सामने आया कि महिलाओं की शिक्षा का स्तर घरेलू स्वच्छता व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। उच्च शिक्षित महिलाओं वाले परिवारों में स्वच्छता व्यवहार अपेक्षाकृत बेहतर पाया गया।

आर. बी. सिंह (2021) ने शहरी क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं के खाद्य स्वच्छता व्यवहार का विश्लेषण करते हुए बताया कि यद्यपि शहरी परिवारों में जागरूकता का स्तर अपेक्षाकृत अधिक है, तथापि व्यस्त जीवनशैली और फास्ट फूड संस्कृति के कारण स्वास्थ्य जोखिम बढ़ रहे हैं। गुप्ता (2019) ने सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों का अध्ययन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि परंपरागत भोजन आदतें, पारिवारिक संरचना और सांस्कृतिक विश्वास घरेलू खाद्य स्वच्छता व्यवहार को गहराई से प्रभावित करते हैं। इन अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि खाद्य सुरक्षा जागरूकता और स्वच्छता व्यवहार बहुआयामी विषय हैं, जिनमें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य घरेलू स्तर पर खाद्य सुरक्षा जागरूकता के स्तर का व्यापक मूल्यांकन करना है। इसके साथ ही यह अध्ययन घरेलू खाद्य स्वच्छता व्यवहारों का विश्लेषण करता है, जिनमें हाथ स्वच्छता, भोजन पकाने की विधियाँ, जल की गुणवत्ता, भोजन का भंडारण, रसोई की स्वच्छता तथा भोजन परोसने की प्रक्रिया शामिल हैं। इसमें सामाजिक–आर्थिक और शैक्षिक कारकों का खाद्य स्वच्छता व्यवहार पर प्रभाव जानना है, जिससे यह समझा जा सके कि किन वर्गों में हस्तक्षेप की अधिक आवश्यकता है। अंततः, अध्ययन का उद्देश्य खाद्य सुरक्षा जागरूकता बढ़ाने तथा घरेलू स्तर पर स्वच्छता व्यवहार सुधारने हेतु व्यावहारिक और प्रभावी सुझाव प्रस्तुत करना है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। इसमें द्वितीयक आँकड़ों का व्यापक उपयोग किया गया है, जिनमें सरकारी रिपोर्टें, राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण, शोध पत्र, अंतरराष्ट्रीय संगठनों के प्रकाशन, समाचार लेख और ऑनलाइन डेटाबेस शामिल हैं। प्रदत्त विश्लेषण हेतु विषयवस्तु विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन तकनीकों का प्रयोग किया गया है, जिससे विभिन्न स्रोतों से

प्राप्त सूचनाओं का व्यवस्थित और तार्किक विश्लेषण किया जा सके। इस शोध पद्धति के माध्यम से खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्वच्छता व्यवहार के विभिन्न आयामों को गहराई से समझने का प्रयास किया गया है।

खाद्य सुरक्षा की अवधारणा और महत्व – खाद्य सुरक्षा का अर्थ केवल भोजन की उपलब्धता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षित, पौष्टिक, स्वच्छ और पर्याप्त भोजन नियमित रूप से उपलब्ध हो। खाद्य सुरक्षा के चार प्रमुख आयाम माने जाते हैं दृ उपलब्धता, सुलभता, उपयोगिता और स्थिरता।

घरेलू स्तर पर खाद्य सुरक्षा का तात्पर्य है कि परिवार के सभी सदस्यों को ऐसा भोजन मिले जो स्वास्थ्य की दृष्टि से सुरक्षित हो, पोषक तत्वों से भरपूर हो और स्वच्छ वातावरण में तैयार किया गया हो। खाद्य सुरक्षा का अभाव कुपोषण, संक्रमण, शारीरिक कमजोरी, बच्चों में अवरुद्ध वृद्धि और मानसिक तनाव का कारण बनता है। विकासशील देशों में खाद्य सुरक्षा का महत्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि यहाँ कुपोषण और संक्रामक रोगों की समस्या व्यापक है। अतः घरेलू स्तर पर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना सार्वजनिक स्वास्थ्य नीति का एक प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए।

घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार – घरेलू खाद्य स्वच्छता व्यवहार से आशय उन सभी दैनिक गतिविधियों से है, जो भोजन की सुरक्षा और स्वच्छता बनाए रखने हेतु अपनाई जाती हैं। इनमें भोजन तैयार करने से पहले और बाद में हाथ धोना, स्वच्छ जल का प्रयोग, सब्जियों और फलों की उचित धुलाई, बर्तनों की नियमित सफाई, भोजन को ढककर रखना, उचित तापमान पर भोजन का संग्रहण तथा रसोई की नियमित सफाई शामिल है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अनेक परिवारों में समयाभाव, जानकारी की कमी, संसाधनों का अभाव और परंपरागत आदतों के कारण इन व्यवहारों का समुचित पालन नहीं किया जाता। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ जल और शौचालय सुविधाओं की कमी तथा सीमित स्वास्थ्य सेवाएँ स्वच्छता व्यवहार को प्रभावित करती हैं। वहीं शहरी क्षेत्रों में व्यस्त जीवनशैली, रेडी–टू–ईट भोजन और फास्ट फूड संस्कृति स्वच्छ भोजन प्रथाओं को चुनौती देती है।

खाद्य सुरक्षा जागरूकता का स्तर और उसके निर्धारक – खाद्य सुरक्षा जागरूकता का स्तर शिक्षा, आय, सामाजिक परिवेश, मीडिया प्रभाव और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच से गहराई से जुड़ा होता है। उच्च शिक्षित परिवारों में भोजन से संबंधित स्वच्छता प्रथाओं की जानकारी अधिक होती है, जिससे उनका व्यवहार अपेक्षाकृत सुरक्षित होता है। मीडिया, विशेष रूप से टेलीविजन, रेडियो, समाचार पत्र और सोशल मीडिया, खाद्य सुरक्षा जागरूकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सरकारी अभियानों, आंगनवाड़ी केंद्रों, स्कूल कार्यक्रमों और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के माध्यम से भी लोगों को स्वच्छता व्यवहार के प्रति जागरूक किया जा सकता है।

सामाजिक एवं स्वास्थ्य प्रभाव – अस्वच्छ भोजन व्यवहार का प्रत्यक्ष प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। दस्त, उल्टी, पेट दर्द, टाइफाइड, हैजा, हेपेटाइटिस और अन्य संक्रमण मुख्यतः असुरक्षित भोजन और दूषित जल के कारण होते हैं। बच्चों, गर्भवती महिलाओं और वृद्धों पर इसका प्रभाव अधिक गंभीर होता है, जिससे उनकी प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है।

स्वच्छ घरेलू खाद्य व्यवहार न केवल रोगों की रोकथाम करता है, बल्कि पोषण स्तर में सुधार, बच्चों की वृद्धि में सहायक, कार्यक्षमता में वृद्धि और जीवन गुणवत्ता में सुधार करता है। इस प्रकार खाद्य सुरक्षा जागरूकता सामाजिक और आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण आधार बनती है।

चुनौतियाँ और समस्याएँ – घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार सुधारने में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इनमें स्वच्छ जल की कमी, आर्थिक अभाव, शिक्षा की कमी, सामाजिक रूढ़ियाँ, समयाभाव और स्वास्थ्य सेवाओं की सीमित पहुँच प्रमुख हैं। ग्रामीण और शहरी गरीब बस्तियों में इन समस्याओं का प्रभाव और भी अधिक देखा जाता है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है, जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, जल एवं स्वच्छता और सामाजिक विकास विभागों का समन्वय आवश्यक है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि शहरी क्षेत्रों में जागरूकता का स्तर अपेक्षाकृत बेहतर है, तथापि ग्रामीण और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों में अभी भी व्यापक सुधार की आवश्यकता है। यदि शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और जन–जागरूकता अभियानों को सुदृढ़ किया जाए, तो घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार में उल्लेखनीय सुधार संभव है, जिससे खाद्य जनित रोगों में कमी लाई जा सकती है।

सुझाव – घरेलू स्तर पर खाद्य सुरक्षा जागरूकता बढ़ाने हेतु नियमित स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। स्कूल पाठ्यक्रम में खाद्य स्वच्छता और पोषण शिक्षा को अनिवार्य किया जाना चाहिए। महिलाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जाने चाहिए, क्योंकि घरेलू भोजन प्रबंधन में उनकी भूमिका केंद्रीय होती है। स्वच्छ जल और स्वच्छता सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए। मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से व्यापक जन–जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए।

संदर्भग्रन्थ सूची

- Bansal, M. (2019). ***Sanitation and food safety***. Asian Journal of Health Studies, 7(1), 22–38.
- Food and Agriculture Organization. (2021). ***Food safety and hygiene practices***. FAO.
- Gupta, R. (2019). ***Household food hygiene behavior***. Indian Journal of Public Health, 63(2), 120–134.
- Mishra, S. (2020). ***Nutrition education and public health***. Indian Journal of Nutrition, 12(2), 40–58.
- Sharma, P., & Verma, K. (2020). ***Food safety awareness in rural India***. Journal of Rural Health Studies, 14(1), 55–72.
- Singh, A. (2021). ***Urban household food practices***. International Journal of Health and Nutrition, 9(3), 88–104.
- World Health Organization. (2021). ***Food safety and household hygiene***. WHO.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 28-30
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

आदर्शवाद – एक सुधारवादी दृष्टिकोण

पूजा
एम.ए. हिंदी (नेट उत्तीर्ण)
363(H-NO) SEC 20 HUDA KAITHAL

सारांशः–

दर्शनशास्त्र के व्यापक फलक पर श्आदर्शवादश वह आधारशिला है, जो भौतिक जगत की तुलना में मानवीय विचारों, मूल्यों और चेतना को प्राथमिकता देती है। जहाँ यथार्थवाद हमें दुनिया के मौजूदा स्वरूप से परिचित कराता है, वहीं आदर्शवाद हमें उस श्परम लक्ष्यश की ओर संकेत करता है जिसे प्राप्त करना मानवता का धर्म है।

सुधारवादी दृष्टिकोण से देखने पर, आदर्शवाद केवल एक सैद्धांतिक विमर्श नहीं रह जाता, बल्कि यह सामाजिक और नैतिक परिवर्तन का एक सशक्त उपकरण बन जाता है। समाज में व्याप्त कुरीतियों, नैतिक पतन और जड़ता को तोड़ने के लिए सदैव एक ऊँचे श्आदर्शश की आवश्यकता होती है। यह शोधपत्र इस बात की पड़ताल करता है कि कैसे आदर्शवादी मूल्यकृजैसे सत्य, न्याय और नैतिकताकृ समकालीन समाज में एक श्सुधारवादी उत्प्रेरकश के रूप में कार्य कर सकते हैं। यह लेख तर्क प्रस्तुत करता है कि बिना किसी आदर्श लक्ष्य के, कोई भी सुधार प्रक्रिया दिशाहीन और अल्पकालिक होती है।

बीज शब्दः– आदर्शवाद, सुधारवाद, नैतिक चेतना, यूटोपिया, मूल्य–आधारित शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन

भूमिकाः–

भारतीय साहित्य और आदर्शवाद का सुधारवादी अंतर्संबंध – भारतीय वाङ्मय का इतिहास गवाह है कि यहाँ साहित्य केवल शब्दों का संचयन नहीं, बल्कि समाज के नैतिक पुनरुत्थान का सशक्त माध्यम रहा है। भारतीय मनीषा ने सदैव श्आदर्शश को मानव जीवन का केंद्र माना है। भारतीय साहित्यकारों के लिए आदर्शवाद कोई आयातित पश्चिमी अवधारणा नहीं थी, बल्कि यह हमारे उपनिषदों के 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के संकल्प से उपजी एक जीवन दृष्टि थी। इस शोधलेख के संदर्भ में, भारतीय साहित्यकारों की भूमिका एक ऐसे 'मशालची' की रही है, जिसने अंधकारमय सामाजिक कुरीतियों के बीच आदर्शों की लौ जलाई।

साहित्यकारों ने अपने कालखंड की जड़ता, रूढ़िवादिता और औपनिवेशिक दासता को चुनौती देने के लिए आदर्शवाद को एक सुधारवादी अस्त्र के रूप में प्रयोग किया। मुंशी प्रेमचंद ने जब 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' की नींव रखी, तो उनका उद्देश्य केवल समाज का चित्रण करना नहीं था, बल्कि समाज को यह दिशा देना था कि वह कैसा 'होना चाहिए'। उन्होंने होरी की त्रासदी दिखाकर समाज की सहानुभूति जाग्रत की, तो वहीं दूसरी ओर अपने पात्रों के माध्यम से त्याग और ईमानदारी के वे प्रतिमान गढ़े जो आज भी सुधार का आधार हैं।

इसी क्रम में, रवींद्रनाथ टैगोर ने अपनी रचनाओं के माध्यम से संकीर्ण राष्ट्रवाद से ऊपर उठकर 'विश्व–मानव' का आदर्श प्रस्तुत किया। उन्होंने शिक्षा में जो सुधारवादी दृष्टिकोण रखा, वह

शांतिनिकेतन के रूप में आज भी जीवित है—जहाँ प्रकृति और मानव के बीच आदर्श सामंजस्य की बात कही गई है। छायावाद के स्तंभ जयशंकर प्रसाद ने अपनी कृतियों में ऐतिहासिक और पौराणिक संदर्भों का सहारा लेकर आधुनिक मानव की विसंगतियों को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने 'कामायनी' में 'समरसता' का जो संदेश दिया, वह व्यक्तिगत और सामाजिक सुधार का उच्चतम बिंदु है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' के माध्यम से सोए हुए भारतीय समाज को उसके अतीत के आदर्शों की याद दिलाकर वर्तमान को सुधारने के लिए प्रेरित किया। इन साहित्यकारों का योगदान इस बात में निहित है कि उन्होंने साहित्य को 'स्वान्तः सुखाय' (स्वयं के सुख के लिए) से निकालकर 'बहुजन हिताय' (सबके हित के लिए) के धरातल पर खड़ा किया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि जब तक समाज के समक्ष एक उच्च आदर्श नहीं होगा, तब तक कोई भी सुधारवादी आंदोलन स्थायी क्रांति नहीं ला सकता। अतः, भारतीय साहित्यकारों का आदर्शवाद एक कल्पना मात्र न होकर, सामाजिक परिवर्तन की एक सुविचारित कार्ययोजना थी।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और शक्ति की मौलिक कल्पना: निराला ने अपने काव्य में आदर्शवाद को एक नई ऊर्जा दी। 'राम की शक्ति पूजा' में उन्होंने दिखाया कि जब सत्य और आदर्श पर संकट आता है, तो 'शक्ति की मौलिक कल्पना' के माध्यम से ही सुधार और विजय संभव है। उन्होंने समाज के वंचित वर्ग (जैसे 'वह तोड़ती पत्थर') के प्रति जो करुणा दिखाई, वह सामाजिक न्याय के आदर्श की ओर एक बड़ा सुधारवादी कदम था।

सुमित्रानंदन पंत और प्रकृति–मानव का आदर्श: पंत जी ने मनुष्य और प्रकृति के अटूट संबंध को एक आदर्श के रूप में स्थापित किया। उनके अनुसार, मानव का वास्तविक सुधार तभी संभव है जब वह अपनी भौतिक आकांक्षाओं को छोड़कर प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करे। उनकी रचनाएँ 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' के आदर्श को आधुनिक संदर्भों में परिभाषित करती हैं।

महादेवी वर्मा की आत्मिक वेदना और सेवारू महादेवी जी ने केवल व्यक्तिगत पीड़ा को नहीं, बल्कि श्करुणाश को एक आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित किया। उन्होंने अपने गद्य (जैसे 'गिल्लू' या 'नीलकंठ') के माध्यम से मानवेतर प्राणियों और समाज के उपेक्षित पात्रों के प्रति जो संवेदनशीलता दिखाई, वह मानवीय व्यवहार में सुधार की एक उत्कृष्ट मिसाल है।

रामधारी सिंह 'दिनकर' और ओजस्वी आदर्शवाद: दिनकर ने 'कुरुक्षेत्र' और 'रश्मिरथी' के माध्यम से न्याय और पुरुषार्थ का आदर्श प्रस्तुत किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि शांति का आदर्श केवल तभी प्राप्त किया जा सकता है जब वह न्याय की नींव पर खड़ा हो। उनका सुधारवादी स्वर सत्ता और समाज दोनों को अपनी नैतिक जिम्मेदारी निभाने के लिए ललकारता है।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र और नवजागरण: आधुनिक हिंदी साहित्य के जनक भारतेन्दु जी ने श्निज भाषा उन्नति अहै' का नारा देकर सांस्कृतिक और भाषाई सुधार का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने नाटकों के माध्यम से देश की दुर्दशा दिखाई और एक श्आदर्श राष्ट्रश के निर्माण की प्रेरणा दी।

इन सभी साहित्यकारों के योगदान को देखने पर स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्य में 'आदर्शवाद' कोई पलायनवादी विचारधारा नहीं थी। इसके विपरीत, यह एक सक्रिय प्रतिरोध की भाषा थी, जिसने समाज की बुराइयों को चिन्हित किया और उन्हें दूर करने के लिए एक नैतिक विकल्प प्रस्तुत किया।

सारणी: प्रमुख भारतीय साहित्यकार और उनका सुधारवादी आदर्शवाद

साहित्यकार / कवि / प्रमुख रचनाएँ / आदर्शवादी दर्शन / सुधारवादी दृष्टिकोण

’मुंशी प्रेमचंद / गोदान, सेवासदन / आदर्शोन्मुख यथार्थवाद / सामाजिक कुरीतियों का चित्रण और अंत में नैतिक समाधान।

’रवींद्रनाथ टैगोर / गीतांजलि, गोरा / वैश्विक मानवतावाद / संकीर्ण राष्ट्रवाद का त्याग और शिक्षा के माध्यम से मानसिक स्वतंत्रता।

’जयशंकर प्रसाद / कामायनी, चंद्रगुप्त / आनंदवाद एवं समरसता / आंतरिक द्वंद्वों को मिटाकर मानवीय एकता और सांस्कृतिक गौरव की स्थापना।

'सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'/राम की शक्ति पूजा, अनामिका/शक्ति और संघर्ष का आदर्श/अन्याय के विरुद्ध डटकर खड़े होना और वंचितों को सम्मान दिलाना।
'महादेवी वर्मा/यामा, स्मृति की रेखाएं/करुणा और संवेदनशीलता/प्राणियों और उपेक्षित वर्गों के प्रति दया और सेवा भाव का प्रसार।

'रामधारी सिंह 'दिनकर'/कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी/न्यायपूर्ण पुरुषार्थ/शांति की स्थापना के लिए न्याय और वीरता को अनिवार्य मानना।
यह तालिका दर्शाती है कि भारतीय साहित्यकारों ने समाज के हर पहलू (सामाजिक, राजनीतिक, व्यक्तिगत और आध्यात्मिक) में सुधार के लिए आदर्शवाद को एक व्यावहारिक उपकरण के रूप में प्रयोग किया है। उनका साहित्य केवल श्कला के लिए कलाश नहीं था, बल्कि वह श्समाज के लिए कलाश के सिद्धांत पर आधारित था।

निष्कर्ष:–

प्रस्तुत शोध के समग्र विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि आदर्शवाद कोई मृत या कालबाधित विचारधारा नहीं है, बल्कि यह निरंतर चलने वाली एक सुधारवादी प्रक्रिया है। जहाँ यथार्थवाद हमें केवल वर्तमान की सीमाओं से परिचित कराता है, वहीं आदर्शवाद हमें उन सीमाओं को लांघकर एक बेहतर भविष्य के निर्माण की प्रेरणा देता है।

भारतीय साहित्यकारों का योगदान इस बात का जीवंत प्रमाण है कि आदर्शों को जब साहित्य और विचार की शक्ति मिलती है, तो वे सामाजिक क्रांति का आधार बन जाते हैं। प्रेमचंद, टैगोर, निराला और दिनकर जैसे मनीषियों ने यह सिद्ध किया कि समाज को केवल भौतिक संसाधनों से नहीं, बल्कि उच्च नैतिक प्रतिमानों से बदला जा सकता है। अंततः, यह कहा जा सकता है कि ष्आदर्शवाद सुधार का वह बीज है, जो यथार्थ की कठिन भूमि को चीरकर मानवता का सुंदर वृक्ष विकसित करता है।ष जब तक समाज में अपूर्णता रहेगी, तब तक आदर्शवाद एक सुधारवादी शक्ति के रूप में प्रासंगिक बना रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. रामचंद्र शुक्ल, – हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा।
2. मुंशी प्रेमचंद, – कुछ विचार (निबंध संग्रह), सरस्वती प्रेस।
3. डॉ. नामवर सिंह, – कविता के नये प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन।
4. Immanuel Kant – Critique of Pure Reason (Trans- by Norman Kemp Smith).
5. Plato – The Republic (Translated Version)

gmail:& poojaatri7334@gmail-com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 31-33
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में लोकचेतना का स्वरूप

प्रतिभा दुबे
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (मध्यप्रदेश) भारत - 486003
डॉ० ओम प्रकाश द्विवेदी
प्राचार्य,
यमुना प्रसाद शास्त्री महाविद्यालय सिरमौर, रीवा (मध्यप्रदेश) भारत - 486448

सारांश : -

हिंदी कथा साहित्य में भगवतीचरण वर्मा का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनकी कहानियाँ अपने समय के सामाजिक, आर्थिक और नैतिक यथार्थ को लोकजीवन की दृष्टि से प्रस्तुत करती हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में निहित लोकचेतना का विश्लेषण किया गया है। लोकचेतना को यहाँ जनसामान्य की सामूहिक सामाजिक चेतना के रूप में ग्रहण किया गया है, जो उनके पात्रों, कथानकों, भाषा और दृष्टिकोण में प्रतिफलित होती है। यह अध्ययन उनकी कहानियों में जनजीवन, सामाजिक विषमता, नारी चेतना, मानवीय मूल्यों और भाषा-शिल्प के लोकधर्मी स्वरूप को रेखांकित करता है।

संकेतिक शब्द : लोक चेतना, हिन्दी कथा साहित्य, भगवतीचरण वर्मा, जनजीवन, सामाजिक यथार्थ

प्रस्तावना :-

हिन्दी पहले लोक भाषा थी। लोकभाषा ही शनैः शनैः साहित्यिक भाषा का रूप ग्रहण करती है। लोक-भाषा में जो अभिव्यक्तियाँ होती हैं उनमें सहज ही लोकतत्व रहता है। फलतः हिन्दी के आरंभकालीन काव्य में लोक-तत्व मिलना ही चाहिये, हमें इसी लोक-तत्व का अनुसंधान करना है। किन्तु यह बात स्पष्ट विदित होती है कि हिन्दी में लोक-भाषा से साहित्य की ओर कदम बढ़ाया, पर लोक-भाषा के अपने स्वाभाविक स्वरूप को बहुत काल तक अक्षुण्ण रखा। साहित्य-रचना में प्रवृत्त होने पर भी उसने लोक-संपर्क घनिष्ठ बनाये रखा। लोक-संपर्क की घनिष्ठता के कई कारण विदित होते हैं।

एक कारण यह है कि हिन्दी ने जब से जन्म ग्रहण किया तभी से भारत में बहुत अधिक उथल-पुथल रही। इतिहास भी बदलता रहा, इतिहास की नीति बदलती रही। साँस्कृतिक संघर्ष हुए, आन्दोलन चलते रहे- ये समस्त विकृतियाँ चंचल उत्तुंग तरंगों की भाँति उत्पन्न हुई, इन्होंने साहित्य में अपनी सत्ता प्रकट की, और साहित्य की इन्हीं तरंगों के कारण लोक-संपर्क को आधार के रूप में बार-बार ग्रहण करना पड़ा। ऐतिहासिक और

सांस्कृतिक उद्वेलन जब तक चलते रहे, साहित्य का लोक-संपर्क घनिष्ठ बना रहा और जब ये उद्वेलन शिथिल हो गये तभी साहित्य ने युग-युगीन प्रवृत्ति को प्रकट करने वाले साहित्य के रूप को स्थिरता-पूर्वक अपना लिया। कलाओं में साहित्य कला को जीवन का पर्याय माना गया। मन के हर्ष उल्लास, राग-विराग को जब भी शब्द मिले, साहित्य का जन्म हुआ। साहित्य, साहित्यकार के व्यापक अनुभव का ठोस दस्तावेज होता है। इस अनुभव को सर्वप्रथम, वह अपने आस-पास के परिवेश, समाज, लोक संस्कृति और संस्कार, प्रकृति तथा मानवीय व्यवहार आदि से प्राप्त करता है। वह यथार्थ को अपनी आंखों से देखता है, उसकी चुनौतियों से दो-चार होता है और इस मुठभेड़ की खुशी और उल्लास को या फिर भय और संशय को रचना के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। उसके रचना में मानव जुड़ा होता है जो अपने पूरे समय को प्रतिविम्बित करता है। इसीलिये विद्वानों ने साहित्य को 'लोक' का जीवन दर्पण कहा है। "जिसका सीधा सा अर्थ यह है कि लोक ही साहित्य के माध्यम से व्यक्त हुआ है। संस्कृति हो या साहित्य उसका मूल संबंध लोक से हुआ करता है।"[1] इसी प्रकार 'लोक जीवन और साहित्य में डॉ० रामविलास शर्मा लोकतत्वों की प्रमुखता देने हेतु कहते हैं कि "किसी समय का साहित्य उस समय के संसार और समाज के प्रति प्रचलित धारणाओं से अछूता नहीं रहता। लोक जीवन का साहित्य में उल्लेख होना अनिवार्य है।"[2]

हिंदी कथा साहित्य में भगवतीचरण वर्मा एक ऐसे सशक्त रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं जिन्होंने समाज के यथार्थ को लोकजीवन की संवेदना के साथ प्रस्तुत किया। उनका साहित्य केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि अपने समय के सामाजिक और मानसिक परिवेश का दस्तावेज है। उनकी कहानियों में अभिव्यक्त लोकचेतना जनसामान्य के जीवनानुभवों, समस्याओं और आकांक्षाओं से उत्पन्न होती है। लोकचेतना उनके कथा साहित्य में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और नैतिक मूल्यों के समन्वय के रूप में दिखाई देती है।

लोकचेतना की अवधारणा :-

लोकचेतना से तात्पर्य समाज के सामान्य वर्ग की सामूहिक चेतना से है, जिसमें उसकी जीवन-दृष्टि, सामाजिक अनुभव, नैतिक मूल्य और संघर्ष निहित होते हैं। साहित्य में लोकचेतना का अर्थ उस संवेदनशील दृष्टिकोण से है जो जनजीवन के यथार्थ को अभिव्यक्त करता है। भगवतीचरण वर्मा की कहानियाँ इसी लोकानुभव से उत्पन्न होकर सामाजिक यथार्थ का सजीव चित्र प्रस्तुत करती हैं।

जनजीवन का यथार्थवादी चित्रण: -

भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में लोकजीवन का चित्रण किसी आदर्शवादी कल्पना पर आधारित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक यथार्थ से जुड़ा हुआ है। उनके पात्र सामान्य सामाजिक परिवेश से आते हैं और अपने जीवन संघर्षों के माध्यम से लोकचेतना को अभिव्यक्त करते हैं। आर्थिक असुरक्षा, पारिवारिक दायित्व और सामाजिक दबाव उनके पात्रों के जीवन को प्रभावित करते हैं, जिससे कथा में लोकजीवन की सजीवता उत्पन्न होती है।

सामाजिक अन्याय के प्रति चेतना -

उनकी कहानियों में सामाजिक विषमता और शोषण के प्रति गहरी चेतना दिखाई देती है। वे समाज की उन संरचनाओं को उजागर करते हैं जो सामान्य जन के जीवन को बाधित करती हैं। वर्गभेद, आर्थिक असमानता और रूढ़ परंपराएँ लोकजीवन को किस प्रकार प्रभावित करती हैं, इसका यथार्थ चित्रण उनकी कहानियों में मिलता है। यह चेतना किसी प्रत्यक्ष विद्रोह के रूप में नहीं, बल्कि संवेदनात्मक प्रस्तुति के माध्यम से प्रकट होती है।

नारी जीवन और लोकसंवेदना : -

भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में नारी चेतना लोकचेतना का एक महत्वपूर्ण आयाम है। उन्होंने स्त्री जीवन की समस्याओं, सामाजिक बंधनों और मानसिक संघर्षों को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। स्त्री पात्र सामाजिक अन्याय का मूक शिकार न होकर परिस्थितियों से जूझती हुई दिखाई देती हैं। नारी की यह आत्मचेतना लोकचेतना के व्यापक स्वरूप को सुदृढ़ करती है।

मानवीय मूल्य और नैतिक दृष्टि: -

उनकी कहानियों में लोकजीवन से जुड़े नैतिक और मानवीय मूल्य प्रमुखता से उभरते हैं। करुणा, सहानुभूति, आत्मसम्मान और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्य लोकचेतना की आधारशिला हैं।

भगवतीचरण वर्मा इन मूल्यों को कथानक और पात्रों के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि पाठक सामाजिक आत्मचिंतन के लिए प्रेरित होता है।

भाषा और शिल्प में लोकधर्मिता:

भगवतीचरण वर्मा की भाषा सरल, सहज और जनसामान्य के अनुकूल है। उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद शैली लोकजीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। अलंकरण की अपेक्षा भावप्रवणता और संप्रेषणीयता उनकी भाषा की विशेषता है। यही भाषा-शैली लोकचेतना को प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करने में सहायक सिद्ध होती है।

निष्कर्ष : -

अतः कहा जा सकता है कि भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में लोकचेतना समाज के यथार्थ, जनसामान्य की पीड़ा, संघर्ष और मानवीय मूल्यों के माध्यम से सजीव रूप में अभिव्यक्त हुई है। उनका कथा साहित्य हिंदी साहित्य में लोकजीवन की संवेदनशील अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस दृष्टि से उनकी कहानियाँ न केवल साहित्यिक महत्व रखती हैं, बल्कि सामाजिक चेतना के अध्ययन का भी सशक्त माध्यम हैं।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1. मिश्र, रामविलास — हिंदी कथा साहित्य की विकास परंपरा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. शुक्ल, रामचंद्र — हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
3. सिंह, नामवर — कहानी नई कहानी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. वर्मा, भगवतीचरण — चयनित कहानियाँ, साहित्य भवन, इलाहाबाद।
5. तिवारी, भोलानाथ — हिंदी कथा साहित्य और समाज, लोकभारती प्रकाशन।
6. पांडेय, शिवकुमार — लोकचेतना और हिंदी साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 34-39
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Social Media Language and Its Impact on Modern English Communication

Divya,
UGC NET (English)
House no. 15/327 Bhagat Singh Colony
Barnala Road Sirsa Haryana-125055

Abstract- The rapid expansion of social media platforms has brought significant changes to the way English is used and understood in everyday communication. Platforms such as WhatsApp, Instagram, Facebook, X (Twitter), and YouTube have introduced new linguistic patterns that emphasize speed, brevity, and creativity. This paper examines how social media language influences modern English communication at lexical, grammatical, and pragmatic levels. It also explores both the positive and negative impacts of social media language on formal and informal communication. The study is based on qualitative analysis of commonly used social media expressions and existing linguistic theories. The findings suggest that while social media language enriches English through innovation and inclusivity, it also challenges traditional norms of grammar and formal writing.

Keywords- Social Media, English Language, Digital Communication, Internet Linguistics, Modern English

Introduction

Language is a dynamic and evolving system that changes according to social, cultural, technological, and historical developments. Every major technological shift in human history has influenced the structure and use of language, and the rise of digital communication is no exception. In the twenty-first century, social media has emerged as one of the most powerful forces shaping patterns of interaction across the globe. Platforms such as WhatsApp, Instagram, Facebook, X (Twitter), Snapchat, and YouTube have transformed not only how people communicate but also how language itself is structured, interpreted, and valued.

English, as a global lingua franca, occupies a central position in digital communication. It serves as a common medium for users from diverse linguistic and cultural backgrounds. As millions of users interact daily through posts, comments, captions, and instant messages, new linguistic habits are continuously formed. These habits include shortened expressions, visual symbols, hybrid constructions, and innovative vocabulary. Unlike traditional written English, which emphasizes grammatical precision and formal structure, social media communication prioritizes immediacy, accessibility, and emotional expression.

The increasing dependence on digital platforms has blurred the boundaries between spoken and written forms of English. Social media messages often resemble conversational speech in tone and structure, even though they appear in written form. This shift challenges conventional distinctions between formal and informal communication. At the same time, it raises important questions: Does social media weaken standard English, or does it enrich it through innovation? Are these linguistic changes temporary trends, or do they represent a long-term transformation of modern English?

This paper seeks to explore these questions by examining the impact of social media language on modern English communication. It analyses how digital platforms influence vocabulary development, grammatical patterns, discourse structures, and communicative practices. By evaluating both the constructive and problematic aspects of this transformation, the study aims to present a balanced understanding of English in the digital age.

Concept of Social Media Language

Social media language refers to the variety of English that has developed through interaction on digital networking platforms. It is not a completely separate language, but rather a flexible and adaptive form of communication shaped by technological affordances and user practices. This variety combines elements of spoken conversation, traditional writing, visual communication, and multimedia expression. As a result, it represents a hybrid mode of discourse.

The concept of social media language is closely connected to the broader field of computer-mediated communication (CMC). In digital spaces, users communicate through typed text, voice notes, images, videos, emojis, and hyperlinks. These multimodal features influence how meaning is constructed and interpreted. For instance, a short sentence accompanied by an emoji may convey more emotional nuance than a grammatically complete but plain sentence. Thus, meaning in social media language is often co-constructed through text and visual elements.

Another important aspect of social media language is its emphasis on speed and efficiency. Since communication occurs in real time and often on mobile devices, users tend to simplify structures, shorten words, and omit unnecessary details. This functional approach does not necessarily indicate linguistic decline; rather, it reflects adaptation to a new communicative environment. In many cases, users demonstrate the ability to shift between informal digital English and formal academic English depending on context, audience, and purpose.

Furthermore, social media language promotes inclusivity and democratization of expression. Individuals who may feel hesitant in formal writing contexts often participate more freely in online discussions. Non-native English speakers also contribute to the evolution of this variety, introducing new expressions and cultural influences. Consequently, social media language is not static; it is continuously evolving through global participation and interaction.

In essence, social media language can be understood as a contemporary linguistic phenomenon that reflects technological advancement, social change, and cultural diversity. It embodies the dynamic nature of English and illustrates how communication adapts to meet the needs of modern society.

Features of Social Media Language

Social media language displays several distinctive features that separate it from traditional written English. These features have developed due to the need for speed, brevity, emotional expression, and creativity in online interaction.

1. Abbreviations and Acronyms

Social media users frequently employ abbreviations such as LOL (laugh out loud), BRB (be right back), and IMO (in my opinion). These forms reduce typing effort and allow faster

communication, especially in instant messaging. Over time, many abbreviations have become widely understood and accepted in informal English usage.

2. Emojis and Emoticons

Emojis and emoticons play a crucial role in expressing emotions, attitudes, and intentions. Since digital communication lacks facial expressions and body language, emojis help convey tone and reduce misunderstanding. They act as paralinguistic features that support written English.

3. Hashtags

Hashtags are used to categorize content, emphasize ideas, and participate in online discussions. They often function as compressed sentences or keywords, contributing to new discourse patterns in English. Hashtags also influence vocabulary formation and meaning-making.

4. Informal Grammar and Sentence Structure

Social media language often ignores traditional grammatical rules such as capitalization, punctuation, and complete sentence formation. Short sentences, fragments, and conversational styles dominate online English, reflecting spoken language patterns.

5. Creative Spellings and Wordplay

Users intentionally modify spellings for stylistic effect, humour, or emphasis, such as gud, thx, or repeated letters. This creativity highlights the playful nature of language on social media.

6. Code-Mixing and Code-Switching

In multilingual societies, English is frequently mixed with regional or native languages. This practice creates hybrid forms of expression and reflects cultural identity in digital communication.

Impact on Vocabulary Development

One of the most significant impacts of social media on English communication is the rapid expansion of vocabulary. Social media platforms serve as spaces where new words and expressions are created, shared, and popularized within a short time.

Words such as selfie, hashtag, vlog, influencer, unfriend, and viral originated from digital contexts and later entered standard English dictionaries. These lexical innovations demonstrate the adaptability and flexibility of the English language. Social media also promotes semantic change, where existing words acquire new meanings. For example, the word follow has gained a specialized meaning in online contexts.

This continuous vocabulary growth enriches English but also creates challenges for learners who must distinguish between formal and informal usage. Nevertheless, social media has become a powerful source of contemporary English vocabulary.

Impact on Grammar and Sentence Structure

Social media has considerably influenced grammatical patterns in modern English. Users often prioritize speed and convenience over grammatical accuracy, resulting in simplified sentence structures. Articles, auxiliary verbs, and punctuation marks are frequently omitted.

For instance, sentences like “Going out now” or “Seen this?” are common in digital communication. While such structures are contextually understood, they deviate from standard written English. This shift has raised concerns among educators and linguists regarding the long-term impact on students’ formal writing skills.

However, it is important to note that these grammatical variations are context-specific. In most cases, users are capable of switching between informal digital English and formal academic English, demonstrating linguistic flexibility rather than linguistic decline.

Positive Impacts of Social Media Language

Social media language has contributed positively to the development of English communication in multiple significant ways. Rather than viewing digital expressions as a threat

to linguistic purity, many scholars argue that they represent creativity, adaptability, and communicative efficiency in a rapidly changing world.

1. Enhancement of Creativity

Social media encourages users to experiment with words, symbols, and structures. Creative captions, wordplay, memes, and innovative spellings demonstrate the playful and imaginative use of English. This experimentation keeps the language dynamic and responsive to contemporary culture.

2. Increased Self-Expression

Digital platforms provide individuals with opportunities to express thoughts, emotions, and opinions instantly. The flexible nature of social media language allows users to communicate personal identity and social belonging more freely than in strictly formal contexts.

3. Encouragement for Non-Native Speakers

Informal environments reduce the fear of making grammatical mistakes. Non-native English speakers often feel more confident participating in online discussions, which increases their exposure to English and enhances communicative competence.

4. Global Connectivity and Cultural Exchange

Social media connects people across geographical boundaries. Through English, users engage in intercultural communication, share ideas, and build international communities. This global interaction broadens linguistic awareness and introduces diverse expressions into mainstream English.

5. Development of Digital Literacy Skills

Using social media requires the ability to interpret tone, context, hashtags, hyperlinks, and visual cues. These skills form an essential part of modern digital literacy and expand traditional notions of reading and writing.

6. Rapid Dissemination of Information

Social media language allows concise and impactful messaging. Important announcements, awareness campaigns, and educational content can reach large audiences quickly through simplified and accessible English.

7. Adaptability and Code-Switching Ability

Many users demonstrate the ability to shift between informal digital English and formal academic or professional English. This flexibility reflects linguistic competence rather than deterioration.

Overall, social media language reflects the living and evolving nature of English. It illustrates how communication adapts to technological environments while continuing to fulfill social and cultural functions.

Negative Impacts of Social Media Language

Despite its constructive aspects, social media language also presents several challenges that require careful consideration, particularly in academic and professional contexts.

1. Weakening of Formal Writing Skills

Frequent exposure to abbreviated forms and informal grammar may influence students' academic writing. Learners sometimes transfer digital habits, such as lack of punctuation or incomplete sentences, into formal assignments.

2. Overdependence on Abbreviations and Slang

Excessive use of acronyms and slang expressions can limit vocabulary depth and reduce clarity in professional communication.

3. Decline in Spelling Accuracy

Predictive text features and intentional misspellings may lead to reduced attention to correct spelling conventions.

4. Reduced Attention Span

The preference for short posts and quick scrolling may discourage engagement with longer and more complex texts, affecting reading habits.

5. Misinterpretation and Ambiguity

Lack of vocal tone and facial expression sometimes results in misunderstanding. Even emojis can be interpreted differently across cultures.

6. Blurring of Formal and Informal Boundaries

Some users struggle to distinguish between casual online communication and professional discourse, which may affect workplace or academic credibility.

7. Superficial Communication

The emphasis on brevity can sometimes reduce depth of discussion, leading to oversimplified arguments or incomplete explanations.

These concerns do not suggest that social media language is inherently harmful, but they highlight the importance of contextual awareness and balanced language education.

Role of Social Media Language in Education

The integration of social media language into educational contexts has generated both opportunities and debates. Rather than excluding digital forms of English, educators increasingly recognize the importance of understanding them as part of contemporary literacy.

Firstly, social media can serve as a motivational tool. Students are naturally engaged with digital platforms, and incorporating familiar communication styles into classroom activities can enhance participation. For example, creating academic hashtags, discussion forums, or short reflective posts encourages interactive learning.

Secondly, social media language provides practical examples for teaching register and context. Teachers can compare informal digital expressions with formal academic writing, helping students understand when and where each style is appropriate. This contrast strengthens awareness of audience, tone, and purpose.

Thirdly, exposure to diverse global users on digital platforms promotes intercultural competence. Students learn how English functions as a global language shaped by different accents, dialects, and cultural perspectives.

However, educators must also guide students in maintaining academic standards. Structured instruction on grammar, vocabulary, and formal writing remains essential. The goal is not to replace standard English with digital English, but to develop balanced communicative competence.

In this way, social media language can be viewed as a complementary resource in education. When used thoughtfully, it enhances engagement, supports digital literacy, and prepares learners for real-world communication while preserving the integrity of formal English.

Conclusion

Social media language has become an integral part of modern English communication. It reflects social change, technological advancement, and cultural diversity. While it challenges traditional linguistic norms, it also enriches English by introducing new forms of expression. The key lies in using social media language appropriately without compromising the standards of formal communication. Understanding this balance is essential for the healthy development of English in the digital age.

References

Baron, N. (2008). Always On: Language in an Online and Mobile World. Oxford University Press.

Crystal, D. (2006). Language and the Internet. Cambridge University Press.

Crystal, D. (2011). Internet Linguistics. Routledge.

Herring, S. C. (2013). Discourse in Web 2.0: Familiar, reconfigured, and emergent. The Handbook of Discourse Analysis, 127–151.

Tagliamonte, S., & Denis, D. (2008). Linguistic ruin? LOL! Instant messaging and teen language. American Speech, 83(1), 3–34.
Thurlow, C., Lengel, L., & Tomic, A. (2004). Computer Mediated Communication. Sage Publications.
Yule, G. (2017). The Study of Language. Cambridge University Press.
Androutsopoulos, J. (2014). Computer-mediated communication and linguistic landscapes. Journal of Sociolinguistics, 18(4), 503–531.
Jones, R. (2015). Discourse and Digital Practices. Routledge.15). Discourse and Digital Practices. Routledge.

E-Mail- sayadev1996@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 40-42
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Khurali–Martial Art in the light of Sahendravilasa

Dr. S.Madhurambika
Assistant Professor (SS) Dept. of Sanskrit
Ethiraj College for Women, Chennai

The art of wrestling which is alternatively called Khuralī was a must for Indian Princes. Wrestling was the game of the common man and was prevalent throughout early Indian history.

The ***Mānasollāsa*** also known as ***Abhilāṣitartha Chintāmaṇi***, is an early 12th-century Sanskrit kāvya composed by the Kalyāṇi Chālukya, king Someśvara III. The work is divided into five sub-books suffixed as Viṁśati. This is the only work to give in one place a connected account of the sports of the king.

In the fourth Viṁśati of *Mānasollāsa*, king Someśvara describes 20 types of vinoda. This causes happiness and thrill to the king.

The author explains in Śāstra vinoda that the need for arranging mock-fights and drills is to sharpen the skills learnt in the deployment of different kinds of weapons[1]. Though he narrates in detail the procedure of inviting the audience for witnessing the event and the apparel to be worn by the King, not much information could be gathered about *khuralī* in *Mānasollāsa* excepting a passing reference where it is stated that the monarch should enter the *khuralī*, accompanied by his attendants, in poise, grandeur, radiating chivalry and captivating the audience where his skill and dexterity in handling the weapons are exhibited[2].

Hence the author Someśvara mentions that Khuralī is the ground/stadium in which the wrestling and other martial arts are practiced or displayed.

[1]. *Mānasollasa*–Śastra-vimśatiḥ - *Vinoda-viṁśatiḥ* (IV.2) :
क्षुरिकाखड्गकोदण्डचक्रकुन्तगदादिषु । शस्त्रेषु विविधैर्न्यासैः शिक्षितश्च तिजश्रमः ॥

[2]. *Mānasollasa* – Śastra-vimśatiḥ - *Vinoda-viṁśatiḥ* (IV.14) :
एवं रचितशृङ्गारो वीरमूर्तिर्मनोहरः। प्रविशेत्खुरलीं रम्यां प्रेक्षकैः परिशोभिताम् ॥

According to the commentary of Ratnāpaṇa of Kumārasvāmin on *Pratāparudriya* of Vidyānātha, *khuralī* is '*Mallādisādhanaśālā*, 'a place where wresting and similar other sports are performed'. It is an arena where the monarchs and princes of the royal family exhibit their skills to the audience.

Sāmrajyalakṣmīpīṭhikā has devoted a separate *paṭala* (**chapter 91**) on "*khuralīvratasvarūpakathanam*" with twenty-eight verses.

It elaborates that the exercises (*śrama-karma*) should be done in the deployment of weapons by emperors, chieftains and such mortals. A puja has to be performed to the *khuralī,*

in the month of *Śravaṇa* for three days commencing from fourteenth day.
यैश्च कैश्चित्प्रकर्तव्यं खुरळीपूजनं प्रिये।

नभोमासे चतुर्दश्यामारभ्य तु दिनत्रयम्॥ *(Sā.pi.91.3)*

The *khuralī* should be constructed by skilled artisans in a long and spacious rectangular shape at a raised level with proper all-round ventilation.

निर्मितां शिल्पिना विश्वकर्मणेव महोन्नताम् ।

स्वायताञ्च सुविस्तीर्णां सगवाक्षां समन्ततः ॥ *(Sā.pi.91.5)*

Within the *khuralī,* there should be a heap of red clay, pillar posts to rest on one side, stack of pebbles in a big sack and an elevated potion at one end.

कुत्रचिद्रक्तमृद्राशिसंयुतां क्वचिदप्युमे ।

आश्लेषस्तमभगम्भीरां क्वच्चिचैव स्थलान्तरे ॥*(Sā.pi.91.6)*

क्षुद्रपाषाणसम्पूर्णमहाघोणीसमन्विताम् ।

क्वच्चिच शैलकटकसङ्घसंशोभितान्तराम् ॥ *(Sā.pi.91.7)*

The pugilists assemble to the beat of drums. The monarch is ushered in with his trainers, worships the mound of red mud, and invokes the deities, offer flowers, incense, light, fruits and different eatables. He then wears the garment of a wrestler and demonstrates deft movements with sword and later engages in wrestling with those of his age. At the conclusion of the performance, the King honours the pedagogues, other wrestlers and princes and retires to his palace.

The martial art form of Khuralī is described in detail in *Śāhendravilāsa*, a historical Mahākāvya in eight sargas on the life of king Śāhaji-II written by Śrīdhara Veñkateśa popularly known as Ayyāvāl.

In this Mahākāvya, the poet highlights as how the prince was trained in the martial arts, especially in wrestling and the wielding of weapons.

It has been mentioned in verse 28-32 of sarga II of *Śāhendravilāsa* a pen picture of art exhibited - *khuralī* by the young prince Śāha is presented.

It is said that the Prince, with the whole body smeared with the red mud, rejoiced in the practice of *Khuralī* along with his fellow-mates as though it was a sport or a game and entertained the onlookers.

कलयन् खुरलीषु खेलनं सवयोभिस्सह भूपतेस्सुतः।

रुचिरारुणमृद्विलेपनो जनतानन्दममन्दमातनोत्॥ ***(Śā.V.II.28)***

Prince Śāha who was clad in the appropriate garment, smeared with red mud all over practiced Khuralī with his mates.

अरुणां मृदमावहन्नदः प्रतिनद्धेन पटेन संवृतः।

परितः स्फुरितांशुरस्स्फुरद्रविरुद्यन्निव राजनन्दनः।***(Śā.V.II.29)***

The prince shines like the red rising sun smearing with red mud and clad with shining garment .

अनुलेपन शोणविग्रहः समभावि क्षितिभृत्सुतो जनैः। ***(Śā.V.II.30 ab)***

The prince is described to be holding the Saffire staff in his hand.

वलभिन्मणियष्टिरस्फुर-त्करकीर्णारुणमूर्तिनामुना । ***(Śā.V.II.31ab)***

In the combat, he (the prince) attained victory in every move but his attitude towards the losing party was very friendly and encouraging ***(Śā.V.II.32):***

स नियुद्धसमुद्धतक्रमे जयमेवानुपदं भजन्निव।

अमुचन्न चटून् सखिव्रजे सति दाक्ष्येऽवनतिर्हि शोभते॥

From the above description in *Śāhendravilāsa* it is understood that *Khuralī* refers to the art of wrestling which is practiced by smearing the whole body with red mud and with the play of the rod.

Apart from these, Khuralī is also explained with intricate details in the text *'Śivalīlārṇavam'* **(chapter 7)** composed by Nīlakaṇtadīkṣita describing the 64 leelas of Śiva.

असिकुलिशगदाशरासशक्तिभ्रमरकतोमरभिण्डिपालशूलैः।

प्रकटितरण कौशलाः खुरल्यां सममिव सा विजहार वीरलक्ष्म्या॥ (*'Śi.va VII.27)*

Bibliography

1. *Mānasollāsa* of king Someśvara ed. with an Introduction by G.K.Shri Gondekhar Vol.II, Baroda oriental Institute, (city)1939
2. *Pratāparudriya* of Vidyānātha with commentary of Ratnāpaṇa of Kumārasvāmin, Second Enlarged and Revised ed, Raghavan V., The Samskrit Education Society, Madras -4, 1979 .
3. *Sāmrajyalakṣmīpīṭhikā*, ed. K. Vasudeva Sastri and K.S. Subrahmanya Sastri, Tanjore Saraswathi Series No.58 pub. Prof. M.Sadasivam, Tanjore 1990.
4. *Śivalīlārṇavam'* ed. with notes T.Ganapathi Sastri, Trivandrum Government Press, 1909.
5. *Śāhendravilāsa* by Śrīdhara Veñkateśa Ayyāvāl, Ed. By Dr.V.Raghavan, Sarasvati Mahal Library and Research Centre, Thanjavur, 2016.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 43-47
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

"सहरिया जनजाति का प्रकृति प्रेम"

डॉ० करन सिंह
सहा प्राध्यापक समाजशास्त्र
शास महाविद्यालय पिछोर जिला ग्वालियर म प्र

सारांश:-

इस शोधालेख के माध्यम से अध्येता ने स्वंय **सहभागी अवलोकन**, **प्रश्नावली, अनुसूचि, साक्षात्कार जैसी गुणात्मक** पद्धतियों का प्रयोग करते हुऐ सहरिया जनजाति का भारतीय ज्ञान परम्परा के सन्दर्भ में उनका प्रकृति से गहरा जुड़ाव, के विविध पक्षों पर प्रकाश डालने का सार्थक प्रयास किया है। अध्येता ने स्वंय उनके सहरानों में जाकर उनकी आवास संरचना, मनोरजन के साधन, परम्पराएँ, संस्कृति की झलक, जीवनशैली, रहन-सहन, खान-पान, प्राकृतिक संसाधनों से जुडाव, प्रकृति पर निर्भरता और धार्मिक अनुष्ठानों में देवलोक की आस्था के साथ प्रकृति पूजन की सामग्री को रेखांकित करते हुए उनके आपसी सामुदायिक जीवन की जीवंतता को देखा और समझा। जंगलो से प्राप्त होने वाली **लकड़ी, फल, महुआ, डेंदू, पत्ता, गाद, गोद, लाख एवं जड़ी-बूटी,औशधी** का दैनिक जीवन में उपयोग और इन सबकी उनके जीवकपार्जन के साधन के रूप में प्रकृति से घनिश्ट संबंध को जाना है। निश्चित ही सहरिया जनजाति प्रकृति पर निर्भरता के साथ-साथ उसके संरक्षण का भी काम अप्रत्यक्ष रूप से करती है।

कुंजी शब्द: सहरिया, सहराना, प्रकृति, परम्पराएँ, अनुष्ठान, निर्भरता

सहरिया जनजाति मुख्यरूप से मध्यप्रदेश के श्योपुर, शिवपुरी, ग्वालियर, अशोकनगर, गुना, दतिया तथा राजस्थान के बांरा, सवाई माधोपोर जिले और उसके आसपास के क्षेत्रों में निवासरत है। मध्यप्रदेश में जनजातियों की बहुलता है जिसमें सहरिया भी एक विशेष **पिछड़ी जनजाति** के रूप में जीवंत है। सहारिया शब्द का अर्थ **'जंगल"** होता है क्योंकि सहरिया शब्द की उत्पत्ति **सहर "शब्द"** से हुई है जिसका अर्थ जंगल से लगाया जाता है क्योंकि ये लोग आज भी जंगलों के नजदीक ही निवास करते है। कुछ विद्वान इनके शाब्दिक अर्थ का सबंध **शेर के मित्र** के रूप में भी मानते हैं। यहां हमारा उद्देश्य इस शोधालेख के माध्यम से **"सहरिया जनजाति का प्रकृति प्रेम"** से संबंधित विविध बिन्दुओं का अध्ययन गुणात्मक पद्धति से करना है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य:

1. सहरिया जनजाति का मध्यप्रदेश के सदर्भ में भौगोलिक बध्ययन
2. सहरिया जनजाति की सामान्य जानकारी प्राप्त करना
3. सहरिया जनजाति की बसाहट और प्रकृति सम्पर्क

4. सहरिया जनजाति का प्रकृति सन्दर्भ में त्यौहार, अनुष्ठान आदि
5. सहरियाओं की जीवन शैली और प्रकृति
6. सहारिया जनजाति का जीवन यापन और प्राकृतिक संसाधन
7. स्वास्थ्य, उपचार और औषधि के लिये प्रकृति पर निर्भरता

उक्त उद्देश्यों तथा सहरिया जनजाति का प्रकृति से जड़ाव आदि विषयों पर महत्वपूर्ण एवं वास्तविक जानकारी प्राप्त करने के लिये अधेता द्वारा इस इस शोध विषय को चुना गया क्योंकि इन सभी बिन्दुओ के सबंध में महत्वपुर्ण जानकारी प्राप्त करने के बाद ही हम सहरिया जनजाति और उसका प्रकृति से गहरे जुडाव के संबंध को स्पष्ट कर सकते हैं।

अध्ययन पद्धति :-

अध्यन पद्धति से आशय अधेयता द्वारा उक्त शोध विषय के संबंध में तथ्य संकलन हेतु प्रयुक्त की जाने विविध शोध विधियों से हैं। सहरिया जनजाति का प्रकृति सन्दर्भ में तथ्य संकलन हेतु अध्येता ने स्वंय मध्यप्रदेश के ग्वालियर श्योपुर, शिवपुरी, गुना, दतिया इत्यादि जिलो की विभिन्न सहरिया वसाहटों का प्रत्यक्ष सहभागी अवलोकन विधि से भ्रमण किया तथा साक्षात्कार, प्रशनाली, अनुसूचि आदि तथ्य संकलन की विधियों से सहरिया जनजाति की प्रकृति के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण जानकारिया प्राप्त की। अध्येता ने स्वंय उनके **सहराने** (सहरियाओ के मोहल्ले) में समुदाय के बीच बैठकर उनकी जीवनशैली,खानपान, रहन सहन, आजीविका के साधन, प्रकृति पर निर्भरता इत्यादि को प्रत्यछः देखकर समझा जिसका विस्तार से उल्लेख इस शोधालेख के माश्यम से किया जा रहा है।

भोगोलिक क्षेत्र :-

भारत के मध्य में स्थित मध्यप्रदेश जंगल, जनजाति और नदियों के लिये विशेष रूप से जाना जाता है। प्रकृति की गोद में रहने वाली म.प्र. की **विशेष पिछड़ी जनजाति "सहारिया**" का निवास स्थान मप्र के ग्वालियर, अशोकनगर, शिवपुरी, श्योपुर, गुना, दतिया, भिण्ड जिलों के विभिन्न कस्बों के अन्तर्गत नदी, जंगल, पहाड़ी के नजदीक गांव से प्रथक मोहल्लों में है उनके मोहले को "सहराना" कहा जाता है। श्योपुर के **कराहल ब्लोक में** इनकी घनी आबादी की बसाहट है। म.प्र. के अतिरिक्त पड़ोसी राज्य राजस्थान के बारा और सवाई माधोपुर में भी इनकी बसाहट पाई जाती है। इन्ही स्थानो को अधेता द्वारा **शोध प्रतिदर्श** के रूप में चयनित किया गया।

सहरिया जनजाति और प्रकृति :-

अध्येता द्वारा सहभागी अवलोकन पद्धति से सहरिया जनजाति की बसाहटो में जाकर शोध उद्देश्यों की प्राप्ती हेतु महत्वपूर्ण जानकारिया प्राप्त की। सहरिया जनजाति राज्य की जनजाति में लगभग 8%. हिस्सा है जिसमें ये लोग ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक निवासरत है। अध्येता दारा इनके आवासो की संरचना को देखा तो पाया कि इनके आवास मुख्यतः प्राकृतिक संसाधन जैसे पत्थर के खंडे, जगलों से प्राप्त लकड़ी, पत्ते, झणियों, मिटटी आदि से निर्मित होते हैं। ऊपरी छत को खपरों, परिया, पत्तों या झाड़ियों के छप्पये से छाया जाता है तथा नीचे जमीन को पशुओं के गोबर में लाल मिटटी मिलाकर लीपा जाता है और उसके चारो तरफ से हल्की पीली मिट्टी जिसे **'पोतनी'** कहा जाता है, को लाइन बनाकर पोता जाता है, इसको सहरिया लोग **लीपापोती** कहते हैं जिसे वे हर सप्ताह अथवा त्योहादों पर करते हैं। इस प्रकार इनके आवासों में प्रकृति की झलक देखने को मिलती है।

पर्व, त्यौहार, आस्था, विश्वास के रूप में देखा जाए तो ये लोग अपने पूर्वज देवता, ईश्वरिय आराधना के साथ साथ प्रक्रति को भी पूजते हैं। इस जनजाति में ऐसी मान्यता है कि जल,जंगल, जमीन से ही हमारा जीवन सम्भव है। इनके **देवलोक** में निम्न प्रमुख देवी देवता आते है जिनकी पूजा अर्चना ये लोग विभिन्न अवसरों पर करते हैं-

आसमानी माता - अन्होनी से बचाव (प्रसाद केवल परिवार के सदस्य लेते हैं)

बीजासेन माता - सहराने की रक्षा के लिए
गैलहरी माता - गांव को भूतप्रेत से बचाव हेतु गाव के बाहर पूजा
बरवासन माता - कार्य सिद्धी हेतु **बरगद के पेड़** के नीचे पूजा
ककाली माता - देवीय प्रकोप से बचाने के लिए
तेजाजी महाराज - सर्पदोश से रक्षा के लिए
हीराभूमिया - सर्पदोश एवं पशुधन की सुरक्षा के लिए
नर्सिन्ह बाबा- संतान प्राप्ती के लिए
हीरामन देव - परिवार एवं पशुधन की रक्षा के लिए
नाहरदेव - फसल समृद्धि हेतु खेत की मेड़ पर पूजा
कारसदेव - सर्पदेश एवं पशुधन की समृद्धि हेतु

इसके अतिरिक्त ये लोग दिवाली होली, दशहरा, रक्षाबंधन, मावस, पूनो आदि अवसरो पर अपने सभी देवी देवता की पूजा अर्चना सपरिवार करते हैं। पूजा अर्चना में मुख्यत अनाज (गेहु, चावल, जो, आम-जामून के पत्ते, कैले के पत्ते, खैर, जगली फल, आदि से पूजा करते हैं। **तुलसी, बरगद, पीपल, बेलपत्री** जैसे व्रक्षों की भी पूजा करते हैं।

सहराने में हम देख सकते है कि ये लोग अपना चूल्हा भी जंगल में प्राप्त लकड़ी से ही जलाते हैं. शर्दियों में बुजुर्ग लोग सहराने के बीच में एक जगह चबूतरों पर **अलावा** जंगल से प्राप्त लकडी से ही जलाकर हाथ सैकते हैं। इनकी खटिया, घर, आंगन आदि में जंगल से प्राप्त लकड़ी का ही उपयोग देखा जा सकता है। हसिया, हथोडा, कुल्हाड़ी, फावडा, लाठी इत्यादि सभी घरेलू उपयोगी सामान को लकड़ी के सहयोग से ही स्वंय बनाते है। जंगल से प्राप्त खजूर, सींक, कास, डाव एवं विभिन्न प्रकार के तिनकों से चटाई, झाड़ू, डलिया भी बनाते है। अपने घरों, आंगन, पशुओं के रखने के स्थान तथा खेतों की फसल जंगली जानवरों से सुरक्षित राखने हेतु जंगल से प्राप्त कटीली झाडियों की बाड लगाकर सुरक्षित करते हैं। इस प्रकार उनकी रोजमर्रा की जीवन शैली में प्रकृति का विशेष सरक्षण मिलता है।

ये सहारिया समुदाय अपनी आजीविका के लिये मुख्यतः प्रकृति पर ही निर्भर होते हैं। इन्हें **नदी, तालाब, झरने** आदि से पानी मिलता है वहीं जंगलों से तेंदूपत्ता संग्रहण, गोद, गाद, लाख, लकड़ी इत्यादि आदि को कठिनाइयों से प्राप्त करके बाजार को उपलब्ध कराते हैं जिससे उन्हे कुछ पैसो कि प्राप्ती होती है जो घर खर्च में उपयोग आते हैं। उनके पास कृषि योग्य भूमि बहुत ही कम होती है इसलिये अपने जीवकोपार्जन के लिये ये लोग प्रकृति पर नर्भर ज़्यादा होते हैं। हालांकि वर्तमान में इनके परिवार या परिवार के कुछ लोग शहरों में दिहाड़ी मजदूरी करने के लिये चले जाते हैं या कुछ सामान बैचकर धंदा कर्ते हैं। ये **जनजाति आर्थिक और शैक्षिक रूप से विशेय पिछडी** हुई है। लेकिन धार्मिक विश्वास, आस्था ओर न्याय पंचायत के लिये अपने समुदाय को प्राथमिकता में रखते हैं। इनके कई परिवार जलाऊ लकड़ी के गट्ठे जंगलो से एकत्रित करके शहरों में बैचकर भी अपने खर्चो की व्यवस्था करते है।

दूर-दराज निवास, जगलों में बसाहट होने से इनका सामना स्वास्थ्य सम्बंधी कई समस्याओं, कुपोषण, बीमारियों से भी होता है। शुरुआती तौर पर ये लोग किसी की बीमारी के लिये प्रकृति अर्थात जंगलों से प्राप्त **जडी-बूटी औषधि** से अपना उपचार करते है। सहरिया लोग विभिन्न बीमारियों की ओषधि, **जडी- बूटी** के जानकार होते है इनके पास हड्डी, जोड़, मामपेशी, बाल, शर्दी झुकाम, त्वचा, चोट आदि की समास्या का निदान प्राकृतिक औषधि या नुस्खे से करते हैं। इन्हें कई बार शहरो में रोड किनारे तथा अपने क्षेत्रों में भी विविध जड़ी-बूटी, औषधि, प्राकृतिक वनस्पति का तेल इत्यादि बैचते देखा जा सकता है। आसपास के कई अन्य समुसय के लोग इनसे, उक्त

औषधि, तेल खरीदते भी है जो कई बीमारियो में लाभदायक बताया जाता है। इस प्रकार **प्राकृतिक जड़ी-बूटी, औषधि, तेल** इत्यादी स्वंम के इलाज के लिये तो काम आता ही है साथ ही इन्हे बैचकर ये लोग अपनी आजीविका भी चलाते हैं। जो कहीं न कहीं प्रकृति से इनका गहरा संबंध स्पष्ट करता है।

इस प्रकार हम निष्कर्षतः कह सकते हैं कि भारतीय ज्ञान परम्परा के सदर्भ में सहरिया जनजाति का प्रकृति से लगाव उन्हें बहुत कुछ जीवनोपयोगी संसाधन, प्रदान करती है। उनके पूर्वज अपने इस आनुभविक ज्ञान ओर कौशल से प्रकृति की गोद में रहकर उसका संक्षण करते हुये अपनी आजीविका के कई संसाधन भी प्रकृति से ही प्राप्त करते हैं। लकड़ी से लेकर छोटे-मोटे शिकार, **जड़ी-बूटी,** औषधि के साथ जल, अनाज, फूल-पत्ती, फल इत्यादी भी वे प्राकृतिक जंगलों से ही प्राप्त करते हैं। वर्तमान में आधुनिकता की चकाचौध ने तकनीकि संसाधनों के माध्यम भले ही उन्हें आकर्षित किया हो लेकिन आज भी वे अपनी- प्रकृति **संरक्षण की परम्पराएँ, अनुष्ठान** इत्यादि को बनाए रखे हैं। सुचनाक्रांति के साधनों का उपयोग करते हुये भी वे जंगलो में अपनी **मोज मस्ती** के साथ अपना सामुदायिक जीवन जीते हैं। आवश्यकता हमें उनका स्थानिय स्तर पर आर्थिक, शैक्षिक व अन्य सुधारों के संसाधनो को जुटाने की है जिससे वे अपने प्रकृति प्रेम को जीवंत बनाए रख सके।

संदर्भ--

1. भारतीय समाज -राम आहुजा
2.भारतीय परम्परा का साधुनिकीकरण - योगेन्द्र सिहं
3. समाजशास्त्र- गुप्ता एन्ड शर्मा
4. सहरिया: समाज एवं संस्कृति- प्रमोद भार्गव
5. दैनिक समाचार पत्र
6. रामसेवक सहरिया- घाटीगांव, ग्वालियर
7. बंटी सहरिया- कराहल, श्योपुर
8. फूलावती सहरिय- पोहरी, शिवपुरी
10. बाबूलाल सहरिया- आरोन, गुना
11. धनंवती आदीवासी- सबलगड, मुरैना
12.खैरू सहरिया- ईशागड, अशोकनगर
13. अधयेता द्वारा स्वंय अवलोकन से प्राप्त जानकारी

8435458478

sengarkaran@yahoo.in

अधेयता द्वारा भ्रमण के समय लिये गए सहरिया जनजाति के कुछ छायाचित्र

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 48-50
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

भारतीय ज्ञान परंपरा में हिन्दी साहित्य की भूमिका

डॉ. ज्योति पटेल
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),
प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय जिला –टीकमगढ (म.प्र.) -472001

सारांश :- भारतीय ज्ञान परम्परा एक समृद्ध और प्राचीन साँस्कृतिक धरोहर है। जिसमें विविध भाषाओं और साहित्य ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हिन्दी साहित्य ने इस परम्परा में न केवल भाषाई समृद्धि प्रदान की है। बल्कि भारतीय समाज और संस्कृति के विचारों को भी गहराई से प्रतिबिंवित किया है। हिन्दी साहित्य की भूमिका को जमझने के लिए इसके इतिहास विकास और ज्ञान परंपरा के विभिन्न आयामों में इसके प्रभाव को जानना आवश्यक है।

भारतीय ज्ञान परंपरा को हिन्दी साहित्य ने सामाजिक, धार्मिक और दार्शनिक विचारों को जन-जन तक पहुँचाने का माध्यम रहा है । प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक हिन्दी साहित्य ने लोगों के जीवन मूल्यों, नैतिकता और सांस्कृतिक चेतना को प्रोत्साहित किया है, हिन्दी साहित्य के माध्यम से वेद, उपनिषद और पुरोणों के तत्व हिन्दी में सरल और व्यापक रूप में उपलब्ध कराए गए, जिससे आम जन भी ज्ञान के दायरे में आए। इसके अतिरिक्त भक्ति आन्दोलन ने हिन्दी साहित्य को एक नया आयाम दिया । कबीर, तुलसीदास, मीराबाई जैसे महाकवियों ने हिन्दी में ऐसी रचानाये की, जो केवल आध्यात्मिक ज्ञान हीं नहीं बल्कि सामाजिक समानता और नैतिक मूल्यों का प्रचार भी करती थी। इन कवियों की रचनाएँ भारतीय ज्ञान परम्परा में नये अर्थ और दिशा प्रदान करती है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य समाज की समस्याओं को सामने लाने राष्ट्रीय चेतना जगाने और सास्कृतिक पुनरुत्थान में भी एक प्रमुख शक्ति बनकर उभरा। प्रेमचन्द्र, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा जैसे साहित्यकारों ने मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक परिवर्तन की बातें हिन्दी साहित्य के माध्यम से विश्व के समक्ष प्रस्तुत की । यह साहित्य ज्ञान के साथ-साथ समाजशास्त्रए, राजनीति और इतिहास से जुड़ा हुआ है। जो भारतीय ज्ञान परम्परा को व्यापक बनाता है । हिन्दी साहित्य ने शिक्षा एवं ज्ञान के प्रसार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में हिन्दी माध्यम से ज्ञान सुलभ हुआ । जिससे अनेक लोगों की बौद्धिक उन्नति हुई है । यही कारण है

कि हिन्दी साहित्य का अध्ययन केवल भाषा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक चेतना का स्त्रोत भी है।

भारतीय ज्ञान परम्परा वेद, उपनिषद, दर्शन, और हिन्दी साहित्य में अटूट संबंध है जहॉं ज्ञान परम्परा साहित्य का आधार है और साहित्य उस ज्ञान को लोकभाषा में अभिव्यक्त व संरक्षित करता है।

भारतीय ज्ञान परम्परा और हिन्दी साहित्य के अंतसंबंध के मुख्य बिन्दु :-

01- मूल स्त्रोत:- हिन्दी साहित्य की आत्मा में भारतीय ज्ञान परम्परा- वेद,पुराण, उपनिषद, गीता, रामायण और महाभारत का दर्शन निहित है।

02- भक्तिकाल में ज्ञान का लोकव्यापीकरण :- निर्गुण संतों (कबीर) ने ज्ञान और आत्मज्ञान को तथा सगुण भक्तों(तुलसी) ने नीति और मर्यादा को साधारण भाषा में अभिव्यक्त किया।

03- दार्शनिक चिंतन :- हिन्दी साहित्य में अद्वैतवाद वेदांत और योग दर्शन का समावेश है। छायावादी कवियों (प्रसाद, निराला) ने प्रकृति और रहस्यात्मकता के माध्यम से भारतीय आध्यात्मिक चिंतन को नई दिशा दी।

04- नैतिकता और सांस्कृतिक मूल्य:- हिन्दी साहित्य ने प्राचीन ज्ञान के माध्यम से भारतीय नैतिकता, कर्मफल और आर्दर्शों (जैसे रामचरितमानस में मर्यादा) को संरक्षित रखा।

05- आधुनिक काल में निरंतरता:- भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त जैसे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में राष्ट्रवाद और सांस्कृतिक चेतना का समावेश का भारतीय ज्ञान परम्परा को जन-जन तक पहुँचाया है ।

साहित्य में निहित अमूल्य शक्ति परम्परा:- आज सम्पूर्ण विश्व वैदिक परम्पराओं में समाहित शक्ति परम्परा के आवरण को अपना रहा है। इन परम्पराओं का वैश्विक धरातल पर गहरा प्रभाव पड़ा है। योग की शक्ति में निहित जीवन शैली ने मानव को तनावमुक्त वातावरण प्रदान किया है। सात्विक आहार-विहार ने स्वस्थ एवं सुखी जीवन दिया है। आज सम्पूर्ण संसार बड़े-बड़े ऋषियों, मुनियों, कवियों और साहित्यकारों द्वारा प्रतिपादित शक्ति साधनाओं को अपना रहा है। यह भारतीय ज्ञान परम्पराओं का प्रत्यक्ष प्रभाव है।

प्रेमशक्ति और भक्ति परम्परा:- प्रेमशक्ति और भक्ति परम्परा में प्रेम को मुख्य आधार बनाया गया है तथा गीतों भजनों के माध्यम से अपनी भक्ति, चिंतन और भगवान के प्रति समर्पण की बात प्रमुखता से उल्लिखित की गई है। मीरा और जायसी ने इस भक्ति का सर्वाधिक प्रचार-प्रसार किया। जायसी ने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलोकिक अनुभूति कराई। मीरा ने तो श्री कृष्ण को ही अपना सवस्व मान लिया था

''मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई ॥''

इसी प्रकार भक्ति काव्य में कबीर का प्राथ ही राम ही है। लेकिन उनका कोई आकार नहीं है। कबीरदास इसके स्पष्टीकरण में कहते है:-

''दूजा भ्रम तीज लीजै एक राम को नामा
कहे कबीर सुनो भाई साधो, एकै सबही का ठामा''

संपूर्ण हिन्दी साहित्य ज्ञान का वह कल्पवक्ष है एक-एक पत्ता नवीन कलाओं और भावनाओं से आप्लावित है। हिन्दी साहित्य ने अपने अन्तर्गत 64 कलाओं और 14 विद्याओं को समेटा हुआ है। सार धातुओं वाली यह पृथ्वी चार वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अर्थववेद छः वेदांग- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष के साथ धर्मशास्त्र, आयुर्वेद मीमांस और वेदान्त मिलकर 14 विधाओं में समाहित तथा 64 कलाओं से सुसज्जित है, जिसमे निर्मित परम्पराएँ पूरे विश्व को ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, कला, कौशल और अनुसंधान से जोड़ रही है।

भारतीय ज्ञान परम्पराओं में समाहित संत साहित्य अपने आप में अद्वितीय है। भारतीय ज्ञान परम्परा वेदों, उपनिषदों और प्राचीन शास्त्रों पर आधारित एक समृद्ध बहुआयामी विरासत है। जो नैतिक आध्यात्मिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संगम है। यह मानवता पर्यावरण संरक्षण समग्र स्वास्थ (आयुर्वेद, योग) और सतत विकास के लिए आवश्यक मार्गदर्शक सिद्धान्तों के साथ-साथ आधुनिक अनुसंधान (जैसे गषित खगोल विज्ञान) की नींव भी प्रदान करती है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि भारतीय ज्ञान परम्परा निर्मल, निश्चल, पवित्र, निर्झरणी है जिसमें ऋषि मुनियों संस्कार पद्धतियॉ, कर्म शक्ति और जीवन्त भावनाएं समाहित हैं। यह परंपरा किसी एक तत्व को लेकर चलने वाली नहीं बल्कि एक विशाल विचारधारा है जिसनें भारत के कण-कण में समाहित ज्ञान को स्थान दिया है, यह ज्ञान परम्परा ऋषियों की ऋचाओं के समान अनंत प्रकाश वाली है, जिसमे ज्ञान की समस्त धाराएँ अपने अपने स्थान पर तो प्रवाहित होती ही है साथ ही एक दूसरे के साथ सम्पृक होकर द्विगुठित हो उठती है। यही प्रकाश बिन्दु भारतीय ज्ञान परम्परा है। इस ज्ञान परम्परा की निर्झरणी में यदि हिन्दी साहित्य के प्रतिबिम्ब का दिग्दर्शन किया जाए, तो वह भी घृतधारा के समान दीप्तिमान होता हुआ नजर आता है। हिन्दी साहित्य से आप्लावित भारतीय ज्ञान परम्पराऍ लोकतन्त्र के वैशिष्टिय से परिपूर्ण होकर इस विश्व को निरन्तर पूर्णता का आभास कराती रही है। इसका प्रभाव विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में परिलक्षित हो रहा है।

हिन्दी साहित्य विश्व ज्ञान का वह सूर्य है, जो विविध विधा रूपी किरणों में प्रवाहित होते हुए सम्पूर्ण संसार को आलोकिक करता है। भारतीय ज्ञान परम्परा को प्रवाहित करने वाले इस साहित्य सूर्य की ओर यदि दृष्टिपात किया जाय तो देखते हैं कि यह अपनी किरणों से यह संसार की विविध यथार्थ भावनाओं को मूर्त रूप में प्रकाशित करने में अग्रणी है।

निष्कर्ष :- अंत में कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान परम्पराओं का विश्व पर अमिट प्रभाव है। वैश्विक धरातल पर चाहे राजनीति हो या समाजशास्त्र संस्कृति हो या सभ्यता, ज्ञान हो या कौशल योग हो या व्यवहार, भाषा हो या विज्ञान सभी क्षेत्रों में भारतीय ज्ञान परंपराएं अपना प्रभाव अभिव्यक्त कर रही है। इन परंपराओं से न केवल भारतवासी बल्कि पाश्चात्य देशवासी भी शिक्षा लेते हैं। पतंजलि की योग शिक्षाएँ उसे स्वास्थ्य की ओर ले जाती है। चरक की संहिता अनुसंधान के क्षेत्र को सफल बनाती है, तो सामवेद की संगीत विधा उसे मधुर संगीत से जोड़ती है। वही हिन्दी की सरलता प्रत्येक व्यक्ति को सहजता, सुगमता और करूणा से जोड़ देती है। भारतीय ज्ञान परंपरा में हिन्दी साहित्य का घृतधारा है, जिसमें समस्त भावनाऍ समाहित हैं। इसमें भक्ति भी है शिक्षा भी है, और समाज सुधार भी, इसमें बाल मनोरंजन भी है और युवाओं का मार्गदर्शन भी। इस प्रकार हिन्दी साहित्य भारतीय ज्ञान परंपरा का एक प्रमुख और अतुलनीय स्त्रोत है।

संदर्भ सूची :-

01-हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी (लोक भारती प्रकाशन 2016)

02-हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ० नरेन्द्र (मयूर पेपर बैक्स)

03-वैदिक साहित्य और संस्कृति - दैनिक भास्कर (मधुरिमा विशेषांक)

04-संत परम्परा - योगेन्द्र प्रसाद (लोकभारती प्रकाश)

05-कबीर (साहित्य और संदर्भ) - डॉ० बलदेव बाणी

Mobile no. – 9399141045 ईमेल – drjyotipatel0906@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 51-56
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

पूर्वी सिंहभूम जिले के सबर आदिम जनजाति - एक मानवशास्त्रीय अध्ययन

राजेश समीर कच्छप
शोधार्थी,
मानवशास्त्र विभाग सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला, पू. सिंहभूम

झारखंड में निवास करने वाली 32 जनजातियों में से एक सबर जनजाति विशेष रूप से संवेदनशील आदिम जनजातीय समूह में शामिल है। इनका निवास स्थान ऐतिहासिक रूप से जंगलों, पहाड़ों और नदी घाटियों के आसपास रहा है। “प्रिमिटिव ट्राइब्स ग्रुप ऑफ झारखंड सर्वे रिपोर्ट 2002-03” के अनुसार 11 प्रखंडों में विभाजित जिला में उनकी जनसंख्या लगभग 9282 थी। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले में सबरों की आबादी लगभग 9688 थी। यह समुदाय प्रकृति आधारित जीवन, पारंपरिक ज्ञान, शिकार, कंद-मूल संग्रह, शहद संग्रह, लघु वनोपज तथा सीमित कृषि पर आश्रित रहा है। औपनिवेशिक काल, औद्योगीकरण, वन कानून तथा आधुनिक विकास प्रक्रियाओं ने उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक ढांचे में अनेकों परिवर्तन किए हैं। इस लेख में पूर्वी सिंहभूम जिला के संदर्भ में सबर समुदाय के इतिहास, भौगोलिक वितरण, सामाजिक संरचना, संस्कृति, आजीविका, शिक्षा, स्वास्थ्य, सरकारी योजनाएं, वर्तमान समस्याओं तथा भविष्य की संभावनाओं का समग्र अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि - सबर जनजाति का उल्लेख प्राचीन भारतीय साहित्य और औपनिवेशिक अभिलेखों में मिलता है। मानवविज्ञानी इन्हें प्रोटो आस्ट्रेलायड प्रजाति से मानते हैं, जो संथाल, मुंडा और हो जनजातियों से मिलती जुलती है। भाषाविदों के अनुसार सबर ऑस्ट्रो एशियाटिक भाषा परिवार से जुड़ा माना जाता है, जो मुण्डा भाषा परिवार से संबंधित है। ब्रिटिश शासन काल में सन् 1871 ई. के “क्रिमिनल ट्राइबल एक्ट” के अंतर्गत इन्हें “आपराधिक जनजाति” घोषित किया गया था। स्वतंत्र भारत में इन्हें अनुसूचित जनजाति और कई राज्यों में विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह के रूप में मान्यता दी गई। झारखंड राज्य में इन्हें आदिम जनजाति के रूप में चिह्नित की गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1952 ईस्वी में ब्रिटिश सरकार द्वारा लगाए गए “क्रिमिनल ट्राईबल्स एक्ट” को भारत सरकार ने समाप्त कर दिया। भारत सरकार द्वारा इस एक्ट को समाप्त कर दिए जाने के बावजूद उनके सामाजिक जीवन पर कलंक और उत्पीड़न की छाप गहराई से पड़ी रही तथा अन्य समाजों के बीच उनकी सामाजिक भेदभाव और हाशियेकरण की विरासत बनी ही रही। आज भी सबर समुदाय अन्य समाज की तुलना में हाशिए पर है।

2. भौगोलिक वितरण - पूर्वी सिंहभूम जिला की घाटशिला, मुसाबनी, डुमरिया, चाकुलिया, पोटका, पटमदा, गुड़ाबांधा, धालभूमगढ़, बहरागोड़ा प्रखंडों के वनवर्ती क्षेत्रों, पहाड़ों तथा स्वर्णरेखा नदी के तटीय क्षेत्रों में सबर समुदाय की छोटी-छोटी बस्तियां पाई जाती है। चाकुलिया प्रखंड के सबर टोला, सोसाडीह, बिहारीपुर और कालापाथर, पोटका प्रखंड के सबरनगर, झरनाकोचा ओतेझारी गांव के सबर टोला, घाटशिला प्रखंड के पुखरिया, महुलिया, गालुडीह, टेंटला गांव के मीठाझरना टोला, मुसाबनी प्रखंड के हितबासा, नुतनडीह, तथा लखाईडीह में इनकी आबादी विशेष रूप से ज्यादा पाई जाती है। स्वर्णरेखा और खरकई नदी घाटियां उनके पारंपरिक निवास क्षेत्र रहे हैं। विशेष कर जमशेदपुर क्षेत्र में खनन और औद्योगिक विकास के कारण उनके पारंपरिक निवास स्थान सिमट गए हैं और इससे उन पर विस्थापन और आजीविका पर संकट बढ़ा है। सबरों की कुछ आबादी पश्चिम बंगाल के सीमावर्ती इलाकों में भी निवास करती है।

3. ामाजिक संरचना – सबर जनजाति की सामाजिक संरचना का मूल आधार परिवार है। परिवार पितृ सत्तात्मक होता है जिसमें पिता या परिवार का सबसे बड़ा पुरुष मुखिया होता है। ये लोग छोटे-छोटे परिवार समूहों में रहते हैं और आपसी सहयोग एवं सामूहिकता उनके सामाजिक जीवन की प्रमुख विशेषता है। इनमें संयुक्त परिवार की परंपरा सीमित रूप से देखने को मिलती है। आधुनिकता, दूसरे जातीय समूह से संपर्क तथा पलायन के कारण एकल परिवार की प्रचलन ज्यादा हो रही है। सबर समाज में गोत्र व्यवस्था पाई जाती है। गोत्र व्यवस्था के कारण इनमें बाह्य विवाह का नियम मान्य है। विवाह सरल रीति रिवाज से संपन्न होता है। इनके बीच दहेज प्रथा का प्रचलन नहीं है, बल्कि कई स्थानों पर दुल्हन मूल्य की परंपरा देखी जाती है। समाज में विधवा विवाह का भी प्रचलन है।

इनका ग्राम संगठन अत्यंत सरल होता है। इनके समाज में कोई जटिल प्रशासनिक व्यवस्था नहीं देखी जाती है। सामाजिक विवादों का निपटारा समुदाय के बुजुर्गों द्वारा आपसी सहमति से किया जाता है। सामाजिक नियंत्रण नैतिक मूल्यों और सामुदायिक दबाव पर आधारित होता है। धार्मिक आधार पर सबर प्रकृति पूजा में विश्वास करते हैं। जंगल, पहाड़, नदियां और पेड़ उनके प्रमुख आराध्य है। ये लोग पूर्वजों की आत्मा, भूत प्रेत तथा प्राकृतिक शक्तियों में आस्था रखते हैं। इनके पर्व त्यौहार सीमित होते हैं। इनके बीच सामूहिक पूजा का विशेष महत्व है। आर्थिक रूप से सबर जनजाति शिकार, कंदमूल संग्रह और वन उपज पर निर्भर रही है। वर्तमान समय में वन संसाधनों की कमी के कारण यह खेतीहर मजदूर और अन्य श्रमिक के रूप में कार्यरत हैं। इस तरह सबर जनजाति की सामाजिक संरचना सरल, प्रकृति आधारित और सामूहिक जीवन मूल्य पर संरक्षित है।

4. भाषा, संस्कृति और धर्म - सबरों की भाषा स्थानीय मुंडा, संथाली और हिंदी के प्रभाव से विकसित हुई है। वर्तमान में वे बांग्ला और उड़िया भाषा से भी काफी प्रभावित हैं। सबर जनजाति की कोई स्वतंत्र लिखित भाषा अभी तक विकसित नहीं हो पाई है। शिक्षा और बाहरी संपर्क बढ़ने के कारण उनकी नई पीढ़ी में हिंदी का प्रयोग ज्यादा होने लगा है। जिससे पारंपरिक भाषा धीरे-धीरे लुप्त होने की कगार पर है। मौखिक परंपरा में लोककथाएं, गीत और कहावतें शामिल है।

सबर जनजाति की संस्कृति अत्यंत सरल और प्रकृति से जुड़ी हुई है। इनके रहन-सहन, खान-पान और वस्त्र सभी स्थानीय संसाधनों पर आधारित है। सामूहिक समारोहों में नृत्य, गीत और संगीत उनका अभिन्न अंग है। सरहुल, करमा और सोहराय पर्व तथा अनुष्ठानों में नृत्य, गीत और संगीत का अद्भुत समावेश देखने को मिलता है। मकर संक्रांति के अवसर पर मनाई जाने वाली टुसु पर्व में भी वे बढ़ चढ़ कर अपनी भागीदारी सुनिश्चित करते हैं। उनके सभी पर्व प्रकृति पूजा और कृषि चक्र से जुड़े हुए हैं।

धार्मिक दृष्टिकोण से सबर जनजाति प्रकृति पूजक है। ये लोग जंगल, पहाड़, नदियां, वृक्ष और पृथ्वी को देव तुल्य मानते हैं। सबर समाज में पूर्वजों की आत्मा, भूत प्रेत और प्राकृतिक शक्तियों में गहरी आस्था पाई जाती है। उनके धार्मिक अनुष्ठान सरल होते हैं। जाहेरथान में साल वृक्ष और पूर्वजों की आत्माओं की आराधना की जाती है। सबर समाज के बीच किसी विशेष मंदिर या मूर्ति पूजा की परंपरा नहीं है, लेकिन अन्य समाजों के संपर्क में आने के कारण धीरे-धीरे कुछ सबर परिवार मूर्ति पूजा की ओर आकर्षित होते देखे जा सकते हैं।

5. आजीविका तथा अर्थव्यवस्था - परंपरागत रूप से सबर शिकार, मछली पकड़ने और कंद-मूल, जंगली फल, शहद, महुआ फूल, महुआ बीज, साल बीज, केंदु पत्ता, लकड़ी जैसे लघु वनोपज के संग्रह पर निर्भर रहे हैं। वनों की कटाई और बढ़ती जनसंख्या के कारण शिकार अब लगभग समाप्त हो चुका है। लेकिन संग्रह आधारित आजीविका आज भी इनके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। वन संसाधनों में कमी, वन संरक्षण कानून और जंगलों के क्षरण के कारण समुदाय की पारंपरिक अर्थव्यवस्था प्रभावित हुई है। वर्तमान में इन सब के साथ ही सीमित कृषि जैसे- धान, मक्का, मड़वा (कोदो) और दिहाड़ी तथा खेतिहर मजदूरी उनकी आजीविका के प्रमुख स्रोत बन गए हैं। सबर महिलाओं की आत्मनिर्भरता के लिए कुछ स्थानों पर शहद परिरक्षण की विशेष ट्रेनिंग दी गई है और उपकरण प्रदान किए गए हैं, जिससे एक छोटे पैमाने पर "मीठी क्रांति" जैसा व्यवसाय विकसित हो रहा है। वर्तमान समय में सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार का प्रयास किया जा रहा है, फिर भी शिक्षा, कौशल विकास और अस्थाई आजीविका के अभाव में उनकी आर्थिक स्थिति संतोषजनक नहीं हो पाई है। सबर समाज को सशक्त बनाने के लिए दीर्घकालिक और समग्र प्रयास की आवश्यकता है।

6. शिक्षा - शिक्षा के क्षेत्र में यह जनजाति अत्यंत पिछड़ी हुई है। जिले के सबरों में साक्षरता दर बहुत कम है। ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक दुर्बलता से यह समुदाय अब तक औपचारिक शिक्षा से वंचित रहा है। पारंपरिक रूप से सबर जनजाति की शिक्षा अनौपचारिक और अनुभव आधारित रही है। बच्चे अपने परिवार और समुदाय के बुजुर्गों से शिकार, वन उपज संग्रह, जीविका कौशल, लोक ज्ञान और सांस्कृतिक परंपराएं सीखते हैं। लिखित शिक्षा या विद्यालय शिक्षा का उनके पारंपरिक जीवन में कोई विशेष स्थान नहीं था। भाषा की बाध्यता, गरीबी, दूरस्थ विद्यालय, कुपोषण, अस्वस्थता, नशापान, जुआ और बच्चों का पारिवारिक श्रम में संलग्न होना अशिक्षा का मुख्य कारण है। आवासीय विद्यालय, छात्रावास, छात्रवृतियां, मिड डे मील तथा कई सरकारी योजनाओं की सुविधाओं के बावजूद सबर जनजातियों की शैक्षणिक स्थिति अत्यंत दयनीय है। हालांकि जिले के कुछ क्षेत्रों में इन योजनाओं का सकारात्मक प्रभाव देखा गया है। लेकिन जागरूकता की कमी और प्रशासनिक कठिनाइयों के कारण अपेक्षित सफलता नहीं मिल पाई है। वर्तमान में कुछ सबर बच्चे आंगनबाड़ी केंद्रों, सरकारी विद्यालयों, कस्तूरबा बालिका आवासीय विद्यालय, आश्रम विद्यालयों तथा महाविद्यालय में अध्यनरत हैं। जिले के बहरागोड़ा महाविद्यालय और घाटशिला महाविद्यालय में कुछ सबर विद्यार्थी स्नातक की पढ़ाई कर रहे हैं। लेकिन इनकी संख्या काफी कम है। बहरागोड़ा महाविद्यालय से 5-6 सबर विद्यार्थी विभिन्न सत्रों में बी. एड. की पढ़ाई भी कर चुके हैं। सबरों की शैक्षणिक स्थिति में सुधार हेतु कई स्वयं सेवी संस्थाएं और सामाजिक संगठन कार्य कर रही है। सबर समुदायों के बीच मातृभाषा आधारित शिक्षा, स्थानीय शिक्षकों की नियुक्ति और आजीविका से जुड़ी शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए तो उनकी शैक्षणिक स्थिति में सुधार संभव है। सबर जनजाति की शिक्षा की स्थिति चुनौतीपूर्ण है परंतु सही नीतियों और निरंतर प्रयासों से इनमें सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है।

7. स्वास्थ्य और पोषण - सबर समुदाय की स्वास्थ्य और पोषण संबंधी स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। सबर व्यक्तियों में डायरिया, श्वसन रोग, एनीमिया, मलेरिया, टीवी, त्वचा रोग, और मातृ शिशु स्वास्थ्य समस्याएं व्याप्त है। स्वच्छ

पेयजल शौचालय और स्वच्छता की कमी उनकी बीमारियों को और बढ़ाती है। पारंपरिक रूप से सबर जनजाति स्वस्थ उपचार के लिए जड़ी बूटियां, वनस्पतियों और ओझा गुनी पर निर्भर रहे हैं। आज भी कई परिवार के सदस्य बीमार होने पर पहले पारंपरिक उपचार को प्राथमिकता देते हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की दूरी और संसाधनों की कमी के कारण भी वे आधुनिक स्वास्थ्य उपचारों की सुविधा नहीं ले पा रहे हैं। पारंपरिक उपचार पद्धति पर उनकी निर्भरता बनी रहती है। सरकार द्वारा सबर जनजाति के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, उप स्वास्थ्य केंद्र, आंगनबाड़ी सेवाएं, टीकाकरण योजना, पोषण आहार और राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अंतर्गत विभिन्न योजनाएं चलाई जा रही है। कुछ क्षेत्रों में इन योजनाओं का लाभ मिल रहा है, परंतु दुर्गम बस्तियां, जागरूकता की कमी और कर्मियों की अनुपस्थिति के कारण इनका प्रभाव सीमित रह गया है। सबरों की अस्वस्थता का प्रमुख कारण उनके बीच अत्यधिक नशापान एवं अशिक्षा भी है। पोषण की बात की जाए तो सबर समुदाय में कुपोषण एक गंभीर समस्या है, विशेष कर बच्चों, गर्भवती महिलाओं और वृद्धों में। इनका भोजन मुख्यतः चावल, कंदमूल, साग सब्जी, जंगली पशु-पक्षी और सीमित मात्रा में दाल पर आधारित होता है। प्रोटीन, विटामिन और खनिज तत्वों की कमी इनके भोजन में आम बात है। अनियमित भोजन और खाद्य असुरक्षा के कारण कई बार भुखमरी जैसी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। स्वस्थ एवं पोषण संबंधी कमियों के कारण इनमें मातृ एवं शिशु मृत्यु दर भी अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। यदि मातृ शिशु स्वस्थ, नियमित पोषण आपूर्ति, स्वास्थ्य शिक्षा और मोबाइल चिकित्सा इकाइयों की व्यवस्था कर दिए जाए तो सबर जनजाति के स्वास्थ्य और पोषण स्तर में सुधार संभव हो सकता है।

8. PVTG का दर्जा और सरकारी योजनाएं – सबर जनजाति को भारत सरकार द्वारा विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (PVTG) का दर्जा प्राप्त है। यह दर्जा उन जनजातियों को दिया जाता है जिनकी संख्या घट रही होती है, साक्षरता दर बहुत कम हो, आजीविका के साधन अत्यंत सीमित हो तथा जो विकास की मुख्य धारा से लगभग कटी हुई हो। झारखंड के पूर्वी सिंहभूम जिले के सबर समुदाय इन्हीं विशेषताओं के कारण आदिम जनजाति की श्रेणी में शामिल है। आदिम जनजाति का दर्जा मिलने के बाद सबर समुदाय के लिए केंद्र और राज्य सरकार द्वारा अनेक विशेष कल्याणकारी योजनाएं संचालित की जा रही है। इनका मुख्य उद्देश्य शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास और आजीविका के क्षेत्र में सुधार लाना है। शिक्षा के क्षेत्र में आश्रम विद्यालय, आवासीय विद्यालय, छात्रवृति, निशुल्क पुस्तक, निशुल्क साइकिल और पोशाक की व्यवस्था की गई है, ताकि सबर बच्चों को मुख्य धारा की शिक्षा से जोड़ा जा सके। स्वस्थ के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, आंगनबाड़ी केंद्र, टीकाकरण, पोषण आहार तथा मातृ शिशु सुरक्षा कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। आजीविका सशक्तिकरण हेतु मनरेगा, मुख्यमंत्री पशु धन विकास योजना, वन धन योजना, स्वयं सहायता समूह और कौशल विकास प्रशिक्षण जैसी योजनाएं चलाई जा रही है। आवास के लिए इंदिरा आवास योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, बिरसा आवास योजना, पेयजल के लिए जल जीवन मिशन तथा खाद्य सुरक्षा हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली से रियायती दरों पर अनाज उपलब्ध कराया जा रहा है। इसके अतिरिक्त झारखंड सरकार द्वारा आदिम जनजातीय विकास प्राधिकरण के माध्यम से विशेष कार्य योजनाएं बनाई जाती है, जिसमें सबर बस्तियों के लिए सड़क, बिजली, राशन, पेंशन और सामुदायिक विकास पर जोर दिया जाता है। जागरूकता की कमी, प्रशासनिक उदासीनता और दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण योजनाओं का पूरा लाभ समुदाय तक नहीं पहुंच पाता है। उचित कागजात की कमी के कारण भी इस समुदाय को निःशुल्क सरकारी योजनाओं से वंचित कर दिया जाता है। कभी-कभी बिचौलिए द्वारा भी इनको निःशुल्क योजनाओं के माध्यम से मिलने वाली राशि को गबन कर दिया जाता है। आवश्यकता है कि योजनाओं का क्रियान्वयन

स्थानीय भाषा और संस्कृति के अनुरूप हो तथा समुदाय की प्रत्यक्ष भागीदारी सुनिश्चित की जाए तभी सबर जनजाति का वास्तविक सामाजिक और आर्थिक विकास संभव हो सकेगा।

9. वर्तमान चुनौतियां – परंपरागत रूप से वन आधारित तथा सामुहिक जीवन जीने वाली सबर जनजाति आज सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से अनेक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं जैसे – **आजीविका और आर्थिक असुरक्षा** – सबर जनजाति की आजीविका मुख्यतः वनोपज संग्रह, सीमांत कृषि और दैनिक मजदूरी पर निर्भर है। वन क्षेत्र सिमटने से वनोपज पर निर्भरता प्रभावित हुई है। स्थाई रोजगार के अवसरों का अभाव है। पलायन, मजदूरी में शोषण और अनियमित आय के कारण गरीबी और ऋणग्रस्तता की स्थिति बनी रहती है।

अधिकार से जुड़ी चुनौतियां – पारंपरिक भूमि पर सबरों का स्वामित्व का अभाव है। वन अधिकार अधिनियम (2006) का सीमित क्रियान्वयन से उनको हानि हुई है। खनन, औद्योगीकरण एवं परियोजना से विस्थापन के कारण भूमि से वंचित होना उनकी सामाजिक तथा आर्थिक ढांचे को कमजोर करता है।

शिक्षा की कमी - विद्यालयों की दूरी एवं भाषा की समस्या के कारण इनकी साक्षरता दर अत्यंत निम्न है। बाल श्रम तथा मौसमी पलायन के कारण नई पीढ़ी मुख्य धारा से कटी हुई है।

स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी चुनौतियां - स्वास्थ्य सेवाओं की सीमित पहुंच तथा स्वच्छ पेयजल एवं स्वच्छता की कमी के कारण कुपोषण, एनीमिया, संक्रामक रोग, मातृ एवं शिशु मृत्यु दर अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है।

सामाजिक हाशियाकरण और भेदभाव - प्रशासनिक उपेक्षा, जातीय एवं सांस्कृतिक भेदभाव, समाज की मुख्यधारा से अलगाव इनमें आत्मविश्वास की कमी और सामाजिक बहिष्करण को बढ़ावा दे रही है।

सांस्कृतिक क्षरण - युवा पीढ़ी का पारंपरिक जीवन से विमुख होना, बाहरी संस्कृतियों का प्रभाव, परंपरागत ज्ञान, भाषा, रीति रिवाजों का ह्रास सांस्कृतिक अस्मिता के लिए गंभीर चुनौती है।

सरकारी योजनाओं का सीमित लाभ - प्रशासनिक जटिलताएं, योजनाओं की जानकारी का अभाव, बिचौलियों की सक्रियता, जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन की कमी के परिणामस्वरूप कल्याणकारी योजनाओं का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता है।

10. भविष्य की संभावनाएं – पूर्वी सिंहभूम जिला में जहां एक ओर औद्योगीकरण और शहरीकरण तीव्र गति से बढ़ रहा है, वही सबर जनजाति लंबे समय से सामाजिक-आर्थिक उपेक्षा, गरीबी और हाशियाकरण का सामना करती आ रही है। इसके बावजूद वर्तमान नीतिगत हस्तक्षेप जागरूकता और समावेशी विकास की अवधारणा ने इस समुदाय के लिए भविष्य की नई संभावनाएं उत्पन्न की है।

भविष्य की सबसे बड़ी संभावना शिक्षा से जुड़ी है। सरकारी विद्यालयों, आवासीय विद्यालयों, छात्रावासों और छात्रवृत्ति योजनाओं से सबर बच्चों का विद्यालयों में नामांकन बढ़ रहा है। शिक्षा के विस्तार से इनमें सामाजिक जागरूकता भी बढ़ेगी। परंपरागत कार्यों तथा परंपरागत वन आधारित कार्यों के साथ-साथ बकरी पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन, भेड़ पालन सुकर पालन, मशरूम उत्पादन, लाख की खेती और हस्तशिल्प जैसे कार्यों में बड़ी संभावनाएं हैं। स्थानीय उत्पादों को बाजार और वन धन केंद्रों से जोड़ने पर उनकी आय में स्थाई वृद्धि हो सकती है। सरकारी स्वास्थ्य केंद्र, मोबाइल चिकित्सा सेवा और पोषण योजनाओं से कुपोषण एवं बीमारियों में कमी आ सकती है। जागरूकता बढ़ाने पर मातृ शिशु मृत्यु दर घटेगा और जीवन स्तर में सुधार भी होगा। सबर समुदाय की भाषा, लोकगीत, नृत्य और परंपरागत ज्ञान अमूल्य धरोहर है। वन अधिकार पट्टा, आवास योजनाएं, पेंशन, राशन, मनरेगा और पी.भी.टी.जी. विकास योजनाएं यदि सही ढंग से लागू हो तो यह समुदाय मुख्यधारा से जुड़ सकेगा।

निष्कर्ष : पूर्वी सिंहभूम जिले के सबर आदिम जनजाति भारत की प्राचीन सांस्कृतिक विरासत का अभिन्न अंग है। इतिहास की उपेक्षा और आधुनिक विकास के दबावों के बावजूद उनकी सांस्कृतिक पहचान और प्रकृति आधारित ज्ञान आज भी जीवित है। उनकी सामाजिक संरचना पितृसत्तात्मक, गोत्र आधारित, पंचायत केंद्रित और सामूहिक जीवन पर आधारित रही है। सबर समाज ने कठिन से कठिन भौगोलिक तथा आर्थिक परिस्थितियों में भी अपने समुदाय को एकजुटता प्रदान की और संजोए रखा। वर्तमान समय में सबर जनजाति के सामने आजीविका संकट, भूमि एवं वन अधिकारों की अनिश्चितता, शिक्षा और स्वास्थ्य की कमी, सामाजिक हाशियाकरण तथा सांस्कृतिक क्षरण जैसी बहुआयामी चुनौतियां खड़ी है। औद्योगिकरण और शहरीकरण के दबाव ने इन समस्याओं को और भी गंभीर बना दिया है।

फिर भी, भविष्य की संभावनाएं पूर्णतया निराशाजनक नहीं है। वन अधिकार अधिनियम, पी.भी.टी.जी. विशेष योजनाएं, शिक्षा और स्वास्थ्य में सरकारी हस्तक्षेप, महिला सशक्तिकरण तथा सांस्कृतिक संरक्षण के प्रयास से सबर समाज को आत्मनिर्भर और सम्मानजनक जीवन की ओर अग्रसर किया जा सकता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि विकास को कल्याण से जोड़ते हुए समुदाय आधारित संवेदनशील और सहभागी दृष्टिकोण अपनाया जाए ताकि सबर जनजाति को मुख्यधारा में सम्मिलित करते हुए उनकी सामाजिक सांस्कृतिक पहचान को भी संरक्षित रखा जा सके।

संदर्भ सूची :

1. बोस, एन.के. (1967) ट्राइबल लाइफ इन इंडिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
2. दुबे, एस. सी. (1998) इंडियन सोसायटी, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
3. सिंह, के. एस.(1994) द शेड्यूल्ड ट्राइब्स, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।
4. सेंसस ऑफ इंडिया (2011) प्राइमरी सेंसस एब्सट्रेक्ट: शेड्यूलड ट्राइब झारखण्ड।
5. डा. रामदयाल मुंडा ट्राइबल वेलफेयर रिसर्च इंस्टीट्यूट रांची (2016) स्टडीज ऑन पी.भी.टी.जी. ऑफ झारखंड, गवर्नमेंट ऑफ़ झारखंड।
6. सरकार, ए. (20 अक्टूबर 2020) द सबर ऑफ सिंहभूम, (फोटो एस्से) द इंडियन फोरम । मिनिस्ट्री ऑफ ट्राइबल अफेयर्स (2020) पार्टिकुलरली वलनरेबल ट्राइबल ग्रुप्स, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, https://tribal.nic.in
7. https://www.in.undp.orgq

rskachhap00@gmail.com
Mb.7903670283

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 57-60
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

The Role and Relevance of Clinical Sociology in Contemporary Society

Karunarathne Rasika R A,
Research Scholar,
Department of Post Graduate Studies and Research in Sociology,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje.
ORCID 0000-0002-5681-2919
Praveena D,
Department of Postgraduate Studies and Research in Political Science,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje
ORCID 0009-0002-9710-5572

Abstract
This study examines the role of clinical sociology in contemporary society. Clinical sociology is an applied field that connects sociological theory with practical intervention to address social problems. The main objectives of the study are to examine the concept and scope of clinical sociology, analyze its role at individual, group, and community levels, understand how sociological theories guide interventions, and compare it with social work. The study is based on secondary data collected from books, journal articles, and official documents. A descriptive and thematic approach was used to analyze the information. The findings reveal that clinical sociology is intervention-oriented, theory-based, and focused on structural causes of social problems. It promotes long-term social change and social justice. The study concludes that clinical sociology plays a vital role in bridging theory and practice and remains highly relevant in addressing complex social challenges in modern society.
Key Words: Clinical Sociology, Social Change, Social Intervention, Social Justice, Social Work

01. Introduction

Clinical sociology is an applied branch of sociology that focuses on understanding and solving social problems at the individual, group, and community levels. Unlike traditional sociology, which mainly studies social patterns and theories, clinical sociology directly intervenes in real-life situations to bring about positive social change. It connects sociological knowledge with practical action. According to Louis Wirth (1931), sociology should not only analyze society but also contribute to solving social problems. This idea forms the foundation of clinical sociology today. According to Jan Marie Fritz (2008), clinical sociology is the application of sociological theory and research methods to the assessment, intervention, and evaluation of social situations in order to improve social life and promote social justice.

In the current society, rapid social changes such as urbanization, globalization, migration, family transformation, digitalization, and inequality have created new social challenges. Issues like mental health problems, domestic violence, poverty, substance abuse, discrimination, and social isolation require not only psychological or medical solutions but also sociological understanding. Clinical sociologists examine how social structures, culture, power relations, and institutions influence personal and group experiences. As explained by Jan Marie Fritz (2008), clinical sociology involves assessment, intervention, and evaluation to improve social life and promote social justice.

Clinical sociology is especially important in multicultural and diverse societies. It helps individuals and communities understand how social norms, gender roles, class, ethnicity, and religion shape their lives. In this sense, clinical sociology works closely with social work, counselling, and community development, but it maintains a distinct sociological perspective. In contemporary society, where social inequalities and conflicts are increasing, the role of clinical sociology has become more relevant than ever. It not only diagnoses social problems but also designs interventions to empower individuals and strengthen communities. Therefore, clinical sociology serves as a bridge between sociological theory and social action, aiming to create a more just and inclusive society.

02. Objectives

1. To examine the concept and scope of clinical sociology in contemporary society.
2. To analyze the role of clinical sociologists in addressing social problems at individual, group, and community levels.
3. To understand how clinical sociology applies sociological theories in practical interventions for social change.
4. To compare clinical sociology with social work in terms of approach, methods, and professional focus.

03. Methodology

This study is based on secondary data collected from books, journal articles, research papers, and official reports related to clinical sociology and social work. The information was analyzed using a descriptive and thematic approach. Key themes such as the concept, scope, applications, and differences from social work were systematically organized to provide a clear understanding of the topic without conducting primary research.

4.1. Concept and Scope of Clinical Sociology

Clinical sociology is an applied field that links sociological theory with practical intervention. It focuses on the assessment, diagnosis, intervention, and evaluation of social problems to promote positive social change (Fritz, 2008). Rather than only studying society, it actively works to improve social conditions.

In contemporary society, rapid changes such as globalization, migration, urbanization, digital communication, family transformation, and economic inequality have expanded its scope. Problems like mental health stress, domestic violence, youth unemployment, and social exclusion are shaped by structural factors and social institutions such as family, education, religion, economy, and politics.

Today, clinical sociologists work in areas including community development, policy analysis, conflict resolution, organizational consultation, and social justice advocacy. Their work in NGOs, schools, hospitals, and government agencies shows that clinical sociology bridges theory and practice and plays a vital role in addressing modern social problems.

4.2. Role at Individual, Group, and Community Levels

Clinical sociology works at multiple levels of society. At the individual level, it helps people understand the connection between personal troubles and broader social structures, reflecting the idea of the sociological imagination (Mills, 1959). At the group level, clinical

sociologists assist families and organizations in resolving conflicts and improving cooperation. At the community level, they promote participation, strengthen social networks, and design programs for marginalized groups. This reflects the view that sociology should actively contribute to solving social problems (Wirth, 1931).

4.3. Application of Sociological Theories

Clinical sociology applies major sociological theories to practical intervention. Conflict theory helps analyze inequality and power differences, symbolic interactionism explains social meanings and stigma, and structural functionalism examines institutional weaknesses. The process involves assessment, intervention, and evaluation to ensure systematic and theory-based action (Fritz, 2008).

4.4. Comparison with Social Work

To understand the similarities and differences between clinical sociology and social work. Although both fields focus on improving human well-being and promoting social justice, they differ in their orientation and methods.

Clinical sociology is grounded in sociological theory and focuses on structural and systemic factors. It emphasizes analyzing institutions, power relations, and social structures. Clinical sociologists often work on community-level interventions, policy reforms, and organizational change.

Social work, in contrast, is a professional practice field that focuses more on direct service and support. According to the International Federation of Social Workers (2014), social work promotes social change and empowerment through direct practice and service delivery. Social workers provide counseling, case management, crisis intervention, and welfare services to individuals and families.

In simple terms, social work mainly helps individuals and families manage immediate problems, while clinical sociology places greater emphasis on structural causes and long-term systemic change. Social work training is practice-oriented with field placements, whereas clinical sociology is closely connected with sociological research and theoretical analysis.

However, both professions share common goals such as promoting social justice, empowerment, and improving the quality of life. In many situations, they may collaborate in areas such as community development, mental health programs, and poverty reduction initiatives

5. Key Findings

- Clinical sociology is an applied and intervention-oriented branch of sociology.
- The scope of clinical sociology has expanded due to rapid social change and emerging social problems.
- Clinical sociologists work at individual, group, and community levels.
- Sociological theories guide assessment, intervention, and evaluation processes.
- The field emphasizes structural and systemic causes of social problems.
- Clinical sociology promotes long-term social change and social justice.
- Clinical sociology and social work share similar goals but differ in approach and professional focus.

6. Conclusion

In conclusion, this study highlights that clinical sociology plays a significant role in contemporary society by connecting sociological theory with practical action. It is not limited to understanding social problems but actively works to solve them through systematic assessment, intervention, and evaluation. In a world marked by rapid social change, inequality, and complex social challenges, clinical sociology provides a meaningful framework to address issues at individual, group, and community levels.

The study also shows that clinical sociology applies major sociological theories to design practical strategies for social change. It focuses not only on personal difficulties but also on the structural and systemic causes behind them. By emphasizing long-term reform, empowerment, and social justice, clinical sociology contributes to sustainable social development.

Furthermore, while clinical sociology and social work share similar goals, they differ in approach and professional focus. Clinical sociology is more theory-based and structure-oriented, whereas social work is more practice-based and service-oriented. Despite these differences, both fields can work together to promote human well-being and social justice.

References

1. Comte, A. (1851). *System of Positive Polity*. London: Longman.
2. Fritz, J. M. (2008). *Clinical Sociology*. In C. D. Bryant & D. L. Peck (Eds.), *21st Century Sociology: A Reference Handbook*. Sage Publications.
3. Fritz, J. M. (2008). *Clinical Sociology*. In C. D. Bryant & D. L. Peck (Eds.), *21st Century Sociology: A Reference Handbook*. Sage Publications.
4. Fritz, J. M. (2008). Clinical sociology. In C. D. Bryant & D. L. Peck (Eds.), *21st century sociology: A reference handbook* (Vol. 2, pp. 435–444). Sage Publications.
5. International Federation of Social Workers. (2014). *Global Definition of Social Work*.
6. Mills, C. W. (1959). *The Sociological Imagination*. Oxford University Press.
7. Wirth, L. (1931). *Clinical Sociology*. *American Journal of Sociology*, 37(1), 49–66.

rasike2010@gmail.com
praveend7788@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 61-63
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

બાબાસાહેબ આંબેડકરના વિચારોની આજના સમયમાં પ્રસંગિકતા.

ડૉ. મનીષ પટેલ
તુલનાત્મક સાહિત્ય વિભાગ,
વીર નર્મદ દક્ષિણ ગુજરાત યુનિવર્સિટિ, સુરત

પ્રસ્તાવના

બાબા સાહેબ આંબેડકર બહુમુખી વ્યક્તિત્વ ધરાવતા ભારતીય દલિત હતા. તેઓ સમાજ સુધારક હતા, બંધારણના ઘડવૈયા હતા, તેવું કાયદા, નિયમો અને શાસ્ત્રોનું જ્ઞાન ધરાવતા વ્યક્તિ હતા, એટલે જ એમને મહાન ધારાશાસ્ત્રી કહેવામાં આવે છે. તેઓ ભારતના બંધારણના રચનાકાર અને કાયદાના જાણકાર હતા. બાબા સાહેબ આંબેડકર જન્મથી દલિત હોવાના કારણે સવર્ણના હાથે ઘણું બધું સહન કરવું પડ્યું હતું. આ જ કારણે વડોદરામાંથી નોકરી છોડી મુંબઈમાં વકીલાત કરવા જતા રહ્યા હતા. અને એ પછી મુંબઈની સરકારી કોલેજમાં અધ્યાપક તરીકે જોડાયા. એ પછી બાબાસાહેબ આંબેડકરની કારકિર્દી શરૂ થઈ. એમણે 1927માં મહાડ ખાતે મનુસ્મૃતિની નકલની જાહેરમાં સળગાવી હતી, એ પછી મહાડના તળાવમાં હરીજનોને પાણી ભરવાનો હક મેળવવા નેતૃત્વ કર્યું હતું. ડોક્ટર બાબા સાહેબ આંબેડકરનો જન્મ મહાર જ્ઞાતિમાં થયો હતો. પોતાની જ્ઞાતિની પ્રગતિ માટે હંમેશા પ્રયત્નશીલ રહ્યા હતા. એમણે ભારતના લશ્કરમાં મહાર જ્ઞાતિની યોગ્ય વ્યક્તિને લશ્કરમાં સ્થાન મેળવવું જોઈએ એ માટે એમના પ્રયાસોને કારણે જ 1941માં ભારતના લશ્કરમાં મહાર બટેલીયન ઉભી કરવામાં આવી. આંબેડકર પોતાના જીવનકાળ દરમિયાન ઘણી બધી પદવીઓ મેળવી હતી એ એમના જ્ઞાનનો પરિચય જોવા મળે છે. હિન્દુ ધર્મની કેટલીક નકારાત્મક પ્રથાઓનો અનુભવ કર્યા પછી એમણે 1956માં પોતાના અનુયાયીઓની ઉપસ્થિતિમાં નાગપુરમાં બૌદ્ધ ધર્મ અંગીકાર કર્યો. આંબેડકર એ પોતાની જ્ઞાતિ માટે સમાજ માટે કાર્ય જે કર્યું એ પરિણામે ભારત સરકાર દ્વારા 1990માં ભારત રત્નના ખિતાબથી મરણોત્તર નવાજ્યા હતા.

ભારત દેશ એ વિચારકોનો દેશ છે જેમાં ઘણા વિચારકો થઈ ગયા. ભારતના મહારાષ્ટ્રમાં જોઈએ તો લોકમાન્ય તિલક, મહાત્મા જ્યોતિબા ફૂલે, રાજા રામ મોહનરાય, ગોવિંદરાય રાંનડે જેવા વિચારકો થઈ ગયા. એમાં ડોક્ટર આંબેડકર એક સમાજ સુધારક, સામાજિક વિચારક અને ધર્મ,

સંવિધાન અને સમાજશાસ્ત્રમાં અગ્રણી વિદ્વાન હતા. 1991 માં એમની જન્મ શતાબ્દી પણ આપણે મનાવી ચૂક્યા છે. એમને ભારત સરકાર તરફથી ભારત રત્ન થી સન્માનિત કર્યા છે. ડોક્ટર બાબા સાહેબ આંબેડકરની આજના સમયની પ્રાસંગિકતાને ધ્યાનમાં લઈએ તો સામાજિક આર્થિક રાજનીતિક અને ધાર્મિક માન્યતાઓ અને સિદ્ધાંતો અને દર્શનની આજે પણ ખૂબ જ આવશ્યકતા જણાય છે. એમનો મંત્ર 'સંઘર્ષ કરો અને સંગઠિત રહો' આજે પણ મહત્વપૂર્ણ છે. આજે પણ એમના દ્વારા બતાવેલા માર્ગે આંદોલનો અને અહિંસાના માર્ગ અત્યંત જરૂરી છે. એમણે ચીંધેલા માર્ગનો અમલ કરીએ તો એ સમાજને કે વ્યક્તિને અવશ્ય લાભ થઈ શકે આપણે એક સભ્ય સમાજની રચના કરવામાં સફળ થઈ શકીશું.

ભારત રત્ન ડોક્ટર બાબા સાહેબ આંબેડકરની તત્વજ્ઞાનીય વિચારો ઘણા બધા સામાજિક અને રાજનીતિ પરિસ્થિતિનું પરિણામ છે. એમણે અછૂત, શુદ્રની દુઃખ ભરી સમસ્યાઓનું અવલોકન કર્યું, અને એ સમસ્યા માંથી પણ પસાર થયા એટલે એમનું માનવ મન વિચલિત થઈ ગયું. આ બધી પરિસ્થિતિના અનુભવે બાબાસાહેબ આંબેડકરના સમાજ દર્શનનો જન્મ થયો એમણે આર્થિક, રાજનેતિક અને ધાર્મિક વિચારોને લોકો સમક્ષ રજૂ કર્યા.

બાબા સાહેબ આંબેડકર સદીઓથી ચાલી આવેલી સામાજિક અસમાનતા ને નાબૂદ કરવામાં એમણે પોતાનું સંપૂર્ણ જીવન સમર્પિત કર્યું હતું. એમને વિશ્વાસ હતો કે જે સમાજમાં પરિવર્તન લાવવું હોય તો વ્યક્તિના અંતર મનમાં હિંમત હોવી જોઈએ એ જ કારણે એમણે સામાજિક અસ્પૃશ્યતા પૂરી કરવામાં સફળ થયા હતા.

એમના વિચારોમાં આર્થિક દ્રષ્ટિથી એક મજબૂત રાષ્ટ્રવાદ જોવા મળે છે. એમણે સ્ત્રીઓની આર્થિક પ્રગતિ માટે પ્રયાસો કર્યા હતા. એમના કહેવા પ્રમાણે સદીઓથી પુરુષો દ્વારા ઉપેક્ષિત થઈને દયનીય સ્થિતિમાં જીવન વિતાવી રહી છે. એમની સામાજિક, આર્થિક પરિસ્થિતિ સુધારવી જરૂરી છે. એમના મત પ્રમાણે સ્ત્રીઓની ખરાબ પરિસ્થિતિના કારણે દેશની આર્થિક અને સામાજિક પરિસ્થિતિથી દેશનો વિકાસ રૂંધાઇ રહ્યો છે. એટલે જ સ્ત્રીઓની આર્થિક સ્થિતિને સુધારો કરવા માટે સ્ત્રીઓને મુખ્ય ધારા સાથે જોડવાના પ્રયત્નો કરવા માટે પ્રયાસો કર્યા. એમણે શ્રમિકોના હિતો માટે પણ સ્વતંત્ર મજદૂર પાર્ટીની સ્થાપના કરી હતી. એમણે ગ્રામીણ વિકાસની યોજના બનાવી અને ગામડામાં, રસ્તા, વીજળી, પુસ્તકાલય, કુવા, તળાવના વિકાસ થઈ શકે, જમીનદારોના શોષણથી મુક્ત થવા માટેના કાનૂન બનાવવાની અવશ્યકતા પર એમણે ભાર મૂક્યો હતો. મજૂરોને કેટલા સમય મજૂરી કરી મજૂરીમાં વધારો કરવો, અને મજૂર આવસોની વ્યવસ્થા કરવા જેવા કાર્ય માટે કાનૂની પ્રયાસો કર્યા. એમણે 1943માં સ્ત્રીઓ માટે પ્રસુતિ સંશોધન બિલને રજૂ કર્યું અને એમના પ્રયાસો થી એ પાસ પણ થયું. આમ બાબા સાહેબ આંબેડકર ફક્ત એક મજૂર નેતા તરીકે નહીં પણ એક કાનૂનના નિર્માતા પણ હતા. એમણે શ્રમિકો અને મજૂરો માટે એક નારો આપ્યો હતો. 'શિક્ષિત રહો સંગઠિત રહો અને સંઘર્ષ કરો' આમ બાબા સાહેબ આંબેડકર વિચાર અને વ્યવહારમાં સંતુલિત થઈને ચાલનારા વ્યક્તિ હતા.

આમ જોઈએ તો બાબા સાહેબ આંબેડકર આજના સંદર્ભમાં પણ એટલા જ પ્રાસંગિક છે જે પોતાના જીવનકાળ દરમિયાન શોષીતો, દલિતો, વંચિતો માટે જ નહીં પણ સમગ્ર માનવજાત માટે સમાનતા ન્યાય અને માનવ અધિકાર માટે તેઓ લડ્યા હતા. આજના સંદર્ભે પણ સામાજિક સમાનતા અને ન્યાય માટે બાબા સાહેબ આંબેડકરનું માર્ગદર્શન કામ કરી રહ્યું છે જે બંધારણમાં જોઈ શકાય છે. આજના સમયમાં લોકશાહી પર વધતા ખતરાઓ વચ્ચે આ વિચાર પ્રાસંગિક છે. લોકશાહી એ રાજકીય વ્યવસ્થા તરીકે નહીં પણ જીવન જીવવાની રીત તરીકે બતાવી છે. એ મહિલાના અધિકારો માટે પણ શિક્ષણ અને સ્વતંત્રતા માટે જાતીય સમાનતા માટે લડત આપી હતી. જે આજના સંદર્ભે પ્રસંગિક બની રહે છે એમણે પહેલા રાજકીય સમાનતા માટે પહેલા આર્થિક સમાનતા પર ભાર મૂક્યો છે તો જ રાજકીય સમાનતા અસરકારક બનશે. આજે વધતી ગરીબી અને સંપત્તિ વચ્ચેનો એમનો વિચાર મહત્વ ધરાવે છે. એમણે શિક્ષણને જ પરિવર્તનનું મુખ્ય સૂત્ર ગણાવ્યું છે એ આજના યુગમાં પ્રેરણાદાયી છે અને આજના યુવાનો માટે માર્ગદર્શક છે. એમણે ધારમાં પરિવર્તનને ધાર્મિક ન ગણાવી માનવ મુક્તિ અને સ્વાભિમાન સાથે જોડાયેલા બતાવે છે આજે ધાર્મિક અસુતા સામે બૌદ્ધિક માનવતાનું માર્ગને મહત્વનો ગણાવે છે એમણે બંધારણની રચના કરી હતી અને કાયદાઓનું પાલન અને માનવ અધિકાર માટેની સ્વતંત્રતા માટેનું યોગદાન એમણે આપ્યું હતું જે આજના સંદર્ભ ની મહત્વની પ્રાસંગિકતા ગણી શકાય છે

ઉપસંહાર

લોકશાહીના સ્થાપક બંધારણના વડા ડોક્ટર બાબા સાહેબ આંબેડકરના વિચારો આજના સમયમાં ખૂબ જ પ્રાસંગિક છે એમણે પોતાના જીવનકાળ દરમિયાન સમાનતા ન્યાય માનવ અધિકાર માટેનું જે સંઘર્ષ કર્યો હતો એ એમની વિચારધારાએ આજના યુગ સુધી સીમિત નથી રહ્યો એ ભારતના વિકાસ અને સમાજના વિકાસ સાથે જોડાયેલો છે એમના કહેવા પ્રમાણે સમાનતા વગર સ્વતંત્રતા અધૂરી છે એ આજે પણ આપણા સમાજમાં જાતિ વર્ગ લિંગ અને આર્થિક સમાનતા અસ્તિત્વમાં છે જે આજે પણ બાબા સાહેબ આંબેડકરના સામાજિક ન્યાય અને સમાનતા નો સિદ્ધાંત માર્ગદર્શક બની રહે છે.

સંદર્ભ સૂચિ ;

1. મહામાનવ આંબેડકર લેખક ડૉ. કલ્પેશ પી. વોરા
2. ડૉ. આંબેડકર જીવન અને કાર્ય લેખક ધનંજય કીર અનુવાદક દેવેન્દ્ર કરણીક, મૂળજીભાઈ ખુમાણ
3. ડોક્ટર બાબા સાહેબ આંબેડકર જીવન ચરિત્ર ડોક્ટર પીજી જ્યોતિકર
4. મારી આત્મકથા: ડૉ. બાબા સાહેબ આંબેડકર અનુવાદક મૂળજીભાઈ ખુમાણ

Email-mm1211manish@gmail.com Mo-9428578401

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 64-67
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में युगबोध

डॉ. शैलेषकुमार भरतसिंह झाला
अध्यापक सहायक,
तुलनात्मक साहित्य विभाग,
वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत

समकालीन उपन्यासों में भारतीय समाज को राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों ने ही सर्वाधिक प्रभावित किया है। आधुनिक युग की प्रभात बेला में नवजागरण की प्रमुख चेतना प्रस्फुटित हुई उसमें राजनीति ही मुख्य थी। उसकी संचालन शक्ति का मुख्य आधार राजनीतिक चेतना में नीहित है। साहित्यकार समाज का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी होता है अतः उसके लिए सामाजिक परिस्थितियों की उपेक्षा करना असम्भव है। साहित्य में लोक जीवन राजनीति और साहित्य पर विचार करते हुए राजेन्द्र प्रसाद तिवारी ने लिखा है-"जब हम जीवन की समस्याओं को सत्ता या व्यवस्था के धरातल पर हल करने की कोशिश करते हैं बात प्रत्यक्षतः राजनीतिक हो जाती है और जब उन समस्याओं को संवेदना के स्तर पर हल करने की कोशिश करते हैं, तो वह साहित्य की सीमा में आ जाता है।"1 हिन्दी साहित्य में उपन्यास ही एक ऐसी विधा है जिसका फलक इतना विस्तृत है इसने ही मानव चरित्रों, सामाजिक स्थिति और राजनीतिक चित्रण का जीवंत चित्रण सम्भव है। उपन्यास विधा के बारे में डॉ. नन्द दुलारे वाजपेयी कहते हैं- "उपन्यास का क्षेत्र साहित्य के इतर विधाओं की अपेक्षा विस्तृत है विभिन्न ललित कलाएँ उपन्यास में आकर समाहित हो जाती है- साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास ही एक ऐसा उपकरण है जिसके द्वारा सामूहिक मानव जीवन अपनी समस्त भावनाओं और चिन्ताओं के साथ सम्पूर्ण रुप में अभिव्यक्त हो सकता है।"2 उपन्यासकार मानव समाज का प्रत्येक दृष्टिकोण से आंकलन करता है, सम्भवतः इसी कारण आधुनिक युग में साहित्य की सभी विधाओं की अपेक्षा उपन्यास को अभिव्यक्ति का सबसे सफल और सशक्त माध्यम माना जाता है।

हिन्दी उपन्यास का आविर्भाव सामाजिक और राजनीतिक चेतना को लेकर हुआ है। हिन्दी उपन्यासों में भारतीय लोक जीवन का जो चित्रण हुआ है वैसा साहित्य की अन्य विधाओं में दुर्लभ है। हिन्दी उपन्यास का इतिहास ही हमारे लोक जीवन में व्याप्त समसामयिक घटनाओं (सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक) का इतिहास है। समकालीन उपन्यास स्वाधीन भारत के राजनीतिक यथार्थ को सूक्ष्म दृष्टि से विदित करते है, अपनी जनता का प्रतिनिधि होने की भूमिका निभाते हुए इस काल के उपन्यासकारों ने राजनैतिक परिदृश्य की सच्चाई को जनता के समक्ष लाने की कोशिश की है। समकालीन लोक परक उपन्यासों में लेखकों ने ग्राम जीवन की समग्र वास्तविकताओं के साथ साक्षात्कार कर उन्हें उद्घटित करना उसका उद्देश्य रहा है। समकालीन उपन्यासों में राष्ट्रीय जन जीवन से सम्बद्ध राजनीतिक चेतना का फैलाव खूब मिलता है। स्वतंत्रता विभिन्न राजनीतिक स्थितियों को जन्म देता है। नये

संविधान ने जहाँ अधिकार बोध कराया है वहाँ सरकार ने राजनीतिक समानता की बात छोड़ी है। आज समकालीन राजनीतिक आर्थिक समानता के बगैर मूल्यहीन लगती है, राजनेताओं का इस दिशा में किये गये प्रयास को समकालीन लेखकों ने अनेक दृष्टिकोण से दिखाया है। वह प्रयास चाहे गाँव में पंचायती राज स्थापित करना है। "यह ऐसा वर्ग था जो प्रदर्शन प्रिय, पुरानी रुढ़ियों से जकड़ा हुआ पश्चिमी फैशन के सहारे जीवन की स्वाधीनता और मुक्ति की परिभाषा गढ़ने वाला, मूल्यहीनता को मूल्यवत्ता सिद्ध करने का दुराग्रह करने वाला अपनी संस्कृति से खिलवाड़ करने वाला बन गया।"3 चॉक, डूब, पीली आँधी, काला पहाड़ तथा झीनी झीनी बीनी चदरिया इस सच्चाई को गहराई से बयान करते हैं। समकालीन राजनीति मूलरूप से कुर्सीधर्मी राजनीति है। इसमें झूठ, निर्लज्जता, अवसरवादिता, लालच, गुण्डागर्दी और प्रदर्शन प्रियता का बोलबाला है।

समकालीन युगबोध में महानगरों एवं शहरों की अपेक्षा अधिक आसान है क्योंकि अशिक्षित, शोषित, अंधविश्वासी जनता के साम, दाम, दण्ड व भेद की नीति के आधार पर बहलाकर आसानी से शोषित किया जा सकता था। धर्मभीरुता का फायदा साम्प्रदायिकता का विष बोकर पूँजीवादी उठाते थे। अब्दुल बिस्मिल्लाह ने झीनी झीनी बीनी चदरिया में उपन्यास का नायक मतीन जब सरकारी अस्पताल जाता है तो वहाँ का चपरासी कहता है- "बीस ठे रुपल्ली में क्या सारा काम हो जायेगा।"4 समकालीन उपन्यासों में लेखक ने जनता को जगाने का प्रयास किया है। वे कहते हैं कि जब तक जनता का प्रबोधन नहीं होगा, तब तक इनका शोषण कम नहीं होगा। उन उपन्यासकारों में मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा, पंकज विष्ट, प्रभा खेतान, गीताजंलि, श्री अब्दुल बिस्मिल्लाह तथा भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में राजनीति को यथार्थता के साथ चित्रित किया है। चाहे वह ग्रामीण साम्प्रदायिकता की बात हो क्योंकि भारतीय ग्रामीण जनता धार्मिक अंधविश्वासों में विश्वास करती है या सवर्णों व दलितों के बीच बढ़ती दूरियों का कारण हो या जातीयता की राजनीति हो, जिसे समकालीन उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है।

जंगल जहाँ से शुरु होता है-

संजीव सातवें आठवें दशक के उपन्यासकार हैं, जिन्होनें अपनी छवि एक ऐसे कथाकार की बनायी है जो लोक संस्कृति, काल संस्कृति तथा सामाजिक रुप से उपेक्षित, शोषित एवं पीड़ित लोगों से सम्पृक्त होकर कहानी कहता है। प्रस्तुत उपन्यास "जंगल जहाँ से शुरु होता है" में लेखक ने समकालीन राजनीति को धोखे की टट्टी बताया है जिसकी आड़ में समाज के तमाम कुकृत्य होते हैं, यह उपन्यास उस टट्टी के आड़ में हो रहे राजनीति, समाज और धर्म में आई नैतिक गिरावट को चित्रण करता है। समकालीन राजनीति में माफिया, तस्कर और डाकू आ गए हैं। मुरली पाण्डेय में समकालीन राजनीति के बारे में कहता है- "सवाल पावर का है कुमार साहब। पहले गिना जाता था अमुक जाति में कितने मंत्री, कितने सांसद विधायक कितने अफसर हैं, अब उसके साथ यह भी गिना जाने लगा है कि उस जाति में कितने सेठ, कितने गुण्डें, कितने डाकू है।"5 बेईमानी को ढ़कने का सबसे अच्छा तरीका सफेदपोष के समूह में आना जरुरी है। एक सफेदपोष राजनेता चाहे कितना भी बेईमान हो उससे कोई कुछ नहीं कहता चूँकि वह प्रभावषाली होता है, इसलिए सबके काम उससे पड़ते है। इस उपन्यास में परशुराम डाकू का एम.एल.ए. बनना यही संकेत करता है कि अब वे दिन दूर नहीं जब इस प्रकार के लोग ही राजनीति करेंगे।

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में भारतीय जीवन के विविध पक्षों धार्मिक सांस्कृतिक परिस्थितियाँ उभरकर सामने आयी है, इन परिस्थितियों के द्वारा समकालीन उपन्यासों में भारतीय लोक संस्कृति, जीवनशैली, रीति रिवाज, वेश भूषा, खान-पान तथा बोली भाषा के रुप को दृष्टिगत किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि समकालीन उपन्यासों में लेखकों का सबसे अधिक ध्यान आधुनिक जीवन मूल्यों, धर्म और संस्कृति के नाम पर पाखण्ड तथा संस्कारों की जकड़न यौन नैतिकता का बराबर गिरते जाना, पारिवारिक सम्बन्धों का आधार आर्थिक होना, सांस्कृतिक जीवन मूल्यों का गिरता स्तर की ओर अधिक ध्यान गया है। उपन्यासकारों ने धर्म और संस्कृति के इस अंधेरे पक्ष को

समकालीन उपन्यासों में जीवन्तता के साथ चित्रित किया है। वास्तव में उपन्यास ही संस्कृति के सबसे नजदीक साहित्यिक विधा है। उसका विस्तृत कैनवास लेखक को यह अवसर देता है कि वह जीवन का बहुरंगी और बहुआयामी चित्रण कर सके। उपन्यासों में लेखकों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से भारतीय संस्कृति को सराहा गया तथा कुछ में समकालीन भारतीय विकृतिओं की भर्त्सना भी की गयी है।

उस चिड़िया का नाम -

पहाड़ी लोक चेतना के धार्मिक और सांस्कृतिक स्वरुप को पंकज विष्ट ने इस उपन्यास "उस चिड़िया का नाम" के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास है। इसमें लगभग जड़ बने, रुद्ध प्रवाह, पहाड़ी जीवन के वर्तमान और अतीत को समझने की रचनात्मक कोशिश की गई है। पहाड़ी जीवन-संस्कृति चिडियों से जुड़ी लोक कथाएँ, पहाड़ी जीवन का सांस्कृतिक अवमूल्यन नयी पीढ़ी के (हरीष) युवाओं का लोक संस्कृति, परम्पराओं, संस्कार सामाजिक सम्बन्धों के प्रति मूल्यहीन दृष्टिकोण, धार्मिक कर्मकाण्ड़ों के प्रति विरक्त स्वर इस उपन्यास में सुनाई पड़ता है। यह उपन्यास हिन्दू धर्म में प्रचलित मृत्यु के पश्चात दाह संस्कार के प्रति युवाओं की संवेदनाहीनता की कहानी है।

समकालीन उपन्यासों में लेखकों ने जिस विषय को शिद्दत के साथ उठाया है उसमें जातिवाद, शोषण, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में नवीन दृष्टिकोण, पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय जनमानस पर प्रभाव, सांस्कृतिक नैतिक पतन का चित्रण तथा साम्प्रदायिक हिंसा प्रमुख है। इस दौर का उपन्यास बढ़ती साम्प्रदायिक हिंसा को लेकर काफी व्यथित है, विषमतामूलक समाज व्यवस्था के भीतर पनपती जटिलता विषमताओं से उपजी घोर असुरक्षा और वैयक्तिक अनुभूति की सामाजिक चेतना समकालीन हिन्दी उपन्यासों में दिखाई पड़ती है। हिन्दी में समकालीन उपन्यासों का एक बड़ा हिस्सा उस अंचल से सम्बन्धित है जहाँ पर लोग परिनिष्ठित हिन्दी नहीं बोलते, इन अंचलों में रहने वाले लोगों का चित्रण करते उनकी यथार्थ भाषा और उनके सामाजिक पक्ष की अवहेलना नहीं की जा सकती, जिस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा ने इदन्नमम् तथा चॉक में बुन्देलखण्डीय जीवन के सामाजिक यथार्थ को लोक संवेदनाओं से सम्पन्न किया है तथा चॉक में जाट समाजों के ग्रामीण परिवेश को उभारा है। संजीव के जंगल जहाँ से शुरु होता है, में थारु जनजाति का समाज में ऊँचे तपकों के बीच छिड़ी जंग समाजशास्त्रीय अध्ययन है।

समकालीन उपन्यासों में भारतीय समाज का चरित्र खुलकर सामने आया है, समूचा आर्थिक विसंगतियों से त्रस्त प्रतीत होता है, समाजवाद और पूँजीवाद हावी हो गया है धनी और निर्धन के बीच की खाई बढ़ती गई। पश्चिमी सभ्यता के सहारे स्त्री विमर्श के मुद्दे को साहित्यिक राजनीति में उछाला गया जिससे, मूल्यहीन संस्कृति, सामाजिक रिस्तों में खटासपन, नैतिकविहीन जीवन मूल्यों को जन्म दिया जो कि समकालीन उपन्यासों की धुरी बन गयी है।

समकालीन भारतीय समाज में जिन दुष्प्रवृत्तियों का बोलबाला हुआ उसमें धर्म और संस्कृति के नाम पर पाखण्ड कुरीतिओं रुढ़ियों की जकड़न में बंधा सामाजिक मनुष्य अस्पृश्यता की भावना, यौन शोषक नैतिकता का पतन पारिवारिक सम्बन्धों के प्रति आर्थिक दृष्टिकोण, राजनेताओं की राजनीति अर्थ तक सीमित बेरोजगारी से उत्पन्न अव्यवस्था व आतंक, बढ़ती हुई चोरी, डकैती, गुण्डागर्दी आदि को समकालीन हिन्दी उपन्यासों में यथार्थ प्रेरित लोक चेतना को सामाजिक पटल पर रखकर विश्लेशित किया गया है।

समकालीन उपन्यासों में लेखकों ने गाँवों में व्याप्त सांस्कृतिक धार्मिक मूल्यों को व्यक्त किया ही है साथ में पश्चिमीकरण की आँधी जो गाँवों में व्याप्त परिवेशों-संस्कृतिओं तथा मनुष्य में व्याप्त परिवेशों संस्कृतिओं तथा इसके योगदान को भी अपने-अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। इसके बारे में डॉ. सुरेश सिन्हा ठीक ही कहते है- "आधुनिकता की विडम्बना यह है कि इसने हमें दोहरा व्यक्तित्व दे दिया है। घर पर हम घोर धार्मिक, परम्परावादी, नैतिकतावादी एवं रुढ़ होते हैं पर घर से बाहर हम प्रगतिशील होने, नारी की स्वतंत्र्यता का पक्ष पाती की बातें करते हैं।"

हिन्दी के समकालीन उपन्यासकारों ने लोक चेतना धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्ष को उपन्यासों में सफलता के साथ उतारा है। जिसमें भारतीय ग्रामीण परिदृश्य में भारतीय संस्कृति में गिरावट का चित्रण, असंस्कृत समुदायों के अवशिष्ट विश्वास, रीति रिवाज, लोकगीत, कहावतें तथा अन्य अन्धपरम्पराओं, लोक विश्वासों एवं धारणाओं में परिवर्तन अभिष्टः कामनाओं की सिद्धि के लिए देवताओं की पूजा व्रत जैसे करवा चौथ, जीवित पुत्रिका, छठपूजा, सत्यनारायण पूजा आदि को उपन्यासों में जीवन्तता के साथ चित्रित किया है। समकालीन उपन्यासों में भारतीय संस्कृति की प्रासंगिकता को संसार भर की संस्कृतिओं में सबसे ऊँचे पायदान पर रखा है। लेकिन धर्म और संस्कृति के नाम पर पाखण्ड तथा संस्कारों का जकड़न को महसूस करता पूरा समाज, यौन, नैतिकता का बराबर गिरता जाना समकालीन हिन्दी उपन्यासों में यथार्थ प्रेरित दृष्टिकोण से विश्लेशित किया है। समकालीन उपन्यासों में संजीव ने 'जंगल शुरु होता है (2000) में पश्चिमी चम्पारण के संस्कृति रीति रिवाज, त्योहारों तथा धार्मिक अन्धविश्वासों को बड़े ही मनोरम एवं जुगुप्ताकारी दृष्टि से विश्लेशित किया है। उनके दूसरे उपन्यास 'सूत्रधार' में भिखारी ठाकुर (जिनको राहुल सांकृत्यायन ने भोजपुरी का शेक्सपीयर कहा है) को केन्द्र में रखकर समकालीन सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति को इस उपन्यास के माध्यम से चित्रित किया है।

समकालीन उपन्यासकारों में पंकज विष्ट का 'उस चिड़िया का नाम' अब्दुल बिस्मिल्लाह का झीनी झीनी बीनी चदरिया (1986), प्रभा खेतान की 'पीली आँधी' (1986), मैत्रेयी पुष्पा का इदन्नमम्, चॉक, (1997) तथा अल्मा कबूतरी (2000), चित्रा मुद्गल का आवों (2000), गीतांजलि श्री का माई (1993), अलका सरावगी का 'कलिकथा : वाया बाइपास (1998) तथा भगवान दास भोरवाल ने काला पहाड़ के माध्यम से समकालीन समाज में धार्मिक और सांस्कृतिक स्थिति को गहरी संवेदना के साथ चित्रित किया है।

हिन्दी के समकालीन उपन्यासों में भारतीय लोक संस्कृति, धर्म और संस्कृति आपस में विशिष्ट संवाद सूत्रों के द्वारा जुड़े हुए हैं, संस्कृति कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे जीवन और जीवन से जुड़ी गतिविधियों से काटकर देखा जा सकता है वह जो मनुष्य जीवन के प्रत्येक क्रिया कलाप में समाहित है। सामान्यतः सुसंस्कारों की योजना को संस्कृति मान लिया जाता है, और इस अर्थ में ऐसे व्यक्ति अथवा समूह जिनकी जीवन विधि में सुसंस्कारों का अभाव होता है, संस्कृति विहीन समझे जाते हैं अतः किसी व्यक्ति अथवा समूह की संस्कृति का मापदण्ड उसका ज्ञान, साहित्य संगीत अथवा कला से प्रेम या व्यवहार के सुसंस्कारों को नहीं माना जा सकता। इतिहासकारों में संस्कृति को किसी समूह या देश के कलात्मक और बौद्धिक विकास के रुप में ग्रहण किया है। इस प्रकार संस्कृति में मनुष्य का पहनना, ओढ़ना, खाना संस्कृति के विशिष्ट अंगों के व्यवहार प्रकारों की योजना निश्चित करती है संस्कृति के अन्तर्गत वंशागत शिल्प तथ्यों वस्तुओं, तकनीक प्रक्रियाओं, धारणाओं, अभ्यासों तथा जीवन मूल्यों का समावेश हो जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हरि शर्मा- लोक चेतना और हिन्दी कविता- पृष्ठ संख्या- 117
2. समकालीन हिन्दी उपन्यास समय से साक्षात्कार डॉ. एलाइ विजयलक्ष्मी पृष्ठ संख्या- 08
3. समकालीन हिन्दी उपन्यास समय से साक्षात्कार डॉ. एलाइ विजयलक्ष्मी पृष्ठ संख्या- 08
4. झीनी झीनी बीनी चंवरिया अब्दुल बिस्मिल्लाह पृष्ठ संख्या-181
5. संजीव जंगल जहाँ शुरु होता है पृष्ठ संख्या- 250

Email : shaileshzala84@gmail.com

Mob : 9428151536

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 68-78
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

वणजारे: गुरु पंथ खालसा के अमर प्रहरी (इतिहास, शहादत और परंपरा)

डॉ. रणजीत सिंह 'अर्श'
लेखक / ब्लॉगर / व्याख्याता ,
अवंतिका रेसीडेन्सी, सोमवार पेठ, पुणे – 411011

1. प्रस्तावना

भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास में वणजारा समुदाय एक विशिष्ट स्थान रखता है। यह समुदाय केवल व्यापारिक गतिविधियों तक सीमित नहीं रहा अपितु अपने संगठन, गतिशीलता, आर्थिक सामर्थ्य और सांस्कृतिक चेतना के कारण मध्यकालीन भारत की सामाजिक संरचना में अत्यंत प्रभावशाली रहा। विशेषतः सिख इतिहास में वणजारों की भूमिका केवल सहयोगात्मक नहीं अपितु संरक्षक, संवाहक और शहादत परंपरा के रूप में दृष्टिगत होती है। प्रस्तुत शोध-पत्र में 'वणजारा' शब्द की व्युत्पत्ति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, लुबाणा संबंध, सरकारी संरक्षण तथा सिख इतिहास में उनकी विशेष भूमिका का विश्लेषण किया जा रहा है।

2. 'वणजारा' शब्द की व्युत्पत्ति एवं भाषिक परिप्रेक्ष्य

'वणजारा', 'बनजारा' अथवा 'बंजारा' शब्द की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में सामान्यतः यह मत प्रचलित है कि यह 'वणिक' अथवा 'बणिक' शब्द से निर्मित है, जिसका अर्थ व्यापारी होता है। तथापि यह व्यापारी सामान्य अर्थ में नहीं अपितु दूरगामी काफ़िलों के साथ चलने वाले चक्रवर्ती व्यापारी थे, जो अनाज, नमक, पशु एवं अन्य आवश्यक वस्तुओं का विशाल स्तर पर व्यापार करते थे।

एक अन्य भाषिक मत के अनुसार 'वणजारा' शब्द 'वण' (पंजाबी 'बण' अर्थात् वन/जंगल) और 'जारा' (अर्थात् घूमने वाला) से बना है। यह व्युत्पत्ति उनके जीवन, स्वभाव, वनांचलों में भ्रमणशील व्यापार को अधिक सटीक रूप में अभिव्यक्त करती है। आधुनिक साहित्य में 'वणजारा', 'बंजारा' और 'बनजारा' शब्दों का परस्पर पर्यायवाची रूप में प्रयोग होता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में 'वणजारा' शब्द आध्यात्मिक प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुआ है। यहाँ वणजारा वह साधक है, जो इस संसार में अकाल पुरख के नाम की पूँजी संचित कर उसे अपने जीवन में धारण करता है। इस प्रकार 'वणजारा' शब्द व्यापारिक अर्थ से आगे बढ़कर आध्यात्मिक अर्थ ग्रहण कर लेता है।

3. लवण से लुबाणा : व्यापार और जातीय रूपांतरण

पंजाब में नमक की खानें प्राचीन काल से उपलब्ध थीं। वणजारे नमक के प्रमुख व्यापारी रहे। संस्कृत में नमक को 'लवण' कहा जाता है। संभवतः 'लवण' से 'लावणिक' और तत्पश्चात 'लुबाणा' शब्द की उत्पत्ति हुई। **"पद्म चन्द्र संस्कृत कोष"** में 'लावणिक' का अर्थ लूण (नमक) का व्यापार करने वाला व्यापारी बताया गया है।

नमक मानव जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है; भोजन की अन्य वस्तुएँ उगाई जा सकती हैं, परंतु नमक प्राकृतिक खनिज है। इस कारण लुबाणों का व्यापार अत्यंत सम्मानित रहा। कालांतर में वणजारा और लुबाणा समुदायों में घनिष्ठ संबंध स्थापित हुआ और अनेक स्थानों पर दोनों जातियाँ परस्पर घुल-मिल गईं।

भौगोलिक विविधता के अनुसार इनके नाम भी परिवर्तित हुए गुजरात में 'लुहाणे', आंध्र एवं कर्नाटक में 'लबाने' या 'लंबाड़ी', बहावलपुर क्षेत्र में 'राठोड़' और अन्यत्र 'बहू-रूपिये' जैसी शाखाएँ प्रचलित रहीं। पंजाब में लुबाणियों के अनेक गोत्र प्रसिद्ध हैं—अजरावत, दातला, पीलिया, पुरवाल, खसारिया, गोजालिया, गुज्जर, तदर्न, वामियाल, नारोवाल आदि। वणजारा जाति से संबद्ध रमाणा, उदाना, गुरुगरिया, गगनौत, डहोत, बंजरउँत और बड़तिया जैसे गोत्र भी उल्लेखनीय हैं।

4. सामाजिक-आर्थिक संरचना और सैन्य संबंध

मध्यकालीन भारत में सेनाओं को रसद, अनाज, शस्त्र-सामग्री और पशुधन की आपूर्ति हेतु कोई संगठित सरकारी विभाग नहीं था। इस रिक्त स्थान को वणजारों ने भरा। सिकंदर लोदी (सन 1504 ई.) के समय से वणजारों का मुस्लिम सल्तनत की सेना से औपचारिक संपर्क स्थापित हुआ। धौलपुर अभियान के उपरांत वह दक्षिण भारत की सैनिक मुहिमों में रसद पहुँचाने लगे।

अकबर के शासनकाल में वणजारे मुगल सेना के प्रमुख आपूर्तिकर्ता बने। उनकी ईमानदारी और विश्वसनीयता से प्रभावित होकर अकबर ने उन्हें लगान एवं चुंगी से मुक्त कर दिया। उन्हें अग्रिम भुगतान (साई) प्रदान किया जाता था, जिससे आपूर्ति में बाधा न आए। युद्धकाल में भी किसी भी पक्ष की सेना वणजारों पर आक्रमण नहीं करती थी।

इतिहासकारों और यात्रियों के वर्णनानुसार वणजारों के काफ़िले अत्यंत विशाल होते थे। अनेक अवसरों पर एक लाख तक बैलगाड़ियों का उपयोग होता था। फ्रांसीसी यात्री तवर्नियर ने औरंगज़ेब काल में 10 से 12 हज़ार बैलों से युक्त काफ़िला देखा। उस समय एक जोड़ी बैलों का मूल्य लगभग 600 रुपये तक था, जो उनकी आर्थिक समृद्धि का सूचक है।

चार प्रमुख क़बीलों का उल्लेख मिलता है; मक्का, चावल, दालें और नमक का व्यापार करने वाले। प्रत्येक की संख्या एक लाख तक मानी गई है। यह संरचना उनके संगठित आर्थिक तंत्र और व्यापक नेटवर्क का प्रमाण है।

5. सिख इतिहास में वणजारों की प्रारंभिक भूमिका

पुरातन जन्म साखियों में उल्लेख है कि **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** नानकमत्ता (ज़िला नैनीताल) से लगभग 60 मील दक्षिण स्थित वणजारों के 'टांडे' में पधारे। 'टांडा' शब्द वणजारों के काफ़िलों के पड़ाव-स्थल के लिए प्रयुक्त होता था। "इंपीरियल गज़ेटियर ऑफ इंडिया" के अनुसार यह एक प्राचीन कस्बा था, जिसकी स्थापना वणजारों ने की थी।

परंपरा के अनुसार यहाँ **श्री गुरु नानक साहिब जी** ने 'सिरीरागु महला १' के अंतर्गत 'वणजारिआ मित्रा' संबोधन से जीवन की चार अवस्थाओं का आध्यात्मिक विश्लेषण प्रस्तुत किया (श्री गुरु ग्रंथ साहिब, अंग 75)। इस वाणी में वणजारा मानव-जीवन का प्रतीक बन जाता है-

- प्रथम प्रहर : गर्भावस्था और ईश्वर के हुक्म में बंधन।
- द्वितीय प्रहर : बाल्यावस्था में ईश्वर-स्मरण का विस्मरण।
- तृतीय प्रहर : यौवन में धन-मोह में आसक्ति।
- चतुर्थ प्रहर : मृत्यु के समय कर्मफल का प्रतिफल।

इस प्रकार गुरु वाणी में वणजारा सांसारिक व्यापारी नहीं अपितु आत्मा का यात्री है, जो जीवन-रात्रि के चार प्रहरों में कर्मों की पूँजी संचित करता है।

6. वणजारों की सिक्खी में सहभागिता

वणजारों की सिक्खी में सहभागिता का अध्ययन सिख इतिहास की संरचना को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है। मुग़ल काल में वणजारे मुख्यतः सेना को रसद, शस्त्र-सामग्री और आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति का कार्य करते थे। उनके विशाल काफ़िले हिंदुस्तान के कोने-कोने में विचरण करते थे। बैलों, ऊँटों और गाड़ियों से युक्त यह काफ़िले केवल व्यापारिक संस्थान नहीं थे अपितु गतिशील सामाजिक इकाइयाँ थे।

गुरु साहिबान जब भी लंबी यात्राओं पर निकलते, तो प्रायः ऐसे ही काफ़िलों के साथ सम्मिलित होकर यात्रा करते थे। इससे एक ओर सुरक्षा एवं सुविधा सुनिश्चित होती, तो दूसरी ओर वणजारों को गुरु-संगत का अवसर प्राप्त होता। इसी निरंतर संपर्क ने वणजारा समुदाय को गुरु परंपरा से गहरे रूप में जोड़ा। कालांतर में यही समुदाय श्रद्धालु, सेवक और शहादत देने वाले सिखों के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

7. गुरु साहिबान और वणजारा काफ़िलों का ऐतिहासिक संबंध

सिख इतिहास में अनेक महत्त्वपूर्ण अवसर ऐसे हैं, जब गुरु साहिबान ने वणजारों के साथ यात्राएँ कीं। छठे पातशाह **श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी** जहाँगीर के साथ ग्वालियर और तत्पश्चात कश्मीर गए। यह यात्रा वणजारा काफ़िलों के साथ संपन्न हुई। कुछ इतिहासकारों ने भ्रमवश इसे बादशाह की नौकरी स्वीकार करना कहा है, परंतु यह तथ्यात्मक रूप से असंगत है। यह यात्रा परिस्थितिजन्य राजनीतिक संदर्भों में थी, न कि अधीनता की स्वीकृति। इसी प्रकार जब **श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी** नानकमत्ता की ओर गए, तब भी उन्होंने वणजारों के काफ़िलों के साथ यात्रा की।

सातवें पातशाह **श्री गुरु हरिराय साहिब जी** ने मक्खन शाह लुबाणा के साथ सियालकोट से कश्मीर और पुनः वापसी की यात्रा की। वह झेलम ज़िले (वर्तमान पाकिस्तान) के मोटा टांडा ग्राम में उसके निवास पर ठहरे। गुरु साहिबान के सत्संग और प्रभाव से वणजारा समुदाय गुरु के सिख बनते गए। इसी समुदाय से मक्खन शाह और लख्खी शाह जैसे महान व्यक्तित्व उभरे, जिन्होंने सिख इतिहास में अमिट छाप छोड़ी।

8. भाई मक्खन शाह लुबाणा : गुरु-खोज और निष्ठा का प्रतीक

भाई संतोक सिंह जी के अनुसार, एक बार मक्खन शाह का जहाज़ तूफ़ान में फँस गया। प्राण और व्यापार; दोनों संकट में थे। उस कठिन घड़ी में उसने अरदास (प्रार्थना) की और प्रण किया कि यदि जहाज़ सुरक्षित पार हो गया तो वह अपने लाभ का दसवां भाग गुरु चरणों में अर्पित करेगा। अरदास स्वीकार हुई, जहाज़ और माल सुरक्षित बच गए।

वह पहले दिल्ली पहुँचा, जहाँ उसे ज्ञात हुआ कि **श्री गुरु हरकृष्ण साहिब जी** ज्योति-जोत समा गए हैं और उनके उत्तराधिकारी बकाला में हैं। वह तत्काल बकाला पहुँचा। वहाँ अनेक दावेदार स्वयं को सच्चा गुरु घोषित कर रहे थे। उसने प्रत्येक को पाँच-पाँच स्वर्ण मुद्राएँ भेंट कीं।

जब उसने **श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी** को पाँच मुद्राएँ अर्पित कीं, तो गुरु साहिब ने उसे उसके दसवें भाग के प्रण की स्मृति दिलाई। उसी क्षण उसे ज्ञात हो गया कि यही सच्चे गुरु हैं। वह आनंद-विभोर होकर छत पर चढ़ गया और उद्घोष किया-

"गुरु लाधो रे, गुरु लाधो रे, गुरु लाधो रे, गुरु लाधो रे।"

यह उद्घोष केवल घोषणा नहीं था; यह गुरु-परंपरा की पुनः प्राणप्रतिष्ठा थी।

इस घटना से धीरमल अत्यंत क्रोधित हुआ और उसके मसंद सीहां ने गुरु साहिब पर गोली चलाई, किंतु वह निशाना चूक गया। तत्पश्चात मक्खन शाह ने संगत के सहयोग से धीरमल और सीहां की मुश्कें बाँधकर उसे गुरु साहिब के

समक्ष प्रस्तुत किया। गुरु साहिब ने उनकी संपत्ति, जिसमें भाई गुरदास द्वारा लिखित आदि ग्रंथ की बीड़ भी सम्मिलित थी, उन्हें वापस करने का आदेश दिया।

भाई संतोक सिंह के अनुसार, मक्खन शाह **श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी** के साथ अमृतसर गए और चक्क नानकी (श्री आनंदपुर साहिब) की स्थापना तक उनके साथ ही रहें। नगर बसाने हेतु भूमि-क्रय में उसने भेंट अर्पित कर महत्वपूर्ण योगदान दिया। विदा लेते समय गुरु साहिब ने उसे नाम-जप और सिक्खी-प्रचार की आज्ञा दी।

9. लख्खी शाह बंजारा : गुरु-प्रेम का अद्वितीय उदाहरण

बाबा लख्खी शाह, भाई गोधू राम के पुत्र, खैरपुर (ज़िला मुज़फ़्फ़रगढ़, पाकिस्तान) के निवासी थे। वह वणजारा क़बीले के संपन्न एवं प्रतिष्ठित व्यापारी थे। वह गुरु साहिबान के प्रति पूर्णतः समर्पित सिख थे और रायसीना ग्राम में निवास करते थे।

11 नवंबर सन 1675 ई. को जब **श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी** का शहीदी संस्कार हुआ, तब उनका पार्थिव शरीर चाँदनी चौक में पड़ा था। परिस्थितियाँ अत्यंत भयावह थीं। ऐसे समय में लख्खी शाह ने अद्वितीय साहस दिखाया। उन्होंने गुरु साहिब का शरीर अपने घर लाकर भीतर ही भीतर दाह-संस्कार किया। गुरु-प्रेम की यह घटना सिख इतिहास में अमर है।

10. भाई नगाहिया सिंह : उत्तराधिकार में वीरता

भाई नगाहिया सिंह, लख्खी शाह वणजारे का ज्येष्ठ पुत्र था। उसने **श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी** का पार्थिव शरीर घर लाकर दाह-संस्कार में भूमिका निभाई। वह निर्भीक और पराक्रमी योद्धा था।

जब मुग़ल सेना की अमृतसर पर अचानक चढ़ाई की सूचना मिली, तब वह दिल्ली से अमृतसर पहुँचा और 9 वैशाख 1766 बि. (29 मार्च 1709 ई.) को रणभूमि में जूझकर शहीद हुआ। यह वह समय था जब दशमेश गुरु ज्योति-जोत समा चुके थे और सिख समुदाय कठिन परिस्थितियों से गुजर रहा था। बाबा बंदा सिंह बहादुर अभी पंजाब नहीं पहुँचे थे, किंतु ऐसे समय में भी भाई नगाहिया सिंह ने अग्रणी भूमिका निभाई।

11. नायक भगवंत सिंह (भागू वणजारा) और उनके वीर बंधु

नायक भगवंत सिंह, जिन्हें भागू वणजारा के नाम से जाना जाता है, भाई मणी सिंह जी के चाचा नठिए का पुत्र था। उसके आठ भाई थे; भगवंत सिंह, कुइर सिंह, बाज़ सिंह, शाम सिंह यह चारों बाबा बंदा सिंह बहादुर के साथ 11 हाड़ 1773 बि. को शहीद हुए।

मंगत सिंह और रण सिंह भाई मणी सिंह के साथ हाड़ सुदी पंचमी 1791 बि. को शहीद हुए। सुखा सिंह और लाल सिंह ने 15 मग्घर 1767 बि. को सरहंद में जूझकर शहादत प्राप्त की।

भगवंत सिंह दक्षिण में अपने टांडे सहित सरकारी ठेकेदारी करता था और मुग़ल सेना को रसद भेजता था। उसकी कुशलता से प्रसन्न होकर औरंगज़ेब ने उसे "पंज हज़ारी" का मनसब प्रदान किया। परिस्थितियाँ बदलीं तो उसने यूसुफ़ज़ई अफ़गानों के साथ मिलकर बन्नू के समीप एक स्वतंत्र सत्ता स्थापित की।

औरंगज़ेब ने उसका मनसब छीन लिया, किंतु उसने रसद-आपूर्ति जारी रखी। अंततः उसे पुनः "पंज हज़ारी" का मनसब, खिलअत, घोड़ा और हाथी देकर सम्मानित किया गया।

जब बंदा सिंह बहादुर को पंजाब भेजने की योजना बनी, तो इसी नायक भगवंत सिंह ने उन्हें अपने टांडे में छिपाकर सुरक्षित पंजाब पहुँचाया।

"पहिले सिंह बनजारे रले। फड़ हथ बरछे बैल लद्द बले।"

बंदा सिंह बहादुर के साथ हुए संघर्षों में यह चारों भाई सम्मिलित रहे। बाज़ सिंह को सरहंद का सूबेदार नियुक्त किया गया। अंततः गुरदास नंगल से गिरफ़्तारी के पश्चात सभी को दिल्ली लाया गया और बंदा सिंह बहादुर के साथ ही इन्हें भी कठोर यातनाएँ देकर शहीद कर दिया गया।

12. शहीद भाई मणी सिंह जी : जन्म, दीक्षा, सेवा और शहादत

सिख इतिहास के आलोक-स्तंभों में **शहीद भाई मणी सिंह जी** का नाम एक ऐसी दिव्य आत्मा के रूप में अंकित है, जिसने शास्त्र की साधना को शस्त्र की मर्यादा से जोड़ा और गुरु-घर की सेवा में अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया। भाई मणी सिंह जी का जन्म **10 मार्च 1644 ईस्वी** को पंजाब के **ज़िला संगरूर** के **ग्राम लोंगोवाल** में हुआ माना जाता है; यद्यपि कुछ विद्वानों के मतानुसार उनका जन्म **ग्राम अलीपुर, ज़िला मुज़फ्फरनगर (अब पाकिस्तान)** में भी स्वीकार किया गया है। उनके पिता का नाम **भाई माई दास** तथा माता का नाम **मधरी बाई (सीतो)** बताया गया है।

12.1 अमृत-ग्रहण एवं गुरु-सेवा

अप्रैल सन 1699 ई. की ऐतिहासिक बैसाखी पर उन्होंने **खंडे-बाटे का अमृत** ग्रहण किया और **श्री गुरु गोबिंद सिंह साहिब जी** के प्रिय सिखों में प्रतिष्ठित हुए। अपने जीवनकाल में उन्होंने अनेक युद्धों में भाग लिया और गुरु-घर की अनेक महत्त्वपूर्ण सेवाएँ निभाईं। उनकी लगन और सेवा-भावना के कारण उन्हें गुरु-घर के **दीवान** के पद पर नियुक्त किया गया।

श्री आनंद पुर साहिब जी के युद्ध के प्रसंग में, जब **सरसा नदी** के किनारे गुरु-परिवार बिछुड़ गया, तब भाई मणी सिंह जी ने **माता सुंदर कौर जी** और **माता साहिब कौर जी** को सुरक्षित **दिल्ली** पहुँचाया। यह घटना उनके संगठन-शक्ति, निष्ठा और संकट-समय में धैर्य का प्रमाण है।

12.2 साहित्यिक एवं प्रशासनिक योगदान

भाई मणी सिंह जी का योगदान केवल रणभूमि तक सीमित नहीं रहा। **श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी** की पुनः बीड़-लेखन परंपरा में उन्होंने एक लेखक के रूप में योगदान दिया। उन्हें **दरबार साहिब** के **तीसरे हेड ग्रंथि** के रूप में सेवा का अवसर भी प्राप्त हुआ। संगत तथा गुरुद्वारा-प्रबंधन में उनकी भूमिका अनुकरणीय मानी जाती है।

12.3 सिख एकता के प्रयास

बाबा बंदा सिंह बहादुर की शहादत के बाद सिख पंथ में दो धाराएँ—**तत्त खालसा** और **बंदी खालसा** उभर आईं। इन दोनों दलों को एकत्र करने हेतु भाई मणी सिंह जी ने अपनी प्रखर बुद्धि और समर्पण से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रसंग में उनका व्यक्तित्व एक ऐसे सेतु के रूप में सामने आता है, जो पंथ की एकता को केवल विचार से नहीं, आचरण से भी दृढ़ करता है।

12.4 शहादत की अनमोल गाथा

दिवाली के अवसर पर **सरबत खालसा** के आयोजन हेतु भाई मणी सिंह जी ने **जकरिया खान** से अनुमति माँगी और **दस हज़ार रुपये** देने का वचन दिया। किंतु जकरिया खान की बदनीयत से संगत पर हमला हुआ और अनेक सिख शहीद हुए। विरोध करने पर भाई मणी सिंह जी को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें धर्म परिवर्तन करने अथवा शहादत स्वीकारने की शर्त दी गई। भाई मणी सिंह जी ने धर्म परिवर्तन से इंकार कर **14 जून 1734** ई. को **लाहौर** के **नखास चौक** में अपने **अंग-प्रत्यंग कटवाकर** शहादत स्वीकार की।

12.5 परिवार की शहादत और ग्रंथ-रचना

भाई मणी सिंह जी के परिवार में **12 भाई** थे, जिनमें से **11** ने सिख धर्म के लिए शहादत दी। उनके **10 पुत्रों** में से **7** ने शहादत अर्पण की थी। उनके दादा **भाई बल्लू राय जी** ने **श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी** की सेना में युद्ध करते हुए वीरगति पाई। साहित्यिक क्षेत्र में भी भाई मणी सिंह जी का योगदान विशिष्ट माना जाता है। उनके

नाम से **ज्ञान रत्नावली**, **भगत रत्नावली** और **गुरु विलास पातशाही 6वीं** जैसे ग्रंथों की रचना का उल्लेख मिलता है।

इन समस्त प्रसंगों से यह निष्कर्ष दृढ़ होता है कि भाई मणी सिंह जी का जीवन त्याग, समर्पण, विद्वत्ता और शौर्य का अनुपम संगम था; एक ऐसी प्रेरणा, जो हर सिख को सत्य और धर्म के मार्ग पर अडिग रहने का संदेश देती है।

13. वणजारा सिखों की परंपरागत धार्मिक-सामाजिक संरचना

वणजारा सिख अपने नाम के साथ सामान्यतः **'सिंह'** लगाते हैं। उनके प्रत्येक टांडे में एक **'अरदासिया'** होता है। यदि दो धड़ों में संघर्ष चल रहा हो और अरदासिया **श्री गुरु नानक देव साहिब जीi** की अरदास कर देने के पश्चात दोनों धड़े लड़ाई बीच में छोड़कर अपने-अपने घर लौट जाते हैं।

विवाह-संस्कार में भी गुरु-स्मृति की एक विशिष्ट परंपरा दिखाई देती है। लड़के के विवाह के समय पगड़ी में **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** के नाम का **रुपया** बाँधे बिना शादी नहीं हो सकती। यह रुपया विवाह में सबसे कीमती और आवश्यक वस्तु माना जाता है। विवाहिता लड़की **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** के नाम का **चूड़ा** पहनती है। विवाह के समय **'सई'** गर्म करके दूल्हे की बाँह पर **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** के नाम का दाग देने की परंपरा का भी उल्लेख मिलता है।

इसके साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि लगभग **75 प्रतिशत** वणजारों के पास भूमि है, पर उपज लेने के लिए साधनों की कमी बताई गई है। **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** के समय से वणजारे अपने-अपने टांडों में **नगाड़े** रखते चले आ रहे हैं। **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** के नाम की छाप उनके मनों पर अमिट है। वे गर्व से कहते हैं कि **श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी** के धड़ का संस्कार **लख्खी शाह वणजारे** ने किया था; इस कारण "आधी सिक्खी" तो उनकी है अर्थात यह कथन अहं नहीं अपितु गुरु-परंपरा से आत्मीय संबद्धता की लोक-अभिव्यक्ति है।

14. महान सिख योद्धा भाई बचित्तर सिंह जी : जीवन, युद्ध और शहादत

भाई बचित्तर सिंह जी का चित्रण सिख इतिहास में एक ऐसे शूरवीर के रूप में मिलता है, जो साधारण कद-काठी के होते हुए भी असाधारण फुर्ती, बुद्धि, साहस और रण-कौशल का प्रतीक था। उनका जन्म **12 अप्रैल सन 1663 ई.** को **ग्राम अलीपुर, ज़िला मुज़फ्फरनगर** में, भाई मणी सिंह जी के गृह में हुआ बताया गया है। वे **भाई माई दास जी** के पोते और **भाई बल्लू जी** के परपोते थे।

भाई मणी सिंह जी ने अपने **पाँच पुत्रों** को **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** की सेवाओं में समर्पित किया था। 'गुरु पंथ खालसा' के इतिहास में भाई मणी सिंह जी के परिवार का नाम विशेष सम्मान से लिया जाता है, क्योंकि इस परिवार के **50 से अधिक** सिखों ने पंथ के लिए शहादत अर्पित की। भाई मणी सिंह जी के **12 भाइयों** में से **11** शहीद हुए और उनके **10 सुपुत्रों** में से **8** ने पंथ के लिए शहादत दी; इन्हीं में से एक थे भाई बचित्तर सिंह जी।

वह **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** के अत्यंत निकटवर्ती स्नेही माने गए हैं। वह शूरवीर योद्धा होने के साथ-साथ संवेदनशील एवं कर्मशील सेवक भी थे। युद्धों में अग्रिम मोर्चे का नेतृत्व कर उन्होंने स्वयं को कुशल योद्धा सिद्ध किया। कृपाण-चलाने में उन्हें विशेष महारथ प्राप्त थी और गुरु-पातशाह द्वारा लड़े गए युद्धों में सहभागिता कर उन्होंने अपनी निष्ठा का परिचय दिया।

14.1 लोहे के किले पर मदमस्त हाथी और 'नागिनी भाला' का पराक्रम (1 सितंबर सन 1700 ई.)

1 सितंबर 1700 ई. को **22 पहाड़ी राजाओं** ने मिलकर एक मदमस्त और बलशाली हाथी को शराब पिलाकर **लौह गढ़** के किले का द्वार तोड़ने की योजना बनाई। इस चुनौती के सामने **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब**

जी ने भाई बचित्तर सिंह जी को विशेष रूप से चुना। उस समय भाई बचित्तर सिंह जी ने वचन किए कि गुरु-पातशाह का आशीर्वाद उनके शीश पर है तो वे इस हाथी ही नहीं, स्वर्ग के ऐरावत का भी कपाल फाड़ सकते हैं।

गुरु-पातशाह ने उन्हें **अपना "नागिनी भाला"** (बरछा) विशेष रूप से उस हाथी के कपाल को भेदने हेतु प्रदान किया। मदमस्त हाथी का शरीर लोहे की ढालों से ढका था और उसकी सूंड पर दोधारी तलवार बँधी थी। वह चिंघाड़ता हुआ किले की ओर बढ़ा, तब भाई बचित्तर सिंह जी एक कमांडो की भाँति किले से बाहर आए। घोड़ा जब हाथी के सामने दोनों पैरों पर खड़ा हुआ, तब भाई बचित्तर सिंह जी ने पूर्ण शक्ति से "नागिनी भाले" का प्रहार किया; जो लोहे के तवों को फाड़ता हुआ सीधे हाथी के मस्तक में घुस गया। हाथी के मस्तक से रक्तधाराएँ बहने लगीं और वह पलटकर अपनी ही सेना को कुचलने लगा। इस एक आक्रमण ने पूरे युद्ध का पासा पलट दिया और 22 पहाड़ी राजाओं की सेना धराशायी हो गई।

14.2 श्री आनंदपुर साहिब जी से प्रस्थान, मलकपुर रंगड़ा का युद्ध और शहादत

5–6 दिसंबर सन 1704 ई (कुछ इतिहासकार इसे 1705 ई. भी लिखते है) की रात्रि, जब **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** ने **श्री आनंदपुर साहिब जी** का किला छोड़ने का निर्णय किया, तब भाई बचित्तर सिंह जी उन 40 लोगों में सम्मिलित बताए गए हैं, जिन्होंने गुरु-पातशाह के साथ जीने-मरने का प्रण किया था। सुरक्षा की दृष्टि से उन्हें **100 सैनिकों** के जत्थे का नायक नियुक्त कर, एक दल के साथ बाहर भेजा गया। यह जत्था **श्री आनंदपुर साहिब जी** से **कीरतपुर** तक पहुँचा और वहाँ से **सरसा नदी** की ओर बढ़ा, जहाँ शत्रु सेना ने गोलियों और तीरों की बौछार कर हमला किया। गुरु-पातशाह ने अलग-अलग जत्थों को अलग-अलग स्थानों पर तैनात किया और भाई बचित्तर सिंह जी को निर्देश दिया कि वे सरसा पार कर **रोपड़** की ओर जाएँ ताकि **सरहिंद** से आ रही मुग़ल फौजों को रोका जा सके।

जब जत्था **ग्राम मलकपुर रंगड़ा** (वर्तमान मलकपुर) पहुँचा, तब वहाँ स्थानीय रंगड़ और मुग़ल फौजों के साथ घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में सौ सिखों के जत्थे ने शत्रु के सैकड़ों सैनिकों को मारकर शहादत पाई। भाई बचित्तर सिंह जी गंभीर रूप से घायल होकर अचेत अवस्था में रणभूमि में पड़े रहे; शत्रु ने उन्हें मृत समझकर छोड़ दिया।

पीछे से आ रहे **साहिबज़ादा अजीत सिंह जी**, **भाई मदन सिंह जी** और साथियों ने उन्हें घायल अवस्था में पाया और लगभग 6 किलोमीटर दूर **कोटला निहंग खान** के निवास स्थान पर ले गए। **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** पहले से वहाँ उपस्थित थे; उपचार आरंभ हुआ। **भाई निहंग खान** की पुत्री **बीबी मुमताज** ने उनकी सेवा-शुश्रूषा की, किंतु घाव अत्यंत गहरे होने और रक्तस्राव अधिक होने के कारण भाई बचित्तर सिंह जी बच न सके और **8 दिसंबर सन 1704 ई.** को शहीद हो गए। उनका अंतिम संस्कार **भाई गुरमा सिंह गहुणिआं-सैनी** तथा **भाई बग्गा सिंह जी बढ़ई** ने रात्रि के अंतिम पहर में किया।

14.3 माई मुमताज : सेवा, संकल्प और स्मृति-स्थल

ऐतिहासिक स्रोतों से यह भी वर्णित है कि बीबी मुमताज का निकाह बस्सी पठाना के एक मुस्लिम युवक से तय था। जब मुग़ल फौज कोटला निहंग खान के निवास पर तलाशी ले रही थी, तब भाई बचित्तर सिंह जी का जीवन बचाने हेतु उन्होंने सूबेदार को यह कहकर रोक दिया कि उनकी बेटी मुमताज अपने **खाविंद (पति)** के साथ कमरे में है और इस्लामी मर्यादा के अनुसार गैर-जनाना घर में पराए पुरुषों का प्रवेश वर्जित है। फौजदार आश्वस्त होकर लौट गया।

बाद में बीबी मुमताज ने इसे इलाही हुक्म मानकर भाई बचित्तर सिंह जी को अपना खाविंद स्वीकार किया और आगे चलकर वह **माई मुमताज** के नाम से प्रसिद्ध हुईं। वे जीवन भर गुरु-चरणों से जुड़ी रहीं और यह वचन करती रहीं—

"वाह-वाह गुरु गोबिंद सिह, भाणे का खाविंद गोबिंद सिह"

वर्तमान समय में माई मुमताज की कब्र/मज़ार **ग्राम बड़ी** की एक पहाड़ी पर बताई जाती है, जो **कोटला निहंग खान** नामक स्थान से लगभग 20 किलोमीटर दूर है। ग्राम बड़ी की एक अन्य पहाड़ी पर उनकी स्मृति में गुरुद्वारा साहिब की इमारत का उल्लेख भी मिलता है। इसी प्रसंग में ऐतिहासिक स्रोतों द्वारा आलम खान, रामकल्ला जी, नूरामाही तथा रज़िया (जिन्होंने छोटे साहिबज़ादों की शहादत का वृत्तांत दिया) की कड़ियों का उल्लेख भी किया जाता है।

14.4 वंश-परंपरा और आगे की शहादतें

भाई बचित्तर सिंह जी के दो पुत्र; **भाई संग्राम सिंह** और **भाई राम सिंह जी** का उल्लेख मिलता है, जिन्होंने गुरु पंथ खालसा के लिए जीवन अर्पित कर शहादत पाई। भाई संग्राम सिंह **13 मई सन 1710 ई.** को **चप्पड़ चिड़ी (सरहिंद) के युद्ध** में शहीद हुए और भाई राम सिंह जी **9 जून सन 1716 ई.** को **दिल्ली** में **बाबा बंदा सिंह बहादुर** के साथ शहीद हुए।

14.5 वारों और ऐतिहासिक रचनाओं में भाई बचित्तर सिंह जी

सिख इतिहास में भाई बचित्तर सिंह जी का नाम वारों और ऐतिहासिक रचनाओं में समय-समय पर प्रस्तुत हुआ है। उदाहरणस्वरूप—

"बोलिआ चित्र - बचित्र सिंह, रण होली खेलां जाई कै॥
पहिला खंडा झाड़ना, रुसतम दे सिर कतराह कै॥"

(वार पातशाही दसवीं की, पंजाबी वारां, संपादक पिआरा सिंह पदम्, पृष्ठ क्रमांक 258, सन 1980 ई. की आवृत्ति)

"बरछा मारिआ मारिआ बचित्तर सिंह कुंभ विच उठाए ॥
रणों के हाथी भज कै फिर राजी पाए ॥
बरछा सिंह बचित्तर दा मुल महिंगे होइआ ॥"

(पंजाबी वारां पिआरा सिंह पदम्, पृष्ठ क्रमांक 274)

"बचित्तर सिंह तेरी बरछी रोशन, तेरी सांग झरमल करै ॥
तेरे नाम थी रिपु थर-थर कापै, तेरी परबत हलक परै ॥"

(देसा सिंह भट्ट का दोहा, भाई भागू सिंह के आनंद कारज (परिणय बंधन) अमृतसर, सन् 1706 ई. में पढ़ा गया)

(नोट— इस पूरे इतिहास की जानकारी भट्ट बही मुलतानी सिंधी और भट्ट बही तलउढ़ा में भी अंकित होने का उल्लेख किया गया है।)

15. शहीद भाई बाज सिंह : सिख शौर्य, मानवता और जुल्म-विरोध की जीवंत परंपरा

सिख इतिहास का मूल स्वभाव यही रहा है कि वह अन्याय के विरुद्ध खड़ा होना सिखाता है और यह संघर्ष केवल युद्ध कौशल तक सीमित नहीं अपितु मानवता, धर्म और आत्मसम्मान की रक्षा का संकल्प भी है। जब भारत में इस्लामीकरण की जबरदस्त कोशिशें तीव्र थीं, तब **शहीद भाई बाज सिंह** जैसे योद्धाओं ने अपनी वीरता से सत्ता के सिंहासन तक को हिला दिया। परंपरा में यह वर्णित है कि उनकी निर्भीकता और रण-कौशल ने दिल्ली के तख्त पर बैठे **बादशाह फर्रुखसियर** को भी भयभीत कर दिया और वह तख्त छोड़कर भागने पर विवश हो गया। यही वह इतिहास है, जिसे आज भी स्मरण किया जाता है और जिसके भीतर सिख चेतना का अडिग स्वरूप उजागर होता है।

16. बादशाह फर्रुखसियर की क्रूरता : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

बादशाह फर्रुखसियर, जिसका पूरा नाम **अब्बुल मुजफ्फर मोहम्मद शाह फर्रुखसियर** था, सन **1713 ई. से सन 1719 ई.** तक दिल्ली का शासक रहा। वर्णित है कि उसने सिखों के विरुद्ध अत्याचार की पराकाष्ठा करते

हुए **सात दिनों में 740 सिख योद्धाओं** को शहीद कराया; प्रतिदिन **सौ से अधिक** सिखों को शहीद किया जाता था। इन परिस्थितियों में भी सिख वीर भयभीत नहीं हुए; वे धर्म-रक्षा का संकल्प लेकर शहादत को स्वीकार करते रहे। इस क्रूर समय-चक्र में ही भाई बाज सिंह का प्रसंग सामने आता है, जो सिख शौर्य का अत्यंत तीक्ष्ण प्रतीक बनकर इतिहास में स्थापित हुआ।

17. भाई बाज सिंह : वीरता, चुनौती और शहादत

जब फर्रुखसियर ने शहीदों की यह भयावह तस्वीर देखी, तब उसने सुना कि सिखों में एक महान योद्धा **बाज सिंह** है, जो अपने युद्ध-कौशल और निर्भीकता के लिए प्रसिद्ध है। फर्रुखसियर ने आदेश दिया कि बाज सिंह को पकड़कर उसके सामने प्रस्तुत किया जाए। भाई बाज सिंह को **पिंजरे में बंद** करके दरबार में लाया गया।

दरबार में फर्रुखसियर ने कहा- "हमने सुना है कि तुम बड़े शूरवीर और बहादुर हो, लेकिन अब तुम मेरे पिंजरे में बंद हो; कहाँ गई तुम्हारी बहादुरी?"

भाई बाज सिंह ने उत्तर दिया- "पिंजरे में भेड़-बकरियों को भी बंद नहीं किया जाता; यह केवल शेरों के लिए होता है। हम जैसे शेर तुझे खौफ दिखाने के लिए पैदा हुए हैं। अगर तुम मेरी बहादुरी देखना चाहते हो, तो मुझे पिंजरे से बाहर निकालकर मेरे हाथ खोल दो; मैं तुम्हें दिखाऊँ क्या होता है एक गुरु का सच्चा सिख?"

फर्रुखसियर ने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया और सैनिकों को आदेश दिया कि भाई बाज सिंह को पिंजरे से बाहर निकालकर **केवल एक हाथ की हथकड़ी** खोल दी जाए।

17.1 दृढ़ता और शौर्य की मिसाल

जैसे ही भाई बाज सिंह का एक हाथ खुला, उसने तत्काल पास खड़े सैनिक की तलवार छीन ली और अपने अद्वितीय युद्ध-कौशल का प्रदर्शन करते हुए **एक के बाद एक 13 मुगल सैनिकों** को मार गिराया। इस दृश्य से फर्रुखसियर भयभीत हो उठा और वर्णित है कि अपनी **25,000** सैनिकों की सेना की उपस्थिति के बावजूद वह भाग खड़ा हुआ।

भाई बाज सिंह ने सिंह-गर्जना के साथ उसे ललकारा- "तुम कहाँ भाग रहे हो? अभी तो तुम्हारी सेना ने मेरे एक हाथ की हथकड़ी खोली है; दूसरी हाथ की हथकड़ी खोलनी बाकी है।"

परंतु अंततः मुगल सेना ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया और भाई बाज सिंह ने शौर्यपूर्वक युद्ध करते हुए शहादत प्राप्त की।

18. शहीदी की गाथा और सिख इतिहास में स्थान

भाई बाज सिंह वही वीर बताए जाते हैं जिन्हें **श्री गुरु गोबिंद सिह साहिब जी** ने अपने पाँच सिखों में से एक के रूप में भेजा था। यह भी वर्णित है कि उन्होंने **भाई फतेह सिंह** के साथ मिलकर **वजीर खान** पर आक्रमण किया और **सरहिंद की विजय** के प्रसंग में योगदान दिया। उनकी शहादत और वीरता सिख इतिहास की स्मृति में इसलिए भी अमूल्य है कि वह केवल व्यक्तिगत पराक्रम नहीं अपितु गुरु-आज्ञा, धर्म-रक्षा और निर्भीक चेतना का समवेत रूप है।

भाई बाज सिंह और उनके तीन भाई- **राम सिंह, शाम सिंह, और सुक्खा सिंह**, सभी ने 'गुरु पंथ खालसा' के लिए जीवन अर्पित किया। उल्लेखित है कि **7 से 9 जून सन 1716 ई.** के बीच भाई बाज सिंह को शहीद किया गया।

19. समकालीन तथ्य : वणजारों के टांडे, जनसंख्या और सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप

वणजारा समाज केवल इतिहास के भीतर नहीं, बल्कि वर्तमान भारत के सामाजिक परिदृश्य में भी एक बड़ा वास्तविक तथ्य है। **डॉ. हरभजन सिंह (Punjabi University, Patiala)** की शोध-आधारित जानकारी के अनुसार भारत में वणजारों के लगभग **20,000 टांडे** हैं और उनकी संख्या **पाँच करोड़** (सन 2020 ई. तक) बताई गई है, जो भारत के **22 सूबों** में फैली हुई है। विशेषतः **मध्य प्रदेश (47 लाख), महाराष्ट्र (62 लाख),**

आंध्र प्रदेश (71 लाख), कर्नाटक (67 लाख), उत्तर प्रदेश (58 लाख), उड़ीसा (33 लाख), बिहार (35 लाख), राजस्थान (32 लाख), इन क्षेत्रों में उनके टांडों की भरमार बताई गई है।

जिस शहर/ग्राम के पास ये बस्ती बसाते हैं, उसे **टांडा** कहा जाता है और टांडे का नाम प्रायः उसी शहर/ग्राम के नाम पर रखा जाता है। टांडे के मुखिया को **'नायक'** कहा जाता है। वणजारे अपना संबंध **राठौर, चौहान, पवार और यादवों** से जोड़ते हैं तथा **राजपूत** भी कहलाते हैं। महाराष्ट्र में भारी संख्या होने के कारण **श्री वी. पी. नायक** और **सुधाकरराव नायक** महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री बने, पर उन्होंने अपने आप को **श्री गुरु नानक देव साहिब जी** का सिख घोषित नहीं किया; किंतु टांडों का कुछ सुधार अवश्य हुआ, ऐसा वर्णित है।

आंध्र में वणजारों का आगमन **महाराजा रणजीत सिंह** की सेना के आगमन से जोड़ा गया है। कहा गया है कि जो **1400 सिख सिपाही** (चौदह रिसालों) में आए, उनमें से बहुत से वणजारे थे; उनके परिवारों का बड़ा विस्तार हुआ। तथापि यह भी रेखांकित किया गया है कि **90 प्रतिशत वणजारे गरीबी रेखा से नीचे** हैं। इसलिए उन्हें संभालने और गुरु घर से पक्के तौर पर जोड़कर रखने की आवश्यकता विशेष रूप से सामने आती है।

20. उपसंहार : इतिहास, शहादत और परंपरा की समेकित दृष्टि

वणजारा समुदाय की सिक्खी में सहभागिता केवल संगत तक सीमित नहीं रही; वह गुरु-खोज, गुरु-सेवा, नगर-स्थापना, शहीदी संस्कार, सैन्य नेतृत्व और स्वतंत्रता-संघर्ष तक विस्तृत हुई।

मक्खन शाह की गुरु-खोज, लख्खी शाह का आत्मोत्सर्ग, नगाहिया सिंह का रण में दी गई शहादत और भगवंत सिंह व उनके बंधुओं की शौर्य-गाथा इस तथ्य की पुष्टि करती है कि वणजारे केवल व्यापारिक काफ़िलों के संचालक नहीं थे अपितु गुरु पंथ खालसा के अमर प्रहरी थे।

इस भाग में प्रस्तुत प्रसंग यह स्पष्ट करते हैं कि वणजारा परंपरा में **सेवा, शौर्य और शहादत** एक साथ प्रवाहित हुए हैं। **शहीद भाई मणी सिंह जी** का जीवन सिख प्रशासन, साहित्य और पंथ-एकता के लिए प्रेरक आधार बनता है, वहीं **भाई बचित्तर सिंह जी** का पराक्रम गुरु कालीन युद्ध इतिहास में उस अद्वितीय क्षण का प्रतीक है, जिसने सामूहिक मनोबल और युद्ध परिणति दोनों को प्रभावित किया। वणजारा समाज की लोक परंपराएँ भी यह दर्शाती हैं कि गुरु स्मृति उनके दैनिक जीवन की संस्कृति में एक जीवित संस्कार की तरह प्रतिष्ठित रही है।

इस शोध-पत्र से यह निष्कर्ष उभरता है कि वणजारे केवल भ्रमणशील व्यापारी समुदाय नहीं रहे, बल्कि वह **गुरु परंपरा के सहयात्री**, **गुरु-कार्य के सहयोगी**, और संकटकाल में **गुरु पंथ खालसा के अमर प्रहरी** सिद्ध हुए। एक ओर **मक्खन शाह लुबाणा** जैसे व्यक्तित्व गुरु की खोज और गुरु प्रतिष्ठा के ऐतिहासिक प्रसंग में दिखाई देते हैं, दूसरी ओर **लख्खी शाह** और **नगाहिया सिंह** जैसे नाम शहादत काल के साहस को उजागर करते हैं। वहीं **शहीद भाई मणी सिंह जी** और **भाई बचित्तर सिंह जी** के प्रसंग वणजारा परंपरा के भीतर शस्त्र-शास्त्र की एकसाथ बहती धारा को प्रमाणित करते हैं।

शहीद भाई बाज सिंह का प्रसंग इस समूचे विमर्श को उस चरम बिंदु तक ले जाता है जहाँ वीरता केवल युद्ध नहीं रहती अपितु ज़ुल्म के विरुद्ध लोक-चेतना की घोषणा बन जाती है। समकालीन आँकड़े और सामाजिक यथार्थ यह संकेत करते हैं कि इतिहास की यह दीप्त परंपरा आज भी सामाजिक संरचना में जीवित है; आवश्यकता केवल इतनी है कि इस समुदाय को गुरु घर के साथ आत्मीय और संगठित रूप से जोड़कर उनकी सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक जड़ों को पुनः सुदृढ़ किया जाए।

गुरु वाणी में 'वणजारा' का प्रतीकात्मक प्रयोग इस बात का संकेत है कि यह समुदाय उस युग में इतना व्यापक और परिचित था कि उसे मानव जीवन के आध्यात्मिक रूपक के रूप में प्रयुक्त किया जा सका। अतः वणजारों की भूमिका को केवल व्यापारिक समुदाय के रूप में नहीं अपितु भारतीय इतिहास और गुरु परंपरा के एक सशक्त आधार-स्तंभ के रूप में देखा जाना चाहिए।

इस प्रकार, वणजारा समाज की कथा, इतिहास, शहादत और परंपरा; गुरु पंथ खालसा की उस व्यापक धारा का प्रतिबिंब है, जिसमें सेवा, साहस, और सत्य के लिए दी गई शहादतें, समय के पार जाकर भी प्रेरणा बनता रहता है।

21. टिप्पणियाँ (Notes)

1. **श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी** के पृष्ठों को गुरमुखी में सम्मानपूर्वक **'अंग'** कहकर संबोधित किया जाता है।
2. **गुरुवाणी** का हिंदी अनुवाद **गुरुवाणी सर्चर ऐप** को मानक मानकर किया गया है।

Foot Notes

Roads & Communications in Mughal India, Abul Khair Muhemmod Farooque, Idarah-i-Adaleiyat-i-Delhi.

1. *Encyclopaedia of Sikhism (abridged)*, by Dr. Dharam Singh, 2013, page 704.
2. *Roads & Communications in Mughal India*, Page 66.
3. Ibid
4. Ibid
5. *Imperial Gazetteer of India*, 1908, Vol. 230, Page 221.
6. *Sri Guru Granth Sahib*, Page 74.
7. *Makhan Shah*, *Sri Gurpratap Suraj Granth*, Ras 11, Adhyai 3–17.
8. Ibid
9. *Encyclopaedia of Sikhism (abridged)*, by S. Dr. Dharam Singh vide Lakhi Shah.
10. *Vanjare*, Prof. Pyara Singh 'PADAM'.

ईमेल: arshpune18@gmail.com मो. 9096222223,9371010244

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 79-81
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना

डॉ.मंजू
सह-प्राध्यापिका हिंदी विभाग,
इंदिरा प्रियदर्शनी शासकीय महिला महाविद्यालय नामपल्ली, हैदराबाद, तेलंगाना

आधुनिक हिंदी साहित्य में छायावाद एक महत्वपूर्ण काव्यधारा के रूप में प्रतिष्ठित है, जिसने हिंदी कविता को आत्मानुभूति, प्रकृति-सौंदर्य, रहस्यवाद और भाव-संवेदनशीलता की नई दिशा प्रदान की। छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों में महादेवी वर्मा का स्थान अत्यंत विशिष्ट है। उनकी काव्य-संवेदना करुणा, विरह, आध्यात्मिक प्रेम, नारी-चेतना और प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के कारण अद्वितीय मानी जाती है। प्रस्तुत शोध-प्रपत्र में महादेवी वर्मा की काव्य-दृष्टि, भाव-संरचना, भाषा-शैली, प्रतीक-योजना, रहस्यवाद, नारी-विमर्श तथा समकालीन प्रासंगिकता का सम्यक् विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उनकी कविता व्यक्तिगत वेदना का विलाप न होकर सार्वभौमिक मानवीय करुणा की सशक्त अभिव्यक्ति है।

महादेवी वर्मा, छायावाद, काव्य-संवेदना, करुणा, विरह, रहस्यवाद, नारी चेतना, प्रतीक-योजना, प्रकृति-चित्रण, आध्यात्मिक प्रेम।

1. प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में छायावाद को स्वर्णिम युग कहा जाता है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विकसित इस काव्यधारा ने हिंदी कविता को नई आत्मानुभूति, व्यक्तिवाद और सूक्ष्म संवेदनशीलता प्रदान की। छायावाद के प्रमुख कवि— जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा— ने हिंदी काव्य को भावात्मक ऊँचाई प्रदान की।

इनमें महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना सर्वाधिक करुणामयी और आत्मगंभीर है। उनकी कविता में पीड़ा, विरह, आध्यात्मिकता और नारी की अंतःचेतना का अद्वितीय समन्वय मिलता है।

2. जीवन-परिचय और साहित्यिक पृष्ठभूमि

महादेवी वर्मा का जन्म 26 मार्च 1907 को उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा मिशन स्कूल में हुई तथा उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राप्त की। वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्राचार्या रहीं और शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

उनकी प्रमुख कृतियाँ—

- नीहार (1930)
- रश्मि (1932)

- नीरजा (1934)
- सांध्यगीत (1936)
- यामा (ज्ञानपीठ से सम्मानित)
- श्रृंखला की कड़ियाँ (नारी-विमर्श संबंधी गद्य)

उनकी साहित्य-सेवा के लिए उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार, पद्म भूषण आदि सम्मानों से अलंकृत किया गया।

3. छायावाद और महादेवी वर्मा का स्थान

छायावाद की मुख्य विशेषताएँ हैं— आत्मानुभूति, प्रकृति-चित्रण, रहस्यवाद और सौंदर्यबोध। महादेवी वर्मा ने इन विशेषताओं को करुणा और विरह के माध्यम से गहन रूप प्रदान किया।

उनकी कविता में आत्मा की पीड़ा और परम सत्ता से मिलन की आकांक्षा निरंतर व्यक्त होती है। वे छायावाद की आत्मनिष्ठता को आध्यात्मिक उत्कंठा से जोड़ती हैं।

4. करुणा: काव्य-संवेदना का मूल स्वर

महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना का मूल स्वर करुणा है। उनकी प्रसिद्ध पंक्ति—

"मैं नीर भरी दुख की बदली, स्पंदन में चिर निस्पंद बसा, क्रंदन में आहत विश्व हँसा, नयनों में दीपक-सी जली।"

उनकी संवेदना का प्रतीक है।

एक अन्य कविता में उनकी विरह-भावना और करुण संवेदना का स्वर देखें—

"जो तुम आ जाते एक बार, कितनी करुणा, कितने संदेशपथ में बिछ जाते बन पराग।"

उनकी करुणा आत्मदया नहीं, बल्कि मानवीय पीड़ा की सार्वभौमिक अनुभूति है। वे दुःख को आत्मोन्नति का साधन मानती हैं। उनकी कविता में पीड़ा एक सृजनात्मक ऊर्जा के रूप में उपस्थित है।

5. विरह और आध्यात्मिक प्रेम

उनकी कविता में विरह स्थायी भाव के रूप में विद्यमान है। यह विरह लौकिक प्रेम का नहीं, बल्कि आध्यात्मिक मिलन की उत्कंठा का प्रतीक है। उनका प्रियतम अदृश्य और रहस्यमय है— जो ईश्वर, आदर्श या अनंत सत्ता का बिंब हो सकता है।

इस दृष्टि से उनका काव्य भक्ति परंपरा से जुड़ता है, किंतु उसमें आधुनिक आत्मचेतना की गहराई भी है।

6. प्रकृति-चित्रण और प्रतीक योजना

महादेवी वर्मा की कविता में प्रकृति संवेदनाओं की सहचरी है। बादल, चाँद, रात्रि, दीप, पथिक, पवन आदि प्रतीक उनकी भावनाओं को मूर्त रूप देते हैं।

प्रकृति उनके लिए केवल सौंदर्य का स्रोत नहीं, बल्कि आत्मा की अभिव्यक्ति का माध्यम है।

7. नारी चेतना और आत्मसम्मान

महादेवी वर्मा हिंदी साहित्य में नारी चेतना की अग्रदूत मानी जाती हैं। उनकी गद्य कृति श्रृंखला की कड़ियाँ में स्त्री जीवन की सामाजिक विडंबनाओं का सशक्त चित्रण है।

उनकी कविता में स्त्री की आत्मा की स्वतंत्रता और संवेदनशीलता का स्वर मिलता है। वे स्त्री को केवल करुणा की मूर्ति नहीं, बल्कि चेतन और स्वाभिमानी व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

8. भाषा, शैली और काव्य-कौशल

उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ, कोमल और मधुर है। अलंकार, लाक्षणिकता और बिंब योजना का सशक्त प्रयोग उनकी कविता को प्रभावशाली बनाता है।

उनकी शैली में लयात्मकता और संगीतात्मकता है, जो कविता को गेय और भावपूर्ण बनाती है।

9. रहस्यवाद और दार्शनिक दृष्टि

महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना में रहस्यवाद की गहरी छाप है। आत्मा और परमात्मा के मिलन की आकांक्षा, अनंत की खोज और जीवन के दार्शनिक प्रश्न उनके काव्य का मूल आधार हैं।

उनकी कविता में अनंत के प्रति उत्कंठा और सीमित जीवन के प्रति संवेदनशीलता का संतुलन दिखाई देता है।

10. सामाजिक करुणा और मानवीय दृष्टि

यद्यपि उनकी कविता आत्मनिष्ठ है, परंतु उसमें सामाजिक करुणा का भी स्वर मिलता है। वे मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षियों के प्रति भी अत्यंत संवेदनशील थीं।

उनकी रचनाओं में मानवीयता और सहानुभूति का व्यापक विस्तार है।

11. आलोचनात्मक मूल्यांकन

आलोचकों ने उनकी कविता को "वेदना की कविता" कहा है। नमवर सिंह और डॉ. नगेंद्र ने उनकी काव्य-संवेदना को छायावाद की पराकाष्ठा माना है।

कुछ आलोचकों ने उनकी कविता को अत्यधिक विषादपूर्ण कहा, किंतु यह विषाद ही उनकी सृजनात्मक शक्ति है।

12. समकालीन प्रासंगिकता

आज के यांत्रिक और भौतिकवादी युग में महादेवी वर्मा की कविता संवेदनशीलता और मानवीय करुणा का संदेश देती है। उनकी कविता आत्मचिंतन और आध्यात्मिक खोज की प्रेरणा देती है।

उपसंहार

महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना हिंदी साहित्य की अमूल्य धरोहर है। उनकी कविता में करुणा, विरह, आध्यात्मिक प्रेम, नारी चेतना और प्रकृति-सौंदर्य का अद्वितीय समन्वय मिलता है। वे छायावाद की प्रमुख स्तंभ होने के साथ-साथ आधुनिक हिंदी कविता की सर्वोच्च कवयित्री हैं। उनकी संवेदना आज भी प्रासंगिक और प्रेरणादायी है।

संदर्भ सूची

1. महादेवी वर्मा — यामा, लोकभारती प्रकाशन।
2. महादेवी वर्मा — नीहार, राजकमल प्रकाशन।
3. महादेवी वर्मा — रश्मि, राजकमल प्रकाशन।
4. महादेवी वर्मा — श्रृंखला की कड़ियाँ, लोकभारती प्रकाशन।
5. रामचंद्र शुक्ल — हिंदी साहित्य का इतिहास।
6. नमवर सिंह — छायावाद।
7. हजारीप्रसाद द्विवेदी — हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास।
8. डॉ. नगेंद्र — छायावाद और उसका काव्य।
9. नंददुलारे वाजपेयी — आधुनिक हिंदी साहित्य की रूपरेखा।

ईमेल :manjuteacher1983@gmail .com

फोन नं :8688845259

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 82-84
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

आत्मनिर्भर भारत : अवसर, चुनौतियाँ एवं नीतिगत पहल

परम सिंह बरडे
सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र)
वीर बलिदानी खाज्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेन्धवा, जिला बड़वानी (म.प्र.)

सारांश :– प्रस्तुत शोध पत्र में आत्मनिर्भर भारत : अवसर, चुनौतियाँ एवं नीतिगत पहल का अध्ययन किया गया है। आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा भारत सरकार द्वारा वर्ष 2020 में कोविड–19 महामारी के दौरान प्रस्तुत की गई, जिसने वैष्विक अर्थव्यवस्था के साथ–साथ भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक कमजोरियों को उजागर किया। इस पहल का उद्देश्य भारत को आर्थिक, औद्योगिक, तकनीकी तथा रणनीतिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना है, ताकि देश न केवल अपनी आंतरिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके बल्कि वैष्विक प्रतिस्पर्धा में भी सशक्त भूमिका निभा सके। आत्मनिर्भर भारत केवल आयात प्रतिस्थापन या संरक्षणवाद की नीति नहीं है, बल्कि यह नवाचार, कौशल विकास, उत्पादन क्षमता विस्तार तथा वैष्विक मूल्य श्रृंखलाओं में एकीकरण पर आधारित एक समग्र विकास दृष्टिकोण है। यह शोध पत्र आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा, उससे उत्पन्न अवसरों, उसके समक्ष विद्यमान प्रमुख चुनौतियों तथा सरकार द्वारा अपनाई गई नीतिगत पहलों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि आत्मनिर्भर भारत भारत के दीर्घकालिक आर्थिक विकास, रोजगार सृजन और सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, बशर्ते इसके क्रियान्वयन में निरंतर सुधार, पारदर्शिता और समावेशिता सुनिश्चित की जाए।

शब्द कुंजी – आत्मनिर्भर भारत, आर्थिक विकास, स्वदेशीकरण, नीतिगत सुधार, वैष्विक प्रतिस्पर्धा।

1.प्रस्तावना – वर्तमान वैष्वीकरण के युग में भारतीय अर्थव्यवस्था ने तीव्र विकास किया है, किंतु इसके साथ ही आयात पर अत्यधिक निर्भरता, कमजोर विनिर्माण आधार और सीमित तकनीकी आत्मनिर्भरता जैसी समस्याएँ भी उभरकर सामने आई हैं। किसी देष को वृद्धि की आत्मनिर्भरता की अवस्था में लाना ठीक वैसा ही है, जैसा हवाई जहाज को धरती से हवा में उड़ाना। प्रो. रोजेन्स्टीन–रोडान के विचार से अर्द्ध–विकसित देषों में आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने के लिए इस बात की आवष्यकता है कि इन देषों में धीरे–धीरे विकास की नीति को नहीं अपनाया जाना चाहिए, वरन् 'प्रबल प्रयास' से ही विकास शीघ्र किया जा सकता है। कोविड–19 महामारी ने वैष्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को बाधित कर दिया, जिससे भारत सहित अनेक देशों को आवश्यक वस्तुओं के लिए आयात पर निर्भरता के दुष्परिणाम झेलने पड़े।

इसी संदर्भ में भारत सरकार ने मई 2020 में 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा की। यह अभियान केवल एक आर्थिक पैकेज नहीं था, बल्कि भारत के विकास मॉडल में संरचनात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास था। इसका उद्देश्य देश को आत्मनिर्भर बनाते हुए "लोकल से ग्लोबल" की दिशा में आगे बढ़ाना था। आत्मनिर्भर भारत का दर्शन भारतीय संस्कृति में निहित 'स्वावलंबन' की अवधारणा से प्रेरित है। भारतीय अर्थव्यवस्था उदारीकरण, निजीकरण और वैष्वीकरण के पश्चात तीव्र गति से विकसित हुई, किंतु इसके

साथ–साथ आयात पर निर्भरता, कमजोर विनिर्माण आधार और सीमित तकनीकी आत्मनिर्भरता जैसी संरचनात्मक समस्याएँ बनी रहीं। कोविड–19 महामारी ने इन कमजोरियों को स्पष्ट कर दिया। इसी संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत एक वैकल्पिक और सुदृढ़ विकास मॉडल के रूप में उभरा, जिसका उद्देश्य भारत को स्वावलंबी बनाते हुए वैष्विक अर्थव्यवस्था से सक्रिय रूप से जोड़ना है।

2. अध्ययन के उद्देश्य – इस शोध–पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. आत्मनिर्भर भारत से उत्पन्न अवसरों का मूल्यांकन करना।
2. इस अभियान से जुड़ी प्रमुख चुनौतियों की पहचान करना।
3. सरकार की नीतिगत पहलों का समालोचनात्मक अध्ययन करना।

3. शोध–विधि – प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक विधि पर आधारित है। अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जिनमें भारत सरकार के आधिकारिक दस्तावेज, आर्थिक सर्वेक्षण, नीति आयोग की रिपोर्टें, पाठ्य–पुस्तकें, शोध–पत्र तथा अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की रिपोर्टें शामिल हैं।

4. आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा – आत्मनिर्भरता भारत का अर्थ आत्मकेंद्रित अर्थव्यवस्था या संरक्षणवादी नीति से नहीं है। आत्मनिर्भर भारत वैष्वीकरण का विरोध नहीं करता, बल्कि भारत को वैष्विक मूल्य शृंखलाओं में एक मजबूत कड़ी बनाने का प्रयास करता है। इसका लक्ष्य है, भारत को उपभोक्ता से उत्पादक राष्ट्र में परिवर्तित करना। यह अवधारणा निम्न स्तंभों पर आधारित है –

1. अर्थव्यवस्था – दीर्घकालिक और सतत विकास, सुदृढ़ अर्थव्यवस्था।
2. अवसंरचना – आधुनिक एवं मजबूत बुनियादी ढाँचा।
3. प्रणाली – प्रौद्योगिकी–आधारित कुशल शासन व्यवस्था।
4. जनसांख्यिकी – युवा और कुशल मानव संसाधन।

इस अवधारणा का मूल उद्देश्य घरेलू उत्पादन क्षमता को सुदृढ़ करते हुए भारत को वैष्विक मूल्य श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण भागीदार बनाना है।

5. आत्मनिर्भर भारत की आवश्यकता

1. **आयात पर निर्भरता में कमी** – भारत ऊर्जा, रक्षा उपकरण, इलेक्ट्रॉनिक्स और चिकित्सा उपकरणों जैसे क्षेत्रों में आयात पर अत्यधिक निर्भर रहा है। यह निर्भरता आर्थिक और रणनीतिक दोनों दृष्टियों से जोखिमपूर्ण है।
2. **घरेलू विनिर्माण का सशक्तिकरण** – जीडीपी में विनिर्माण क्षेत्र की हिस्सेदारी अपेक्षाकृत कम रही है। आत्मनिर्भर भारत इस हिस्सेदारी को बढ़ाने का प्रयास करता है।
3. **रोजगार संकट का समाधान** – तेजी से बढ़ती जनसंख्या और युवाओं के लिए पर्याप्त रोजगार सृजन एक बड़ी चुनौती रही है।
4. **वैष्विक अनिश्चितताओं से सुरक्षा** – महामारी, युद्ध और भू–राजनीतिक तनाव जैसी स्थितियों में आत्मनिर्भरता आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती है।

6. आत्मनिर्भर भारत से उत्पन्न अवसर

1. **औद्योगिक विकास एवं विनिर्माण विस्तार** – 'मेक इन इंडिया' और 'आत्मनिर्भर भारत' के अंतर्गत उत्पादन–संलग्न प्रोत्साहन योजना लागू की गई, जिससे इलेक्ट्रॉनिक्स, फार्मास्यूटिकल्स, रक्षा, सौर ऊर्जा और ऑटोमोबाइल जैसे क्षेत्रों में निवेश बढ़ा।
2. **एमएसएमई क्षेत्र का सशक्तिकरण** – सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। आत्मनिर्भर भारत पैकेज के तहत इन्हें ऋण, तकनीक और बाज़ार तक पहुँच प्रदान की गई।
3. **स्टार्ट–अप और नवाचार** – स्टार्ट–अप इंडिया, डिजिटल इंडिया और अनुसंधान एवं विकास में निवेश से नवाचार की संस्कृति को बढ़ावा मिला है।
4. **कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था** – कृषि अवसंरचना कोष, और ग्रामीण उद्यमिता से किसानों की आय बढ़ाने के अवसर उत्पन्न हुए हैं।
5. **निर्यात क्षमता में वृद्धि** – उच्च गुणवत्ता वाले स्वदेशी उत्पादों के माध्यम से भारत वैष्विक बाज़ार में अपनी उपस्थिति सुदृढ़ कर सकता है।

7. आत्मनिर्भर भारत की प्रमुख चुनौतियाँ

1. **अवसंरचनात्मक सीमाएँ** – लॉजिस्टिक्स लागत अधिक होना, बिजली और परिवहन की समस्याएँ उत्पादन को महँगा बनाती हैं।
2. **कौशल अंतर** – उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप कुशल श्रमिकों की कमी एक गंभीर समस्या है।
3. **वित्तीय संसाधनों की कमी** – एमएसएमई और स्टार्ट–अप्स को सस्ता और सुलभ ऋण मिलना अब भी चुनौतीपूर्ण है।
4. **तकनीकी पिछड़ापन** – उन्नत तकनीक और अनुसंधान में सीमित निवेश आत्मनिर्भरता में बाधा डालता है।
5. **वैष्विक प्रतिस्पर्धा** – चीन, वियतनाम और अन्य देशों से लागत और गुणवत्ता के स्तर पर प्रतिस्पर्धा कठिन है।

8. आत्मनिर्भर भारत हेतु नीतिगत पहल

1. **आत्मनिर्भर भारत आर्थिक पैकेज** – लगभग 20 लाख करोड़ रुपये के पैकेज में एमएसएमई, कृषि, श्रम सुधार और सामाजिक सुरक्षा शामिल हैं।
2. **उत्पादन–संलग्न प्रोत्साहन योजना** – घरेलू उत्पादन बढ़ाने हेतु चयनित क्षेत्रों को वित्तीय प्रोत्साहन।
3. **श्रम एवं कृषि सुधार** – श्रम कानूनों का सरलीकरण और कृषि विपणन सुधार।
4. **एफडीआई एवं ईज़ ऑफ डूइंग बिज़नेस** – एफडीआई नीति में उदारीकरण और प्रशासनिक प्रक्रियाओं का सरलीकरण।
5. **डिजिटल और तकनीकी पहल** – डिजिटल भुगतान, ई–गवर्नेंस और स्टार्ट–अप इकोसिस्टम का विस्तार।

9. आत्मनिर्भर भारत और वैष्विक परिप्रेक्ष्य – आत्मनिर्भर भारत वैश्वीकरण के विरोध में नहीं है। यह भारत को वैष्विक आपूर्ति शृंखलाओं का वैकल्पिक केंद्र बनाने की दिशा में अग्रसर करता है। भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था, विशाल बाज़ार और युवा जनसंख्या इसे वैष्विक निवेश के लिए आकर्षक बनाती है।

10. निष्कर्ष – आत्मनिर्भर भारत भारतीय अर्थव्यवस्था को दीर्घकाल में सुदृढ, समावेशी और रणनीतिक विकास दृष्टिकोण है। यह केवल सरकारी योजनाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि वैष्विक रूप से प्रतिस्पर्धी बनाने की क्षमता रखता है। इसमें निजी क्षेत्र, नागरिक समाज और आम जनता की भागीदारी आवश्यक है। यदि अवसंरचना, कौशल विकास, तकनीकी नवाचार और नीतिगत स्थिरता पर निरंतर ध्यान दिया जाए, तो आत्मनिर्भर भारत को आर्थिक महाशक्ति बनाने की दिशा में एक निर्णायक कदम सिद्ध हो सकता है। आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना भारत के आर्थिक विकास की दिशा में एक संरचनात्मक परिवर्तन का प्रतीक है। प्रभावी नीति–क्रियान्वयन और मानव संसाधन विकास इसके सफलता–सूत्र हैं।

संदर्भ सूची –

1. भारत सरकार, आत्मनिर्भर भारत अभियान, नई दिल्ली।
2. नीति आयोग, भारतीय अर्थव्यवस्था एवं सुधार रिपोर्ट।
3. दत्त, आर. एवं सुंदरम, के.पी.एम., भारतीय अर्थव्यवस्था, सुल्तान चंद एंड संस।
4. आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट, भारत सरकार।
5. विष्व बैंक एवं यूएनडीपी रिपोर्ट।
6. डॉ. जे. पी. मिश्रा : संवृद्धि एवं विकास का अर्थषास्त्र, सहित्य भवन पब्लिकेषन्स, आगरा।

E-mail ID : paramsinghbarde@gmail.com
मोबाइल नं. 9630278172

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 85-87
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

'आप न बदलेंगे' एकांकी में मध्यवर्गीय गृहणी के पारिवारिक संघर्ष और तनाव

डॉ. जिनु जॉन
सहायक आचार्या, हिंदी विभाग,
मार अत्तनेशियस कॉलेज(आटोनोमस), कोतमंगलम, केरल – 686666

प्रारूप

एकांकी आधुनिक साहित्य की एक स्वतंत्र विधा है | एक अंक वाले नाटकों को एकांकी कहते हैं | अंग्रेजी में 'वन एक्ट प्ले' शब्द के लिये हिन्दी में 'एकांकी नाटक' और 'एकांकी' दोनों ही शब्द प्रचलित हैं | आधुनिक हिन्दी एकांकी का प्रारंभ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित "एक घूँट"(1929) को माना जाता है | आधुनिक हिंदी साहित्य में एकांकी का विकास बीसवीं शताब्दी में हुआ | जयशंकर प्रसाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेंद्रनाथ अश्क, सेठ गोविंददास, विष्णु प्रभाकर आदि लेखकों ने हिंदी एकांकी को समृद्ध किया | सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक और नैतिक विषयों को एकांकी के माध्यम से प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है |

हिंदी एकांकी में सामान्यतः पात्रों की संख्या कम होती है और कथानक एक ही घटना या प्रसंग के इर्द-गिर्द केंद्रित रहता है | इसमें संवादों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि उन्हीं के माध्यम से पात्रों का चरित्र और भाव स्पष्ट होता है | एकांकी में दृश्य परिवर्तन कम होते हैं तथा मंच-सज्जा भी सरल रहती है |

विश्लेषण

ममता कालिया द्वारा लिखा गया एकांकी है 'आप न बदलेंगे' | इस में एक मध्यवर्गीय स्त्री की मनस्थिति, पारिवारिक जीवन में पति - पत्नी के बीच का संघर्ष, घरेलू जीवन की ऊब और तनाव आदि का प्रभावी चित्रण किया गया है | `

नीता एक मध्यवर्गीय परिवार की गृहणी है | परिवार का हर सदस्य, चाहे उसका पति हो, चाहे बच्चे उसे उपकरण समझता है और उससे कोई न कोई काम कराना चाहता है | नीता अपने को एक मशीन की तरह बदलने को मज़बूर हो जाती है | नीता का प्रत्येक क्रिया-कलाप उसके पति के मन में चिढ़ पैदा करता है | रात को नीता का मोमबत्ती जलाये कमरों में जाना विधु को पसंद नहीं है | इस सन्दर्भ में विधु कहती है कि – "मोमबत्ती तुम्हें शायद

इसीलिए अच्छी लगती है कि वह टिकाऊ नहीं है | कितना भद्दा लगता है मोमबत्ती थामे एक कमरे से दूसरे में चक्कर लगाना ? |" पति के आदेशानुसार नीता बाज़ार जाकर एक सस्ता जंग लगा लैंप खरीद लाती है | मिट्टी के तेल से रगडकर उसको साफ करते वक्त एक जिन्न उसमें से बाहर आता है और मालकिन की हर आज्ञा का पालन करने को तैयार होता है | जिन्न नीता से कहा – "मेम साहब मुँह बाए क्या देखा रही हैं? मैं आपका नौकर हूँ, आप मेरी मालिक | कोई काम हो तो बताइए, वरना मेरा टाइम खराब मत कीजिए |" पहले तो नीता कुछ हक्का-बक्का - सा रह जाता है | फिर संभलकर घी, चीनी, मिट्टी का तेल आदि कुछ घरेलू चीजें ला देने की आज्ञा देती है | जिन्न तुरन्त ही आज्ञा का पालन करता है |

नीता का पति दफ्तर से और बच्चे स्कूल से वापस आते हैं तो घर में कोलाहल मच जाता है | विधु को लगता है कि ऑमलेट तो अंडे की लाश है | चिढ़ाते हुए विधु ने कहा – "नाश्ते में इमेजिनेशन होना चाहिए | यह नहीं कि सुबह शाम अंडे की लाश मेरे सामने पटक दी और हो गई छुट्टी तुम्हारे काम की |" शाम को आलू मटर बनाने की बात पर वह भडक उठता है और कहता है कि उससे अच्छा है गुड़ और गोबर मिला कर पकाना | बच्चे भी आलू का टोस्ट, सूजी की खीर, पराठा - सब्जी आदि खाने से इनकार करकेबिना होमवर्क किये ही खेलने चले जाते हैं | उनको तो बिस्कुट, लड्डू, पेस्ट्री आदि चाहिए | देर रात को भी नीता को परेशान और व्यस्त देखकर जिन्न उसका कारण पूछता है | वह उसे एलबम और रिमोट कंट्रोल देता है | एलबम के नौजवान और बच्चे जब चाहे हाज़िर होंगे और उसका मनचाहा व्यवहार भी करेंगे | वह बक्से के साथ स्विच बोर्ड भी देता है | प्रशंसा के लिए लाल, प्यार के लिए हरा और सैर -सपाटे के लिए पीला बटन दबाना है |

पति और बच्चों के जाने के बाद नीता बटन दबाती है तो एक हसीन, खुशमिज़ाज नौजवान और दो प्यारे प्यारे बच्चे बाहर आते हैं | नौजवान बहुत ही शिष्टाचारयुक्त व्यवहार करता है | बच्चे भी करीने से काम कर, नाश्ता करके खेलने जाते हैं | तब तक उसका पति और बच्चे लौट आते हैं | पति को एक हफ्ते के लिए ज़रूरी कार्य से गोवा जाना है | विधु के जाने पर नीता को सूनापन महसूस होता है | तब जिन्न के बक्से का नौजवान उस से प्यार करने आता है | "नवयुवक नीता को बाहों में भर लेता है | उसके स्पर्श से नीता एकदम चिहुँक जाती है | वह पीछे हटती है | नवयुवक उस पर और झुकता है | नीता आतंकित हो जाती है |" नीता उस पर गुस्सा करती है और रिमोट कंट्रोल बंद कर देती है | वह जिन्न से कहती है कि उसको अपनी, अपने परिवार की और अपने पति की इज्जत ही मूल्यवान है नीता जिन्न को परवर्टड बुद्धिवाला प्रेत कहकर कोसती भी है | "यह तुम कैसे भूल सकते हो कि मैं एक शादीशुदा औरत हूँ, मेरे दो प्यारे प्यारे बच्चे हैं, सुखी घर है | क्या मैं इस तरह जिस तिस के लिए उपलब्ध हो सकती हूँ | मेरी इज्जत, मेरी मान-प्रतिष्ठा कितनी बड़ी है, तुम्हें क्या पता ! तुम तो परवर्टेड बुद्धि के प्रेत हो, और क्या ? |" अपनी करामातों की नाकामयाबी समझकर जिन्न नीता के घर की नौकरी छोड देता है | तभी अचानक विधु और उसके बच्चे आ जाते हैं और दरवाज़ा खोलने की देरी की वजह से चिढ़ते हैं |

यह एकांकी घरेलू जीवन की साधारण घटनाओं के माध्यम से नारी की जटिल मनःस्थिति को उजागर करती है | नीता का चरित्र उस स्त्री का प्रतिनिधि है, जो परिवार की रीढ़ होते हुए भी एक उपकरण और मशीन की तरह उपयोग की जाती है | इसमें यथार्थ और फैंटेसी (कल्पना) का सधा हुआ प्रयोग किया गया है | जिन्न का आगमन यथार्थ से पलायन नहीं, बल्कि नीता के दमनग्रस्त अंतर्मन की अभिव्यक्ति है | जिन्न के माध्यम से लेखिका यह स्पष्ट करती हैं कि स्त्री की इच्छाएँ कितनी साधारण हैं – थोड़ी सराहना, थोड़ा प्रेम और थोड़ी संवेदना | रिमोट कंट्रोल और बटन जैसे प्रतीक आधुनिक यांत्रिक जीवन में संबंधों की कृत्रिमता को उजागर करते हैं | पति विधु और बच्चों का

व्यवहार मध्यवर्गीय पुरुष मानसिकता और पारिवारिक स्वार्थ को दर्शाता है | वे भोजन, सुविधा और अनुशासन को अपना अधिकार समझते हैं, पर नीता की भावनाओं को समझने का प्रयास नहीं करते | व्यंग्यात्मक संवाद—जैसे ऑमलेट को "अंडे की लाश" कहना – एकांकी में कटु यथार्थ और व्यंग्य को सशक्त बनाते हैं |

नीता का अंततः जिन्न को ठुकरा देना एक महत्वपूर्ण मोड़ है | यह उसके नैतिक बोध, संस्कार और आत्मसम्मान को रेखांकित करता है | यद्यपि वह प्रेम और अपनत्व के लिए तरसती है, फिर भी वह परिवार और सामाजिक मर्यादाओं को नहीं तोड़ती | यही बिंदु भारतीय नारी की उस मानसिकता को उजागर करता है, जहाँ त्याग और आत्मसंयम को सर्वोपरि माना जाता है | समालोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो एकांकी का अंत एक हद तक यथास्थितिवादी प्रतीत होता है, क्योंकि नीता की परिस्थिति में कोई ठोस परिवर्तन नहीं आता |

'आप न बदलेंगे' ममता कालिया का बहुचर्चित एकांकी है, जिसमें नारी के अंतर्मन को खोलने की कोशिश की गयी है | भारतीय नारी की लगन और आत्मसमर्पण की मानसिकता को दर्शाने में यह एकांकी सफल है | एकांकी में महत्वपूर्ण पात्र सिर्फ एक है और वह है – नीता | उसी के इर्द-गिर्द अन्य सभी पात्र घूमते हैं | नीता की समस्या को दर्शाने के लिए दूसरे सभी पात्रों की सृष्टि की गयी है | जिन्न की कल्पना उसके अंतर्मन को खोलने के लिए है | आज भी परिवार में नारी कितनी उपेक्षित है, नीता के माध्यम से यह दिखाया गया है | चाहे पति हो, चाहे बच्चे, सब यही चाहते हैं कि स्त्री उनके लिए तन तोड मेहनत करे, उनके सुख -सुविधाओं का उपकरण बने, घरेलू जीवन रूपी मशीन का पुर्जा बने। कोई भी यह नहीं समझता कि उसका भी मन है | भावनाएँ हैं, सपने हैं और उसे भी प्यार की ज़रूरत है, प्यार के दो बोल या थोडी - सी सराहना के लिए स्त्री का मन सदा तरसता है | एक मध्यवर्गीय गृहिणी के जीवन संघर्षों तनावों और उसके अन्तर्मन की समस्याओं को निरूपित करने में ममता कालिया पूर्णतः सफल हुई हैं | नारी संवेदना को उभारनेवाला यह एकांकी नाटक के तत्वों की दृष्टि से भी सफल है |

उपसंहार

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ममता कालिया का एकांकी 'आप न बदलेंगे' आधुनिक हिंदी एकांकी परंपरा की एक सशक्त और संवेदनशील रचना है | यह एकांकी मध्यवर्गीय गृहिणी के जीवन-संघर्ष, मानसिक तनाव और उपेक्षित भावनाओं को प्रभावी ढंग से उजागर करता है | नीता का चरित्र भारतीय नारी का प्रतीक है, जो परिवार के लिए निरंतर त्याग करती है, फिर भी उसे प्रेम, सम्मान और सराहना से वंचित रखा जाता है | जिन्न और रिमोट कंट्रोल जैसे प्रतीकों के माध्यम से लेखिका ने नारी के दमनग्रस्त अंतर्मन, उसकी इच्छाओं और आधुनिक यांत्रिक जीवन की विडंबनाओं को गहराई से प्रस्तुत किया है | यद्यपि एकांकी का अंत यथास्थितिवादी प्रतीत होता है, फिर भी यह समाज की जड़ मानसिकता पर तीखा व्यंग्य करता है | कुल मिलाकर, यह एकांकी नारी-संवेदना, सामाजिक यथार्थ और मनोवैज्ञानिक द्वंद्व का सशक्त दस्तावेज़ है |

संदर्भ

आप न बदलेंगे – ममता कालिया

9526864182
jinuj@macollege.in

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 88-93
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह और समन्वयवादी दृष्टि

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi,
Mount Carmel College, Autonomous,
58, Palace Road, Abshot Layout, Vasanth Nagar, Bangalore-560001.

प्रस्तावना:

कबीर का काव्य सामाजिक अन्याय, धार्मिक पाखंड और जातिगत विभाजन के विरुद्ध तीव्र विद्रोह का स्वर है, साथ ही वह हिन्दू-मुस्लिम एकता और मानवतावादी समन्वय की सशक्त स्थापना भी करता है| कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह केवल नकारात्मक अस्वीकृति नहीं है, बल्कि वह सकारात्मक परिवर्तन की चेतना से प्रेरित है| मध्यकालीन भारतीय समाज राजनीतिक अस्थिरता, सांस्कृतिक संक्रमण और धार्मिक रूढ़ियों, कर्मकांड और जातिगत विभाजन गहराई से जड़े जमा हुए थे| हिन्दू समाज में ब्राह्मणवादी वर्चस्व, छुआछूत, ऊँच-नीच और वर्णाश्रम व्यवस्था के कठोरता ने सामाजिक गतिशीलता को सीमित कर दिया था| धर्म का मूल उद्देश्य आत्मिक उन्नति और नैतिक आचरण था, परंतु व्यवहार में वह कर्मकांडों, बाह्य आडंबरों और पाखंड तक सीमित होता जा रहा था| मंदिर-पूजा, तीर्थाटन, व्रत-उपवास आदि को ही धर्म का पर्याय मान लिया गया था| इसी प्रकार मुस्लिम समाज में भी रूढ़िवादिता, औपचारिक धार्मिकता और बाह्य आचरणों पर अधिक बल था| सूफी संतों की उदार परंपरा के बावजूद कट्टरता और सांप्रदायिक भेदभाव के तत्व मौजूद थे| परिणामस्वरुप समाज में हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य, सामाजिक असमानता और धार्मिक आडंबर का वातावरण बन गया था| साधारण जन अज्ञान, अंधविश्वास और सामाजिक शोषण के चक्र में फँसा हुआ था| ऐसे समय में भक्ति आंदोलन ने लोकचेतना को जागृत करने का कार्य किया| इस आंदोलन ने व्यक्तिगत भक्ति, ईश्वर से सीधा संबंध और सामाजिक समता पर बल दिया| इसी ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि में कबीरदास का प्रादुर्भाव हुआ| उनके काव्य में तीखा सामाजिक व्यंग और विद्रोह का स्वर मिलता है| जाति व्यवस्था का विरोध करते हुए वे मनुष्य की समानता और आंतरिक गुणों को महत्व देते हैं|

कबीर का युगीन परिप्रेक्ष्य:

भक्तिकाल के प्रमुख संत कवि कबीरदास का उदय ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज गहरे सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संकटों से गुज़र रहा था| 15वीं शताब्दी का भारत राजनीतिक अस्थिरता, सामंती संरचना और धार्मिक जड़ताओं का युग था| ज्ञान और धर्म पर उच्चवर्ग का एकाधिकार था, जिससे निम्नवर्गीय और शोषित समाज अपेक्षित बना रहा| सूफी संत प्रेम, करुणा और ईश्वर-भक्ति का संदेश दे रहे थे, फिर भी समाज में सांप्रदायिक भेदभाव और सामाजिक दूरी बनी हुई थी| मध्यकालीन भारत में हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के बीच सांस्कृतिक और धार्मिक मतभेद स्पष्ट दिखाई देते थे| "कबीर का काव्य मध्यकालीन समाज की वर्गीय और धार्मिक संकीर्णताओं

के विरुद्ध संघर्ष का दस्तावेज़ है, जिसमें एक नई मानवतावादी चेतना का सूत्रपात हुआ।"(1) मंदिर-मस्जिद, राम-रहमान, पूजा-नमाज़ जैसे प्रतीकों के आधार पर दोनों संप्रदायों में विभाजन गहरा हो गया था| ऐसे समय में कबीर ने दोनों समुदायों की सकीर्णताओं पर समान रूप से प्रहार किया| उन्होंने पंडित और मुल्ला दोनों को बाह्य आडंबर छोड़कर सच्ची साधना अपनाने का संदेश दिया| उनके काव्य में 'राम' और 'रहमान' की एकता का भाव स्पष्ट है| भक्ति आंदोलन का उदय सामाजिक और धार्मिक जड़ताओं के प्रतिरोध के रूप में हुआ| दक्षिण भारत के आलवार और नायनार संतों से प्रारंभ होकर यह धारा उत्तर भारत तक पहुँची| उत्तर भारत में रामानंद, रैदास, मीरा, तुलसी आदि संतों ने इसे आगे बढ़ाया| इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत भक्ति, सरल साधना और सामाजिक समता की स्थापना था| भक्ति आंदोलन ने जाति-व्यवस्था और धार्मिक पाखंड के विरुद्ध आवाज़ उठाई| इसने लोकभाषाओं को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया, जिससे सामान्य जनता तक संदेश पहुँचा| इसी परंपरा में कबीर निर्गुण भक्ति के प्रमुख प्रवक्ता बने| उन्होंने निराकार, निर्गुण ईश्वर की उपासना पर बल दिया और आंतरिक शुद्धता को सच्चा धर्म बताया| भक्ति आंदोलन ने इस परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार की और कबीर ने अपने निर्भीक काव्य के माध्यम से उसे स्वर दिया| इसलिए कबीर का काव्य अपने समय का सजीव दस्तावेज़ भी है और शाश्वत मानवीय मूल्यों का उद्घोष भी|

कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह:

कबीर का काव्य केवल आध्यात्मिक अनुभूति का दस्तावेज़ नहीं बल्कि सामाजिक अन्याय, असमानता और पाखंड के विरुद्ध एक क्रांतिकारी उद्घोष है|

"कबीर ने जाति-पांति और कर्मकांड की रूढ़ियों पर कठोर प्रहार किया और निर्गुण भक्ति के माध्यम से एक समन्वित धर्म की स्थापना की।"(2)

उन्होंने अपने समय की जड़ और रूढ़ मान्यताओं को चुनौती दी तथा मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रतिष्ठित किया| कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह मुख्यतः तीन स्तरों पर दिखाई देता है- जाति-व्यवस्था का विरोध, धार्मिक पाखंड और कर्मकांड का खंडन तथा सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार|

(1) जाति व्यवस्था का विरोध:

मध्यकालीन समाज में जाति-व्यवस्था अत्यंत कठोर थीं| जन्म के आधार पर मनुष्य की श्रेष्ठता या हीनता निर्धारित की जाती थी| ऊँची जातियों को सामाजिक, धार्मिक और शैक्षिक अधिकार प्राप्त थे, जबकि निम्न जातियाँ शोषण और उपेक्षा का शिकार थीं| कबीर ने इस व्यवस्था का तीखा विरोध किया| वे स्वयं जुलाहा परिवार में पले बढ़े, अतः सामाजिक भेदभाव को निकट से अनुभव किया था| उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा- "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान|" इस कथन के माध्यम से कबीर ने जन्म के आधार पर श्रेष्ठता को अस्वीकार कर ज्ञान और आचरण को महत्व दिया| उनके अनुसार सभी मनुष्य एक ही परमात्मा की संतान है, इसीलिए उनमें भेद करना अनुचित है| वे कहते हैं कि, मिट्टी एक ही है, उससे बने सभी पात्र समान है| "कबीर ने जाति-व्यवस्था की जड़ों पर प्रहार करते हुए सामाजिक समता का मार्ग प्रशस्त किया। उनके लिए भक्ति का द्वार सभी के लिए समान रूप से खुला था।"(3) इस प्रकार कबीर का जाति-विरोध केवल सामाजिक विद्रोह नहीं, बल्कि मानव समानता का सशक्त घोष है|

(2) धार्मिक पाखंड और कर्मकांड का खंडन:

कबीर के समय में धर्म बाह्य आडंबरों और कर्मकांडों तक सीमित हो गया था| मंदिर-पूजा, तीर्थयात्रा, व्रत-उपवास और यज्ञ आदि को ही धर्म का मूल समझ लिया गया था| इसी प्रकार मुस्लिम समाज में भी नमाज़, रोज़ा और हज जैसे बाह्य कर्मों को प्रधानता दी जाती थी| कबीर ने दोनों धर्म के पाखंडों पर समान रूप से प्रहार किया| वे कहते हैं- "पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ,पंडित भया न कोय|" इस दोहे में वे केवल शास्त्र-ज्ञान के अहंकार का विरोध करते हैं| उनके अनुसार सच्चा ज्ञान आत्मानुभूति से प्राप्त होता है, न कि केवल पुस्तकीय अध्ययन से| इसी प्रकार वे

मूर्ति पूजा पर प्रश्न उठाते हुए कहते हैं- "पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूँ पहार|" यहाँ कबीर का उद्देश्य ईश्वर की सर्वव्यापकता को स्थापित करना है| उनके अनुसार ईश्वर मंदिर या मस्जिद में सीमित नहीं है, बल्कि वह प्रत्येक जीव के हृदय में निवास करता है| इस प्रकार उनका काव्य धार्मिक आडंबरों के विरुद्ध आंतरिक साधना और सच्चे प्रेम की स्थापना करता है|

(3) सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार:

कबीर ने समाज में व्याप्त अन्य कुरीतियों- अंधविश्वास, ढोंग, बाह्य दिखावा, लोभ और स्वार्थ- पर भी करारा व्यंग्य किया| वे पंडितों और मुल्लाओं की स्वार्थपरता तथा धर्म के नाम पर जनता के शोषण की आलोचना करते हैं| उनकी वाणी में तीखापन और स्पष्टवादिता है| वे समाज को आईना दिखाते हुए कहते हैं कि मनुष्य बाह्य रूप से धार्मिक बनता है, किंतु भीतर से छल और कपट से भरा रहता है| कबीर के लिए सच्चा धर्म मन की पवित्रता, सत्य, प्रेम और करुणा में निहित है| उन्होंने स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब, ऊँच-नीच जैसे भेदों से ऊपर उठकर मानवता की स्थापना का संदेश दिया| उनके काव्य में सामाजिक सुधार की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है| वह समाज को केवल दोष नहीं देते, बल्कि उसे सुधारने का मार्ग भी दिखाते हैं- सहज जीवन, सच्ची साधना और आंतरिक शुद्धता का मार्ग| उनका विद्रोह विनाशकारी नहीं, बल्कि रचनात्मक है- जो समाज को नई दिशा देने वाला है| कबीर का काव्य आज भी सामाजिक समता, धार्मिक सहिष्णुता और मानवीय एकता का प्रेरक स्रोत बना हुआ है|

कबीर की समन्वयवादी दृष्टि:

कबीरदास सामाजिक विद्रोही ही नहीं, बल्कि समन्वयवादी चिंतक भी थे| कबीर ने अपने समय की सकीर्णताओं से ऊपर उठकर ऐसी दृष्टि प्रस्तुत की, जिसमें निर्गुण भक्ति, अद्वैत चेतना, हिन्दू-मुस्लिम एकता और सार्वभौमिक मानवता का संदेश निहित है|

(1) निर्गुण भक्ति और अद्वैत चेतना:

कबीर निर्गुण भक्ति धारा के प्रमुख प्रवक्ता थे| उनके अनुसार ईश्वर निराकार, निर्गुण और सर्वव्यापक है| वह किसी मूर्ति, मंदिर या मस्जिद तक सीमित नहीं है, बल्कि प्रत्येक जीव के हृदय में निवास करता है| कबीर का ईश्वर न तो केवल 'राम' है और न ही केवल 'अल्लाह'; वह एक ऐसी परम सत्ता है, जो सभी नाम और रूपों से परे है| उनकी वाणी में अद्वैत चेतना का स्वर स्पष्ट सुनाई देता है| वह जीव और ब्रह्म के भेद को मिथ्या मानते हैं| आत्मा और परमात्मा के बीच कोई वास्तविक अंदर नहीं है; यह भेद केवल अज्ञान के कारण प्रतीत होता है| कबीर का यह विचार वेदांत और सूफी दर्शन दोनों से प्रभावित प्रतीत होता है, किंतु उन्होंने इसे अपने अनुभव के आधार पर अभिव्यक्त किया| इस प्रकार उनका निर्गुणवाद किसी एक परंपरा तक सीमित नहीं, बल्कि सार्वभौमिक आध्यात्मिक अनुभव का प्रतिफल है| वह प्रतिपादित करते हैं कि सभी धर्म के मूल में एक ही सत्य विद्यमान है- परमात्मा की एकता और प्रेम|

(ख) हिन्दू-मुस्लिम एकता का संदेश:

कबीर का युग सांप्रदायिक तनाव और धार्मिक विभाजन का काल था| ऐसे समय में उन्होंने हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदायों की संकीर्णताओं की आलोचना करते हुए एकता का संदेश दिया| उनके काव्य में "राम-रहीम", "केशव-करीम" की एकता का भाव स्पष्ट दिखाई देता है| कबीर कहते हैं कि ईश्वर के नाम भिन्न हो सकते हैं, परंतु उसका स्वरूप एक ही है| यदि हिन्दू उसे 'राम' कहते हैं और मुसलमान 'रहमान', तो इससे सत्य में कोई परिवर्तन नहीं होता| उन्होंने दोनों धर्मों के कर्मकांडों और बाह्य आडंबरों का खंडन करते हुए आंतरिक साधना और सच्चे प्रेम को धर्म का आधार माना| वे कहते हैं कि मंदिर और मस्जिद में ईश्वर को ढूंढने के बजाय मनुष्य को अपने भीतर उसे खोजना चाहिए| इस प्रकार उन्होंने धार्मिक एकता और सहअस्तित्व का मार्ग प्रशस्त किया|

(ग) मानवतावादी दृष्टिकोण:

कबीर की समन्वयवादी दृष्टि का सबसे महत्वपूर्ण आधार उनका मानवतावाद है| उन्होंने मनुष्य को सर्वोपरि माना और उसकी गरिमा को प्रतिष्ठित किया| उनके लिए धर्म, जाति या संप्रदाय से अधिक महत्वपूर्ण मनुष्य की आंतरिक शुद्धता और नैतिक आचरण है| "कबीर की मानवतावादी दृष्टि किसी संप्रदाय-विशेष तक सीमित नहीं है; वह लोकचेतना की उस परंपरा से जुड़ी है जो मनुष्य को उसके मूल मानवीय अधिकारों और गरिमा के साथ देखती है।"(4) वे कहते हैं कि, प्रेम ही ईश्वर तक पहूँचाने का सच्चा मार्ग है| इसीलिए वे 'सहज' और 'सरल' जीवन का उपदेश देते हैं, जिसमें दिखावा नहीं, बल्कि सच्चाई और करुणा हो| उनका मानवतावाद सामाजिक क्षमता पर आधारित है| उनके अनुसार सभी मनुष्य एक ही परम सत्ता की संतान है, इसीलिए उनमें भेदभाव करना अनुचित है| इस प्रकार कबीर की समन्वयवादी दृष्टि व्यापक, उदार और मानव केंद्रित है| मानवतावादी दृष्टिकोण के माध्यम से उन्होंने प्रेम, करुणा और सहिष्णुता को जीवन का आधार बनाया| उनके विचार समय और स्थान की सीमाओं से परे सार्वकालिक महत्व रखते हैं|

सामाजिक विद्रोह और समन्वय का अंतरसंबंध:

भक्तिकालीन संत काव्य धारा में कबीरदास का व्यक्तित्व सामाजिक विद्रोह और सामान्य का अद्वितीय संगम प्रस्तुत करता है| उनका 'विद्रोह' नकारात्मक या विध्वंसात्मक नहीं, बल्कि रचनात्मक और सुधारोन्मुख है; और उनका समन्वय समझौता नहीं, बल्कि सत्य की स्थापना पर आधारित है|

(1) विद्रोह का उद्धेश्य-केवल विरोध नहीं, बल्कि सुधार:

कबीर ने अपने समय की सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक विसंगतियों के विरुद्ध निर्भीक स्वर उठाया| उन्होंने जाति-व्यवस्था, छुआछूत, धार्मिक पाखंड और बाहयाडंबरों का तीखा विरोध किया| किंतु उनका यह विरोध किसी वर्ग या समुदाय के प्रति घृणा से प्रेरित नहीं था| उनका उद्देश्य समाज को तोड़ना नहीं, बल्कि उसे जागृत करना था| हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है- "कबीर का व्यक्तित्व भारतीय समाज की जड़ताओं के विरुद्ध एक प्रबल विद्रोह है। वे किसी संप्रदाय विशेष के प्रवक्ता नहीं, बल्कि समस्त मानवता के साधक हैं।"(5) कबीर की दृष्टि में विद्रोह आवश्यक है, क्योंकि जड़ और रूढ़ व्यवस्था को झकझोरने के लिए साहसपूर्ण आवाज़ चाहिए| यदि अन्याय और पाखंड के विरुद्ध प्रतिरोध न हो तो, समाज स्थिर और जड़ हो जाता है| इसलिए उनका विद्रोह परिवर्तन की भूमिका तैयार करता है| यह विद्रोह विध्वंसक नहीं, बल्कि सृजनात्मक है- जो नई चेतना को जन्म देता है|

(2) समन्वय के माध्यम से समाज में संतुलन और समरसता की स्थापना:

कबीर का समन्वयवादी दृष्टिकोण जाति, धर्म और संप्रदाय की संकीर्णताओं का विरोध करते हैं, तो उसके स्थान पर मानवता, समानता और प्रेम की स्थापना करते हैं| समन्वय का अर्थ यह नहीं कि वह सभी परंपराओं को यथावत स्वीकार करते हैं; बल्कि वे उनके श्रेष्ठ तत्वों को ग्रहण कर एक व्यापक दृष्टि प्रस्तुत करते हैं| यही कारण है कि उनके काव्य में वेदांत, सूफी और लोकजीवन के तत्वों का सुंदर मेल दिखाई देता है| यह समन्वय समाज में संवाद, सहअस्तित्व और भाईचारे की भावना को सुदृढ़ करता है|

(3) विद्रोह और समन्वय-एक दूसरे के पूरक:

कबीर के काव्य में विद्रोह और समन्वय एक ही प्रक्रिया के दो चरण हैं| पहले वे समाज की बुराइयों को चुनौती देते हैं, फिर उनके स्थान पर सकारात्मक मूल्यों की स्थापना करते हैं| यदि केवल विद्रोह हो और समाधान न हो, तो वह अराजकता उत्पन्न कर सकता है; और यदि केवल समन्वय हो, परंतु अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध न हो, तो वह निष्क्रियता बन सकता है| कबीर ने इन दोनों के बीच संतुलन स्थापित किया| उनका विद्रोह समाज को जागृत करता है, और उनका समन्वय उसे दिशा देता है| इस प्रकार वे परिवर्तन और स्थिरता, साहस और करुणा, सत्य और प्रेम के बीच संतुलन बनाते हैं| यही संतुलन समाज में वास्तविक समरसता की स्थापना करता है|

कबीर की प्रासंगिकता:

आज भी समाज में वर्गभेद, जातीय संघर्ष और सामाजिक असमानता की समस्याएँ विद्यमान हैं| ऐसे समय में कबीर का यह संदेश कि, मनुष्य की पहचान उसके कर्म और ज्ञान से होनी चाहिए, अत्यंत महत्वपूर्ण है| कबीर ने हिन्दू और मुस्लिम दोनों धर्म की आडंबरपूर्ण प्रवृत्तियों की आलोचना की|

उन्होंने कहा- ‘‘माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर|’’ यह कथन बाह्य आडंबरों की निरर्थकता को उजागर करता है| आज के समय में जब धार्मिक कट्टरता और सांप्रदायिकता समाज को विभाजित कर रही है, कबीर का समन्वयवादी दृष्टिकोण और आंतरिक श्रद्धा पर बल देना अत्यंत सार्थक है| कबीर का काव्य प्रेम, करुणा, सत्य और अहिंसा जैसे मानवीय मूल्यों पर आधारित है| वे मनुष्य को आत्मचिंतन और आत्मशुद्धि की प्रेरणा देते हैं| आधुनिक भौतिकवादी जीवन में जब नैतिक मूल्यों का हास दिखाई देता है, तब कबीर की वाणी मनुष्य को सही मार्ग दिखाती है| उनकी सादगीपूर्ण भाषा और जीवन दर्शन आज की जटिल जीवन में सरलता और संतुलन का संदेश देते हैं| कबीर की भाषा सरल, सहज और जनभाषा के निकट है| उनकी साखियाँ और सबद आज भी लोकजीवन में गूँजते हैं| वे हिन्दी साहित्य में जनचेतना के कवि माने जाते हैं| उनकी वाणी ने आगे आनेवाले अनेक कवियों और सामाजिक आंदोलनों को प्रभावित किया|

निष्कर्ष:

कबीर का काव्य भारतीय भक्ति परंपरा में केवल आध्यात्मिक साधना का स्वर नहीं है, बल्कि वह सामाजिक चेतना और मानवीय समता का प्रखर उद्घोष भी है। उनके काव्य में एक ओर तीखा सामाजिक विद्रोह है, तो दूसरी ओर गहन समन्वयवादी दृष्टि। यही द्वंद्वात्मक संतुलन उन्हें युग-प्रवर्तक कवि बनाता है।

कबीर ने अपने समय की धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विसंगतियों पर निर्भीक प्रहार किया। उन्होंने जाति-व्यवस्था, कर्मकांड, बाह्याडंबर, पाखंड और संकीर्ण धार्मिकता का कठोर विरोध किया। उनके दोहों और साखियों में यह विद्रोही स्वर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है— वे न हिन्दू आडंबर को स्वीकार करते हैं, न मुस्लिम कट्टरता को। उनका यह प्रतिरोध किसी एक समुदाय के विरुद्ध नहीं, बल्कि समग्र सामाजिक असमानता और अज्ञान के विरुद्ध था। इस प्रकार उनका विद्रोह विध्वंसात्मक नहीं, बल्कि सुधारात्मक और मानवतावादी था। साथ ही, कबीर की दृष्टि केवल नकारात्मक आलोचना तक सीमित नहीं रहती। वे समन्वय की राह भी सुझाते हैं। उन्होंने ‘राम’ और ‘रहमान’ को एक ही सत्य के दो नाम माना और आत्मा की शुद्धि को सच्ची साधना का आधार बताया। उनका निर्गुण भक्ति मार्ग सभी के लिए समान रूप से खुला था—वह किसी जाति, वर्ग या धर्म की सीमाओं में बंधा नहीं था। इस प्रकार कबीर ने सामाजिक समरसता और आध्यात्मिक एकता का आदर्श प्रस्तुत किया। कबीर का समन्वयवाद किसी समझौते की नीति नहीं, बल्कि सत्य की खोज पर आधारित था। वे अनुभव को शास्त्र से ऊपर रखते हैं और आंतरिक साधना को बाह्याचार से श्रेष्ठ मानते हैं। उनके लिए सच्चा धर्म वह है जो मानवता, प्रेम और करुणा को बढ़ाए। इसलिए उनका काव्य सामाजिक क्रांति और आध्यात्मिक समन्वय—दोनों का वाहक बन जाता है। समग्र रूप में कहा जा सकता है कि कबीर का काव्य भारतीय समाज के लिए एक दर्पण भी है और दिशा-सूचक भी। उनके विद्रोह में परिवर्तन की शक्ति है और उनके समन्वय में एकता की संभावना। आज के विभाजित और तनावपूर्ण सामाजिक परिदृश्य में भी कबीर की वाणी उतनी ही प्रासंगिक है, क्योंकि वह हमें बाहरी भेदों से ऊपर उठकर मानवता के मूल सत्य को स्वीकार करने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ सूची:

1. रामविलास शर्मा, भारतीय साहित्य की भूमिकाराजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष:1994, पृ.सं.120
2. रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, वर्ष: 2012, पृ.सं.137

3. गोविंद त्रिगुणायत, कबीर और उनका काव्य, साहित्य भवन, इलाहाबाद, वर्ष: 1987, पृ.सं.90
4. नामवर सिंह, दूसरी परंपरा की खोज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष: 2006, पृ.सं.60
5. हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्लीवर्ष: 2008, पृ.सं.38

Phone Number-8105566341
Email.Id- pa.anupama09@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 94-98
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

ਮਾਨਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਤਿੜਕਣ ਦਾ ਸਿਰਜਕ -ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ

ਸੋਨਾ ਸਿੰਘ
ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ
ਪੋਸਟ-ਗ੍ਰੈਜੂਏਟ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ ਡੀ.ਏ.ਵੀ.ਕਾਲਜ,ਅਬੋਹਰ (ਫਾਜ਼ਿਲਕਾ)

ਜਿਸ ਦੌਰ ਵਿੱਚ ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਵੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਸਮੇਂ ਕਹਾਣੀ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਲਹਿਰ ਦੀ ਯਥਾਰਥਕਤਾ, ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਖੁਸ਼ਹਾਲ ਜੀਵਨ ਦਾ ਸੁਪਨਾ ਤਿੜਕਣਾ, ਦੇਸ਼ ਦਾ ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਸਿਆਸੀ ਸੰਕਟ ਗਹਿਰਾ ਹੋਣਾ, ਲੋਕ ਰਾਜ ਦੀ ਲੋਕ ਭਲਾਈ ਨੀਤੀ ਦਾ ਭਰਮ ਟੁੱਟਣਾ ਆਦਿ ਸਥਿਤੀਆਂ ਤੀਸਰੇ ਦੌਰ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਦੇ ਪਿਛੋਕੜ ਵਿਚ ਕਾਰਜਸ਼ੀਲ ਰਹਿੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਦੌਰ ਵਿਚ ਕਈ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਟੁੱਟਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਸਮੇਂ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਨਾਇਕਤਵ ਦੀ ਮਿੱਥ ਖੰਡਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਤੇ ਫਿਰ ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਮਾਣ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਤੀਕ ਕਈ ਹੋਰ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਤੇ ਮਿੱਥਾਂ ਦਾ ਟੁੱਟਣਾ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਸਮੂਹਿਕਤਾ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਠੇਸ ਲਗਦੀ ਹੈ ਤੇ ਵਿਅਕਤੀਵਾਦੀ ਰੁਚੀਆਂ ਪ੍ਰਫੁੱਲਤ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਕਾਰਨ ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਆਂਤਰਿਕ ਯਥਾਰਥ ਬਹੁ-ਪਰਤੀ, ਜਟਿਲਮਈ ਅਤੇ ਭੇਦਪੂਰਨ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।1 ਅਜਿਹੀਆਂ ਪਿਛੋਕੜੀ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿਚ ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨੂੰ ਕਾਇਮ ਰੱਖਦਿਆਂ ਆਪਣੇ ਵਸਤੂ ਅਨੁਭਵ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਲਈ ਨਵੇਂ ਕਥਾ-ਮਾਡਲ ਨੂੰ ਸਿਰਜਣ ਵਾਲਾ ਕਥਾਕਾਰ ਹੈ। ਕਜ਼ਾਕ ਨਿਵੇਕਲੀ ਸੁਰ ਨਾਲ ਪੰਜਾਬੀ ਦਾ ਸਥਾਪਿਤ ਕਹਾਣੀਕਾਰ ਬਣ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ। ਪੰਜਾਬੀ ਜਗਤ ਨੂੰ ਹੁਣ ਤੱਕ **'ਕਾਲਾ ਇਲਮ'**, **'ਸੂਰਜਮੁਖੀ ਪੁੱਛਦੇ ਨੇ'**, **'ਅੱਧਾ ਪੁਲ'**, **'ਹੁੰਮਸ'** ਅਤੇ **'ਅੰਤਹੀਣ'** ਕਹਾਣੀ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਦੇ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ, ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਇਕ ਨਵਾਲ **'ਕਾਲਾ ਪੱਤਣ'** ਤੇ ਨਾਟਕ **'ਕਦੋਂ ਤੱਕ'**, **'ਤਲਾਸ਼'** ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਸਭਿਆਚਾਰ ਸੰਬੰਧੀ ਖ਼ੋਜ ਕਾਰਜ ਲਈ ਆਪਣਾ ਨਿਵੇਕਲਾ ਸਥਾਨ ਹਾਸਲ ਕਰ ਲਿਆ ਹੈ। ਹਥਲੇ ਖ਼ੋਜ ਪੇਪਰ ਵਿੱਚ **"ਅੰਤਹੀਣ"** ਕਹਾਣੀ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਵਿਚਲੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਨੂੰ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਣ ਦਾ ਅਧਾਰ ਬਣਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ।

ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ ਬਸਤੀਵਾਦੀ ਅਤੇ ਨਵ ਬਸਤੀਵਾਦੀ ਦੇ ਗਲਬੇ ਅਧੀਨ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਸਭਿਅਤਾ ਅਤੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੇ ਵਸਤੂਗਤ ਦੁਖਾਂਤ ਦੀ ਪੇਸ਼ਕਾਰੀ ਦਾ ਕਥਾਕਾਰ ਹੈ, ਉਹ ਜਾਣਦਾ ਹੈ ਸਮਰਾਜ ਅਧੀਨ ਪਿੰਡਾਂ ਦੀ ਪੁਰਾਣੀ

ਸਾਂਝ ਅਤੇ ਅਪਣੱਤ ਤਾਂ ਮੂਲੋਂ ਹੀ ਖ਼ਤਮ ਹੋ ਗਈ ਹੈ, ਪਰ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸਭਿਅਤਾ ਅਤੇ ਪਛੜੇਵੇ ਸਦਕਾ ਪੰਜਾਬ ਦੀ ਸ਼ਹਿਰੀ ਤਰੱਕੀ ਪਿੰਡਾਂ ਵਿਚੋਂ ਉਜੜੇ ਬਹੁਗਿਣਤੀ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵਿੱਚ ਸਮਾਉਣ ਦੇ ਯੋਗ ਨਹੀਂ ਹੈ। 'ਜੜ੍ਹਾਂ' ਤੇ 'ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਕੁਝ' ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਖੇਤਰ ਪਿੰਡ ਤੇ ਸ਼ਹਿਰ ਦੋਵੇਂ ਹੀ ਹਨ, ਜਦੋਂ ਤੱਕ ਸੰਪਤੀ ਦੀ ਸੰਸਥਾ ਕਾਇਮ ਨਹੀਂ ਉਦੋਂ ਤੱਕ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦਾ ਨਿਵਾਰਣ ਨਾ ਪਿੰਡਾਂ ਵਿਚ ਸੰਭਵ ਹੈ, ਨਾ ਸ਼ਹਿਰ ਵਿੱਚ। ਸਭਿਅਤਾ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਤੇਜ਼ੀ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਹੋਇਆ ਕਿ ਪਿੰਡਾਂ ਵਿਚੋਂ ਆਏ ਲੋਕ ਇਸ ਵਿਚ ਸਮਾ ਸਕਣ। ਪਿੰਡਾਂ ਦੇ ਸਾਧਨ ਵਿਹੂਣੇ ਜਾਂ ਸਾਧਨ ਊਣੇ ਵਰਗ ਦੇ ਲੋਕ ਰੋਜ਼ੀ ਰੋਟੀ ਦੀ ਤਲਾਸ਼ ਵਿਚ ਸ਼ਹਿਰਾਂ ਵੱਲ ਰੁਖ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਪਰ ਕਈ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ ਪੈਂਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਨਾਲ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਅਨਿਵਾਰੀ ਹੈ, ਉਹ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦੀ ਵੀ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿਚਾਲੇ ਟੁੱਟ ਭੱਜ ਦੀ ਵੀ।

ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸਮਾਜਿਕ ਮਨੁੱਖੀ ਵਿਵਸਥਾ ਦੌਰਾਨ, ਸਧਾਰਨ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਮਾਜਿਕ ਸਾਂਸਕ੍ਰਿਤਕ ਹੋਂਦ ਦੇ ਸੰਕਟ ਨੂੰ ਕਲਾਤਮਿਕ ਵਿਰੋਧਭਾਸਾਂ ਰਾਹੀਂ ਯਥਾਰਥਕ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ।2 **'ਜੜ੍ਹਾਂ' ਤੇ 'ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਕੁਝ'** ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਮਾਜਿਕ -ਸਾਂਸਕ੍ਰਿਤਕ ਹੋਂਦ ਦਾ ਸੰਕਟ ਆਪਣੀ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਮਾਨਵੀ ਹੋਂਦ ਪ੍ਰਤੀ ਚੇਤੰਨ, ਆਪਣੇ ਸਵੈਮਾਨ ਨੂੰ ਬਰਕਰਾਰ ਰੱਖਣ ਲਈ ਪ੍ਰਯਤਨਸ਼ੀਲ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਪਰੰਪਰਾ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼-ਸ਼ੀਲ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। **'ਜੜ੍ਹਾਂ'** ਕਹਾਣੀ ਦਾ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਅਤੇ **'ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਕੁਝ'** ਦਾ ਪਾਤਰ ਸੁਰਜੀ (ਸੁਰਜਨ ਸਿੰਘ ਠੇਕੇਦਾਰ) ਸਧਾਰਨ ਕਿਰਤੀ ਵਜੋਂ ਪੈਂਦਾ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਆਪਣੀਆਂ ਸਮਾਜਿਕ ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ ਸਾਂਸਕ੍ਰਿਤਕ ਪ੍ਰਤਿਬੰਧਾਂ ਨੂੰ ਤੋੜਦੇ ਹੋਏ ਸਵੈਮਾਨ ਨਾਲ ਸੁਤੰਤਰ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜਿਊਣ ਦੀ ਅਭਿਲਾਸ਼ਾ ਰੱਖਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਪਾਤਰਾਂ ਦੀ ਸਥਾਪਿਤ ਵਿਵਸਥਾ ਪ੍ਰਤੀ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਵਿਰੋਧ ਉਪਜਦਾ ਹੈ ਜੋਂ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀ ਟੁੱਟ ਭੱਜ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਦਾ ਹੈ।ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਵਿਅਕਤ ਯਥਾਰਥ ਅਨੁਸਾਰ ਜੂਨ ਗੁਜ਼ਾਰਾ ਤਾਂ ਸੰਭਵ ਹੈ ਪਰ ਸਵੈ ਮਾਨ ਨਾਲ ਜਿਊਣਾਂ ਸੰਭਵ ਨਹੀਂ ਹੈ ਜੜ੍ਹਾਂ'ਕਹਾਣੀ ।'ਤੇ 'ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਕੁਝ' ਕਹਾਣੀ ਦਾ ਰਚਨਾ ਵਿਧਾਨ ਇੱਕ ਦੂਜੇ ਪ੍ਰਤੀ ਉਲਟ ਦਿਸ਼ਾਵੀ ਹੈ ਪਰ ਯਥਾਰਥਕ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਦੋਵੇਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੀ ਸਮਾਨ ਰੂਪ ਹੈ ਦੋਵਾਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੇ ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ ਆਪਣੇ ਮੂਲ ਨਾਲੋ ਟੁੱਟੇ ਹੋਏ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਗੁਆਉਣ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਹੰਢਾਉਂਦੇ ਹਨ। 'ਜੜ੍ਹਾਂ'ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਦਾ ਕਾਰਨ ਮਨੁੱਖ ਦਿ ਸਥਿਤੀ ਬਣਦੀ ਹੈ,ਅਤੇ 'ਗੁਆਚ ਗਿਆ ਕੁਝ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖੀ ਚਰਿੱਤਰ।

'ਜੜ੍ਹਾਂ'ਕਹਾਣੀ ਦਾ ਸਾਰਾ ਬਲ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਅਤੇ ਉਸ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਰਿਸ਼ਤੇ ਉੱਪਰ ਹੈ ਜੋਂ ਵਿਅਕਤੀ ਦੀ ਹੋਣੀ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਵੇਗ ਅਨੁਸਾਰ ਤੋੜਦਾ ਹੈ, ਮੋੜਦਾ ਹੈ, ਢਾਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਸਾਰਦਾ ਹੈ। ਮੁੱਖ ਪਾਤਰ (ਮੈਂ) ਆਪਣੀ ਪੋਟ ਵਿੱਚ ਚਾਰ ਡਿਗਰੀਆਂ ਦਾ ਚੋਗਾ ਘੱਤ ਕੇ ਆਪਣੀਆਂ ਮਜਬੂਰੀਆਂ ਦਾ "ਮਾਂ" ਨੂੰ ਵਾਸਤਾ ਪਾ ਕੇ ਅਮੀਰ ਘਰ ਦੀ "ਸ਼ੈਲੀ" ਨਾਲ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾ ਕੇ ਉਸ ਦੇ ਅਮੀਰ ਪਿਉ ਵੱਲੋਂ ਖ਼ੈਰਾਤ ਵਜੋਂ ਮਿਲੀ ਨੌਕਰੀ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਕੇ ਪਤਨੀ ਸ਼ੈਲੀ ਦੀ ਇੱਛਾ ਸਦਕੇ ਸ਼ਹਿਰਾ ਤੁਰ ਆਉਂਦਾ ਹੈ, ਸ਼ੈਲੀ ਦੇ ਇਹ ਬੋਲ -

"ਉਸ ਦੀਆਂ ਜੜ੍ਹਾਂ ਫੈਲਣ ਲਈ ਪਿੰਡ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਕਾਫ਼ੀ ਨਹੀਂ ਸੀ। ਤੇ ਫਿਰ ਪਿੰਡ ਦੇ ਨੀਵੇਂ ਅਤੇ ਕੱਚੇ ਬਨੇਰਿਆਂ ਤੋਂ ਕਿਸੇ ਵੱਡੀ ਉਡਾਣ ਲਈ ਕਿਵੇਂ ਪਰਵਾਜ਼ ਭਰੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਸੀ।"3

ਜਦੋਂ ਕਿ ਮਾਂ ਮਿਹਨਤ ਮਜ਼ਦੂਰੀ ਕਰਕੇ ਜਵਾਨ ਹੋਣ ਤੱਕ ਆਪਣੇ ਪੁੱਤਰ ਦੇ ਅਫ਼ਸਰ ਬਣਨ ਤੱਕ ਦੀ ਉਡੀਕ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਇੱਛਾ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਜਵਾਨ ਹੋ ਕੇ ਅਫ਼ਸਰ ਬਣੇਗਾ ਤੇ ਉਸ ਨੂੰ ਰਾਜ ਕਰਵਾਏਗਾ, ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਹ ਇਹ ਗੱਲ ਨੂੰ ਵਾਰ ਵਾਰ ਦੁਹਰਾਉਂਦੀ :-

"ਅਫ਼ਸਰ ਬਣੂ ਮੇਰਾ ਪੁੱਤ! ਰਾਜ ਕਰਾਊ ਮਾਂ ਨੂੰ..... ਆਖਰ ਬੰਦੇ ਦੀ ਅੰਸ਼ ਐਂ.... ਜੇ ਮਾਂ ਦੀ ਆਂਦਰ ਠੰਡੀ ਕਰੂ, ਤਾਂ ਹੀ ਪਿਉ ਦਾ ਸਿਵਾ ਠੰਡਾ ਹੋ ਊ.... ਮਾੜੀ ਲਾਦ ਤਾਂ ਕਹਿੰਦੇ ਬੰਦੇ ਦੀ ਗਤੀ ਨੀਂ ਹੋਣ ਦਿੰਦੀ।"4

ਇਕ ਪਾਸੇ ਪਤਨੀ ਸ਼ੈਲੀ ਦੀ ਇੱਛਾ ਕਿ ਵੱਡੀ ਉਡਾਣ ਲਈ ਪਿੰਡ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਚੋ ਪਰਵਾਜ਼ ਨਹੀਂ ਭਰੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਤੇ ਇਕ ਪਾਸੇ ਮਾਂ ਦੀ ਇੱਛਾ ਪੁੱਤਰ ਅਫ਼ਸਰ ਬਣ ਕੇ ਪਿੰਡ ਦੀ ਮਿੱਟੀ ਨਾਲ ਜੁੜ ਕੇ ਰਾਜ ਕਰਾਊ ਇਹ ਦੋਵੇਂ ਰਿਸ਼ਤੇ ਉਸ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਪਾਸੇ ਵੀ ਜੜ੍ਹਾਂ ਨਹੀਂ ਲਾਉਣ ਦਿੰਦੇ,ਤੇ ਉਹ ਵਿਚੇ ਵਿੱਚ ਰਿੱਝਦਾ ਹੈ। ਵਿੱਚੇ ਵਿੱਚ ਰਿੱਝਦੇ ਰਹਿਣਾ ਸਥਿਤੀ ਨਾਲ ਤਨਾਉ ਵਿਚਰਨ ਦੀ ਸਪੱਸ਼ਟ ਉਦਾਹਰਨ ਹੈ ਇਹ ਤਨਾਉ ਹੀ ਆਧੁਨਿਕ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਟੁੱਟਣ ਭੱਜਣ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਦੇ ਵਿਪਰੀਤ **"ਕੁਝ ਗੁਆਚ ਗਿਆ"** ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਬੰਤਾ ਸਿਹੁੰ ਅਤੇ ਸੁਰਜੀ (ਸੁਰਜਨ ਸਿੰਘ ਠੇਕੇਦਾਰ) ਇਕ ਦੂਜੇ ਦੇ ਸਨਮੁੱਖ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਅੱਲਗ ਅੱਲਗ ਸਥਿਤੀ ਵਿੱਚ ਵਿਚਰਦੇ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਇਕ ਪਾਸੇ 'ਬੰਤਾ ਸਿਹੁੰ' ਸਵੈ ਮਾਨ, ਸਵੈ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ੀ, ਹਲੀਮੀ ਅਤੇ ਇਮਾਨਦਾਰ ਸੀ। ਹੁਨਰ ਉਸ ਦੇ ਲਹੂ ਵਿੱਚ ਸੀ। ਲੋਕ ਉਸ ਦੀ ਨੇਕ ਨੀਅਤ ਬਾਰੇ ਗੱਲ੍ਹਾਂ ਕਰਦੇ ਸਨ। ਭਾਈ ਲਾਲੋ ਦੀ ਅੰਸ਼ ਨੂੰ ਬੰਤਾ ਸਿੰਹੁ ਨੇ ਦਾਗ਼ ਨਹੀਂ ਲੱਗਣ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਇਮਾਨਦਾਰੀ ਦੀ ਹਿੰਡ ਕਾਰਨ ਭਾਵੇਂ ਉਸ ਦਾ ਡੰਗ ਮਸਾਂ ਹੀ ਤੁਰਿਆ ਸੀ।ਇਸ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਉਸ ਦਾ ਪਿਉ ਵੀ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਤਰਖਾਣੇ ਲੁਹਾਰ ਦੀ ਸੇਪੀ ਕਰਦਾ ਵਰ੍ਹੇ ਛਿਮਾਹੀ ਦਾਣੇ ਆਉਂਦੇ ਕਦੇ ਦਸ ਵੱਟਿਆਂ ਘੱਟ ਜਾਂਦੇ ਇਸ ਵਿਚ ਹੀ ਸਬਰ ਸੰਤੋਖ ਸੀ। ਬੰਤਾ ਸਿੰਹੁ ਨੇ ਹੱਕ,ਹਲੀਮੀ, ਇਮਾਨਦਾਰੀ ਆਪਣੇ ਪਿਉ ਸੁੰਦਰ ਸਿੰਘ ਤੋਂ ਸਿੱਖੀ ਉਸ ਵੇਲੇ ਵੀ ਇਹੋਂ ਜਿਹੀਆਂ ਦੂਸ਼ਿਤ ਹਵਾਵਾਂ ਵਗੀਆਂ ਬੇਈਮਾਨੀ ਦੇ ਝੱਖੜ ਝੁੱਲੇ ਸਨ। ਪੈਸੇ-ਪੈਸੇ ਦੇ ਕਮੀਸ਼ਨ ਬਦਲੇ ਕਾਰੀਗਰਾਂ ਨੂੰ ਵਿਕਦੇ ਦੇਖਿਆ ਸੀ ਤੇ ਬੰਤਾ ਸਿੰਹੁ ਨੇ ਪਿਉ ਦੇ ਇਕੋਂ ਬੋਲ ਨਾਲ ਹਵਾ ਦਾ ਰੁੱਖ ਮੋੜ ਦਿੱਤਾ ਸੀ। ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ 'ਸੁਰਜੀ' ਉਸ ਦਾ ਪੁੱਤਰ ਸ਼ਹਿਰ ਦਾ ਠੇਕੇਦਾਰ ਅੱਜ ਕਾਰਾ- ਕੋਠੀਆਂ ਨੌਕਰ ਚਾਕਰ ਅਤੇ ਪੂਰੇ ਇਲਾਕੇ ਵਿਚ ਉਸ ਦੀ ਧਾਂਕ ਸੀ, ਪਰ ਉਹਦਾ ਪੁੱਤਰ ਕਿੱਥੇ? ਜਿਸ ਨੇ ਠੇਕੇਦਾਰੀ ਵਿੱਚ ਪੈਰ ਧਰਨ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਦਰਬਾਰ ਸਾਹਿਬ ਅੱਗੇ ਮੱਥਾ ਟੇਕਿਆ ਪ੍ਰਣ ਲਿਆ ਕਿ ਨੇਕ ਕਮਾਈ ਤੇ ਮਲਿਕ ਭਾਗੋ ਦਾ ਪਰਛਾਵਾਂ ਨਹੀਂ ਪੈਣ ਦੇਵੇਗਾ, ਪਰ ਉਹ ਆਪਣੀ ਆਰਥਿਕ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਚੁੱਕਣ ਲਈ ਆਪਣਾ ਈਮਾਨ ਤੱਕ ਵੇਚ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਆਪਣੀ ਤੇ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਦੀ ਇੱਜ਼ਤ ਨੂੰ ਢਾਰਸ ਤੱਕ ਲਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਉਸ ਦੀ ਪਤਨੀ ਜੋਂ ਕਿਸੇ ਟੈਂਡਰ ਦੇ ਸਿਲਸਿਲੇ ਵਿੱਚ ਕਿਸੇ ਪਾਰਟੀ ਨਾਲ ਗਈ ਸੀ।ਟੈਂਡਰ ਪਾਸ ਕਰਾਉਣ ਤੋਂ ਮੁੜਦੀ ਮੇਮ ਸਾਹਬ ਅਜਿਹੀ ਹਾਲਤ ਵਿੱਚ ਮੁੜਦੀ ਬੱਚੇ ਤਾਂ ਕਿ ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਨੂੰ ਵੀ ਨਹੀਂ ਸੀ ਮਿਲਦੀ। ਇਹ ਸੁਣ ਕੇ ਬੰਤਾ ਸਿੰਹੁ ਤਿੜ- ਤਿੜ ਕਰਕੇ ਮੱਚਣ ਲੱਗਿਆ ਤੇ ਪੁੱਤ ਸੁਰਜੀ ਸਾਹਮਣੇ ਜਾ ਖੜ੍ਹਾਦਾ ਹੈ ਤੇ ਅੱਗੋਂ ਉਹ ਭਰੇ ਪੀਤੇ ਬੋਲਾ ਵਿੱਚ ਆਖਦਾ ਹੈ -

ਠੀਕ ਸੁਣਿਐਂ ਤੈਂ.........5 ਵਿਸ਼ਾਲ ਕੋਠੀ ਵੱਲ ਇਸ਼ਾਰਾ ਕਰਦੇ ਕਹਿੰਦਾ,

"ਐਹ ਦੇਖ, ਅੱਜ ਕਿੰਨਾ ਕੁਝ ਐ ਮੇਰੇ ਕੋਲ ਗਿਣਾਵਾਂ ਤਾਂ ਗਿਣਿਆ ਨਹੀਂ ਜਾਣਾ... ਫਿਰ ਐਨਾ ਕੁਝ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਲਈ ਕੁਝ ਨਾ ਕੁਝ ਤਾਂ ਗੁਆਉਣਾ ਈ ਪੈਂਦੈ ਨਾ...।"6

ਪੈਸੇ ਦੀਆਂ ਕੀਮਤਾਂ ਉੱਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਵਿਚਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆ ਸੁਰਜੀ ਮਾਨਵੀ ਨੈਤਿਕ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਸਦਾਚਾਰਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਲਾਗੂ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ। ਪੈਸੇ ਦੇ ਉੱਭਰਵੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਮਾਜਿਕ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਨੂੰ ਢਾਰਸ ਤੱਕ ਲਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਸ ਵਿੱਚੋ ਮਾਨਵਤਾ ਖ਼ਾਰਜ ਹੁੰਦੀ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।7 ਕਹਾਣੀਕਾਰ ਕਜ਼ਾਕ ਉਸ ਦੇ ਚਰਿੱਤਰ ਦੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਤ੍ਰਾਸਦੀਕ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਸਿਰਜ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਪਹਿਲੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿੱਚ ਉਸ ਦਾ ਚਰਿੱਤਰ ਮਲਿਕ ਭਾਗੋ ਵਾਲਾ ਹੈ ਜੋਂ ਹੱਕ ਹਲੀਮੀ ਨੂੰ ਛੱਡ ਬੇਈਮਾਨੀਆਂ ਦੇ ਝੱਖੜ ਵਿਚ ਝੂੱਲਦਾ ਹੈ। ਦੂਜੇ ਪ੍ਰਸੰਗ ਵਿਚ ਨੈਤਿਕ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ, ਨੈਤਿਕ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਢਾਰਸ ਲਾ ਕੇ ਆਪਣੀ ਪਤਨੀ ਦੀ ਇੱਜਤ ਤੱਕ ਵੇਚ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ।ਵਾਪਰ ਇੱਕ ਅਜਿਹਾ ਧੰਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਕਿਰਤ ਖਾਰਜ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਵਿਅਕਤੀਗਤ ਮੁਨਾਫ਼ੇ ਉੱਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਸਮਾਜਿਕ ਅਰਥ-ਵਿਵਸਥਾ ਵੱਲੋਂ ਟੇਢੇ ਢੰਗ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖੀ ਕਿਰਤ ਤੇ ਲਗਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ।ਬੰਤਾ ਸਿਹੁੰ ਵਪਾਰ ਅਤੇ ਕਿਰਦਾਰ ਵੇਚ ਅਮਾਨਵੀ ਢੰਗ ਨਾਲ ਕਮਾਏ ਪੈਸੇ ਦੀ ਕਮਾਈ ਨੂੰ ਪਾਪ ਸਮਝਦਾ। ਉਹ ਦਸਾਂ ਨਹੁੰਆਂ ਦੀ ਕਿਰਤ ਨੂੰ ਅਜਿਹੀ ਕਮਾਈ ਦੇ ਹਵਾਲੇ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ ਜੋਂ ਬੰਤਾ ਸਿਹੁੰ ਤੇ ਪੁੱਤਰ ਸੁਰਜੀ ਵਿਚਕਾਰ ਮਾਨਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦੀ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕਜ਼ਾਕ ਦੀਆਂ ਕੁਝ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੇ ਅਧਿਐਨ ਤੋਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਰਚਨਾ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਸਮਾਜਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਲਤਾੜੇ ਹੋਏ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਗੌਰਵਮਈ ਵਿਰਸੇ ਉੱਤੇ ਕੇਂਦਰਿਤ ਹੈ। ਇਸੇ ਕਾਰਣ ਉਸ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੇ ਕੁਝ ਪਾਤਰ ਨਿਮਨ-ਵਰਗ ਜਾਂ ਨਿਮਨ-ਮੱਧ-ਵਰਗ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਨਿਮਾਣੇ, ਨਿਤਾਣੇ ਜਾਂ ਵਿਚਾਰੇ ਬਣ ਕੇ ਉਭਰਦੇ ਜਿਵੇਂ 'ਜੜ੍ਹਾਂ' ਕਹਾਣੀ ਦੀ "ਮਾਂ" ਪਾਤਰ 'ਕੁਝ ਗੁਆਚ ਗਿਆ' ਦਾ "ਬੰਤਾ ਸਿਹੁੰ"।'ਜੜ੍ਹਾਂ' ਕਹਾਣੀ ਦਾ ਕੇਂਦਰੀ ਪਾਤਰ ਅਤੇ 'ਕੁਝ ਗੁਆਚ ਗਿਆ' ਦਾ ਸੁਰਜੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜੀਉਣ ਲਈ ਬਿਹਬਲ, ਪ੍ਰਾਪਤ ਸ਼੍ਰੇਣੀ-ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਮਾਨਵ-ਵਿਰੋਧੀ ਜਕੜਬੰਦਾਂ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜ੍ਹਤਾ ਤੇ ਸਾਹਸ ਨਾਲ ਤੋੜਦੇ, ਅਮਾਨਵੀ ਢੰਗ ਨਾਲ ਪੈਸੇ ਕਮਾਉਂਦੇ ਸਥਿਤੀ ਨਾਲ ਸਮਝੌਤਾ ਨਹੀਂ ਕਰਦੇ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਹਿੱਸੇ ਆਉਂਦਾ ਤ੍ਰਾਸਦ ਹੰਢਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ ਪ੍ਰਤਿਨਿਧ ਯਥਾਰਥ ਨੂੰ ਵਿਲੱਖਣ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤਾਂ ਦੇ ਅਮਲ ਰਾਹੀਂ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀ

1. **ਪੰਜਾਬੀ ਕਹਾਣੀ: ਨਵੇਂ ਪ੍ਰਤੀਮਾਨ,ਬਲਵੰਤ ਸਿੰਘ ਸੰਧੂ, ਪੰਨਾ -13**
2. **ਨਾਵਲਕਾਰ ਗੁਰਦਿਆਲ ਸਿੰਘ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ, ਡਾ. ਰਾਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ,ਪੰਨਾ -173**
3. **ਅੰਤਹੀਣ, ਪੰਨਾ -33**
4. **ਅੰਤਹੀਣ, ਪੰਨਾ -33**

5. ਅੰਤਹੀਣ, ਪੰਨਾ -43
6. ਉਹੀ, ਪੰਨਾ -44
7. ਨਾਵਲਕਾਰ ਗੁਰਦਿਆਲ ਸਿੰਘ ਦੀ ਤ੍ਰਾਸਦ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ, ਡਾ. ਰਾਜਿੰਦਰ ਸਿੰਘ,ਪੰਨਾ -175

ਮੋਬਾ. 9872864468, Gmail- sowanasonu555@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 99-102
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री :सत्ता , स्वायत्तता और संघर्ष

डॉ.स्वालियाबेगम आर. कोप्पल
अतिथि प्रवक्ता हिंदी विभाग,
स्नातक विभाग,कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय ,विजयपुर

शोध सार :
हिंदी की प्रख्यात कथाकार नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री-चेतना के विविध आयामों—सत्ता, स्वायत्तता और संघर्ष—का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों—ठिकरे की मंगनी, शाल्मली, सात नदियाँ एक समंदर, कुइयांजान, कागज़ की नाव, पारिजात, जीरो रोड, अजनबी जज़ीरा, जिन्दा मुहावरे, अक्षयवट तथा अल्फा बीटा गामा—के माध्यम से स्त्री जीवन की जटिल सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक स्थितियों को यथार्थपरक ढंग से चित्रित किया है। नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री केवल करुणा या पीड़िता के रूप में नहीं, बल्कि एक सजग, आत्मचेतन और संघर्षशील व्यक्तित्व के रूप में उभरती है। उनके साहित्य में स्त्री का संघर्ष बहुस्तरीय है—वह पारिवारिक पितृसत्ता, सामाजिक रूढ़ियों, धार्मिक कट्टरता, आर्थिक निर्भरता और मानसिक बंधनों से जूझती हुई दिखाई देती है। स्त्री-सत्ता प्रत्यक्ष राजनीतिक शक्ति नहीं, बल्कि नैतिक दृढ़ता, आत्मसम्मान और आत्मनिर्णय की क्षमता में निहित है। उनके स्त्री पात्र परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व के बीच संतुलन स्थापित करते हुए अपनी स्वायत्त पहचान निर्मित करते हैं। वे विद्रोह करती हैं, किंतु उनका विद्रोह विनाशकारी न होकर सृजनात्मक और मानवीय है।
बीज शब्द : स्त्री-सत्ता, स्वायत्तता, संघर्ष, अस्मिता, पितृसत्ता, आत्मनिर्णय, अधिकार, चेतना, लैंगिक असमानता, परंपरा और आधुनिकता, मुस्लिम समाज मानवीय संवेदना

प्रस्तावना :

हिंदी कथा-साहित्य में नासिरा शर्मा का नाम एक सशक्त, संवेदनशील और वैचारिक लेखिका के रूप में प्रतिष्ठित है। उन्होंने भारतीय समाज, विशेषतः मुस्लिम और मध्यवर्गीय स्त्री जीवन के यथार्थ को अत्यंत निकटता से चित्रित किया है। उनके उपन्यासों में स्त्री केवल करुणा की प्रतिमा नहीं है, बल्कि वह सत्ता-संरचनाओं से जूझती हुई, अपनी अस्मिता की खोज करती हुई और स्वायत्त अस्तित्व की स्थापना के लिए संघर्षरत व्यक्तित्व के रूप में उपस्थित होती है।

1. स्त्री और पारिवारिक सत्ता संरचना

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री का पहला संघर्ष परिवार के भीतर दिखाई देता है। पितृसत्तात्मक समाज में परिवार ही वह स्थान है जहाँ स्त्री की स्वतंत्रता का पहला हनन होता है।' *ठीकरे की मंगनी'* उपन्यास में महरुख की कहानी इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। महरुख, जो एक छोटे से गाँव में अध्यापिका के रूप में काम करती है, समाज के पारंपरिक दायरों को तोड़कर अपना जीवन स्वतंत्र रूप से जीने का साहस करती है। गाँव की महिलाएँ, जो परंपरावादी मानसिकता से ग्रस्त हैं, उसे अविश्वास और तिरस्कार की नजर से देखती हैं। वे कहती हैं, 'जरूर विधवा है, वरना इस उम्र, इस रूप को लेकर यहाँ नौकरी करने न निकलती।'[1] यह कथन समाज में कामकाजी महिलाओं के प्रति व्याप्त नकारात्मक दृष्टिकोण और उनकी स्वतंत्रता को लेकर फैली मानसिकता को उजागर करता है।

महरुख जैसी महिलाएँ, जो आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं, अपने काम और व्यक्तिगत जीवन दोनों में कई प्रकार के संघर्षों का सामना करती हैं। समाज उनके निर्णयों पर प्रश्नचिह्न लगाता है और उनके कामकाजी होने को उनकी परंपरागत स्त्री पहचान के विपरीत मानता है। इसके बावजूद, महरुख जैसी नायिकाएँ सामाजिक दबावों का डटकर सामना करती हैं और स्वतंत्रता और आत्म-सम्मान का प्रतीक बनकर उभरती हैं।

नासिरा शर्मा का लेखन यह दिखाता है कि कामकाजी महिलाएँ न केवल आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने की राह पर अग्रसर होती हैं, बल्कि समाज की परंपरागत सोच को चुनौती देकर अपने आत्म-सम्मान और स्वतंत्रता के लिए भी संघर्ष करती हैं। उनकी ये नायिकाएँ महिलाओं के अधिकारों और उनकी पहचान की लड़ाई को स्वर प्रदान करती हैं, जिससे समाज में बदलाव की दिशा में सोचने की प्रेरणा मिलती है।"इस विभाग में आकर शाल्मली क व्यवस्था बढ़ गई थी। रोज कोई न कोई संमिनार होता। नई योजनाओं पर मीटिंग और एक दो दिन के दौरे। नए चेहरे नए लोग नया अनुभव और नई अनुभूतियां। किधर जाए, क्या- कितना समेटें। कभी - कभी शाल्मली उलझ जाती, मगर जबू दो घंटे थ शांति के मिल जाते, जाते, तो उसे घबराहट होने लगते कि इतना सन्नटा क्यों?"[2] शाल्मली अपनी पहचान कर अपने उद्देश्यों की प्राप्ती: अपनी सीमा व सामर्थ्य - की प्राप्ती के लिए संघर्षरत है। अपनी दिशा का निर्धारण स्वयं करती है।

2. स्त्री और सामाजिक-सांस्कृतिक बंधन

नासिरा शर्मा ने विशेष रूप से मुस्लिम समाज की स्त्रियों की स्थिति को संवेदनात्मक और आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया है। वे परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व में फँसी स्त्री की जटिल मनःस्थिति को उजागर करती हैं। 'सात नदियाँ एक समंदर' यह उपन्यास सांस्कृतिक विविधताओं के बीच स्त्री के अस्तित्व को रेखांकित करता है। यहाँ स्त्री विभिन्न सामाजिक धाराओं के बीच अपनी पहचान गढ़ती है। 'सात नदियाँ' स्त्री जीवन की विविध अवस्थाओं का प्रतीक हैं, जो अंततः 'समंदर'—अर्थात् व्यापक मानवीय चेतना—में मिलती हैं।' कुइयांजान' इस उपन्यास में स्त्री का संघर्ष सामुदायिक और धार्मिक सत्ता से है। वह रूढ़ियों को तोड़ने का साहस करती है। यहाँ स्त्री केवल पीड़िता नहीं, बल्कि परिवर्तन की वाहक है।

3. स्त्री की स्वायत्तता और आत्मनिर्णय

आधुनिक स्त्री पहले की तुलना में अधिक स्वतंत्र और आत्मनिर्भर बन रही है। वह अपनी जिंदगी के निर्णय स्वयं लेने में समर्थ है और अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्षरत है। परंतु, इस स्वतंत्रता की यात्रा में उसे अनेक चुनैतियों का सामना करना पड़ता है, जहां उस परिवार, समाज और स्वयं की अपेक्षाओं के बीच संतुलन बनाना पड़ता है। 'कुईयांजान' उपन्यास की राबिया का यह चरित्र इस बात को दर्शाता है कि वह समाज में अपनी स्थिति और दिखावे

के प्रति बहुत सजग है। "अम्मा! यह पैसे वाले लोग हैं...तुम बुरा न मानो तो कुछ कहूँ? बुरा क्यों मानूंगी बोलो माँ ने कहा। देखो अम्मा, बारात इस गली में, अगर शादी से पहले हम महीने भर के लिए अच्छा घर ले लेते तो... राबिया इतना कह चुप हो गई|"[3] यह दर्शाता है कि स्त्री अपनी पहचान और सम्मान के लिए संघर्ष कर रही है, चाहे इसके लिए उसे अपने परिवार और -भावनाओं की बलि ही क्यों न देनी पड़े। नासिरा शर्मा के स्त्री पात्र परिस्थितियों से समझौता तो करते हैं, परंतु अपनी चेतना को जीवित रखते हैं। वे आत्मनिर्णय की आकांक्षा रखती हैं। 'कागज़ की नाव' इस उपन्यास में स्त्री जीवन की अस्थिरता 'कागज़ की नाव' के प्रतीक के माध्यम से व्यक्त होती है। सामाजिक तूफानों के बीच वह डूबती-उतरती है, परंतु अपने सपनों को बचाए रखने का प्रयास करती है। यह स्वायत्तता की खोज का प्रतीकात्मक आख्यान है।

4. राजनीतिक-सामाजिक संदर्भों में स्त्री

नासिरा शर्मा के कई उपन्यासों में वैश्विक और राजनीतिक परिस्थितियाँ भी स्त्री जीवन को प्रभावित करती हैं। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में राजनीति के इसी भ्रष्ट और अनैतिक स्वरूप का पर्दाफाश किया है। उपन्यास 'बहिश्ते ज़हरा' में "पुलिस बिना वारंट के लोगों के घरों में जबरदस्ती घुसती है और तलाशी लेती है, जिससे आम जनता का जीवन असुरक्षित और पीड़ादायक हो जाता है।"[4] मलिहा का वर्णन इस बात को उजागर करता है कि कैसे पुलिसवाले रात में उनके घर की तलाशी लेते हैं, जिससे उनका मानसिक संतुलन प्रभावित होता है। यह घटना बताती है कि राजनीतिक भ्रष्टाचार का असर समाज के हर स्तर पर देखा जा सकता है और इससे आम जनता की स्थिति दयनीय बनी रहती है। इन उपन्यासो में लेखिका ने यह बताया है कि राजनीति का दुष्चक्र किस प्रकार जन-सामान्य को प्रभावित करता है। सत्ता की होड़, भ्रष्टाचार और प्रशासनिक अन्याय ने आम जनता की स्थिति को निरंतर संकट में डाला है।

5. परंपरा बनाम आधुनिकता का द्वंद्व

बहिश्ते ज़हरा में नासिरा शर्मा ने दिखाया है कि किस प्रकार सामाजिक परंपराओं और रूढ़ियों ने स्त्रियों के जीवन को सीमित और संकुचित कर दिया है। समाज ने स्त्रियों के लिए ऐसी लकीर खींच दी है, जिसे पार करना उनके लिए कठिन ही नहीं, लगभग असंभव बना दिया गया है। इन परंपराओं और मान्यताओं की बेड़ियों में जकड़ी हुई स्त्रियाँ अपने जीवन में घुटन, अन्याय, और शोषण को सहने के लिए विवश हो जाती हैं, क्योंकि उनके पास कोई दूसरा विकल्प नहीं होता।

उपन्यास की नायिका एक ऐसी परंपरावादी स्त्री है, जो अपने सुख-दुख और अस्तित्व को पूरी तरह से अपने पति में समाहित कर देती है। उसका समर्पण इस सीमा तक है कि वह पति के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकती। यह चरित्र समाज की उस सोच का प्रतीक है, जहाँ स्त्रियाँ अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और सपनों का बलिदान देकर केवल पति और परिवार के लिए अपना जीवन समर्पित कर देती हैं। नासिरा शर्मा ने इस स्थिति को उजागर कर न केवल स्त्रियों की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है, बल्कि समाज में व्याप्त उन रूढ़ियों पर भी सवाल उठाए हैं, जो स्त्रियों की स्वतंत्रता और पहचान को बाधित करती हैं। "मेरा सुख-संभार हुसैन के साथ है। तुम्हारे लिए इश्क सामाजिक सुख का नाम है। मेरे लिए इश्क का अर्थ आत्मा है। मैं इस संसार में केवल सुख और वैभव की दुनियावी तलाश में नहीं आई ँू और न ही वह जीवन जीना चाहती हूँ। मेरे दामन में हुसैन फूल बन कर गिरा, उसे मैंने अपना वजूद दे डाला"[5] य उपन्यास उन स्त्रियों के जीवन और मानसिकता को उजागर करता है, जो परंपराओं और सामाजिक दायरों की बेड़ियों में जकड़ी हुई हैं और अपने व्यक्तिगत अस्तित्व को भुला देती हैं। ऐसी स्त्रियाँ अपनी पहचान और जीवन का सार केवल अपने पति या परिवार में ही देखती हैं और समाज द्वारा स्थापित इन परंपराओं का विरोध करने का साहस नहीं कर

पातीं। नासिरा शर्मा ने इस तरह की स्त्रियों के भीतर की घुटन और संघर्ष को अत्यंत संवेदनशीलता और गहराई से प्रस्तुत किया है।

6. स्त्री-सत्ता का स्वरूप

नासिरा शर्मा के साहित्य में स्त्री-सत्ता प्रत्यक्ष राजनीतिक शक्ति नहीं है, बल्कि नैतिक और मानसिक शक्ति है। वह अपने निर्णय स्वयं लेने का साहस रखती है। उसकी सत्ता प्रेम, धैर्य, सहनशीलता और विवेक से निर्मित है। उनके स्त्री पात्रों में विद्रोह उग्र नहीं है, बल्कि संयमित और आत्मचेतन है। वे संबंधों को तोड़ने की बजाय उन्हें नए अर्थ देती हैं। इस प्रकार उनकी स्त्री-सत्ता विनाशकारी नहीं, सृजनात्मक है। नासिरा शर्मा के उपन्यास *'अक्षयवट'* में आधुनिक युग की नारी का साहसी और आत्मनिर्भर रूप प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में एक महिला को डाक पुलिसकर्मी द्वारा छेड़छाड़ का सामना करना पड़ता है, लेकिन वह चुप रहने के बजाय अपने आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए प्रतिरोध करती है। वह साहसपूर्वक अन्याय के खिलाफ खड़ी होती है और पुलिसकर्मी को चप्पलों से पीटती है। इस घटना का चित्रण कुछ इस प्रकार है, "हाय, मैं लुट गई! दीवान जी, दिन-दहाड़े आपने मेरी इज्जत पर हाथ डाला। मैं आपको छोड़ूंगी नहीं।" आगे, महिला कहती है, "अरे! चोरी करके सीना-चोरी करना तो कोई आप पुलिसवालों से सीखे। देखो इस मरदूद को, मेरे कूल्हे पर कैसी मोटी-सी चुटकी काटी। मैं छोड़ूंगी नहीं।"[6] इसके साथ ही, वह पैर से चप्पल उतारकर दीवान की पीठ पर तड़ से मार देती है। यह घटना दर्शाती है कि आधुनिक नारी अपने अधिकारों के प्रति न केवल सजग है, बल्कि उनके लिए सक्रिय रूप से संघर्ष भी करती है। वह अन्याय सहने के बजाय न्याय के लिए लड़ने का साहस दिखाती है।

7. स्त्री-संघर्ष का बहुआयामी स्वरूप

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री का संघर्ष केवल पुरुष से नहीं, बल्कि—सामाजिक रूढ़ियों से,आर्थिक निर्भरता से,धार्मिक कट्टरता से,मानसिक गुलामी से,आत्म-संशय से यह संघर्ष बाह्य और आंतरिक दोनों स्तरों पर चलता है। उनकी नायिकाएँ परिस्थितियों से टूटती नहीं, बल्कि स्वयं को पुनर्गठित करती हैं।

निष्कर्ष:

नासिरा शर्मा के समस्त उपन्यासों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उनके साहित्य का केंद्र 'स्त्री की अस्मिता' है। उनकी स्त्री न तो पूर्णतः परंपरागत है और न ही अति आधुनिक; वह संतुलन की तलाश में है।उनके उपन्यासों में स्त्री—सत्ता की शिकार भी है और उसकी निर्माता भी,स्वायत्तता की आकांक्षी भी है और उसे प्राप्त करने के लिए संघर्षरत भी, पीड़ा की प्रतीक भी है और परिवर्तन की वाहक भी। इस प्रकार नासिरा शर्मा का कथा-साहित्य हिंदी उपन्यास परंपरा में स्त्री-विमर्श को एक मानवीय, यथार्थपरक और सांस्कृतिक गहराई प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं- 2018, पृ.सं- 40 – 41
2. नासिरा शर्मा, शाल्मली, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2018.-पृ.सं 135
3. नासिरा शर्मा , कुईयांजान,समसायिक प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण -2022,पृ.सं.- 24
4. नासिरा शर्मा , बहिशते जहरा, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, दू.सं- 2017,पृ.सं- 66-67
5. नासिरा शर्मा , बहिशते जहरा, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, दू.सं- 2017,पृ.सं- 54
6. नासिरा शर्मा, अक्षयवट,भारतीय ज्ञानपीठ, नईदिल्ली, दूसरा संस्करण-2016.–पृ.सं- 68

जी मेल : sjkoppal123@gmail.com मोबाइल नं : 8147482680

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 103-109
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर के प्रमुख दर्शनीय स्थल

गणेश नारायण शर्मा
शोधार्थी,
सहायक आचार्य,राजकीय महाविद्यालय, फागी, जयपुर।
डॉ. अदिति शर्मा
शोध-निर्देशक,
सहायक आचार्य, भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

शोध–सारांश

श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर, राजस्थान भारत के प्राचीन एवं प्रतिष्ठित वैष्णव तीर्थों में एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक केंद्र है। यह तीर्थ निंबार्क संप्रदाय के प्रवर्तक आचार्य श्री निंबार्काचार्य की परंपरा से संबद्ध होकर द्वैताद्वैत सिद्धांत का जीवंत केंद्र माना जाता है। सलेमाबाद तीर्थ का प्रमुख आकर्षण श्री राधा–सर्वेश्वर मंदिर है, जहाँ राधा–कृष्ण की युगल उपासना निंबार्क संप्रदाय की विशिष्ट साधना पद्धति के अनुरूप की जाती है। यह मंदिर न केवल धार्मिक आस्था का केंद्र है, बल्कि इसकी स्थापत्य शैली, मूर्तिकला एवं अनुष्ठानिक परंपराएँ राजस्थान की वैष्णव संस्कृति को भी प्रतिबिंबित करती हैं। तीर्थ परिसर में स्थित प्राचीन देवालय, समाधि स्थल, आचार्य निवास तथा धार्मिक अनुष्ठानों से जुड़े स्थलों का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यहाँ आयोजित होने वाले वार्षिक उत्सव, जयंती समारोह एवं वैष्णव पर्व सलेमाबाद को धार्मिक पर्यटन के एक सक्रिय केंद्र के रूप में स्थापित करते हैं। ये आयोजन स्थानीय समाज के धार्मिक जीवन को सुदृढ़ करने के साथ–साथ क्षेत्रीय संस्कृति के संरक्षण में भी योगदान देते हैं।

प्रस्तुत शोध सारांश का उद्देश्य श्री निंबार्क तीर्थ सलेमाबाद के प्रमुख दर्शनीय स्थलों के धार्मिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व का सम्यक् विश्लेषण करना है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सलेमाबाद तीर्थ न केवल निंबार्क संप्रदाय की आचार्य परंपरा का संवाहक है, बल्कि राजस्थान के वैष्णव इतिहास एवं सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण में भी इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है।

संकेताक्षर :–

श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद), निंबार्क–संप्रदाय, द्वैताद्वैत सिद्धांत, श्री राधा–सर्वेश्वर मंदिर, परंपरागत वैष्णव तीर्थ, आचार्य परंपरा, धार्मिक पर्यटन, सांस्कृतिक विरासत, राजस्थान का वैष्णव इतिहास, आध्यात्मिक केंद्र, भक्ति आंदोलन, तीर्थ वास्तुकला।

राजस्थान के अजमेर जिले में किशनगढ शहर से 25 किलोमीटर दूर परबतसर रोड़ पर स्थित श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) वैष्णव परम्परा विशेषतः निम्बार्क संप्रदाय का एक प्राचीन एवं प्रतिष्ठित धार्मिक

केन्द्र है। यह तीर्थ श्रीनिम्बार्काचार्य जी की स्मृति, सिद्धान्त एवं भक्ति परम्परा से गहराई से जुडा हुआ है। निम्बार्क सम्प्रदाय के 36वें आचार्य श्री परशुरामदेव ने 15वीं शताब्दी में यहॉ अपना आश्रम बनाया जो उस समय से वर्तमान समय तक अखिल भारतीय निम्बार्क सम्प्रदाय की प्रमुख पीठ माना जाता है। यहॉ के वर्तमान आचार्य **श्री श्यामशरणदेवाचार्य जी महाराज** है। यहॉ के प्रमुख दर्शनीय स्थल अग्रलिखित है–

भगवान श्रीराधा–माधवजी का मंदिर–

यह मंदिर निंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) का सर्वप्रमुख धार्मिक एवं दर्शनीय स्थल है। इस मंदिर का निर्माण खेजड़ला भाटी सरदार सीयोजी और गोपालसिंह जी भाटी के द्वारा विक्रम संवत् 1520 (1463 ई.) में करवाया गया था।[1] भाटी सरदार आचार्य परशुरामदेवजी के शिष्य एवं परम भक्त थे। मंदिर को इस प्रकार से बनाया गया है की मुख्य दरवाजे से प्रवेश करते ही भगवान श्री राधा–माधवजी के श्रीविग्रह (मूर्ति) के दर्शन हो जाते हैं। मंदिर के मुख्य दरवाजे पर निंबार्क–संप्रदाय के प्रतीक चिह्न यथा– शंख, चक्र, गदा एवं उर्ध्वपुण्ड्र तिलक उत्कीर्ण है तथा मदमस्त हाथियों, नृत्यरत मयूरों एवं फूल पत्तों की नयनाभिराम सजावट देखने को मिलती है। मंदिर के निर्माण में पारंपरिक नागर–शैली, राजपूत स्थापत्य शैली एवं आंशिक रूप से मुगल–शैली का प्रभाव देखने को मिलता है। मुख्य दरवाजे से प्रवेश करने के बाद ऊंचे चबूतरे पर जिसमें सात सीढ़ियां चढ़कर मुख्य मंदिर में प्रवेश किया जाता है। गर्भगृह के सामने विशाल सभा मंडप बना है जिसमें संगमरमर से बने अनेक स्तंभ है, जिन पर बैल–बूंटो, पुष्पों और ज्यामितीय आकृतियों की सुंदर नक्काशी की गई है। चबूतरे के ऊपर मंदिर निर्माण स्थापत्य कला की नागर–शैली की प्रमुख विशेषता है। मुख्य मंदिर के गर्भगृह में श्रीराधा–माधवजी की युगल मूर्ति प्रतिष्ठापित है, जिसमें श्रीराधा–माधवजी विग्रह स्थापना आचार्य श्रीगोविंदशरणदेव जी के द्वारा विक्रम संवत् 1829 जैष्ठ शुक्ल दशमी को श्रीललितकुंडवर्ती श्रीललितबिहारी जी के मंदिर (ब्रज मंडल) से लाकर करवाई गई थी।[2] यह विग्रह गीतगोविंद के रचनाकार श्रीजयदेव के सेव्य स्वरूप है। जिसको जयदेव के परमधामवास होने के लगभग 400 वर्षों बाद ब्रज मंडल में स्थापित किया गया था । विक्रम संवत् 1860 के लगभग जब संपूर्ण भारत देश में अराजकता फैली हुई थी एक तरफ जहां मुस्लिम शासन शिथिल हो रहा था दूसरी तरफ अंग्रेजी प्रभुत्व शनैः शनैः ने बढ़ता जा रहा था। कई शक्तिशाली फौजी लूटमार कर रहे थे ऐसे समय में सुरक्षा की दृष्टि से विक्रम संवत् 1868 में श्रीमाधव जी रूपनगर के किले में पधराये गए । विदेशी लुटेरों ने आचार्यपीठ के विशाल मंदिर को ध्वस्त कर दिया गया । तब कुछ दिनों बाद संगमरमर का नया मंदिर बनवाया गया जिसमें मकराना का संगमरमर पत्थर जोधपुर नरेश द्वारा भेंट किया गया। विक्रम संवत् 1872 में श्रीमाधव जी रूपनगर से श्रीनिंबार्कतीर्थ आचार्यपीठ पधारे । इस समय रूपनगर के एक परम भक्त शिल्पी द्वारा नवनिर्मित श्रीकिशोरी जी की प्रतिमा की प्रतिष्ठा श्रीमाधव जी के बगल में करवाई। तभी से श्रीराधा–माधव जी अचल रूप से आचार्यपीठ श्रीनिंबार्कतीर्थ विराजमान है।[3] इस मंदिर के गर्भगृह को इस प्रकार से बनाया गया है कि चंद्रमा की किरणें विशेषकर शरद् पूर्णिमा (आश्विन पूर्णिमा) के दिन रात्रि 12 बजे श्रीराधा–माधवजी के चरण कमलों को पखारे। शरद् पूर्णिमा का दिन निंबार्क–संप्रदाय के लिए विशेष है क्योंकि इसी दिन भगवान कृष्ण ने राधा जी एवं गोपियों के साथ रास रचाया था। मंदिर को सोने, चांदी आदि बहुमूल्य धातुओं एवं कांच की नक्काशी के द्वारा सजाया गया है।

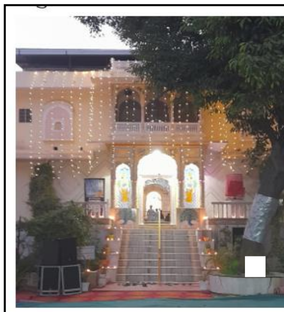

चित्र– 2.1 राधा माधव मंदिर मुख्य द्वार

चित्र– 2.2 राधा माधव मंदिर मुख्य मंडप

चित्र– 2.3 भगवान श्री राधा–माधवजी का श्रीविग्रह

श्रीसर्वेश्वर भगवान का मन्दिर –

मंदिर में राधा–माधव जी के बाएं तरफ श्री सनकादिक संसेव्य श्रीसर्वेश्वर भगवान का मंदिर है । जिसमें गुंजाफल (अति सूक्ष्म) सदृश्य शालिग्राम विग्रह रखा है । यह प्रतिमा श्रीसनकदिकों ने देवर्षि नारदजी को प्रदान की थी और श्री नारदजी ने भगवान श्री निंबार्काचार्य जी को । इस प्रकार यह श्रीसर्वेश्वर भगवान की शालिग्राम प्रतिमा क्रमशः परंपरागत अद्यावधिपर्यंत अखिल भारतीय श्री निम्बार्काचार्यपीठ श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में विराजमान है। विश्व में इतनी प्राचीन एवं सूक्ष्म चमत्कार पूर्ण श्रीशालिग्राम स्वरूप और कहीं पर भी नहीं है । यहां पर भक्तजनों को सूक्ष्मदर्शी यंत्र की सहायता से श्रीसर्वेश्वर भगवान के दर्शन करवाए जाते हैं। पीठ के आचार्य जब धर्म प्रचारार्थ बाहर जाते हैं तब भी श्रीसर्वेश्वर की सेवा साथ रहती है ऐसी यहां की परंपरा रही है।[4]

आचार्य–पंचायतन मंदिर–

श्रीराधा–माधवजी मंदिर के दाएं तरफ आचार्य मंदिर है, जहां श्रीहंस, श्रीसनकदिकों, श्रीनारद, श्रीनिंबार्क एवं श्रीनिवासाचार्य इन आचार्य–पंचायतन के सुंदर विग्रह के दर्शन होते हैं। इसी मंदिर के पास "वेद–मंदिर" भी बना है। जहां चारों वेद प्रतिष्ठित है।

आचार्य परशुरामदेवजी की तपोस्थली–

आचार्य मंदिर से दक्षिण में नीचे उतरने पर सिद्ध पीठ के दर्शन होते हैं । यहां पर आचार्य सिंहासन और श्रीपरशुरामदेवाचार्य जी महाराज के चित्रमय इतिवृत्त की झांकियां बनी है। जिनमें यवन तांत्रिक का स्तब्ध होना, बादशाह का हवन कुंड से आचार्यजी को दुशाले निकालते देखकर हतप्रभ होना आदि चित्र बने हुए हैं। यहां आचार्य परशुरामदेवजी द्वारा प्रयुक्त 'काष्ठ– माला' एवं 'खड़ाऊ' रखी है और धूंणा (हवन कुंड) भी बना हुआ है। जिसकी भस्म श्रद्धालुओं द्वारा प्रसाद रूप में ली जाती है। ऐसा कहा जाता है कि आचार्यजी की तपोस्थली के दर्शन करने एवं धूंणा की भस्म प्रसाद रूप में ग्रहण करने पर श्रद्धालुओं की मनोकामनाएं पूर्ण होती है।

चित्र– 2.5 आचार्य परशुरामदेवजी की तपोस्थली, श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर

भगवान श्रीराधा–माधवजी के मंदिर से लगते हुए ही आचार्यश्री–महल, संत–निवास, वैदिक महाविद्यालय, वेद पुस्तकालय, प्रिंटिंग प्रेस, मंदिर कार्यालय,रसोई घर, भोजनशाला, स्टोर आदि स्थित है। यह मंदिर लगभग 42000 वर्ग फीट क्षेत्रफल में फैला हुआ है। मध्यकाल में सुरक्षा की दृष्टि से मंदिर के चारों तरफ परकोटा बनाया गया है। जिसकी दीवारें 35 फीट ऊंची एवं 6 फीट चौड़ी है।[5] संपूर्ण मंदिर को बनाने में पीली मिट्टी, चूना पत्थर एवं उच्च गुणवत्ता के मार्बल का प्रयोग किया गया है। यह मंदिर अखिल भारतीय निंबार्क–संप्रदाय की प्रमुख पीठ है जो की चार वैष्णव संप्रदायों में गिना जाता है एवं सर्वाधिक प्राचीन माना जाता है।

निंबार्क–सरोवर –

श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) की मुख्य मंदिर के पास ही निंबार्क–सरोवर स्थित है । पद्य पुराण के अनुसार जब सूर्य भगवान ने नींबवृक्ष का आश्रय लिया था तब सूर्य की प्रखर किरणों से इस सरोवर का निर्माण हुआ था। वर्तमान में यह सरोवर चारों तरफ से लता पताकाओं से घिरा हुआ, फूलों एवं फलों से लदे वृक्षों से घिरा सुंदर प्राकृतिक स्थल है। शाम सुबह में पक्षियों की चहचहाट असीम आध्यात्मिक शांति का एहसास कराती है। यह सरोवर वर्षा जल से हर वर्ष भर जाता है। यह सरोवर चारों तरफ से पत्थर एवं चूने द्वारा बनाई गई दीवारों से घिरा है अर्थात् पूर्णतया पक्का निर्माण कार्य है। सरोवर में स्नान आदि कार्य पूर्ण करने हेतु तीन सीढ़ियों युक्त घाट बने हुए है। प्रवेश द्वार के सम्मुख सर्वप्रथम 'श्रीसर्वेश्वर' घाट बना है। इसके दाहिनी तरफ से 'निंबार्क–घाट' बना है । श्रीसर्वेश्वर घाट के बांयी तरफ 'श्रीहनुमान–घाट' बना है।[6] श्री निंबार्क सरोवर पर श्री सर्वेश्वर घाट के पास प्राचीन 'श्रीनिंबार्क–महल' स्थित है। जो चूना एवं पत्थर से बना है। यहां पर पीठ के आचार्य जब धार्मिक यात्रा से बाहर जाते थे एवं सायं–काल निंबार्क कोर्ट के दरवाजे बंद हो जाते थे तब रात्रि कालीन विश्राम करते थे । श्रीनिंबार्क सरोवर पर ही वर्तमान आचार्य श्रीश्यामशरणदेवाचार्य जी के द्वारा भी आचार्य निवास का निर्माण करवाया गया है। वहां पास ही सरोवर किनारे धार्मिक परिचर्चा हेतु सुंदर स्थान बनाया गया है हाल ही में निंबार्क सरोवर किनारे श्री निंबार्क पैनोरमा का निर्माण राजस्थान सरकार के धरोहर एवं प्रोन्नति प्राधिकरण के द्वारा करवाया गया है। सरोवर किनारे स्थित उद्यान वाटिका में बंदर, हिरण, खरगोश, बतख, मयूर आदि वन्य पशु–पक्षी स्वतंत्र विचरण करते हुए दिखाई देते हैं, जो सरोवर की शोभा और अधिक बढ़ा देते हैं।

चित्रः– 2.6 निंबार्क–सरोवर, श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर

आचार्य–समाधि स्थल –

श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में श्रीराधा–माधव मंदिर के पास ही आचार्य–समाधि स्थल स्थित है। यहां सोहलवीं– सत्रहवीं शताब्दी के अनन्तर जिन–जिन निम्बार्क–आचार्यों का लीला विस्तार हुआ उनकी छतरियां (समाधि) जिनमें उनके चरण पादुकाएं (पगल्या) बनाए गए है। छतरियों में श्री वृंदावनदेवाचार्य जी की समाधि सबसे पुरानी है और श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य जी की समाधि सर्वाधिक अर्वाचीन है। उस पर उत्कीर्ण लेख के अनुसार आचार्य के भगवत् धाम मिति माघ कृष्ण द्वितीया, शनिवार, विक्रम संवत् 2063,मकर संक्रांति, दिनांक 14/01/2017 के पश्चात श्रीश्यामशरणदेवाचार्यजी द्वारा इसका निर्माण करवाया गया है।[7] ये स्मारक संगमरमर पत्थर से बने हैं। इन स्मारकों में आचार्यों के चरण–कमल की पूजा होती है। मान्यता है कि श्री वृंदावनदेवाचार्यजी की समाधि का आश्रय लेने वाले श्रद्धालुओं को तिजारी, एकॉतारा आदि ज्वरों से मुक्ति मिल जाती है। इन समाधियों की पूजा करने से श्रद्धालु भक्तजनों की कामनाएं पूर्ण हो जाती है । यहां पर गणेशजी, हनुमान जी का मन्दिर तथा एक शिवालय भी है। निंबार्क–आचार्यों की छतरियां राजस्थान की स्मारक स्थापत्य–कला की सादगी और आध्यात्मिकता का सुंदर समन्वय है। इनका स्थापत्य स्थानीय राजपूत–शैली, मुस्लिम स्थापत्य–शैली, एवं निंबार्क– संप्रदाय की भक्ति परंपरा का सुंदर संगम प्रस्तुत करता है। इन छतरियों को प्रायः ऊँचे चबूतरे पर बनाया गया है जहां पर नक्काशीदार पत्थर के स्तंभ, जिन पर पुष्प और बेल–बूटों की आकृतियां उकेरी हुई है।[8] छतरियों पर बने गुंबद छोटे किंतु संतुलित, शीर्ष पर कलश व आमलक बने हुए हैं। अधिकांश छतरियां बनावट में एक जैसी प्रतीत होती है एवं लेख युक्त है परंतु एक छतरी शिखरयुक्त एवं सादगी लिए है । इस पर कोई लेख भी नहीं है। यह सर्वाधिक प्राचीन प्रतीत होती है। श्री राधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य जी महाराज की छतरी सर्वाधिक अर्वाचीन,भव्य एवं अलंकरण युक्त है । पूर्णतया संगमरमर से बनी 12 स्तंभों वाली यह छतरी बेल–पत्तों आदि की उकेरी हुई डिजाइनों से युक्त है । इसकी छत पर शीशे की नक्काशी इसको और अधिक भव्य एवं आकर्षक बनाती है। इसकी छत शिखर युक्त है एवं छतरी आकार में सबसे बड़ी है। यहां स्थित सभी छतरियों में आचार्यों के चरण–कमल, निम्बार्क–संप्रदाय के प्रतीक चिन्ह शंख, चक्र, गदा, कमल आदि उकेरे हुए हैं। अधिकांश छतरियों में आचार्यों के पीठ पर विराजमान होने एवं भगवत् धाम गमन की तिथियाँ अंकित है। छतरियों के चारों तरफ सुरम्य पुष्प वाटिका भी लगाई गई है। यहां की आध्यात्मिक–शांति, प्राकृतिक–सुंदरता एवं पक्षियों का कलरव इस स्थान को अलौकिक बना देता है।

राजपूत शासकों की छतरियां जहां ऐश्वर्य और सत्ता की स्मृति है । वही निंबार्क–आचार्यों की छतरियां भक्ति,साधना और आध्यात्मिक गरिमा की स्मृति का प्रतीक है। ये छतरियां संप्रदाय की आचार्य परंपरा को स्थाई स्मृति प्रदान करती है।

चित्रः– 2.7 आचार्य–समाधि स्थल, श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर

श्रीनिंबार्काचार्य पैनोरमा –

श्रीनिंबार्काचार्य पैनोरमा का निर्माण श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद) में निंबार्क–सरोवर के किनारे राजस्थान सरकार के राजस्थान धरोहर संरक्षण एवं प्रोन्नति प्राधिकरण द्वारा करवाया गया है । सरकार द्वारा इस पैनोरमा निर्माण का उद्देश्य प्रदेशवासियों के मन में देवी–देवताओं, संतों और महापुरुषों के प्रति गहरी आस्था एवं प्रदेश के गौरवशाली इतिहास और संस्कृति को संरक्षित रखना और इसे आने वाली पीढियों तक पहुंचना रहा है । इस पैनोरमा में निंबार्क–संप्रदाय की परंपरा, प्रमुख घटनाओं एवं आचार्यों के सचरित्र रिकॉर्ड्स एवं आचार्यों द्वारा रचित साहित्य को संरक्षित किया गया है। तीन करोड़ की लागत से बना यह पैनोरमा दो मंजिला भव्य संरचना है। जो निंबार्क संप्रदाय की आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और स्थापत्य धरोहर का अद्वितीय उदाहरण है। यह भवन आधुनिकता और परंपरागत राजस्थानी–शैली का सुंदर उदाहरण है। पैनोरमा के केंद्र में विशाल गुंबद निर्मित है जो आध्यात्मिक शक्ति और आकाशीय ऊर्जा का प्रतीक है। गुंबद की बनावट में मुगल–राजपूत प्रभाव दिखाई देता है जबकि चारों दिशाओं में बनी छतरियां स्थापत्य को संतुलन प्रदान करती है। पैनोरमा की बाहरी दीवारों पर जोधपुरी लाल बलुआ पत्थर का प्रयोग, पुष्पालंकरण और ज्यामितीय जाली का प्रयोग कर इसे और अधिक आकर्षक बनाया गया है। यहां अर्द्धवृताकार चक्र की योजना अनादि, अनंत चक्र का प्रतीक है। परंपरागत छतरियां, मेहराब और शिल्पकला इसे सांस्कृतिक गहराई प्रदान करती है। श्रीनिम्बार्क पैनोरमा केवल स्थापत्य स्मारक नहीं अपितु आध्यात्मिक शिक्षा का केंद्र है।[9] पैनोरमा के मुख्यद्वार से प्रवेश करने पर सर्वप्रथम सुदर्शन चक्रावतार भगवान श्रीनिंबार्काचार्य के श्री–विग्रह के दर्शन होते हैं। दोनों तरफ बने हॉल में निंबार्क–संप्रदाय की प्रमुख घटनाओं जैसे श्रीनिंबार्काचार्य का आविर्भाव, नारद मुनि द्वारा दीक्षा, यति रूप में ब्रह्मा जी द्वारा परीक्षा, आचार्य परशुरामदेवजी द्वारा यवन तांत्रिक को परास्त करना तथा निंबार्क–संप्रदाय के आचार्यों का सचित्र वर्णन आदि दर्शाया गया है। उक्त पैनोरमा का लोकार्पण दिनांक 27/09/2018 को राजस्थान की तत्कालीन मुख्यमंत्री श्रीमती वसुंधरा राजे सिंधिया द्वारा वर्तमान आचार्य श्रीश्यामशरणदेवाचार्य महाराज के सान्निध्य में किया गया।[10]

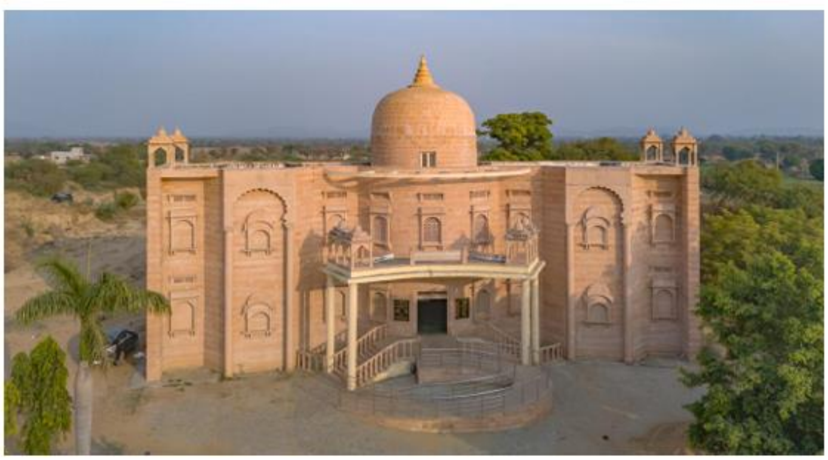

चित्रः– 2.9 श्रीनिंबार्काचार्य पैनोरमा, श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर

श्रीनिम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) अजमेर, एक ऐसा धार्मिक–सांस्कृतिक केन्द्र है, जहॉ दर्शन, भक्ति, कला और परम्परा का समन्वय दिखाई देता है। इसके प्रमुख दर्शनीय स्थल निम्बार्क सम्प्रदाय की ऐतिहासिक गहराई और वैष्णव परम्परा की जीवंतता को प्रतिबिंबित करते है। यह तीर्थ न केवल धार्मिक आस्था का केन्द्र है अपितु राजस्थान के सांस्कृतिक इतिहास में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

<u>संदर्भसूची</u>

1. **https%@@devastha.rajasthan.gov.in A**
2. शर्मा, डॉ. नारायणदत्तः ''***निंबार्क–संप्रदाय और उसके कृष्ण भक्त हिंदी कवि*** '' अशोक प्रकाशन, मथुरा, वि.सं. 2021, पृ.सं.–63 ।
3. दास, पं. गोविंद; ***"श्रीनिंबार्क–संप्रदाय एवं निबार्काचार्य पीठ परिचय"*** अखिल भारतीय निंबार्काचार्य पीठ, श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद), वि.सं.2065, पृ.सं.–17 ।
4. दास, पं. गोविंद; ***"श्रीनिंबार्क–संप्रदाय एवं निबार्काचार्य पीठ परिचय"*** अखिल भारतीय निंबार्काचार्य पीठ, श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद), वि.सं.2065, पृ.सं.–15 ।
5. **https%@@devastha.rajasthan.gov.in A**
6. व्यक्तिगत सर्वेक्षण।
7. ***" छतरी का लेख"*** श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य जी की छतरी, श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद), अजमेर।
8. गोयल, पी.के.: ***"राजस्थान की स्मारक वास्तुकला*** '' भारती प्रकाशन, जयपुर, 2002 ई.. पृ.सं.–205 ।
9. ''***अजमेर जिला गजेटियर***,'' पर्यटन एवं संस्कृति अनुभाग, राजस्थान सरकार, 2019 ई. पृ.सं.–86।
10. ''***शिलालेख*** ''– श्रीनिंबार्काचार्य पैनोरमा, श्रीनिंबार्कतीर्थ (सलेमाबाद), अजमेर, दिनांक–27.09.2018।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 110-112
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन की महत्त्व

RADHARANI RAJAK
शोधार्थी,
DR. AJAY KUMAR
शोध निर्देशक (असिस्टेंट प्रोफेसर),
डिपार्टमेंट ऑफ संस्कृत
बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय

भारत संस्कृति की भूमि है। यहां जाति, धर्म, भाषा, वर्ण के अलग अलग लोग रहते है। भारत का वातावरण दर्शन और संस्कृति के लिए अनुकूल है। और दुसरी तरफ देखा जाए तो दर्शन संस्कृति का सार है। किसी देश की संस्कृति उसके सामाजिक वातावरण से उद्भव होता है। चिंतनशील मन के फलने फूलने के लिए कला और विज्ञान के विकास के लिए पहली आवश्यक शर्त एक स्थायी समाज का अस्तित्व होना जरूरी है, जो सुरक्षा और अवदान प्रदान कर सकें। जहां लोग अपनी जिन्दगी के लिए संघर्ष कर रहे है और अभाव के कारण मृत्यु का सामना भी कर रहें। वहां एक समृद्ध संस्कृति का जन्म खानाबदेश समुदाय में पैदा नहीं हो सकता। दर्शन मानव संस्कृति के मूल स्तंभों धर्म, विज्ञान और दर्शन में प्रमुख स्थान रखता है। धर्म के व्यवहार या आचार के रूप में संस्कृति का जो बाह्य स्वरूप होता है, वो उसका आधार दर्शन को ही माना जाता है। जो की संस्कृति का स्वरूप होता हुआ व्यवहार या आचार के रूप में अपनी अभिव्यक्ति पाता है। मानव जीवन की दर्शन एक व्याख्यात्मक या विश्लेषनात्मक प्रक्रिया है जो जीवन को सुखी बनाने का उपाय भी प्रस्तुत करता है। अतीत से वर्तमान तक मनुष्य को अपने मार्ग में चलने के लिए दर्शन का उपयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है।भारतीय दर्शन आध्यात्मिक है और उसने हमेशा सत्य की प्राप्ति पर जोर दिया गया है। आत्मा को जानो या आत्मा का दर्शन करों। **आत्मा बा ओर द्रष्टव्यः** उपनिषद् में व्यक्त भारतीय दर्शन का प्रतीक है। भारतीय दार्शनिकों ने रोग, शोक, दुःख, क्षय, मृत्यु जैसे मानवीय दुःखों से बहुत चिंतित थे। इन सभी दुखों को कैसे घटाया जाये और मनुष्य को कैसे सुखी बनाया जाये इन सभी के तरीके खोजने के लिए अपने आपको समर्पित कर दिया है। दर्शन का मूल लक्ष्य बना आध्यात्मिक दुःख (शारीरिक और मानसिक), आधिभौतिक दुःख (प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न होने वाले शारीरिक और मानसिक दुःख), आधिदैविक दुःख (देवताओं के कारणों से उत्पन्न होने वाले शारीरिक और मानसिक पीड़ा) इन त्रिविध पीड़ाएं दुखों का अन्तिम विनाश करना। इन लक्ष्य तक पहुंचने का मार्ग है सत्यो को उपलब्धि करना। इन सभी समस्या का समाधान करने के लिए भारतीय दर्शन के विभिन्न सम्प्रदाय का उद्भव हुआ है। भारतीय दर्शन को दो संप्रदाय में विभाजित किया गया है

आस्तिक और नास्तिक। तीन दर्शन को नास्तिक के वर्गो में रखा गया है। छः आस्तिक दर्शनों में से अत्यन्त महत्वपूर्ण है सांख्य दर्शन।

सांख्य दर्शन की महत्व के बारे में बोलने ने से पहले त्रिविध दुखों को जानना मनुष्य के लिए अत्यन्त जरुरी है। इन त्रिविध दुखों है – आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक। इन त्रिविध दुखों के लिए सांख्यकारिका कहा गया है –त्रिविध दुःखो में से सबसे **पहला** दुःख है आध्यात्मिक दुःख। आध्यात्मिक शब्द के अन्तर्गत "आत्मा" शब्द से यहां शरीर और मन को समझा जाता है। सांख्य दर्शन के अनुसार आत्मा या पुरूष में कोई दुःख नहीं हो सकता, क्योंकि आत्मा या पुरूष सर्वदा नित्य – शुद्ध, मुक्त है। अतः 'आध्यात्मिक दुःख' का अर्थ है – शारीरिक दुःख और मानसिक दुःख। वायु, पित्त की असमानता से होने वाले पीड़ा शारीरिक कष्ट या दुःख है। वायु, पित्त आदि संतुलन हो तो शरीर स्वस्थ होता है, और न हो तो पीड़ा होता है। बीमारी शरीर में है इसलिए दर्द को शारीरिक दर्द कहते है। दुसरी ओर काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्षा, प्रेम, अभाव और अप्रिय के संयोग से उत्पन्न पीड़ा मानसिक पीड़ा है। **दुसरा** दुःख है आधिभौतिक। आधिभौतिक शब्द के अन्तर्गत 'भूत' शब्द का अर्थ है – अचल और जंगम। यहां 'अचल' शब्द का अर्थ है – वृक्ष पर्वत आदि को समझा जाता है। आधिभौतिक दुःख बाह्य कारण से उत्पन्न होता है। उदाहरण के लिए वोला जाए तो मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट पतंग और काटे पत्थर से होने वाला दुःख आधिभौतिक दुःख या पीड़ा है। **तीसरा** दुःख है – आधिदैविक। आधिभौतिक की तरह आधिदैविक भी बाह्य कारणों के द्वारा उत्पन्न होता है। विभिन्न प्रकार बाहरी कारण से होता है। आधिदैविक के अन्तर्गत 'दैव' शब्द द्वारा देवयोनि को समझा जाता है। 'देवयोनि' का अर्थ है – विद्याधर, यक्ष, राक्षस, किन्नर, पिशाच, भूत – प्रेत आदि। किसी भी देवता द्वारा दिया गया पीड़ा या कष्ट आधिदैविक दुःख होता है। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, शिलावृष्टि, भूकम्प, बाड़ आदि से होने वाले दुःख को आधिदैविक दुःख कहते है।

उपरोक्त त्रिविध दुःखों से मनुष्य जाति छुटकारा पाना चाहते है। इसलिए इन त्रिविध दुःख से मुक्ति पाने के लिए वोला है कि मनुष्य दो तरह से इन दुःखों से छुटकारा पा सकते है। दृष्ट या लौकिक एवं अदृष्ट या अलौकिक। साधारणत: मनुष्य जाति दुःख से मुक्ति पाने के लिए दृष्ट या लौकिक उपाय का सहरा लेते है। क्योंकि यह वेदविहित कर्मो के समान कठिन नहीं बल्कि लाभकारी है। अगर घर के अकंदा के पेड़ से मधु प्राप्त होता है तो जंगलों में जाने की जरूरत नहीं है। अति अल्प कर्म करने से फल मिलता है तो कोई कियू दुसरे कठिन कर्म करें। साधारणत: मनुष्य जाति दुःख निवृत्ति करने के लिए शास्त्रविहित कर्म को छोड़कर लोकप्रिय अच्छे तरीकों को अपनाता है। उदाहरण के लिए वोला है कि – भोजन करने से भूख की पीड़ा को रोका जाता है। दवा खाने से बुखार आदि विभिन्न व्याधियों को रोका जाता है। लेकिन दृष्ट या लौकिक उपाय से दुःख त्रय का ऐकांतिक या आत्यंतिक निवृत्ति नहीं हो सकता है। दुःख का ऐकांतिक या आत्यंतिक निवारण ही जीव का अन्तिम लक्ष्य है। लौकिक उपायों से दुःख का तो दूर होता है लेकिन वह सारे दुःख फिर से आ जाता है। जैसे भूख समाप्त होने के बाद फिर से भूख लग जाता है। उसी तरह बुखार ठिक होने के बाद फिर से कोई दिन बुखार आ जाता है। शास्त्रकारगण लौकिक उपाय न मानते हुए कहते है कि दुःख से निवृत्ति पाने के लिए वेदविहित शास्त्र का अध्ययन करना जरूरी है। इस से दुःख निवृत्ति हो जाता है।

परन्तु सांख्यकार इन दो उपाय को नहीं मानते है। क्योंकि सांख्यमत के अनुसार दुःख से आत्यंतिक मुक्ति लौकिक जैसे तरीकों से सम्भव नहीं है और वेदविहित कर्मो से भी पाप है। वेदविहित कर्मो के उदाहरण के लिए वोला है सबसे पहले यज्ञ में पशु को वध का पाप लगता है। दूसरे, त्याग का फल नाशवान होता है। यज्ञों से संचित पुण्य भी समाप्त हो जाता है और जब पुण्य समाप्त हो जाता है तो कष्ट भोगने के लिए संसार में पुनर्जन्म लेना पड़ता है। अतः वेदविहित कर्म के द्वाराओ दुःख निवृत्ति नहीं हो सकता है। इसलिए सांख्यमत का अनुसरण करते हुए ईश्वरकृष्ण कहते है है – **ज्ञानेन**

च अपवर्ग[2] अर्थात् विवेकज्ञान से ही सभी दुःख निवृत्ति सम्भव है। यहां ज्ञान का अर्थ है – **व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञान**[3] अर्थात् व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ। यहां व्यक्त है प्रकृति के परिणाम अर्थात् 25तत्वों, अव्यक्त है प्रकृति एवं ज्ञ है पुरूष। सरल शब्दों में कहा जाए तो विवेकज्ञान ही सर्वविद् दुःख के आत्यंतिक निवृत्ति या परम पुरुषार्थ का श्रष्ट उपाय है। सृष्टि रचना में भी अर्थात् इस जगत की उत्पत्ति के लिए सांख्य दर्शन 25 तत्वों स्वीकार करता है। सांख्य दर्शन कारण में कार्य की सत्ता मानी जाती है। इसलिए इस दर्शन का सिद्धांत सत्कार्यवाद कहलाता है। सांख्य दर्शन में सृष्टि का मूल तत्व है पुरूष और प्रकृति। इन दोनों का संयोग पंगु और अंधा के समान होते है। पुरूष और प्रकृति संयोग होने पर प्रकृति से महत, अहंकार आदि 25 तत्वों की उत्पन्न होता है।

उपरोक्त विवरण से यह परिणाम निकला है कि भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन जीवन की व्याख्या है। मनुष्य जाति की त्रिविध दुःख अर्थात् आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक इन दुखों से छुटकारा पाने का उपाय भी बताता है। 25 तत्वों से कैसे इस जगत की सृष्टि प्रक्रिया होते है इन विषय में भी बताते है। साथ ही जीवन को कैसे सुखी बनाए जाए इस उपाय भी प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ सूची

1. सांख्यकारिका – 44
2. सांख्यकारिका – 2

सन्दर्भ ग्रंथों की सूची

1. सांख्यदर्शनम, कपिल प्रणीत, संपादक, पाण्डेय जनार्दन शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, संस्करण – 1989
2. सांख्यकारिका, ईश्वरकृष्णा विरचित, व्याख्याकार चतुर्वेदी ब्रजमोहन नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, संस्करण – 2006
3. भारतीय दर्शन की समीक्षात्माक रूपरेखा पाठक, राममूर्ति अभिमुन्य प्रकाशन, इलाहाबाद संस्करण –2004
4. सांख्य दर्शन का इतिहास – शास्त्री आचार्य उदयवीर, विजय कुमार गोविंदराम हासानन्द, दिल्ली संस्करण – 2002
5. भारतीय दर्शन – दीपककुमार बागची प्रगतिशील प्रकाशक – 1997

Mob – 8597230448

Email – radharanirak@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 113-116
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

पाणिनि व्याकरण में ध्वनि विज्ञान

डॉ० नकुल पाण्डेय,
सहायक प्राध्यापक,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड।

सारांश :

विश्व की समस्त भाषाओं में ध्वनि तत्त्व पर विचार हुआ है, किन्तु ध्वनि तत्त्व का जितना सूक्ष्म और वैज्ञानिक विश्लेषण पाणिनि व्याकरण में हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। पाणिनि व्याकरण (अष्टाध्यायी) में ध्वनि विज्ञान अत्यन्त व्यवस्थित और वैज्ञानिक है, जो मुख्य रूप से (14 माहेश्वर सूत्रों) पर आधारित है। इसमें वर्णों (ध्वनियों) का वर्गीकरण उनके उच्चारण स्थान (कण्ठ, तालु आदि) और प्रयत्न (आभ्यन्तर, बाह्य) के आधार पर किया गया है। यह प्रणाली स्वरों (अच्) और व्यंजनों (हल्) को अचूक रूप से वर्गीकृत करती है। पाणिनि व्याकरण में ध्वनि तत्त्व (ध्वनि विज्ञान) अत्यन्त वैज्ञानिक और व्यवस्थित है, जो पाणिनि की अष्टाध्यायी में मुखनासिकावचनोऽनुवासिक : (1–1–8) जैसे सूत्रों द्वारा स्वरों और व्यंजनों को स्वर, काल और स्थान के आधार पर स्पष्ट करता है। यह वर्णों का उच्चारण, कंपन (नाद) और उर्जा के रूप में मानता है, जो मंत्रों और योग–साधना के लिए आवश्यक है।

पृष्ठभूमि :

ध्वनि विज्ञान के लिए अंग्रेजी में फोनोलॉजी या फोनेटिक्स (Pchonology, Phonetics) दो शब्द प्रचलित हैं। यह शब्द संस्कृत भण् (ध्वनि करना या कहना) धातु का ही परिवर्तित रूप है। ग्रीक में संस्कृत के चतुर्थ वर्ण का द्वितीय वर्ण हो जाता है, अतः भ का फ हो गया। दोनों का अर्थ ध्वनि विज्ञान ही है।

ध्वनि विज्ञान भाषा की विभिन्न ध्वनियों (वर्णों) का ठीक–ठीक ज्ञान कराता है और उसके ठीक उच्चारण की शिक्षा देता है। इसके द्वारा मनुष्य का उच्चारण सम्बन्धी ज्ञान पूर्ण होता है। ध्वनि विज्ञान प्रत्येक वर्ण का उच्चारण के साथ प्रयत्न भी बताता है। इससे व–ब, श–स आदि का अन्तर स्पष्ट हो जाता है।

शतपथ ब्राहाण में भी शुद्ध उच्चारण के सम्बन्ध में विचार किया गया है। पतञ्जलि के महाभाष्य में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि शुद्ध उच्चारण हेतु व्याकरण का अध्ययन आवश्यक है। उपनयन संस्कार के बाद ब्राह्मण बालक को सर्वप्रथम व्याकरण की शिक्षा दी जाती थी। जब वे वर्णों के उच्चारण स्थान, प्रयत्न आदि का ज्ञान प्राप्त कर लेते थे तब वैदिक शब्दों का उपदेश दिया जाता था ताकि वे उन शब्दों का उच्चारण पूर्व प्राप्त शिक्षानुसार कर सकें।

मुख्य विषय :–

प्राचीन वैयाकरणों ने ध्वनि उच्चारण को विशेष महत्त्व दिया है। इस सन्दर्भ में एक श्लोक प्रसिद्ध है–

यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम् ।
स्वजनः श्वजनो मा भूत, सकलं शकलं सकृच्छकृत ।।

उपर्युक्त श्लोक में पिता पुत्र से कहता है कि हे पुत्र ! यद्यपि तुमने बहुत अध्ययन कर लिया है तथापि अब व्याकरण पढ़ो। यदि तुम व्याकरण का अध्ययन कर लोगे तब 'स्वजन' के स्थान पर 'श्वजन', 'सकल' के स्थान पर 'शकल', 'सकृत' के स्थान पर 'शकृत' का उच्चारण नहीं करोगे। क्योंकि इस श्लोक में उच्चारण भेद से अर्थ का अनर्थ दिखाई देता है। जैसे– स्वजन = आत्मीय लोग, श्वसन = कुत्तेलोग, सकल = सम्पूर्ण, शकल = खण्ड (टुकड़ा), सकृत = एकबार, शकृत = विष्ठा।

भाष्यकार पतञ्जलि का कथन है कि 'एकः शब्दः सुप्रयुक्तः स्वर्गलोके च कामधुग्भवति' अर्थात् अच्छी तरह से जाना हुआ और अच्छी तरह से प्रयोग किया गया एक शब्द भी स्वर्ग और मृत्युलोक में इच्छाओं की पूर्ति करनेवाला होता है।

महर्षि पाणिनि ने शुद्ध उच्चारण की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए 'पाणिनि शिक्षा' में कहा है–

एवं वर्णाः प्रयोक्तव्या नाव्यक्ता न च पीड़िता।
सम्यग्वर्णप्रयोगेण ब्रह्मलोके महीयते।।[1]
सुतीर्थादागतं व्यक्तं स्वाध्यायं सुव्यवस्थितम्।
सुस्वरेण सुवक्त्रेण प्रयुक्तं ब्रह्म राजते।।[2]

अच्छी तरह शुद्धता के साथ वर्णों के उच्चारण करने से इस लोक में तो सम्मान मिलता ही है, ब्रह्मलोक में भी प्रतिष्ठा होती है। सद्गुरु से भलीभाँति पढ़े हुए, अच्छी तरह अभ्यास किये हुए, सुन्दर शुद्ध स्वरों से, समुचित मधुर ध्वनि से पढ़े गये वेद और वेदाङ्ग शोभित होते हैं। अतः वर्णों का उच्चारण इस प्रकार करना चाहिए जो न तो अव्यक्त हों और न पीड़ित हों।

अशुद्ध उच्चारण से होनेवाली अपूरणीय क्षति का वर्णन पाणिनि शिक्षा के निम्नांकित मंत्र में किया गया है–

मंत्रहीनो स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह।
सवाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ।। 52।।

वृत्रासुर ने इन्द्र को मारने के लिए यज्ञ किया था, किन्तु पुरोहितों द्वारा अशुद्ध उच्चारण से उत्पन्न वाणी ने उसे ही नष्ट कर दिया। उच्चारण की महत्ता को प्रतिपादित करने के पश्चात् पाणिनि ने ध्वनि की उत्पत्ति की प्रक्रिया का उल्लेख इस प्रकार किया है–

आत्म बुध्या समेत्यार्थान्मनो युङ्क्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारूतम् ।।[3]
मारूतस्तूरसि चरन्मन्द्रं जनयति स्वरम् ।।[4]
सोदीर्णो मूर्ध्न्यभिहतो वक्त्रमापद्य मारूतः ।
वर्णाञ्जनयते तेषां विभागः पञ्चधा स्मृतः ।।[5]

अर्थात् शब्दोच्चारण से पूर्व आत्मा बुद्धि से मिलकर अर्थ का ज्ञान प्राप्त करती है। फिर वह मन को बोलने की इच्छा से प्रेरित करती है। मन शरीर में अग्नि (नाभि से ऊपर तथा हृदय के मध्य भाग) पर आघात करता है। इसी कारण अग्नि वायु को प्रेरित करती है। वह वायु हृदय स्थान में पहुँचने पर गम्भीर ध्वनि उत्पन्न करती है। तदनन्तर वायु वहाँ से चलकर मूर्धा से टकराकर लौटती है और मुख भाग से बाहर निकलते हुए विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करती है। 'ध्वन्यते इति ध्वनि'। ध्वनि का अभिप्राय भाषा के संकेतों से है। संसार की प्रत्येक भाषा के कुछ प्रतीक संकेत होते हैं जिनसे उस भाषा को समझा जाता है। विद्वानों ने भाषा के दो रूप बताये हैं– व्यक्त और अव्यक्त । ध्वनि के व्यक्त रूप में वर्णों को स्थान दिया गया है और ध्वनि के अव्यक्त रूप में वर्णो की प्रतीति न होने की बात स्वीकार की गई है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि 'ध्वनि' भाषा का मौखिक रूप है।

वर्णोच्चारण की क्रिया को स्पष्ट करते हुए विद्वानों ने वाणी के चार रूप बताये हैं–

(1) परा,
(2) पश्यन्ती,
(3) मध्यमा,
(4) बैखरी।

(1) परा – परा तो ब्रह्म स्वरूपा है। परा ही सरस्वती है।

(2) पश्यन्ती – परा का दूसरा विकृत रूप है। यह परा रूप शब्द ब्रहा की शक्ति का उन्मेष मात्र है। यहाँ भी न तो वर्णों का कोई विभाग है और न कोई अनुक्रम। यह परा एवं मध्यमा को तटस्थ भाव से देखती है। अतः इसे पश्यन्ती कहा गया है।

अविभागा तु पश्यन्ती सर्वतः संह्रत क्रमा।
स्वरूपज्योतिरे वान्तः सूक्ष्मा वागनपायिनी ।।

(3) मध्यमा – यह अन्तः संकल्परूपा है। क्रम का अनुपात रखनेवाली प्राणवृत्ति को पारकर मध्यमा वाणी में प्रवृत्त होती है।

अन्तः संकल्परूपा या, क्रमरूपानुपातिनी।
प्राणवृत्तिमतिक्रम्य मध्यमा वाक्प्रवर्तते ।।

(4) बैखरी – परा वाणी प्रकट रूप है। इसी स्वरूप में वाणी की अभिव्यक्ति होती है, ध्वनियों का उच्चारण होता है। कण्ठ आदि स्थानों में वायु के संचरित होने पर वर्णों का शरीर धारण करनेवाली प्राणवृत्ति के सहयोग से बननेवाली वक्ता की वाणी को बैखरी कहते हैं–

स्थानेषु विवृते वायौ कृतवर्णापरिग्रहा।
वैखरीवाक् प्रयोक्तृणां प्राणवृत्तिर्निबन्धना ।।

संस्कृत ध्वनियाँ – महर्षि पाणिनि ने संस्कृत के वर्णों (ध्वनियों) की उत्पत्ति शिव के 'डमरू' से बतायी है तथा वर्णों को 14 सूत्रों में प्रस्तुत किया है जिन्हें 'माहेश्वर सूत्राणि' की संज्ञा दी गई है। इनको प्रत्याहार सूत्र भी कहते हैं। ये निम्नवत् हैं [6]–

(1) अइउण, (2) ऋलृक्, (3) एओङ्, (4) ऐऔच्, (5) हयवरट्, (6) लण्, (7) ञमङणनम्, (8) झमञ्, (9) घढ्धष्, (10) जवगडदश्, (11) खफछठथचटतव्, (12) कपय्, (13) शषसर् (14) हल्

मूल रूप से वर्ण दो प्रकार के हैं– स्वर और व्यंजन। स्वर को पाणिनि व्याकरण में अच् तथा व्यंजन को हल् कहा गया है।

काल से उत्पन्न भेद[7] – काल के अनुसार स्वर के तीन भेद हैं– ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत

स्वर से उत्पन्न भेद[8] – उच्चारण की उच्चता (तार स्वर) की दृष्टि से स्वरों के पुनः तीन भेद हैं– उदात्त, अनुदात्त और स्वरित।

अनुनासिक और अननुनासिक भेद से पुनः स्वर वर्णों के दो भेद हैं। इस प्रकार प्रत्येक स्वर वर्ण के 18 भेद होते हैं। केवल लृ तथा एच् (ए ओ ऐ औ) वर्णों के दीर्घ नहीं होने के कारण 12 भेद ही हैं।

उच्चारण स्थान से उत्पन्न भेद – उच्चारण करते समय मुख विवर में दो अवयव मिलकर वायु का क्षणिक अवरोध करते हैं। इस अवरोध स्थान के आधार पर पाणिनि ने 11 सूत्रों का वर्णन किया है[9]–

क्रम	सूत्र	बोली जाने वाली ध्वनियाँ	उच्चारण स्थान
1.	अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः	अ, आ कवर्ग (क ख ग घ ङ) ह तथा विसर्ग	कण्ठ
2.	इचुयशानां तालु	इ, ई, चवर्ग (च छ ज झ ञ) य श	तालु
3.	ऋटुरषाणां मूर्धा	ऋ, ॠ, टवर्ग (ट ठ ड ढ ण) र, ष	मूर्धा
4.	लृतुलसानां दन्ताः	लृ, तवर्ग (त थ द ध न) ल, स	दन्त
5.	उपूपध्यमानीयानामोष्ठौ	उ, ऊ, पवर्ग (प फ ब भ ग) उपध्मानीय	ओष्ठ
6.	ञमङणनानां नासिका च	ञ, म, ङ, ण, न	नासिका
7.	एदैतोः कण्ठतालु	ए, ऐ	कण्ठ, तालु
8.	ओदौतोः कण्ठोष्ठम्	ओ, औ	कण्ठ, ओष्ठ
9.	वकारस्य दन्तोष्ठम्	व	दन्त, ओष्ठ
10.	जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम्	˘ क ˘ ख	जिह्वामूल
11.	नासिकानुस्वारस्य	(अनुस्वार)	नासिका

आभ्यन्तर प्रयत्न से उत्पन्न भेद[10] – जो प्रयत्न वर्ण की उत्पत्ति के समय कण्ठ से ओष्ठ तक मुख के अन्दर किया जाता है, उसे आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं। आभ्यन्तर प्रयत्न से उत्पन्न भेद निम्नलिखित हैं–

1. **स्पृष्ट –** क से म तक के वर्णों को स्पृष्ट कहते हैं, इनका आभ्यन्तर प्रयत्न स्पृष्ट है– कादयोमावसानाः स्पर्शाः
2. **ईषत्स्पृष्ट** – यण् (य व र ल) को ईषत्स्पृष्ट कहते हैं इनका आभ्यन्तर प्रयत्न ईषत् स्पृष्ट है – ईषत्स्पृष्टम् अन्तः स्थानाम्। यणो अन्तः स्थाः।
3. **ईषत् विवृत** – शल् (श ष स ह) को उष्म वर्ण कहते हैं इनका आभ्यन्तर प्रयत्न ईषत् विवृत है। ईषत् विवृतम् ऊष्मणाम्। शल् ऊष्माणः।
4. **विवृत –** अच् (स्वर वर्ण) का आभ्यन्तर प्रयत्न विवृत है। विवृतं स्वराणाम्। अचः स्वराः।
5. **संवृत–** ह्रस्व अकार का आभ्यन्तर प्रयत्न संवृत है. किन्तु साधनिकावस्था में विवृत ही होगा।

वाह्य प्रयत्न से उत्पन्न भेद[11] –

1. **विवार**	–	श्वासनली में स्थित स्वरतन्त्री का विकास होना।
2. **संवार**	–	स्वरतन्त्री में संकोच (सिकुडन) होना।
3. **श्वास**	–	प्राणवायु या श्वास की उत्पत्ति
4. **नाद**	–	ध्वनि उत्पन्न होना।
5. **घोष**	–	विशेष ध्वनि, जो गम्भीरता के साथ बाहर आती है।
6. **अघोष**	–	अल्प ध्वनि, जो कोमलता के साथ बाहर आती है।
7. **अल्पप्राण**	–	प्राणवायु का कम प्रयोग होना।
8. **महाप्राण**	–	प्राणवायु का अधिक प्रयोग होना।

निष्कर्ष :

संस्कृत व्याकरण में ध्वनियों को केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि चेतना को प्रभावित करने वाली ऊर्जा माना जाता है, इसमें स्वरों, व्यंजनों और अर्धस्वरों (य,व,र,ल) का विस्तृत वर्गीकरण, उच्चारण स्थान (कण्ठ, ओष्ठ), नासिक्य – अनासिक्य भेद (18 प्रकार) तथा 'नाद बुद्ध' और स्फोट जैसी अवधारणाएँ शामिल हैं, जो वैदिक मंत्रों की शक्ति और ब्रह्माण्डीय कंपन से जुड़ी हैं।

संस्कृत में वर्णमाला (वर्ण समाम्नाय) वैज्ञानिक है, जिसमें 9 स्वर और 33 व्यंजन वर्ण हैं, जिन्हें स्पर्श, उष्म और अन्तः स्थ ध्वनियों में वर्गीकृत किया गया है। उच्चारण स्थान के आधार पर ध्वनियाँ (कण्ठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य, ओष्ठ्य) विभाजित हैं।

संस्कृत के मंत्र विशिष्ट कंपन उत्पन्न करते हैं, जो शरीर के चक्रों को प्रभावित करते हैं। यह आध्यात्मिक और मानसिक लाभ के लिए एक "ध्वनि तकनीक" के रूप में काम करती है। सम्भवतः इसीलिए संस्कृत भाषा को देवभाषा कहा जाता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि पाणिनि ने संस्कृत में ध्वनि तत्त्व पर बहुत सूक्ष्म अध्ययन किया है। पाणिनि का उपर्युक्त भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण भाषा विज्ञान के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाणिनि शिक्षा – श्लोक सं० – 31
2. पाणिनि शिक्षा – श्लोक सं० – 51
3. पाणिनि शिक्षा – श्लोक सं० – 06
4. पाणिनि शिक्षा – श्लोक सं० – 07
5. पाणिनि शिक्षा – श्लोक सं० – 09
6. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण
7. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण
8. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण
9. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण
10. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण
11. लघुसिद्धान्त कौमुदी संज्ञाप्रकरण

मो०- 8271530752

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 117-122
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

आर्थिक विकास एवं सतत विकास

डॉ. राजकुमारी परिहार
अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र),
शासकीय स्नातक महाविद्यालय डभरा जिला – शक्ति (छ.ग.)

सारांश

आर्थिक विकास एवं सतत विकास आधुनिक समाज के दो अत्यंत महत्वपूर्ण विचार है, जो किसी भी देश की प्रगति की दिशा और दशा को निर्धारित करते हैं। आर्थिक विकास का तात्पर्य किसी देश की उत्पादन क्षमता, राष्ट्रीय आय, औद्योगिक विकास, तकनीकी उन्नति, तथा जीवन स्तर में वृद्धि से है। यह विकास मुख्य रूप से आर्थिक संकेतकों जैसे सकल घरेलू उत्पाद, प्रति व्यक्ति आय, रोजगार के अवसर और आधारभूत संरचना के विस्तार के माध्यम से मापा जाता है। दूसरी ओर सतत विकास एक व्यापक अवधारणा है, जो न केवल वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति पर बल देती है, बल्कि आवश्यकताओं से कोई समझौता न हो। आर्थिक विकास किसी भी राष्ट्र के लिए आवश्यक है क्योंकि इसके माध्यम से गरीबी में कमी आती है, रोजगार के अवसर बढ़ते हैं, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार होता है तथा लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठता है। औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और तकनीकी नवाचार आर्थिक विकास के प्रमुख साधन माने जाते हैं। परंतु केवल आर्थिक विकास पर केंद्रित नीति कई बार प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन, पर्यावरण प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और सामाजिक असमानता जैसी गंभीर समस्याओं को जन्म देती है। यही कारण है कि केवल आर्थिक वृद्धि को विकास का एकमात्र मापदंड मानना अब पर्याप्त नहीं रह गया है।

मूल शब्द – आर्थिक विकास, सतत, सामाजिक, औद्योगिक, संरचना, विस्तार, संसाधन, आधुनिक।

प्रस्तावना

सतत विकास और आर्थिक विकास आज के समय की सबसे महत्वपूर्ण अवधारणाएँ हैं, जो किसी भी देश की प्रगति की दिशा और गुणवत्ता दोनों को निर्धारित करती हैं। आर्थिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से उत्पादन, आय और रोजगार में विकास होती है, जबकि सतत विकास इस विकास को पर्यावरणीय, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से दीर्घकालिक और संतुलित बनाता है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में तीव्र औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और तकनीकी विस्तार ने जहाँ आर्थिक प्रगति को गति दी है, वहीं पर्यावरणीय असंतुलन, जतवायु परिवर्तन और संसाधनों की कमी जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। ऐसे में सतत विकास की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। संयुक्त राष्ट्र की 1987 की ब्रंटलैंड रिपोर्ट ने इसे परिभाषित करते हुए कहा कि ऐसा विकास आवश्यक है, जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के हितों की रक्षा करे। भारत में तीव्र आर्थिक विकास के साथ–साथ पर्यावरणीय स्थिरता बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। भारत ने नवीकरणीय ऊर्जा, स्वच्छ भारत अभियान, राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन योजना और सतत विकास लक्ष्यों के माध्यम से इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में भारत विश्व के अग्रणी देशों में शामिल है और हरित अर्थव्यवस्था की दिशा में निरंतर अग्रसर है।

अतः कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास और सतत विकास एक–दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि पूरक है। दीर्घकालिक और समावेशी विकास तभी संभव है जब आर्थिक नीतियाँ पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक न्याय के साथ संतुलित रहें। सतत विकास ही वह मार्ग है जो वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए स्थिर, सुरक्षित और समृद्ध समाज का निर्माण कर सकता है।

21 वीं सदी में मानव सभ्यता अभूतपूर्व आर्थिक परिवर्तन से गुजर रही है। तकनीकी प्रगति, वैश्वीकरण और औद्योगिकीकरण ने आर्थिक विकास को तीव्र बनाया है। किन्तु यह विकास कई बार पर्यावरणीय असंतुलन, संसाधनों के क्षरण और सामाजिक विषमता को जन्म देती है। ऐसे में प्रश्न उठता है– क्या विकास केवल आर्थिक संकेतकों से मापा जा सकता है, या उसे सततता के मानकों से भी जोड़ना आवश्यक है? संयुक्त राष्ट्र की 1987 की ब्रेटलैंड रिपोर्ट ने ''सतत विकास'' को परिभाषित करते हुए कहा–''वह विकास जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं की क्षमता को क्षति नहीं पहुँचाता।'' यह परिभाषा यह स्पष्ट करती है कि विकास का उद्देश्य केवल विकास नहीं, यह संतुलित और दीर्घकालीन प्रगति होना चाहिए।

वर्तमान वैश्विक युग में विकास की परिभाषा केवल आर्थिक विकास तक सीमित नहीं रही है, बल्कि इसमें सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन और संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग भी शामिल हो गया है। सतत विकास का मूल उद्देश्य ऐसा विकास सुनिश्चित करना है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के हितों से समझौता न करे। दूसरी ओर, आर्थिक विकास किसी देश की उत्पादन क्षमता, आय और रोजगार के विस्तार को दर्शाती है।

यह देखा गया है कि तीव्र आर्थिक विकास के प्रयास में पर्यावरणीय और सामाजिक पहलुओं की उपेक्षा की जाती है, जिससे असमानता, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और संसाधनों की कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसलिए आधुनिक युग में विकास का स्वरूप केवल मात्रात्मक विकास नहीं, गुणात्मक सुधार की दिशा में भी होना चाहिए।

भारत जैसे विकासशील देश के लिए सतत विकास का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि यहाँ आर्थिक प्रगति के साथ–साथ गरीबी उन्मूलन, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक समानता जैसी चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। सरकार द्वारा नवीकरणीय ऊर्जा, स्वच्छ भारत मिशन, और सतत विकास लक्ष्यों के माध्यम से संतुलित विकास की दिशा में अनेक पहलें की जा रही हैं।

सतत विकास – सतत विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसमें तीन मुख्य स्तंभ शामिल हैः

- आर्थिक सततताः संसाधनों का दक्ष उपयोग और उत्पादकता में वृद्धि।
- सामाजिक सततताः समान अवसर, गरीबी उन्मूलन, शिक्षा और स्वास्थ्य का विस्तार।
- पर्यावरणीय सततताः प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण।

सतत विकास इस बात पर बल देता है कि आर्थिक विकास और पर्यावरणीय स्थिरता विरोधी नहीं बल्कि पूरक हैं।

आर्थिक विकास और सतत विकास का संबंध :–

अतीत में यह माना जाता था कि आर्थिक विकास के लिए पर्यावरणीय त्याग आवश्यक है। परंतु आधुनिक दृष्टिकोण यह कहता है कि दीर्घकालिक विकास तभी संभव है जब पर्यावरण सुरक्षित हो। आर्थिक विकास और सतत विकास का संबंध है –

1. सतत विकास आर्थिक विकास को दीर्घकालिक बनाता है।
2. हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy) रोजगार और उत्पादन दोनों बढ़ाती है।
3. संसाधनों के संतुलित उपयोग से आर्थिक प्रणाली स्थिर रहती है।

उदाहरण – नवीकरणीय ऊर्जा उद्योग GDP में योगदान देते हुए कार्बन उत्सर्जन को घटाता है।

अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य :–

1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन ने पहली बार पर्यावरण और विकास को जोड़ने की पहल की। 1992 के रियो अर्थ समिट में ''एजेंडा 21'' अपनाया गया, जिसमें सतत विकास की रूपरेखा दी गई। इसके बाद 2015 में संयुक्त राष्ट्र ने सतत विकास लक्ष्य (SDG_s) जारी किए – 17 लक्ष्य और 169 उद्देश्यों के साथ। इन लक्ष्यों में गरीबी उन्मूलन, स्वच्छ ऊर्जा, जलवायु कार्यवाही, और असमानता में कमी जैसी बातें शामिल हैं।

भारत में आर्थिक विकास और सतत विकास :–

भारत दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद GDP विकास दर लगातार 6–8% के बीच रही है। परंतु इसके साथ चुनौतियाँ भी रहीं हैं–

- वायु और जल प्रदूषण में वृद्धि
- भूमि और जल संसाधनों पर दबाव
- शहरीकरण से पारिस्थितिकी पर प्रभाव

इसीलिए भारत ने अपने विकास पथ को ''सतत विकास'' की दिशा में मोड़ा है।

भारत की राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC, 2008) –

इस योजना के आठ मिशन हैं–

1. राष्ट्रीय सौर मिशन – भारत में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने हेतु इस मिशन की शुरुआत वर्ष 2010 में की गई। इसका मुख्य उद्देश्य स्वच्छ, सस्ती एवं टिकाऊ ऊर्जा उपलब्ध कराकर सतत विकास और आर्थिक विकास को गति देना है।
2. राष्ट्रीय ऊर्जा दक्षता मिशन – भारत में ऊर्जा के कुशल उपयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से राष्ट्रीय ऊर्जा दक्षता संवर्धन मिशन की शुरुआत की गई। यह सतत विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. राष्ट्रीय जल मिशन – भारत में जल संसाधनों के संरक्षण, प्रबंधन और दक्ष उपयोग को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से इसकी शुरुआत की गई। यह मिशन सतत विकास की आधारशिला माना जाता है।
4. हरित भारत मिशन – भारत में वन क्षेत्र एवं हरित आवरण को बढ़ाने के उद्देश्य से हरित भारत मिशन की शुरुआत की गई। यह मिशन जलवायु परिवर्तन शमन एवं अनुकूलन–दोनों दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है और सतत विकास तथा आर्थिक विकास को साथ–साथ आगे बढ़ाता है।
5. सतत विकास लक्ष्य (2015–2030) – भारत ने 17 सतत विकास लक्ष्यों को अपने राष्ट्रीय एजेंडे में शामिल किया है। नीति आयोग प्रत्येक राज्य की प्रगति का मूल्यांकन ''SDG इंडिया इंडेक्स'' के माध्यम से करता है।
6. हरित ऊर्जा पहल – भारत ने 2030 तक 500 गीगावॉट नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य रखा है। सौर और पवन ऊर्जा में भारत विश्व के शीर्ष पाँच देशों में शामिल है।
7. स्वच्छ भारत अभियान – 2014 में शुरू हुई यह पहल सामाजिक सततता और सार्वजनिक स्वास्थ्य दोनों को बढ़ावा देती है।
8. ग्रीन क्रेडिट प्रोग्राम (2023) – व्यक्तियों और संस्थानों को पर्यावरणीय संरक्षण के लिए प्रोत्साहित करने की नई पहल।

आर्थिक विकास में सतत विकास का योगदान –

सतत विकास का मूल उद्देश्य वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों की क्षमता को सुरक्षित रखना है। भारत जैसे विकासशील देश में सतत विकास केवल पर्यावरण संरक्षण तक सीमित नहीं है, यह आर्थिक वृद्धि, सामाजिक समावेशन और संसाधन दक्षता का का समन्वित मॉडल प्रस्तुत करता है।

1. रोजगार सृजन – हरित उद्योगों से नए रोजगार के अवसर बनते हैं।
2. ऊर्जा सुरक्षा – नवीकरणीय ऊर्जा से तेल पर निर्भरता घटती है।
3. पर्यावरण संरक्षण – प्रदूषण घटाने से स्वास्थ्य और उत्पादकता बढ़ती है।
4. विदेशी निवेश – रुचि दिखाते हैं। हरित परियोजनाओं में निवेशक रूचि दिखाते हैं।
5. दीर्घकालिक विकास – संसाधनों का संतुलित उपयोग आर्थिक प्रणाली को स्थिर बनाता है।

सतत विकास आर्थिक विकास का विरोधी नहीं, बल्कि उसका आधार है। भारत में दीर्घकालीन, स्थिर और समावेशी आर्थिक प्रगति तभी संभव है जब विकास की प्रक्रिया पर्यावरणीय संरक्षण, सामाजिक न्याय और आर्थिक दक्षता के सिद्धांतों पर आधारित हो।

भारत की उपलब्धियाँ :–

भारत ने पिछले एक–डेढ़ दशक में सतत विकास और आर्थिक विकास को साथ लेकर चलने की दिशा में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं। प्रमुख उपलब्धियाँ निम्नलिखित हैं–

1. नवीकरणीय ऊर्जा में उल्लेखनीय प्रगति – सौर और पवन ऊर्जा क्षमता में तीव्र विस्तार, स्वच्छ ऊर्जा से ऊर्जा सुरक्षा और कार्बन उत्सर्जन में कमी एवं हरित निवेश और रोजगार सृजन हुआ है। यह प्रगति राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना के लक्ष्यों के अनुरूप है।
2. ऊर्जा दक्षता में सुधार – LED कार्यक्रमों से बिजली खपत और लागत में कमी आई है। उद्योगों में ऊर्जा उत्पादकता बढ़ी है एवं आयातित ईंधन पर निर्भरता कम हुई है।
3. जल एवं स्वच्छता में सुधार – ग्रामीण क्षेत्रों में नल–जल कनेक्शन का तेज विस्तार हुआ है। खुले में शौच में कमी एवं स्वास्थ्य व्यय में गिरावट और श्रम उत्पादकता में सुधार हुआ है।
4. हरित आवरण और पर्यावरण संरक्षण – वनीकरण एवं वृक्षारोपण से हरित आवरण में विकास हुई है। सामुदायिक वन प्रबंधन से ग्रामीण आजीविका सुदृढ़ हुआ है। जैव विविधता संरक्षण को बढ़ावा मिला है।
5. समावेशी सामाजिक विकास – शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण संकेतकों में सुधार हुआ है। डिजिटल सेवाओं से सामाजिक समावेशन गरीबी में कमी आई है, और मानव पूंजी का विकास हुआ है। ये उपलब्धियाँ सतत विकास लक्ष्य की दिशा में भारत की प्रगति को दर्शाती हैं।
6. डिजिटल और हरित अवसंरचना – डिजिटल भुगतान और ई–गवर्नेस से पारदर्शिता, स्मार्ट शहरी सेवाएँ और सतत परिवहन एवं औद्योगिक प्रतिस्पर्धात्मकता में विकास हुआ है।
7. वैश्विक नेतृत्व और प्रतिबद्धताएँ – अंतरराष्ट्रीय जलवायु मंचों पर सक्रिय भूमिका एवं स्वच्छ ऊर्जा और जलवायु अनुकूलन में वैश्विक साझेदारी बढ़ी है।

भारत की उपलब्धियाँ यह दर्शाती हैं कि सतत विकास और आर्थिक विकास परस्पर पूरक हैं। नीतिगत सुधार, तकनीकी नवाचार और सामाजिक समावेशन के माध्यम से भारत ने एक ऐसा विकास मॉडल प्रस्तुत किया है, जो दीर्घकालीन, समावेशी और पर्यावरण–अनुकूल है।

चुनौतियाँ :–

भारत ने सतत विकास की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति की है, फिर भी आर्थिक विकास के साथ संतुलित, समावेशी और पर्यावरण–अनुकूल विकास प्राप्त करने में कई प्रमुख चुनौतियाँ बनी हुई है–

1. जनसंख्या विकास – 140 करोड़ से अधिक जनसंख्या संसाधनों पर अत्यधिक दबाव डालती है।
2. प्रदूषण – दिल्ली, मुंबई, और पटना जैसे शहर विश्व के सबसे प्रदूषित शहरों में शामिल हैं।
3. जल संकट – भूजल स्तर में निरंतर गिरावट और वर्षा की असमानता जल प्रबंधन को कठिन बनाती है।
4. आर्थिक असमानता – आप और अवसरों में असमानता सतत सामाजिक विकास में बाधक है।
5. तकनीकी असमानता – हरित तकनीकें ग्रामीण और गरीब तबकों तक सीमित रूप से पहुँची हैं।

भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती यह है कि तेज आर्थिक विकास को बनाए रखते हुए पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक न्याय और संसाधन दक्षता सुनिश्चित की जाए। इसके लिए समन्वित नीतियाँ, तकनीकी नवाचार, स्थानीय भागीदारी और प्रभावी क्रियान्वयन अनिवार्य हैं।

नीति सुधार और समाधान :–

भारत में सतत विकास को तेज और प्रभावी बनाने के लिए नीतिगत सुधार, संस्थागत सुदृढ़ीकरण और तकनीकी–वित्तीय नवाचार आवश्यक हैं। प्रमुख सुधार और समाधान निम्नलिखित हैं–

1. परिपत्र अर्थव्यवस्था – पुनः उपयोग और पुनर्चक्रण को बढ़ावा देना।
2. हरित कर नीति – प्रदूषकों पर कर और स्वच्छ उद्योगों को रियायतें।
3. ग्रीन फाइनेंस – पर्यावरण अनुकूल निवेश को प्रोत्साहन देना।
4. स्थानीय नवाचार – ग्रामीण क्षेत्रों में टिकाऊ तकनीकें विकसित करना।
5. जनजागरूकता अभियान – नागरिकों में सतत जीवनशैली की भावना जगाना।
6. ग्रीन GDP की गणना – पारंपरिक GDP में पर्यावरणीय लागत को जोड़ना।

नीति सुधारों का लक्ष्य केवल उत्सर्जन घटाना नहीं, बल्कि उत्पादकता बढ़ाना, जोखिम कम करना और अवसर सृजित करना है। समन्वित नीतियाँ, हरित वित्त, तकनीकी नवाचार और मजबूत शासन इन चार स्तंभों पर भारत सतत विकास को आर्थिक विकास का इंजन बना सकता है।

सतत विकास के सामाजिक आयाम :–

सतत विकास का सामाजिक आयाम यह सुनिश्चित करता है कि विकास की प्रक्रिया न्यायसंगत, समावेशी और मानव–केंद्रित हो। आर्थिक विकास तभी टिकाऊ मानी जाती है जब उसका लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचे। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में सामाजिक आयामों की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। सतत विकास केवल आर्थिक नहीं, सामाजिक समरसता का भी प्रतीक है। भारत में सामाजिक सततता के लिए आवश्यक है–

- शिक्षा और स्वास्थ्य पर अधिक निवेश
- लैंगिक समानता
- गरीबी उन्मूलन
- ग्रामीण विकास और स्थानीय उद्योगों का सशक्तिकरण

सतत विकास का सामाजिक आयाम यह स्पष्ट करता है कि विकास केवल आर्थिक संकेतकों तक सीमित नहीं है, बल्कि मानव गरिमा, समान अवसर और सामाजिक न्याय पर आधारित होना चाहिए। भारत में दीर्घकालीन और स्थिर आर्थिक विकास तभी संभव है जब सामाजिक विकास को नीति–निर्माण के केंद्र में रखा जाए।

तकनीकी नवाचार और सतत विकास –

तकनीकी नवाचार सतत विकास का मुख्य चालक (Key Driver) है। यह सीमित संसाधनों के कुशल उपयोग, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक–सामाजिक प्रगति के बीच संतुलन स्थापित करने में निर्णायक भूमिका निभाता है। भारत जैसे विकासशील देश में तकनीक सतत विकास को व्यवहारिक, किफायती और समावेशी बनाती है।

- सौर ऊर्जाः भारत का सौर मिशन वैश्विक उदाहरण है।
- इलेक्ट्रिक वाहन नीति (FAME-II): परिवहन क्षेत्र में स्वच्छता की दिशा।
- डिजिटल गवर्नेंसः संसाधनों का पारदर्शी उपयोग।
- स्मार्ट सिटी मिशनः हरित अवसंरचना और ऊर्जा दक्षता का उदाहरण।

भारत में तकनीकी नवाचार को बढ़ावा राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना तथा वैश्विक स्तर पर सतत विकास लक्ष्य के अनुरूप दिया जा रहा है। तकनीकी नवाचार सतत विकास को सैद्धांतिक अवधारणा से व्यावहारिक समाधान में बदलता है। भारत में स्वच्छ ऊर्जा, स्मार्ट कृषि, डिजिटल शासन और हरित उद्योग के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि तकनीक, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक विकास–तीनों परस्पर पूरक हैं।

निष्कर्ष :–

आर्थिक विकास और सतत विकास दो अलग धाराएँ नहीं हैं, ये एक–दूसरे के पूरक हैं। सतत विकास यह सुनिश्चित करता है कि आर्थिक प्रगति केवल आज के लिए नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी लाभकारी हो। भारत ने हरित ऊर्जा, स्वच्छ पर्यावरण, और सामाजिक समानता की दिशा में सराहनीय कदम उठाए हैं। फिर भी, जनसंख्या दबाव, प्रदूषण, और जल संकट जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इसलिए आवश्यक है कि विकास की परिभाषा GDP विकास तक सीमित न रहे, बल्कि उसमें मानव कल्याण और पर्यावरण संरक्षण भी सम्मिलित हो। ''विकास तभी वास्तविक है, जब वह सभी के लिए हो और सदा के लिए हो।''

संदर्भ सूची –

1. भारत सरकार. राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (NAPCC). पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. भारत सरकार. आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey of India). वित्त मंत्रालय।
3. पंचवर्षीय योजनाएँ, योजना आयोग /नीति आयोग, नई दिल्ली।
4. नीति आयोग. भारत में सतत विकास लक्ष्य प्रगति रिपोर्ट।
5. संयुक्त राष्ट्र. Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development.
6. दत्त, रूद्र एवं सुंदरम, के.पी. भारतीय अर्थव्यवस्था, सुल्तान चंद एंड सन्स, नई दिल्ली।

7. मिश्रा, एस.के. एवं पुरी, वी. के. अर्थशास्त्र के सिद्धांत, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुंबई।
8. अग्रवाल, अनिल. पर्यावरण और विकास, सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट, नई दिल्ली।
9. संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, Human Development Report.
10. भारत सरकार, नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE) वार्षिक रिपोर्ट।
11. भारत सरकार, जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण मंत्रालय. राष्ट्रीय जल नीति एवं रिपोर्ट।
12. अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी. Renewables & Energy Efficiency Reports.
13. शर्मा, आर.के. सतत विकासः अवधारणा एवं व्यवहार. रावत पब्लिकेशंस, जयपुर।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 123-126
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Interwoven Destinies: Caste, Gender, and Hope in Masaan

Parul Bordoloi
Independent Researcher,
Nagaon, Assam.

Abstract
In the spaces where cinema meets lived reality, stories become powerful tools for understanding human pain and resilience. Cinema often becomes a mirror that reflects the silent struggles of society, revealing truths that words alone cannot capture. The research paper titled " Interwoven Destinies: Caste, Gender, and Hope in Masaan" studies the film Masaan (2015) to understand how it presents the realities of caste, gender, and emotional struggle in everyday life. The study first focuses on Deepak Kumar, a young man from the Dom community, to show how caste hierarchies continue to influence people's dreams, and social identity. The film highlights the deeply rooted caste-based occupations that shape the future of individuals born into marginalised communities. Second, the paper examines how both caste and gender affect the feelings and experiences of the main characters, Deepak and Devi. The research further focuses on how Masaan uses cinematic techniques to express trauma and inner pain. The film's use of symbolism, long silences, the Ganga river, cremation grounds, and carefully arranged scenes, these techniques help the audience understand what the characters cannot always say in words.

Keywords
Caste , Gender , silence, hope, social identity, marginalization.

Introduction

The movie title "masaan" comes from the word "smasan" which means cremation ground. The movie Masaan is written by Varun Grover and directed by Neeraj Ghaywan. The film is set in Varanasi. Varanasi, a town in Uttar Pradesh where the burning ghats are a constant reminder of death, endings, and the harsh realities of life. In Neeraj Ghaywan's Masaan (2015), the cremation ground also becomes a symbol of the social structures that people cannot easily escape, especially caste and gender-based restrictions. Masaan presents the lives of two young individuals whose separate but connected journeys reveal how deeply caste and gender shape their hopes, struggles, and emotional experiences.

The movie starts off with Devi Pathak, Played by Richa Chadda . She works as a trainer at a computer coaching institute, where she develops a close relationship with her student(Piyush). One day, the two are caught by the police while in a lodge. Terrified by the sudden raid and unable to face the humiliation, Piyush locks himself in the bathroom and dies

by slitting his wrist. This tragic incident became the turning point of Devi's life. Her father, a Sanskrit professor, is also overwhelmed by the fear of social shame and moral judgment. The police use the incident to blackmail him, demanding money in exchange for dropping the case. This incident marks the start of Devi's emotional suffering and exposes how society controls women's bodies and choices. Even though Devi has not committed any crime, she becomes the target of gossip, judgment, and humiliation. People in her community expect her to behave according to strict rules of purity and honour, especially because she comes from a Brahmin family. The film shows that women often carry the burden of a family's reputation, while men and institutions rarely face consequences for their actions. Her silence, her emotional withdrawal, and her frustration reveal how deeply trauma affects her inner world. She wants freedom, but she feels trapped by society, her father's expectations, and by her own painful memories.

Deepak Kumar played by Vicky koushal , He is a young man from the Dom community. Despite his educational qualification he continues his hereditary job in Ganga ghats. Deepak grows up helping his family at the cremation ghat, where he sees death every day and experiences the stigma attached to his caste. Even though this work is necessary for Hindu rites, the Dom community remains socially excluded and trapped in the cycle of hereditary labour. Deepak meets a girl from a much higher caste. Their relationship begins innocently. For Deepak, Shalu represents hope, and a life beyond the boundaries of caste. For Shalu, Deepak offers honesty, and the simplicity she longs for. They love each other , but both understand that society would never approve of their relationship because a higher caste girl is not allowed to marry a young man from a cremation-working lower caste. Shalu encourages Deepak to focus on his studies and work hard so that he can get a good job. She believes this will help him gain respect and possibly change his life situation. Her support becomes a source of motivation for Deepak. However, their love story ends tragically. She dies in a sudden accident, but the biggest shock comes when he sees her body brought to the cremation ghat. As part of his caste duty, he is present during cremations and this time, he is forced to confront the body of the girl he loves. The moment he recognizes her is one of the most heartbreaking scenes in the film. Deepak's grief is overwhelming. He feels anger, helplessness, and deep sorrow, not only because he lost Shalu, but also because caste has trapped him in a position where he must witness her final rites. Her death symbolizes how caste destroys dreams, relationships, and emotional possibilities.

Together, their stories reveal how caste and gender operate in everyday life, not only through social rules but also through emotional suffering and internalized fear.

Objectives

1. To analyse how Masaan portrays caste hierarchies and hereditary occupation through Deepak and the Dom community.
2. To examine how caste and gender intersections shape the protagonists' emotional journeys.
3. To explore the film's depiction of trauma through symbolism, silence, and spatial composition.

Hypotheses

1. Masaan shows that hierarchies and hereditary occupations strongly restrict Deepak and the Dom community's life opportunities.
2. The emotional struggles of Deepak and Devi arise from the combined pressures of caste and gender norms.
3. The film uses symbolism, silence, and visual spaces to express the characters' hidden trauma.

METHODOLOGY

The researcher used qualitative research to analyse Masaan.

The primary data for this study is the feature film Masaan (2015), directed by Neeraj Ghaywan. Secondary data includes academic articles, film reviews.

For sampling, the study uses purposeful sampling, selecting specific scenes that highlight caste hierarchies, gendered experiences, and moments of trauma.

The film Masaan is examined through two methods: Textual Analysis involves Close reading of scenes, dialogues, and character arcs to understand how caste, gender, and trauma are represented.

RESULTS

The result eveals that Masaan powerfully represents how caste, gender, and emotional trauma shape the lives of its characters.

Representation of Caste Hierarchies and Hereditary Occupation : The movie Masaan directed by Neeraj Ghaywan shows how caste hierarchies and hereditary occupations continue to shape the life of Deepak and the Dom community. In Masaan, the Dom community of Varanasi is shown as a marginalized Dalit group who are often treated as "untouchable." Their traditional work is burning dead bodies at the ghats, and this job has been passed down through generations. The film shows this clearly through the character of Deepak. Even though Deepak is studying civil engineering and wants a better life, he still has to help his family with cremation work. From morning till night, he sees dead bodies, smells the burning pyres, and lives in an environment surrounded by death. This shows how strongly caste controls a person's occupation and daily life. Deepak's love story also shows how caste affects personal relationships. He falls in love with a Baniya girl from a higher caste. Deepak is scared because he knows society looks down on his community. Their relationship gives Deepak hope that he can rise above the limits of his caste. But tragedy strikes when One day, while Deepak is doing his usual cremation work at the ghats, When he removes the cloth covering the face, he realizes it is her. This moment breaks him completely. The painful scene of Deepak being forced to cremate the girl he loved shows how his caste-bound occupation traps him in a duty he cannot avoid. Even in the most emotional moment of his life, caste does not allow him to escape his role. This clearly shows how Masaan portrays caste hierarchy and hereditary occupation shaping the lives of those in the Dom community.

Intersections of Caste and Gender in Emotional Journeys: In Masaan, the emotional journeys of Devi and Deepak are shaped deeply by the pressures of gender and caste. Devi works at a coaching institute and comes from a Brahmin family, where women are expected to follow strict rules. Her suffering begins when she is caught with her student, Piyush, at a lodge. The police raid the room, record videos of her, and start blackmailing her. While Devi is terrified and helpless, Piyush takes his own life inside the bathroom. After the incident, Devi faces humiliation from many sides, police officers threaten her, neighbours gossip about her, and her colleagues at different coaching centres harass her as the news spreads. Her silence, emotional withdrawal, and constant desire to escape Varanasi show how deeply gender norms hurt her. Her trauma comes not only from the event but from the way society judges and controls women's choices. Deepak Kumar's emotional journey, on the other hand, is shaped by caste-based discrimination. He is from a Dom family who perform cremations at the ghats of the Ganga. Although he is a civil engineer , society continues to see him only through his caste identity. Deepak falls in love with a girl from a much higher caste, but marriage between lower-caste and higher-caste people is rarely accepted. But Shalu accepts him completely. Tragedy strikes when Shalu dies. Deepak becomes emotionally shattered when he sees her body at the cremation ghat. As part of his traditional caste occupation, he is forced to cremate her with his own hands. This heartbreaking moment shows how caste traps him even in the deepest moment of personal loss. Together, the emotional journeys of Devi and Deepak reveal

how gender and caste operate as powerful forces in everyday life. Devi suffers because she is a woman expected to carry the burden of family honour, while Deepak suffers because his caste restricts his dreams and relationships. Masaan clearly shows that emotional trauma is not only personal ,it is created and intensified by the caste and gender structures of society.

In Masaan, trauma is expressed not only through dialogue but through powerful visual and symbolic elements. The film uses the contrast between the Ganga river and the cremation ghats to show the inner struggles of the characters. The burning ghats, with constant smoke and fire, represent pain, loss, and the social restrictions that trap Deepak and Devi. In contrast, the flowing river symbolizes movement, healing, and the possibility of starting again. Silence is another important tool in the film. Long pauses in conversations, Devi's quiet walks through crowded streets, and Deepak's wordless moments of grief reveal emotions that the characters cannot express openly. The spatial composition of narrow lanes, cramped rooms, and wide shots of the ghats , visually represents their feelings of confinement and loneliness. Through these techniques, Masaan shows that trauma is often silent, internal, and deeply shaped by the environment and social pressures around the characters.

Conclusion

Masaan shows how caste, gender, and trauma shape the lives of ordinary people in Varanasi. Through Deepak and Devi, the film reveals how social rules create emotional pain and limit personal freedom. Deepak's struggles highlight the burden of caste and hereditary occupation, while Devi's experiences show how women face judgment and shame for choices that men are rarely blamed for. The film's use of silence, symbols, and visual spaces makes their inner pain more powerful and real. Yet, Masaan also offers hope, suggesting that healing and new beginnings are possible despite social barriers.

Acknowledgment

I thank everyone who guides me and for their support during this research.

REFERENCES

1. Ghaywan, N. (Director). (2015). Masaan [Film]. Drishyam Films.
2. Grover, V. (Writer). (2015). Masaan [Film script]. Drishyam Films.
3. Chatterjee, S. (2015). Review of the film Masaan. NDTV. https://www.ndtv.com.
4. Joshi, N. (2016). Exploring caste and modernity in Masaan. Journal of Indian Cinema Studies, 4(2), 45–58.
5. Ghaywan, N. (2017). Interview on the making of Masaan. The Hindu. https://www.thehindu.com

parulbordoloi804@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 127-130
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

मणिपुर में अन्याय के विरुद्ध खड़ी 'मइरापाइबी' (विशेष संदर्भ : हिन्दी-अनूदित मणिपुरी कहानियाँ)

ज्योतिका बशिष्ठ
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम, 781014

मणिपुर भारत के उत्तर-पूर्वी छोर पर स्थित आठ राज्यों में से एक है, जिसकी भाषिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना भारतीय मुख्यभूमि से कई स्तरों पर भिन्न एवं विशिष्ट है। लेकिन मणिपुर की सबसे उल्लेखनीय विशेषता है मणिपुरी समाज में महिलाओं को प्राप्त उच्च स्थान और सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की सक्रिय, संगठित एवं निर्णायक भागीदारी। मणिपुरी महिलाएँ केवल घर-परिवार की चारदीवारी तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे पुरुषों के समान ही समाज के निर्माण और संचालन में सहभागी हैं। राज्य के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। कृषि से लेकर हस्तशिल्प, लघु उत्पादन, और व्यापार तक हर क्षेत्र में महिलाओं की उपस्थिति स्पष्ट दिखाई देती है। इस संदर्भ में मणिपुर की राजधानी इम्फाल में स्थित 'ख्वैरंबंद कीथेल' (ख्वैरंबंद बाजार) विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह बाजार को 'इमा कीथेल' (माताओं का बाज़ार), या 'नूपि कीथेल' (महिला बाज़ार) के नाम से भी जाना जाना जाता है, जिसकी स्थापना 1580 ई में मणिपुर के महाराज खगेम्बा ने की थी।[1] यह ऐतिहासिक बाजार भारत का ही नहीं, पूरी दुनिया का एकमात्र ऐसा बाज़ार है जो पूरी तरह से महिलाओं द्वारा संचालित है। इस बाजार में केवल महिलाएँ ही व्यापार करती है, पुरुषों को यहाँ किसी प्रकार की विक्री की अनुमति नहीं है।

इसके साथ ही मणिपुर की महिलाएँ सदैव राज्य के सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों के प्रति भी सजग और सचेत रही हैं। 1904 ई और 1939 ई में मणिपुरी महिलाओं द्वारा निडर होकर शासक राजाओं और औपनिवेशिक नियमों के विरुद्ध छेड़े गए आंदोलन उनकी सामाजिक-राजनीतिक चेतना का जीवंत उदाहरण हैं। इतिहास के पन्नों पर 'नूपि लान' (महिलाओं का युद्ध) के नाम से दर्ज ये आंदोलन क्रमशः दमनकारी औपनिवेशिक नीतियों, और औपनिवेशिक अधिकारियों के सहयोग से गैर-मणिपुरी व्यापारियों द्वारा चावल के अत्यधिक निर्यात के कारण राज्य में उत्पन्न अकाल जैसी स्थिति के विरुद्ध किया गया था।[2]

स्वतंत्रयोत्तर काल में भी महिलाओं की सामाजिक मुद्दों पर हस्तक्षेप की यह परंपरा बनी रही, और वे अन्य सामाजिक बुराइयों के विरोध में सामने आने लगीं। 1970 के दशक के उत्तरार्ध में मणिपुर में शराब और नशीले पदार्थों के बढ़ते सेवन एवं विक्री के विरुद्ध महिलाओं ने स्वयं को संगठित कर 'निशा बंद' अभियान प्रारंभ किया।

उनका उद्देश्य नशे के कारण समाज के बढ़ती हिंसा और अव्यवस्था को रोकना था। बाद में, 1980 ई में जब राज्य में बढ़ती उग्रवादी गतिविधियों के नियंत्रण के उद्देश्य से भारत सरकार ने मणिपुर में 'सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम, 1958' लागू किया, तब यही महिलाएँ और अधिक संगठित रूप में सामने आई, और उन्हें 'मइरापाइबी' के नाम से जाना जाने लगा।[3] दरअसल 'निशा बंद' की महिलाएँ 'पोडोन' (बड़ी बाती वाले केरोसिन के दीपक) और लालटेन लेकर जुलूस निकलती थीं, लेकिन मशालों का उपयोग शुरू करने के बाद से वे 'मइरापाइब' कही जाने लगीं।[4]

मणिपुरी शब्द 'मइरापाइबी' का हिन्दी अर्थ 'मशाल धारी महिला' के रूप में लिया जा सकता है। 'मइरा' का अर्थ है 'बांस से बनी लंबी मशाल' और 'पाइबी' होती है मशाल थामे रहने वाली महिला। ये मुख्यतः मणिपुर के सर्ववृहद समुदाय मेइतेइ समुदाय की महिलाएँ हैं, जिन्हें आम तौर पर जनता द्वारा 'इमा' (माँ) या 'इबेन' (दादी) के रूप में संबोधित किया जाता है।[5] मइरापाइबी महिलाएँ रात भर जलती हुई मशालें लेकर सड़कों पर पहरा लगाती हैं। उनका उद्देश्य है सुरक्षा बलों ं द्वारा निर्दोष लोगों पर किए जाने वाले अत्याचारों और मानवाधिकारों के उल्लंघन का विरोध करना। ये महिलाएँ किसी भी प्रकार के अन्याय, जैसे निर्दोष लोगों की गिरफ़्तारी, फर्जी मुठभेड़, निर्दोष लोगों की हत्या, महिलाओं के प्रति हिंसा आदि की स्थिति में तत्काल हस्तक्षेप करती हैं। केवल यही नहीं, वे राज्य के विभिन्न विद्रोही समूहों द्वारा आम जनता और समाज के सामने खड़ी की गई सभी चुनौतियों से भी लगातार लड़ती रही हैं। ये महिलाएँ सैन्य तलाशी अभियान में लोगों के घरों को सेना के प्रवेश से बचाती है, तो निर्दोष नागरिकों की गिरफ़्तारी पर या किसी के लापता हो जाने पर उनके बचाव में पुलिस थानों या सैन्य शिविरों में भी निर्भीकता से चली जाती हैं। वस्तुतः मइरापाइबी महिलाएँ मणिपुरी समाज में फैल रही हर प्रकार की सामाजिक बुराइयों और अव्यवस्था को नियंत्रिक करने और समाज में शांतिपूर्ण वातावरण बनाए रखने के लिए संघर्षरत हैं।

जनता के साथ होने वाले अन्याय के खिलाफ इन मइरापाइबी के सक्रिय भागीदारी का अच्छा-खासा वर्णन मणिपुरी भाषा की कई कहानियों में भी मिलता है, जिनका हिन्दी अनुवाद करके 'क्षितिज' शीर्षक से कहानी संग्रह के रूप में प्रकाशित किया ई. विजय लक्ष्मी ने। इस संग्रह की कहानियों में से एक, अरिबम चित्रेश्वर की कहानी 'इस खून की धारा के बाद?' की पात्र थराकसना मइरापाइबी थी। उसके निम्नोक्त कथन से हम अनुमान लगा सकते हैं कि मणिपुर में मइरापाइबी महिलाएँ हर पल, रातभर जागकर अपने मोहल्ले में पहरा देती हैं, ताकि समाज में किसी प्रकार की अन्यायपूर्ण कार्य न हो सके। हालांकि, इसके बाद भी वे अन्याय को पूरी तरह से मिटा नहीं पायी हैं। कहानी में इस बात पर खेद प्रकट करते हुए थराकसना कहती है -

"हम माइरा पाईबी लोगों को अनहोनी से बचाने के लिए संतरी की तरह रातभर जगकार निगरानी करना बेकार ही है।"[6]

इसी कहानी में हम देखते हैं कि मणिपुर पुलिस और सुरक्षा बलों द्वारा चलाए गए खोज अभियान में वे गाँव में घर-घर घुसकर शक के आधार पर युवकों को उठा ले जाते हैं। इस प्रकार की अमानवीय घटनाओं को रोकने में भी मइरापाइबी अपना योगदान देती हैं, ताकि सिपाही निर्दोष लोगों को उठा ले जाकर उनपर अत्याचार न चला सकें। ऐसी एक घटना का वर्णन देते हुए उक्त कहानी में थराकसना इबोचौबा से कहती है -

"कल हम मइरापाइबी वहाँ नहीं होते तो तुम्हारे बेटे को ले ही गए होते।"[7]

ये मइरापाइबी महिलाएँ न सिर्फ सिपाहियों के अत्याचार को रोकने की भरसक कोशिश करती हैं, बल्कि वे साधारण लोगों का साहस बनकर भी खड़ी रहती हैं। कहीं भी अन्याय होने की खबर पाते ही वे वहाँ एकत्र हो जातीं हैं और भुक्तभोगी का हौसला बढ़ाती हैं। लमाबम बीरमणि की 'दुर्भाग्य' शीर्षक कहानी में जब सेना के सिपाही निङ्थेम को हथियार छिपाने के आरोप में पकड़ ले जाते हैं, तब ये मइरापाइबी महिलाएँ ही उसके परिवार का सहारा बनती हैं। अंधेरा होते ही वे मशाल लिए निङ्थेम की पत्नी थाबल्लै और उनकी बेटी की निगरानी करती हैं। यहाँ

तक कि जब सिपाही रात में उनके बेटे की खोज में दोबारा उनके घर आ धमकते हैं, तब भी मइरापाइबी महिलाएँ ही उन्हें घर में घुसने से रोके रखती हैं। कहानी में ग्रामवासियों की सुरक्षा के लिए हर दम तत्पर रहने वाली इन मइरापाइबी महिलाओं की भूमिका का वर्णन करते हुए कहानिकर लिखते हैं -

"सिपाहियों के जाते ही थाबल्लै का घर ... मइरापाइबी से खचाखच भर गया। ... किसी के कहे बिना ही मशाल लिए मोहल्ले के औरतों ने थाबल्लै और उसकी बेटी की निगरानी की। ... काफी देर तक मइरापाइबी लोगों ने सिपाहियों को अंदर नहीं जाने दिया। उन्हें घेरकर रोके रखा।"[8]

अन्य एक कहानी 'बिटिया तेरी माँ जिंदा है अभी', जिसके लेखक है अराम्बम ओङ्बी मेमचौबी, में भी अन्याय के खिलाफ मुहिम उठाती महिलाओं का उल्लेख मिलता है। हालांकि कहानी में कहीं मइरापाइबी शब्द का उल्लेख नहीं है, तथापि अनुमान लगाया जा सकता है कि इन महिलाओं से कहानीकार का आशय मइरापाइबी से ही है। इस कहानी में सिपाहियों द्वारा अगवा की गई लड़की के लिए गाँव की वृद्ध, प्रौढ़ और जवान सभी महिलाएँ सामने आती हैं, और अंत में किसी प्रकार की अनहोनी होने से पहले ही उस लड़की को सिपाहियों के हाथों से छुड़ा ले आती हैं। आम लोगों पर छाई ऐसी असुरक्षा के समय में ये महिलाएँ अपने व्यक्तिगत और घरेलू काम-काज छोड़-छाड़ कर आगे आती दिखाई देती हैं। उनके लिए अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बन जाता है। जनता की मानवाधिकारों की रक्षा के लिए मणिपुरी महिलाओं की ऐसी एकता वाकई में सराहनीय है। कहानी में महिलाओं की एकता और संघर्ष करने के लिए उनकी तत्परता का वर्णन करते हुए लिखा गया है -

"तभी वृद्धा, प्रौढ़ और जवान स्त्रियाँ न जाने किधर से शोर करती हुई आ पहुँचीं। सारी-की-सारी खेतों पर काम छोड़कर आ रही थीं। कीचड़ से सनी थीं, कपड़े भी मैले-कुचैले थे। ... जाओ अपने गाँव की सभी औरतों को खबर दे आओ कि अहल्लुप से एक लड़की को सिफाई पहाड़ी पर उठा ले गए हैं। जल्दी से उन सब को आने के लिए बोल आओ।"[9]

मइरापाइबी अपनी मांगों को पूरा करने के लिए धरना देने, भूख हरताल करने, मोर्चा निकालने, सार्वजनिक सभाओं का आयोजन करने, और बंद घोषित करने जैसे अहिंसात्मक उपायों का प्रयोग करती हैं। माया नेप्रम की कहानी 'निर्णय' में सनाहनबी अपने पति को बंदूकधारी युवकों के चंगुल से छुड़ाने के लिए मोहल्ले की मइरापाइबी से सहायता मांगती है और उन्हें धरने पर बैठने का अनुरोध करती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि समाज में न्याय स्थापित करने के लिए मइरापाइबी महिलाओं को प्रमुख शक्ति के रूप में देखा जाता है। कहानी से -

"दुनिया-भर में हंगामा हो गया है, सनाहनबी के पति का मामला। रुपयों के गबन का पता चला है। एक बंदूकधारी गुट ले गया हैं उसे। एक बड़ी रकम पहुँचाने को कह गया है। मोहल्ले की मइरा पाइबी से मदद के लिए और अपने पति को बंधक बनाए जाने के विरोध में धरने पर बैठने के लिए अनुरोध कारणे आई थी सनाहनबी। इन की मदद नहीं मिली तो बचकर नहीं लौटेंगे कहकर रो रही थी।"[10]

मइरापाइबी आंदोलन इम्फाल घाटी में व्यापक रूप से फैला हुआ है। वहाँ के प्रत्येक मोहल्ले में एक 'मइरा शंग' (बांस की झोपड़ी) होती है, जहाँ मइरापाइबी महिलाएँ बारी-बारी से पहरा देती है,[11] और एकत्र होकर योजनाओं पर विचार करती हैं।[12] साथ ही मइरापाइबी महिलाएँ आपातकालीन स्थिति में एक दूसरे से संवाद स्थापित करने और उन्हें एकत्रित करने के लिए एक विशेष तरीके का उपयोग करती हैं। किसी भी खतरे की स्थिति में महिलाएँ एक पत्थर या कोई अन्य उपकरण उठाकर उसे पास के किसी बिजली के खंभे पर घंटी की तरह बजाकर अन्य महिलाओं को सतर्क करती हैं। 'निर्णय' कहानी में कहानीकार ने इस प्रक्रिया के महत्त्व और औचित्य पर चर्चा करते हुए लिखा है-

"एक पत्थर उठाकर खंबे को बजा। खंबे बजने का यह चलन इस भूमि के अलावा और कहीं नहीं है। बहुत ही जोरदार। सूर्योदय की गोविंद जी की घंटी की ध्वनि, संध्या आरती की घंटी की ध्वनि या गिरजाघर में बजने वाली

धर्म का संदेश देने वाली घंटी की ध्वनि भी नहीं। बहुत ही जोरदार। मैदान-भर भीड़ इकट्ठा कर सकने वाली, मोहल्ले के विवादों में निर्णय लेने के लिए, न्याय का निर्णय सुनाने के लिए, अपने-आप अपने घर से निकल आने के लिए घंटी।"[13]

इस प्रकार हम पाते हैं कि मणिपुरी समाज में शांति बनाए रखने और अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने में मइरापाइबी महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है, जिसे हम नकार नहीं सकते।

संदर्भ सूची :

1. Koni Potsangbam, A study of the social movements by the women civil society organizations in Manipur state, Thesis, Department of Social Work, Bharati Vidyapeeth Deemed University, p. 62, http://hdl.handle.net/10603/173790
2. Bidyalaxmi, Salam, 'The Meira Paibis of Manipus: Locating Agency,' (Indonesia Law Review: Vol. 13: No. 3, Article 2, 2023), p. 4. https://scholarhub.ui.ac.id/ilrev/vol13/iss3/2
3. वही, पृ. 5.
4. https://www.e-pao.net/epSubPageExtractor.asp?src=leisure.Essays.A_Narrative_on_the_Origin_of_the_Meira_Paibis
5. Bidyalaxmi, Salam, 'The Meira Paibis of Manipus: Locating Agency,' (Indonesia Law Review: Vol. 13: No. 3, Article 2, 2023), p. 6. https://scholarhub.ui.ac.id/ilrev/vol13/iss3/2
6. ई. विजय लक्ष्मी, क्षितिज, (प्रथम संस्करण) 2013, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ. 38.
7. वही, पृ. 36.
8. वही, पृ. 60.
9. वही, पृ. 67.
10. वही, पृ. 93 .
11. Dr. Rosy Yumna, 'The Meira Paibi Movement: A Feminist And Educative Perspective' (International Journal of Multidisciplinary Research and Technology, 2023), p. 257. https://www.researchgate.net/publication/369474179_The_Meira_Paibi_Movement_A_Feminist_And_Educative_Perspective
12. Bidyalaxmi, Salam, 'The Meira Paibis of Manipus: Locating Agency,' (Indonesia Law Review: Vol. 13: No. 3, Article 2, 2023), p. 4. https://scholarhub.ui.ac.id/ilrev/vol13/iss3/2
13. ई. विजय लक्ष्मी, क्षितिज, (प्रथम संस्करण) 2013, यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ. 88.

8876935320 basisthajyotika@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 131-134
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Modernity, "Ethnic Consolidation" and "Cultural reproduction": The Role of Bhumkas in strengthening Gond Tribal Community Identity in Contemporary Society.

Amisha Mishra
Research Scholar
Department of Sociology and Social Anthropology, Igntu, Amarkantak MP

Abstract:
This paper examines the role of Bhumkas in contemporary society. Those who perform gongo (worship) and have complete knowledge about the Gondi religion are called Bhumka. In contemporary society, the primary responsibility of Bhumka is to connect youth with their own customs and religion. The religion of the Gonds is based on "Gondi Punem Darshan", it has complete details about the Gondi religion. This paper explores the role of "Bhumkas" in "ethnic consolidation" and "Cultural reproduction" in contemporary society, and the challenges they face in strengthening the Gond tribal community's identity, with special reference to Sagar district of Madhya Pradesh.
Keywords: Bhumka, Gondi Punem, Ethnic Consolidation, Cultural Reproduction, Modernity.

Introduction:

Every society has its own distinct culture: Buddhism, Jainism, Sikhism, and Hinduism each have their own. In the same way, tribals also have their own distinct religion. It is their age-old history. It is their heritage. The faith, belief, customs, and traditions of the tribal community are inspired and governed by nature. Nature is the foundation of their life. The Gonds are the worshippers of nature. Their method of worship, rituals, culture, and beliefs differ from those of other religions. Those who have complete knowledge of it become "Bhumka" (priests). The Gond community is associated with a rich "cultural heritage". The Gondi religion is conducted by "Gondi Punem Darshan". This religion is based on humanity and is free from idol worship, fatalism, and rebirth. In modern society, the role of "Bhumka" becomes crucial for propagating one's religion. The position of "Bhumka" is not based on birth. It is "achieved status".

The one who has complete knowledge about "Gondi Punem Darshan" becomes "Bhumka". In the Gondi religion, "Bhumka" contains all the information about rituals, culture, marriage, clan, totem, and can guide people in their society and show them the path of truth, so they can make their lives meaningful. This paper is based on the Gonds of Sagar district of Madhya Pradesh. It explores the role of "Bhumka" in the Gond tribal community's identity and how they influence people to take the path of "truth", which is already described by the 1st

religious guru of the Gonds, "Pari Kupar Lingo" Ji. The main work of the "Bhumka" is to spread the message of "Gondi Punem Darshan" given by "Pari Kupar Lingo" Ji. This paper is going to explore the role of “Bhumka" as an agent of "Ethnic Consolidation" and "Cultural Reproduction" among the Gond tribal community in Sagar district, Madhya Pradesh. Gond is the 2^{nd} largest tribe of Madhya Pradesh. Gonds live in almost every district of Madhya Pradesh. According to the Census 2011, their population is approximately 50.93 lakh, which is 33% of the overall population of tribes in Madhya Pradesh. These people are known for their unique customs and traditions. Gond is derived from the word "kond". These people call themselves "koyatur".

Methodology:

This study is purely qualitative. It is based on an exploratory research method. In which majorly used participatory observation, focused group discussion, semi-structured interview, photography, and field notes. To conduct this research, interviewed "Bhumka" to understand "Gondi Punem Darshan" and its impact on the Gond community. Conducted a semi-structured interview with leaders to understand strategies for strengthening their Gondi tribal community identity in contemporary society. Attended “Koya Punem” to know about the Gondi Punem Philosophy.

Five elements of "Gondi Punem Darshan":

In the Gondi religion, there are five major elements that govern it, such as Saga (kinship system), Ghotul (educational institute), Penkhada (temple), Punem (complete information about the Gondi religion), and Muthwa/Bhumka (priest). In Gonds, the Saga or kinship system is based on "totem". It describes following the rules and regulations, using good language, maintaining a positive attitude, and living with love with your people (Saga). "Pari Kupar Lingo" ji is called the first religious guru of the Gonds. Considering nature as the ideal, Guru Lingo ji has divided the entire "Koya" clan into twelve branches. Based on their genetic qualities, he has established their marital system. It is divided into 'even' and 'odd' categories. It is considered the first revered element in the Gond social system. The "Ghotul" is considered the second element; its primary purpose is to provide proper education to children aged 3 to 18. In "Ghotul", children were educated and guided by cultural, religious, and social values. Through the establishment of "Ghotul," their mental, physical, and intellectual development took place. Where their overall socialization was practiced. After "Ghotul", "Pen kada" is considered the third element. It is a place where people of the "Gondi" religion go to worship their gods and goddesses. After "Pen Kada", "Punem" is the fourth element, in which Pari Kupar Lingo ji has said all "Koya" people should follow the value system of "Punem". "Punem" means walking on the path of truth; it embodies values. Pari Kupar Lingo Ji propounds it for the welfare of all human beings. The fifth element is "Bhumka". He is also called a guru, muthwa, or mukhiya. These are the five main elements of "Gondi Punem Darshan". Without which it is impossible to serve the living beings. It is everyone's ultimate duty to follow these five elements. To understand "Gondi Punem Darshan", it is essential to know about these five elements of the Gonds. This lays the foundation of the Gond religion. In these five elements, "Bhumka" is also an important element of the Gond tribal community.

Role of "Bhumka" in the contemporary Gond tribal community:

The primary duty of Bhumka is to inspire the Gond community to form "one society, one voice and one tradition". Instead of following different customs, the Gond community should adopt one of its own. With the rise of Industrialization and modernization, many tribals also began to abandon their culture. Migration leads to "Sanskritization" in the mainstream society. people adopted the "dominant" culture of that particular area. Gond "Bhumkas" started worrying about their "Gondi Punem Darshan". Therefore, the Gond Samaj Mahasabha created the state-level "Bhumka" prakoshtha in Madhya Pradesh to introduce the youth of the Gond tribal community to our glorious history and to foster unity within the Gond community

through common culture, religion, customs, traditions, and festivals. For princely politics and inheritance, officials are appointed from the state level down to the district level, and from the block level down to the village level. It is the prime responsibility of Bhumka to properly uphold one's original customs and traditions. Establishing "Ghotul" in rural and urban areas to connect the younger generation with the Gondian customs and traditions.

Respecting all religions, following one's own religion, and also connecting it with the "National Religion". Do not speak negatively about any other religion. Explaining in detail about their 750 "clan" system. The "clan" system among the Gonds is divided into 750. Making people understand about their “clan” divison and explain the scientific reason behind it, how it is related with nature. There are three main rituals in the Gond tribal community: birth, marriage, and death. Its rituals and customs are unlike those of any other culture. Performing these three rituals duly has been entrusted as a significant responsibility of "Bhumka" to complete these rituals as per their own rules and regulations. Organize "Koya Punem" to spread propaganda about the Gondi religion. To demand the Gondi Dharam Code through coordination and advancement from village to block, block to district, district to state, state to national level. There should be a seven coloured flag (Gondian flag) at the homes of Gondi people, by uniting the society and keeping them away from alcoholism, connecting them with Gondian culture, and making them live life with equal self-respect, and moving forward on the path of progress without compromising with one's identity and culture. By establishing coordination with the people of one's own religion and by merging them, one should show unity.

Modernity, "Ethnic Consolidation" and "Cultural Reproduction":

Tribals have their own rich tradition and unique culture. They have their own kinship system, distinct from that of other communities. When society shifted from a traditional agricultural to a modern industrial society, it had many consequences. With the growth of Industrialization, migration increased. Therefore, people started moving away from their cultural 'traits'. It weakened the ethnic identity of the cultural groups. So, people started making efforts to secure their "ethnic" identity. By strengthening collective identity, people can bring "solidarity" to their ethnic group. The process of "ethnic consolidation" is carried out against the backdrop of society's external features. So, an ethnic group can also move forward with the "inclusive development" while protecting its distinct identity and culture. (Mann, 1993) explained in his book "Culture and Integration of Indian Tribes", diversity has been India's hallmark. This has always made India unique in the world. He has not been in favour of 'tribal isolation' at all. He has strongly opposed 'tribal isolation'. He believes that tribes should move forward in the development process so that they can transfer their 'ideological heritage'. The future generation will learn about the unique traditions and customs of the tribals. If they are isolated from the rest of society, they will lag in the development process, as the present government also says "Sabka Saath, Sabka Vikas" (development for all). Development of all is possible only by taking everyone along. In Maan's study, he focused on 'inclusive development' with 'distinct identity'. He said 'tribal community should move forward by integrating with mainstream society, but while maintaining their 'cultural uniqueness'. Tribal communities also move forward with 'integration' while remaining in the mainstream and preserving their 'identity'. 'Ethnic diversity' and 'cultural pluralism' set India apart from other countries, where, despite its diversity, everyone lives together in unity. Bhumka has a significant role in "ethnic consolidation" and "cultural reproduction". Bhumka is trying to connect the people of the Gond tribal community with "Gondi Punem Philosophy". They are describing their rich "cultural heritage" to the young generation through "Koya Punem". They are influencing the people of the Gond tribal community to follow their own rituals and customs. So, the upcoming generation can also know about their Gondi culture. They can also sing the praises of their glorious history. For this, parents are also being asked to connect their children with the Gondi

religion. So, modernization does not become a threat to “ethnic identity” and their ‘cultural identity’ is protected, and they are not excluded from the pace of ‘development.’

Conclusion:

It is important to preserve "ethnic identity" during the age of "modernization". Bhumka's contribution is significant in preserving and promoting the identity of the Gond tribal community. Because Bhumkas have complete knowledge of "Gondi Punem Philosophy". Therefore, they can circulate knowledge about their customs, religion, traditions, and festivals. Gondi religion is "naturalistic"; hence, it follows nature. Nature is prime in the Gond tribal community. Every ritual, culture, and tradition is based on nature. Bhumka has complete knowledge about it. So, in the era of "modernization", bhumka plays a very significant role in strengthening the identity of the Gond tribal community. Through "ethnic consolidation" and "cultural reproduction," they are preserving and promoting their "ethnic identity". Bhumka's dominance is increasing among the Gond tribal community in Sagar district. The people of the Gond tribal community have their rituals of birth, marriage, and death performed only by Bhumka. They no longer involve the "Pandits" of the Hindu religion in any of their custom. They organize "Koya Punem", in which a large number of people participate. Women, men, and children all listen carefully to "Gondi Punem Darshan" with great attention. Bhumkas creating “cultural consciousness” and “collective solidarity” among the Gond tribal community of Sagar district of Madhya Pradesh.

Bibliography:

1. Beteille, A. (1986). The concept of tribe with special reference to India. European Journal of Sociology/Archives européennes de sociologie, 27(2), 296-318.
2. Rout, N. (2014). A study of tribal vs non-tribals Culture and life of tribal population. International journal of sociology and anthropology, 6, 227-234.
3. Pathy, J. (1999). Tribe, region and nation in the context of the Indian state. Sociological bulletin, 48(1-2), 97-111.
4. Mann, R. S. (1993). Culture and integration of Indian tribes. MD Publications Pvt. Ltd.
5. Sarma, J. (1993). Changes in Tribal Culture in India. Anthropos, 88(4/6), 504–508. http://www.jstor.org/stable/40463757
6. Mari Marcel Thekaekara. (1991). Undermining Tribal Culture? Economic and Political Weekly, 26(1/2), 26–26. http://www.jstor.org/stable/4397184
7. Sahlins, M. (1999). Two or three things that I know about culture. Journal of the Royal Anthropological Institute, 399-421.
8. Ghurye, G. S. (1980). The scheduled tribes of India. Transaction Publishers.
9. Minz, N. (1993). Cultural identity of tribals in India. Social Action, 43, 32-40.
10. Bhowmick, P. K., & Jana, S. K. (2004). Community in Search of a New Identity: The Santals of West Bengal. In International Conference on Tribal Society in India and Beyond, Sambalpur University, Orissa, India.

Email id: amishamishra277@gmail.com

Mobile no.8717907470

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 135-137
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

विवेकी राय के उपन्यासों में लोक संस्कृति का स्वरूप और सामाजिक संदर्भ

स्वप्नाली आत्माराम सोनवणे
शोध छात्र,
प्रो.डॉ. संघ प्रकाश मारुती दुड्डे
मार्गदर्शक,
हिंदी विभाग, संगमेश्वर कॉलेज सोलापुर(स्वायत्त)

सारांश(Abstract):

प्रस्तुत शोध- पत्र में विवेकी राय के उपन्यासों में चित्रित लोकसंस्कृति का विश्लेषण किया गया है। उनके साहित्य में ग्रामीण जीवन ,लोक परंपराएं,कृषि संस्कृति ,लोक विश्वास, उत्सव, त्यौहार तथा आंचलिक भाषा का सजीव चित्रण मिलता है। यह अध्ययन इन तथ्य को स्पष्ट करता है, कि उनके उपन्यासों में लोक संस्कृति केवल पृष्ठभूमि नहीं बल्कि कथानक और परंपरा के द्वद्व के संदर्भ में लोक जीवन के परिवर्तन को भी इसमें रेखांकित किया गया है। आलेख में दर्शाया गया है कि ग्रामीण जीवन में लोक संस्कृति का सौंदर्य, स्वरूप, सामाजिक ,सांस्कृतिक प्रभाव का विश्लेषण किया गया है, उनके साहित्य से सजीव चित्रण मिलता हैं ।

बीज शब्द (Keywords):

लोक संस्कृति, आंचलिकता, ग्रामीण जीवन, लोक भाषा, सांस्कृतिक अध्ययन, लोक परंपराएं, कृषि संस्कृति, लोग जीवन

प्रस्तावना (introduction):

हिंदी उपन्यास परंपरा में आंचलित साहित्य की एक सशक्त धारा रही है, जिसमें ग्रामीण जीवन, लोक परंपराएं और क्षेत्रीय संस्कृति को केंद्र में रखा गया है, इस परंपरा को समृद्ध बनाने वाले रचना कारों में विवेकी राय का नाम विशेष महत्व रखता है। उन्होंने पूर्वांचल के ग्राम्य जीवन को अत्यंत प्रामाणिकता, संवेदनशीलता और आत्मीयता के साथ चित्रित किया गया है, उनके उपन्यासों में आधुनिकता, शहरीकरण और बदलती सामाजिक संरचनाओं के प्रभाव से ग्रामीण संस्कृति में जो परिवर्तन आए हैं उनका भी सजीव चित्रण उनके उपन्यासों में मिलता है। परंपरा और परिवर्तन के इस द्वद्व के बीच लोक संस्कृति किस प्रकार अपनी अस्मिता बनाए रखने का प्रयास करती है

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य विवेकी राय के उपन्यासों में चित्रित लोक संस्कृति के विविध आयामों जैसे सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्यों, लोक भाषा, आंचलित चेतना और आधुनिकता के प्रभाव का समग्र विश्लेषण करना है।

शोध आलेख का विश्लेषण (Analysis):

1. **लोक संस्कृति का स्वरूप**

विवेकी राय के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन की सहजता प्रकृति से जुड़ाव और सामुदायिक चेतना का गहरा चित्रण मिलता है, सोना माटी, लोकऋण, और समर शेष है जैसे उपन्यासों में कृषि- प्रधान, जीवन ,खेत खलियान, पशुपालन,ग्रामीण उत्सव और लोक परंपराएं जीवंत रूप में उपस्थित है।

1.1. कृषि संस्कृति और ग्राम जीवन:

ग्रामीण समाज की आधारशिला कृषि है। विवेकी राय ने किसानों के श्रम उनकी आर्थिक समस्याओं ऋतु चक्र से जुड़ी जीवन शैली और प्रकृति के साथ उनके संबंध को अत्यंत यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। खेती केवल जीविका का साधन नहीं बल्कि सांस्कृतिक पहचान का भी प्रतीक है।

1.2. लोक परंपराएं और उत्सव:

उनके उपन्यासों में विवाह संस्कार, जन्म संस्कार, मेले, पूर्व-त्योहार और लोकगीतों का विस्तृत चित्रण मिलता है, यह सभी तत्व सामुदायिक एकता और सांस्कृतिक निरंतरता के प्रतीक है। लोकगीत और लोक कथाओं के माध्यम से सामूहिक स्मृति सुरक्षित रहती है, विवेकी राय इन तत्वों को कथानक में इस प्रकार पिरोते हैं कि वे केवल सजावटी नहीं बल्कि कथा विकास के सहायक बन जाते हैं।

2. **सामाजिक संदर्भों का विश्लेषण:**

2.1. जातीय संरचना और सामाजिक विभाजन:

ग्रामीण समाज में जातिगत संरचना महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । विवेकी राय ने जातीय समानता और सामाजिक विभाजन का यथार्थ चित्रण किया है, उनके उपन्यास में यह स्पष्ट होता है कि लोक संस्कृति सामूहिकता को प्रोत्साहित करती है, परंतु सामाजिक विषमता भी मौजूद है।

2.2. आर्थिक विषमता और वर्गीय संघर्ष:

किसानों की आर्थिक समस्याएं ऋण-प्रथा, भूमिहीनता और संसाधनों की कमी उनके साहित्य में उभर कर आती है, और लोक संस्कृति के बीच आर्थिक संघर्ष की वास्तविकता भी दिखाई देती है।

2.3. परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व:

आधुनिकता शिक्षा राजनीति और शहरी प्रभावों के कारण ग्रामीण समाज में परिवर्तन आया है विवेकी राय ने इस परिवर्तन को संतुलित दृष्टि से प्रस्तुत किया है। परंपरा और आधुनिकता का संघर्ष उनके उपन्यासों में एक केंद्रीय विषय है।

2.4 आलोचनात्मक दृष्टि:

विवेकी राय का साहित्य ग्रामीण जीवन का आदर्शिकरण नहीं करता। उन्होंने सामाजिक समस्याओं और अंतर्विरोधो को भी उजागर किया है। हालांकि कुछ स्थानों पर परंपरा के प्रति उनकी सहानुभुति अधिक दिखाई देती है, परंतु यह उनका उद्देश्य लोग संस्कृति की गरिमा और महत्व को स्थापित करता है।

2.5. साहित्यिक और समाजशास्त्रीय महत्व:

विवेकी राय के उपन्यास हिंदी आंचलिक साहित्य की अमूल्य धरोहर है, उनका साहित्य भारतीय ग्रामीण जीवन की आत्मा को अभिव्यक्त करता है।

सांस्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से उनका साहित्य यह सिद्ध करता है कि, लोक संस्कृति सामाजिक संरचना और जीवन-मूल्यों का आधार है।

निष्कर्ष (conclusion):

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि विवेकी राय के उपन्यासों में लोक संस्कृति जीवन की आधारशिला के रूप में उपस्थित है। कृषि- संस्कृति, लोक परंपराएं, आंचलिक भाषा और सामुदायिक चेतना उनके साहित्य की प्रमुख विशेषताएं हैं, साथ ही सामाजिक संदर्भों के माध्यम से उन्होंने जातीय संरचना, आर्थिक विषमता और परंपरा आधुनिकता के द्वंद्व को भी उजागर किया है।

इस प्रकार उनका साहित्य हिंदी आंचलिक परंपरा का महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और सामाजिक दस्तावेज सिद्ध होता है

संदर्भ ग्रंथ सूची (Reference):

1. नगेंद्र. हिंदी साहित्य का इतिहास. राजकमल प्रकाशन, 2018
2. विवेकी राय . सोनामाटी. लोक भारती प्रकाशन ,2010
3. विवेकी राय लोकऋण लोक भारती प्रकाशन,2008
4. विवेकी राय .समर शेष है , लोक भारती प्रकाशन,2010
5. रामविलास शर्मा. भारतीय साहित्य और संस्कृति. वाणी प्रकाशन, 2012

मो. नंबर.7498539237

Sonavaneswapnali26@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 138-142
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के दौर में मौलिक अधिकारों का बढ़ता उत्कर्ष व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच उभरता संघर्ष

पवन कुमार
शोधार्थी,
प्रो. (डॉ.) रमेश चन्द्र राय
शोध निर्देशक,
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर,बिहार-812007

शोध सार (Abstract)

21वीं सदी में शासन-व्यवस्था तीव्र तकनीकी परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) केवल प्रशासनिक उपकरण नहीं, बल्कि नीतिगत निर्णयों का आधार बनती जा रही है। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में यह परिवर्तन केवल तकनीकी नहीं, बल्कि संवैधानिक भी है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता एवं सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रभाव से मौलिक अधिकारों के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ रही है। वर्तमान कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के दौर में पलक झपकते ही सारी सूचनाएं सुव्यवस्थित रूप से व्यक्ति के उँगलियों के इशारे पर मौजूद है। व्यक्ति अपने अधिकारों के प्रति सजग और जागरूक हो रहे हैं।

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की रक्षा हेतु न्यायपालिका को न्यायिक समीक्षा की शक्ति प्रदान की गई है, जबकि व्यवस्थापिका को कानून निर्माण तथा संविधान संशोधन का अधिकार प्राप्त है। मौलिक अधिकारों के संदर्भ में इन दोनों शक्तियों के प्रयोग के दौरान समय-समय पर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई है।

बीज शब्द: कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मौलिक अधिकार, न्यायिक समीक्षा, संविधान संशोधन, संवैधानिक सर्वोच्चता।

प्रस्तावना:

भारतीय संविधान में व्यवस्थापिका को जहां अनुच्छेद-368 के द्वारा मौलिक अधिकार सहित भारतीय संविधान के किसी भी भाग में संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है, वही न्यायपालिका को भी अनुच्छेद-13, 32, 137, 142, 226 के

तहत् व्यवस्थापिका के द्वारा किए गए किसी भी संविधान संशोधन अधिनियम की न्यायिक समीक्षा करने तथा अपने द्वारा दिए गए निर्णय को पूरी तरह से बदलने या उसमें संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है।

व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के द्वारा समय-समय पर इन्हीं शक्तियों का प्रयोग किया जाता रहा है जिससे इन दोनों संवैधानिक संस्थाओं के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती रही है।

व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच संघर्ष की स्थिति :

न्यायपालिका ने इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ (1993) के वाद में निर्णय दिया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन कुल आरक्षित स्थानों की संख्या 50% से अधिक नहीं होनी चाहिए और अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के अधिकारियों और कर्मचारियों को पदोन्नति में आरक्षण अनुमान्य नहीं होगा।

इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ के निर्णय से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए व्यवस्थापिका ने 76वां एवं 77वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया। 76वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1994 के द्वारा तमिलनाडू में स्थित शिक्षण संस्थाओं तथा सरकारी नौकरियों में 69% आरक्षण की व्यवस्था को 9वीं अनुसूची में डाल दिया गया। 77वां संविधान संशोधन अधिनियम,1995 के द्वारा संविधान के अनुच्छेद-16 के खंड (4) में एक नया उपखंड (4A) जोड़ कर उपबंध किया गया कि राज्य के अधीन सेवाओं में पदोन्नति के लिए अनुसूचित जाति एवं जनजाति को आरक्षण प्रदान किया जा सकेगा।

वीरपाल सिंह चौहान बनाम भारत संघ (1995) तथा अजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (1996) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने 16 सितम्बर, 1999 को अपने निर्णय के द्वारा यह व्यवस्था दी थी कि पदोन्नति में आरक्षण तो दिया जा सकता है, लेकिन वरिष्ठता नहीं मिलेगी।

सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए व्यवस्थापिका के द्वारा 85वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2001 पारित किया गया, जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद-16(4A) में संशोधन कर राज्य के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्गों के पदों पर अनुवर्ती (consequential) वरिष्ठता सहित प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण को 17 जून, 1995 से भूतलक्षी प्रभाव से लागू कर दिया गया।

एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के मामले में 77वां एवं 85वां संविधान संशोधन अधिनियम को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दिया गया। न्यायालय ने अपने निर्णय में इन संवैधानिक संशोधनों को तो सही माना, लेकिन यह भी कहा कि सरकार को इन वर्गों के अधिकारियों और कर्मचारियों के पिछड़ेपन, राजकीय सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व एवं कामकाज की दक्षता पर पड़ने वाले प्रभाव के संबंध में आंकड़ों का आधार तैयार करना होगा। राज्य सरकार या केन्द्र सरकार यदि पदोन्नति में आरक्षण देती है तो उन्हें इस बात की भी जांच करनी होगी कि-

1. इन वर्गों के लोगों में आज भी पिछड़ापन है या नहीं ?
2. इस वर्ग के लोगों का सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व है या नहीं ?
3. पदोन्नति में आरक्षण से प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव तो नहीं पड़ेगा ?

एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के निर्णय के बाद से ही कई जनहित याचिकाओं में इस पर पुनर्विचार की मांग उठती रही थी। इस मामले में विभिन्न राज्यों की सरकारों एवं केंद्र सरकार का प्रतिनिधित्व कर रहे अटॉर्नी जनरल के. वेणुगोपाल ने पदोन्नति में आरक्षण के पक्ष में गुहार लगाते हुए कहा था कि एक सात सदस्यीय संविधान पीठ को इस निर्णय पर पुनर्विचार करना चाहिए।

26 सितम्बर, 2018 को सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच जजों की संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से अपने फैसले में कहा कि एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के फ़ैसले पर पुनर्विचार करने के लिए उसे बड़ी संविधान पीठ के पास भेजने की कोई जरूरत नहीं है और न ही पदोन्नति में आरक्षण देने के लिए 2006 के निर्णय में लिखे गए पिछड़ेपन के मापदंडों को पूरा करने और इससे संबंधित जानकारी जुटाने की ही कोई जरूरत है। परन्तु पर्याप्त प्रतिनिधित्व एवं प्रशासन पर पड़ने वाले प्रभाव वाली बात आज भी लागू है, क्योंकि इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में कुछ नहीं कहा है।

30 जुलाई, 2020 को सर्वोच्च न्यायालय ने बी. के. पवित्रा बनाम भारत संघ के वाद में अपने निर्णय में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग को दिए गए परिणामी वरिष्ठता के साथ पदोन्नति में आरक्षण की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा है तथा पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया है। उक्त पुनर्विचार याचिका में आए निर्णय से स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति में क्रीमीलेयर की संकल्पना लागू नहीं होगी एवं परिणामी वरिष्ठता के साथ पदोन्नति में आरक्षण मिलता रहेगा।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश अरुण मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने 27 अगस्त, 2020 को दिए फैसले में कहा है कि राज्य सरकार को अनुसूचित जाति एवं जनजाति श्रेणी में वर्गीकरण का अधिकार है। राज्य सरकार सूची में छेड़छाड़ नहीं कर सकती और न ही वह किसी जाति को जोड़ अथवा घटा सकती है लेकिन जाति की जांच कर सकती है। न्यायालय ने कहा कि विभिन्न रिपोर्ट दर्शाती हैं कि अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति वर्ग में सभी जातियां समान नहीं है। अतः, आरक्षण का लाभ सबसे जरूरतमंद तक नहीं पहुंच रहा है। जबकि आरक्षण का उद्देश्य सभी वर्गों को ऊपर उठाना है जो राष्ट्र की प्रगति के लिए जरूरी है।

2004 में ईसी चिन्नैया मामले में सर्वोच्च न्यायालय की ही पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने कहा था कि अनुसूचित जाति/जनजाति की श्रेणी में उपवर्गीकरण का राज्यों को अधिकार नहीं है।

अतः जस्टिस अरुण मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने कहा कि ईसी चिन्नैया मामले का फ़ैसला भी समान क्षमता का पीठ ने सुनाया था इसलिए वह मुख्य न्यायाधीश से मामले को सात न्यायाधीशों या उससे बड़ी पीठ के समक्ष विचार के लिए लगाने का आग्रह करते हैं।

व्यवस्थापिका द्वारा 103वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 पारित किया गया जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद-15 में एक नया उपखंड (6) तथा अनुच्छेद-16 में एक नया उपखंड (6) जोड़ कर सामान्य वर्ग के आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्ति को सरकारी नौकरियों एवं शिक्षण संस्थाओं में 10% आरक्षण का प्रावधान किया गया।

आर्थिक रूप से पिछड़े सामान्य वर्ग को आरक्षण देने वाले 103वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 को यूथ फॉर इक्वालिटी सहित कई संगठनों और लोगों ने सर्वोच्च न्यायालय में इसे चुनौती दिया है। चुनौती देने वालों का दलील है कि संविधान में अनुच्छेद-15(6) और 16(6) को जोड़ कर संविधान के मूल ढांचे में बदलाव किया गया है। इसमें इंदिरा साहनी मामले में सर्वोच्च न्यायालय की नौ सदस्यीय संविधान पीठ के फ़ैसले को उद्धृत करते हुए कहा था कि आर्थिक मापदंड आरक्षण का एकमात्र आधार नहीं हो सकता। साथ ही उस फ़ैसले में यह भी कहा था कि आरक्षण 50% से अधिक नहीं होनी चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एस. ए. बोवडे की अध्यक्षता वाली तीन जजों की पीठ ने 103वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 को असंवैधानिक तो नहीं ठहराया लेकिन इस पर विचार करने के लिए 5 अगस्त, 2020

को पांच सदस्यीय संविधान पीठ को सौंपने का फ़ैसला किया। जब तक संविधान पीठ द्वारा इसे असंवैधानिक नहीं ठहराया जाता तब तक सामान्य वर्ग के पिछड़े को 10% आरक्षण मिलता रहेगा।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) का उपयोग:

वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा सूचना एवं संचार क्रांति ने पूरे विश्व को एक गांव जैसा बना दिया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) से व्यक्ति में जागरूकता बढ़ी है। व्यक्ति अपने अधिकारों के बारे में AI से पूछता है और अपने जानकारी को अद्यतन करते रहता है। सूचना एवं संचार क्रांति तथा सोशल मीडिया ने ऐसी जानकारी को जन गण तक पहुंचाने का काम कर रहा है। इसका नतीजा यह हुआ है कि व्यवस्थापिका द्वारा बनाए गए किसी कानून से यदि किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकार का हनन होता है तो वह सीधे उच्च न्यायालय/सर्वोच्च न्यायालय में चाला जाता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) का प्रयोग कर व्यक्ति स्वयं पिटिशन दायर करता है और न्यायालय में बिना किसी वकील के स्वयं आनलाइन अपनी बात रखता है। मजेदार बात यह है कि न्यायपालिका भी ऐसे कानून को अवैध घोषित करने या उसकी वैधानिकता शून्य घोषित करने से पीछे नहीं हटती है। इससे दोनों संस्थाओं के बीच पुनः एक नए संघर्ष का जन्म होता है तथा यह सिलसिला अब रफ़्तार पकड़ रही है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि दोनों संवैधानिक संस्था को भी कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा सूचना एवं संचार क्रांति का उपयोग अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन में अधिकाधिक करनी चाहिए। 17 से 21 फरवरी, 2026 तक नई दिल्ली में पांच दिवसीय इंडिया-एआई इम्पैक्ट समिट 2026 में सर्वसाधारण एवं जनकल्याण के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के उपयोग पर बल दिया गया।

सरकार के तीनों अंगों में एआई का उपयोग जनकल्याणकारी एवं भविष्योन्मुखी होना चाहिए। एआई के उपयोग से व्यवस्थापिका में प्रत्येक विधेयक पर उम्दा प्रकृति की बहस होनी चाहिए, जो कि नहीं हो पा रहा है। इसमें आम जनता से ऑनलाईन सुझाव भी आमंत्रित किए जाने चाहिए तथा व्यवस्थापिका के सदस्यों को सूचना प्रौद्योगिकी के द्वारा अपने क्षेत्र की जनता से दिन-प्रतिदिन का संवाद भी स्थापित करना चाहिए और उनकी समस्या की चर्चा व्यवस्थापिका में भी की जानी चाहिए जिससे विधेयक के कानून बनने तक सभी त्रुटियों का निदान किया जा सके। न्यायपालिका को भी कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर सुनवाई को आम जनता तक आभासी रूप में उपलब्ध कराया जाना चाहिए। न्यायपालिका के निर्णय को भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग द्वारा उपलब्ध कराया जाना चाहिए जिससे आम जनता कानूनी रूप से भी शिक्षित हो सके और न्यायपालिका के समक्ष वाद में कमी आ सके।

निष्कर्ष:

इस प्रकार कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) का सदुपयोग सर्वसाधारण एवं जनकल्याण के लिए किया जाना चाहिए। इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए भारत सरकार द्वारा एक सख्त कानून बनाया जाना चाहिए तथा इसके उचित उपयोग के लिए आचार संहिता या विनियम भी बनाये जाने चाहिए तभी विज्ञान का यह अद्भुत चमत्कार मानवता के लिए वरदान साबित होगा जिससे संविधान की सर्वोच्चता स्थापित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. भारत 2025, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. Manorama year book 2026, Malayala Manorama Company Pvt Ltd, Kottayam
3. डा० जय नारायण पाण्डेय (2025) : भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।

4. डा० जय जय राम उपाध्याय (2025) : भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।
5. ब्रजकिशोर शर्मा (2024) : भारत का संविधान एक परिचय, पेंटिस हाल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
6. एम० लक्ष्मीकान्त (2024) : भारत की राजव्यवस्था, टाटा मैग्रो हिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली।
7. डा० पुखराज जैन (2025) : भारत का संविधान, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
8. सुभाष कश्यप (2015) : हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली
9. बालमुकुंद अग्रवाल (2015) : हमारी न्यायपालिका, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
10. सुभाष कश्यप (2015) : हमारी संसद, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
11. शिवानी किंकर चौबे (2015) : भारतीय संविधान : रचना एवं कार्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
12. डा० दुर्गा दास बसु (2019) : भारत का संविधान एक परिचय, जैन बुक एजेंसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
13. hindi.livelaw.in

Pawanggis2@gmail.com, 9471228641

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 143-147
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

वैश्वीकरण के दौर में गाँधीवाद की प्रासंगिकता

डॉ. मो० हेदायतुल्लाह
राजनीति विज्ञान,
ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

सारांश- वैश्वीकरण का वर्तमान मॉडल, जो असमानता, सांस्कृतिक क्षरण और पारिस्थितिक संकट को बढ़ावा देता है, अपनी सीमाओं पर पहुँच चुका है। इस संदर्भ में गांधीवाद की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है, क्योंकि यह अहिंसा, स्वदेशी, अपरिग्रह और सर्वोदय जैसे सिद्धांतों के माध्यम से एक वैकल्पिक मार्ग प्रस्तुत करता है। यह दर्शन अर्थव्यवस्था में 'ग्लोकलाइजेशन' (स्थानीयकरण के माध्यम से वैश्वीकरण), शासन में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, और शिक्षा में मूल्य-केंद्रित दृष्टिकोण को बढ़ावा देकर एक ऐसी न्यायसंगत वैश्विकता का आधार रच सकता है, जो शोषण पर नहीं बल्कि सहयोग पर, भोग पर नहीं बल्कि संतुलन पर टिकी हो। इस प्रकार, गांधी का 'वसुधैव कुटुम्बकम' का आदर्श आज के विभाजित विश्व के लिए एक व्यावहारिक एकता का मार्गदर्शक बन सकता है।

की वर्ड- वैश्वीकरण,गांधीवाद,आर्थिक असमानता, पर्यावरणीय संकट, विश्व व्यापार संगठन, सांस्कृतिक साम्राज्यवाद

भूमिका: 21वीं सदी का वैश्वीकरण मानव इतिहास का सबसे जटिल और विरोधाभासी दौर है। एक ओर जहाँ इसने अर्थव्यवस्थाओं, संस्कृतियों और समाजों को अभूतपूर्व रूप से जोड़ा है, वहीं दूसरी ओर यह गहरी असमानताएँ, सांस्कृतिक संकट और पारिस्थितिक असंतुलन भी लेकर आया है। विश्व व्यापार संगठन, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं द्वारा संचालित यह वैश्वीकरण मॉडल मूलतः "उपभोग, उत्पादन और संचय" के पश्चिमी सिद्धांत पर आधारित है, जिसने आर्थिक विषमता, सांस्कृतिक एकरूपता और पर्यावरणीय क्षरण को बढ़ावा दिया है। ऐसे में, महात्मा गांधी का दर्शन, जो सादगी, स्वावलंबन, अहिंसा और नैतिकता पर आधारित है, एक वैकल्पिक एवं संतुलित विकास मॉडल प्रस्तुत करता प्रतीत होता है। जैसा कि अर्थशास्त्री जोसेफ स्टिग्लिट्ज ने अपनी पुस्तक ग्लोबलाइजेशन एंड इट्स डिसकन्टेंट्स (2002) में टिप्पणी की है, "वैश्वीकरण के वर्तमान रूप ने वादा किया था समृद्धि का, लेकिन लाया है असमानता और अस्थिर निदानता का।"[1] यही वह संदर्भ है जहाँ गांधीवाद की प्रासंगिकता न केवल बनी रहती है, बल्कि और अधिक बढ़ जाती है।

वैश्वीकरण के तीन संकट और गांधीवादी -

1.आर्थिक असमानता और 'अपरिग्रह' का सिद्धांत - वर्तमान वैश्वीकरण ने धन और संसाधनों का संकेंद्रण एक अल्पसंख्यक वर्ग के हाथों में कर दिया है। ऑक्सफैम की 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, दुनिया की सबसे अमीर 1%

आबादी ने पिछले दो वर्षों में उत्पन्न होने वाली दो-तिहाई नई संपदा पर कब्जा कर लिया है।[2] यह असमानता सामाजिक तनाव, राजनीतिक अस्थिरता और मानवीय पीड़ा का कारण बन रही है। गांधी का 'अपरिग्रह' या असंग्रह का सिद्धांत इसका मूलभूत समाधान प्रस्तुत करता है। उनका मानना था कि "पृथ्वी सबकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन रखती है, लेकिन किसी एक के लालच को पूरा करने के लिए नहीं।"[3] यह सिद्धांत असीमित उपभोग और संग्रह के बजाय संयम, साझेदारी और समान वितरण पर बल देता है। 'ट्रस्टीशिप' की अवधारणा के माध्यम से गांधी यह प्रस्ताव रखते हैं कि धनवान व्यक्ति अपनी संपत्ति का समाज के कल्याण के लिए एक न्यासी के रूप में प्रबंधन करे।[4] वैश्विक स्तर पर, इसका अर्थ एक ऐसी अर्थव्यवस्था से है जो केवल सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के विकास पर नहीं, बल्कि मानव विकास सूचकांक (HDI), सामाजिक समावेश और पर्यावरणीय स्थिरता पर केंद्रित हो।

2. सांस्कृतिक एकरूपता बनाम 'स्वदेशी' की रक्षा- वैश्वीकरण ने पश्चिमी उपभोक्तावादी संस्कृति को एक 'वैश्विक मानक' के रूप में थोपने का कार्य किया है, जिससे दुनिया भर की स्थानीय संस्कृतियों, भाषाओं और ज्ञान प्रणालियों पर अस्तित्व का संकट मंडरा रहा है। यह एक प्रकार का 'सांस्कृतिक साम्राज्यवाद' है। गांधी का 'स्वदेशी' सिद्धांत इस संकट के प्रति एक शक्तिशाली प्रतिरोध है। स्वदेशी का अर्थ केवल 'स्थानीय उत्पाद खरीदो' नहीं है, बल्कि यह 'स्व' पर आधारित 'देश' की अवधारणा है—अर्थात आत्मबल, सांस्कृतिक आत्मनिर्णय और बौद्धिक स्वायत्तता।[5] यह वैश्विक आदान-प्रदान को नकारता नहीं, बल्कि उसे समानता और सम्मान के आधार पर खड़ा करने का आग्रह करता है। यूनेस्को की कन्वेंशन ऑन द प्रोटेक्शन एंड प्रमोशन ऑफ द डाइवर्सिटी ऑफ कल्चरल एक्सप्रेशन्स (2005) जैसे प्रयास इसी दिशा में कदम हैं।[6] गांधीवादी दृष्टि से, वास्तविक वैश्वीकरण वह है जो 'एकता में विविधता' को सुरक्षित रखे, न कि एक एकरूप वैश्विक संस्कृति का निर्माण करे।

3. पारिस्थितिक संकट और 'प्रकृति के साथ सहअस्तित्व' का दर्शन- जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता की हानि और प्रदूषण आज मानवता के समक्ष सर्वाधिक गंभीर चुनौती हैं। ये संकट अनियंत्रित औद्योगीकरण, अंधाधुंध खनन और उपभोग के वैश्विक मॉडल की ही देन हैं। गांधी ने एक सदी पहले ही चेतावनी दी थी कि "प्रकृति मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, लेकिन उसके लालच की नहीं।"[7] उनका संपूर्ण दर्शन मनुष्य और प्रकृति के बीच सामंजस्य पर आधारित था। 'ग्राम स्वराज' की अवधारणा एक ऐसे विकेंद्रित, कम कार्बन वाले सामाजिक-आर्थिक मॉडल का प्रस्ताव है जो स्थानीय संसाधनों पर निर्भर हो और पारिस्थितिकी के अनुकूल हो।[8] आईपीसीसी (IPCC) की छठी आकलन रिपोर्ट (2023) स्पष्ट करती है कि टिकाऊ विकास के लिए उत्पादन और उपभोग के मौजूदा पैटर्न में मूलभूत बदलाव अनिवार्य है।[9] गांधी का सादगी और आत्मनिर्भरता का मार्ग ही इस बदलाव की कुंजी प्रदान कर सकता है।

गांधीवाद के सार्वभौमिक सिद्धांत: वैश्विक चुनौतियों के लिए स्थानीय समाधान-

अहिंसा: संघर्ष के युग में शांति का मार्गदर्शक सिद्धांत- वैश्वीकरण ने भू-राजनीतिक तनावों, आर्थिक प्रतिस्पर्धा और संसाधनों के लिए संघर्ष को बढ़ाया है। ऐसे में, गांधी की अहिंसा केवल एक व्यक्तिगत सद्गुण नहीं, बल्कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के लिए एक व्यावहारिक राजनीतिक दर्शन बन जाती है। गांधी के लिए, अहिंसा कायरता नहीं, बल्कि "सबसे शक्तिशाली की शक्ति" थी, क्योंकि यह मन, वचन और कर्म से सभी प्रकार की हिंसा का सक्रिय रूप से परित्याग करती है।[10] आधुनिक संदर्भ में, इसका विस्तार संरचनात्मक हिंसा (गरीबी, भुखमरी, भेदभाव) और पर्यावरणीय हिंसा के विरुद्ध संघर्ष तक होता है। नोबेल शांति पुरस्कार विजेता नेल्सन मंडेला और मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने गांधी के अहिंसक सिद्धांतों को ही अपने संघर्षों में सफलतापूर्वक लागू किया था।

वर्तमान में, यह दर्शन जलवायु न्याय आंदोलनों, सामाजिक समानता के संघर्षों और अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति के लिए एक मार्गदर्शक ढाँचा प्रदान कर सकता है।

सत्याग्रह: नव-उदारवादी नीतियों के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध- वैश्वीकरण की नीतियाँ अक्सर लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं से ऊपर थोप दी जाती हैं। सत्याग्रह, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'सत्य के प्रति आग्रह', इसके विरुद्ध एक शक्तिशाली हथियार है। यह कानून की अवज्ञा नहीं, बल्कि एक उच्चतर नैतिक कानून के पक्ष में सविनय अवज्ञा है।[11] वैश्विक स्तर पर, इसका उपयोग अन्यायपूर्ण व्यापार समझौतों, पर्यावरण-विरोधी नीतियों और मानवाधिकार हनन के विरुद्ध एक वैश्विक नागरिक आंदोलन के रूप में किया जा सकता है। 'वैश्विक सत्याग्रह' की अवधारणा—जैसा कि नाओमी क्लेन जैसे विद्वानों ने अपनी पुस्तक नो इज नॉट इनफ (2014) में प्रस्तावित किया है—जलवायु परिवर्तन जैसे वैश्विक मुद्दों पर सामूहिक नैतिक कार्रवाई का आह्वान करती है।[12] गांधीवादी सत्याग्रह हमें सिखाता है कि नैतिक साहस और सामूहिक कार्रवाई संस्थागत शक्ति को चुनौती दे सकती है।

सर्वोदय: अंतःक्रियाशील विश्व में सामूहिक कल्याण का दर्शन- गांधी का 'सर्वोदय' अर्थात 'सभी का उत्थान' वैश्विक अंतर्निर्भरता के युग का आदर्श दर्शन है। यह दर्शन मानता है कि समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति के उत्थान के बिना सच्ची प्रगति असंभव है।[13] आज, जब विश्व एक 'वैश्विक गाँव' बन गया है, सर्वोदय का दायरा राष्ट्रीय सीमाओं से आगे बढ़कर वैश्विक हो जाता है। इसका अर्थ है कि विकसित देशों की समृद्धि विकासशील देशों की गरीबी पर टिकी नहीं हो सकती। संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य (SDGs) 2030 भी "किसी को पीछे न छोड़ें" के सिद्धांत पर काम करते हैं।[14] गांधीवादी दृष्टि से, वैश्वीकरण का उद्देश्य केवल वस्तुओं और पूँजी का मुक्त प्रवाह नहीं, बल्कि सम्मान, न्याय और कल्याण का साझा प्रवाह होना चाहिए।

व्यावहारिक रूपांतरण - गांधीवाद को वैश्विक क्रिया-योजना में बदलना-

अर्थव्यवस्था: 'गाँधीवादी वैश्वीकरण' की ओर - स्थानीयकरण के माध्यम से वैश्वीकरण

मौजूदा वैश्वीकरण मॉडल की विफलताओं के प्रकाश में, 'ग्लोकलाइजेशन' (ग्लोबल + लोकल) या 'स्वदेशी वैश्वीकरण' की अवधारणा उभर रही है। यह गांधी के 'ग्राम स्वराज' और 'कुटीर उद्योग' के विचारों से गहराई से प्रेरित है। इस मॉडल में-

- वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को छोटा करना: स्थानीय उत्पादन और खपत को प्रोत्साहन, जिससे परिवहन से होने वाला कार्बन उत्सर्जन कम हो और स्थानीय अर्थव्यवस्था मजबूत हो। कोविड-19 महामारी ने लंबी आपूर्ति श्रृंखलाओं की नाजुकता को उजागर किया है।[15]
- नैतिक और हरित व्यापार: व्यापार समझौते पर्यावरण मानकों, श्रमिक अधिकारों और निष्पक्ष मूल्य निर्धारण पर केंद्रित हों। विश्व व्यापार संगठन (WTO) के नियमों में सुधार इस दिशा में आवश्यक है।
- सहकारिता आधारित अर्थव्यवस्था: गांधी सहकारिता को पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों से बेहतर विकल्प मानते थे।[16] अंतर्राष्ट्रीय सहकारी गठजोड़ (जैसे इंटरनेशनल को-ऑपरेटिव अलायंस) वैश्विक बाजार में एक न्यायसंगत विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में लोकतांत्रिक सुधार और 'ग्राम स्वराज' का विस्तार- वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ अक्सर शक्तिशाली देशों के पक्ष में झुकी हुई हैं। गांधी के 'ग्राम स्वराज' के सिद्धांत को वैश्विक स्तर पर लागू करने का अर्थ है बहु-स्तरीय और समावेशी शासन व्यवस्था को बढ़ावा देना।

- संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार और विकासशील देशों को अधिक प्रतिनिधित्व देना।

- वैश्विक नागरिक समाज की भूमिका को मजबूत करना, ताकि नीति-निर्माण में 'अंतिम व्यक्ति' की आवाज सुनी जा सके।
- सब्सिडियरिटी के सिद्धांत को अपनाना: निर्णय सबसे स्थानीय संभव स्तर पर लिए जाएँ, और केवल आवश्यकता पड़ने पर ही उच्च स्तर (राष्ट्रीय या वैश्विक) पर। यूरोपीय संघ का शासन मॉडल इस सिद्धांत से काफी हद तक प्रभावित है।[17]

शिक्षा एवं संस्कृति: 'मानव-केंद्रित विकास' के लिए मूल्य-आधारित शिक्षा- वैश्वीकरण ने शिक्षा को भी एक बाजार उत्पाद में बदल दिया है। गांधी की 'नई तालीम' या 'बुनियादी शिक्षा' इसका प्रतिकार करती है। इसका वैश्विक अनुप्रयोग होगा:

- शिक्षा पाठ्यक्रमों में नागरिक दायित्व, नैतिकता और वैश्विक नागरिकता को शामिल करना। यूनेस्को का ग्लोबल सिटिजनशिप एजुकेशन (GCED) कार्यक्रम इसी दिशा में प्रयासरत है।[18]
- स्थानीय ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के बीच संवाद को बढ़ावा देना। जैव विविधता पर कन्वेंशन ऑन बायोलॉजिकल डाइवर्सिटी (CBD) द्वारा स्वदेशी ज्ञान के संरक्षण पर जोर दिया जा रहा है।[19]
- सादगी और स्थिरता के जीवन मूल्यों को प्रोत्साहित करना, उपभोक्तावादी संस्कृति के विपरीत।

निष्कर्ष: वैश्वीकरण के वर्तमान संकट—असमानता, सांस्कृतिक क्षरण और पारिस्थितिक पतन—यह दर्शाते हैं कि भौतिकवाद पर आधारित विकास मॉडल अपनी सीमा तक पहुँच चुका है। महात्मा गांधी का दर्शन इस संकट के लिए कोई जड़ी-बूटी नहीं, बल्कि एक मौलिक दिशा-परिवर्तन का प्रस्ताव है। यह हमें याद दिलाता है कि वास्तविक प्रगति का मापदंड भौतिक संपदा का संचय नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय और प्रकृति के साथ सामंजस्य है। गांधीवाद हमें 'वसुधैव कुटुम्बकम' (संपूर्ण पृथ्वी एक परिवार है) के आदर्श की ओर ले जाता है, लेकिन इस आदर्श की नींव 'पड़ोसी प्रेम' पर रखता है। अर्थात, वैश्विक एकजुटता तभी सार्थक है जब वह स्थानीय जिम्मेदारी और न्याय से जुड़ी हो। वैश्वीकरण के इस युग में गांधीवाद की बढ़ती प्रासंगिकता इसी तथ्य में निहित है कि यह हमें एक नए प्रकार के वैश्वीकरण का सपना दिखाता है—एक ऐसा वैश्वीकरण जो शोषण पर नहीं बल्कि सहयोग पर, एकरूपता पर नहीं बल्कि विविधता पर, और उपभोग पर नहीं बल्कि संतोष पर आधारित हो। जैसा कि गांधी ने कहा था, "विश्व की गति बदलने के लिए, हमें स्वयं वह बदलाव बनना होगा जो हम दुनिया में देखना चाहते हैं।" वैश्वीकरण के इस दौर में, यह बदलाव गांधीवादी मूल्यों को आत्मसात करके ही संभव है।

संदर्भ सूची (References)

1. स्टिग्लिट्ज़, जोसेफ ई. (2002), ग्लोबलाइज़ेशन एंड इट्स डिसकन्टेंट्स (वैश्वीकरण और इसके असंतुष्ट). न्यूयॉर्क: डब्ल्यू.डब्ल्यू. नॉर्टन एंड कंपनी. पृ. 7
2. ऑक्सफैम इंटरनेशनल. (2023, जनवरी), सर्वाइवल ऑफ द रिचेस्ट: हाउ वी मस्ट टैक्स द सुपर-रिच नाउ टू फाइट इनइक्वलिटी (सबसे अमीर का बचाव: असमानता से लड़ने के लिए अब हमें सुपर-अमीरों पर कर कैसे लगाना चाहिए). ऑक्सफैम ब्रीफिंग पेपर. पृ. 2
3. गांधी, एम.के. (1927), यंग इंडिया, 15 दिसंबर 1927. (महात्मा गांधी के संग्रहित कार्य, खंड 35, पृ. 243
4. गांधी, एम.के. (1940),द थ्योरी ऑफ ट्रस्टीशिप (ट्रस्टीशिप का सिद्धांत). ("द सेलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी", खंड VI, श्रीमान नारायण द्वारा संपादित, 1968, पृ. 318 में)

5. पारेल, एंथोनी जे. (संपा.). (1997). हिन्द स्वराज एंड अदर राइटिंग्स (हिन्द स्वराज और अन्य लेखन). कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. पृ. 38-45
6. यूनेस्को. (2005), कन्वेंशन ऑन द प्रोटेक्शन एंड प्रमोशन ऑफ द डाइवर्सिटी ऑफ कल्चरल एक्सप्रेशन्स (सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की विविधता के संरक्षण और प्रोत्साहन पर अभिसमय). पेरिस: यूनेस्को. अनुच्छेद 1
7. गांधी, एम.के. (1909), हिन्द स्वराज. अध्याय 6: "सभ्यता". (पारेल, 1997 संस्करण, पृ. 71
8. कुमारप्पा, जे.सी. (1945), इकोनॉमी ऑफ परमानेंस (स्थायी अर्थव्यवस्था). वर्धा: ऑल इंडिया विलेज इंडस्ट्रीज़ एसोसिएशन. पृ. 22-30
9. आईपीसीसी. (2023), क्लाइमेट चेंज 2023: सिंथेसिस रिपोर्ट (जलवायु परिवर्तन 2023: संश्लेषण रिपोर्ट). जेनेवा: आईपीसीसी. पृ. 24
10. गांधी, एम.के. (1920), द डॉक्ट्रिन ऑफ द स्वॉर्ड (तलवार का सिद्धांत). यंग इंडिया, 11 अगस्त 1920, महात्मा गांधी के संग्रहित कार्य, खंड 18, पृ. 133
11. बॉन्डुरेंट, जोन वी. (1958), कॉन्क्वेस्ट ऑफ वायलेंस: द गांधियन फिलॉसफी ऑफ कॉन्फ्लिक्ट (हिंसा पर विजय: संघर्ष का गांधीवादी दर्शन). प्रिंसटन: प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस. पृ. 39
12. क्लेन, नाओमी (2014), दिस चेंजेज़ एवरीथिंग: कैपिटलिज़्म वर्सेज़ द क्लाइमेट (इससे सब कुछ बदल जाता है: पूंजीवाद बनाम जलवायु). न्यूयॉर्क: साइमन एंड शूस्टर. पृ. 450-455
13. प्यारेलाल,(1958),महात्मा गांधी: द लास्ट फेज़, वॉल्यूम II (महात्मा गांधी: अंतिम चरण, खंड II). अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 65
14. संयुक्त राष्ट्र (2015), ट्रांसफॉर्मिंग आवर वर्ल्ड: द 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट (हमारी दुनिया का रूपांतरण: 2030 सतत विकास एजेंडा). न्यूयॉर्क: संयुक्त राष्ट्र. प्रस्ताव ए/आरईएस/70/1
15. विश्व बैंक (2022), वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट 2022: फाइनेंस फॉर एन इक्विटेबल रिकवरी (विश्व विकास रिपोर्ट 2022: एक समान पुनरुद्धार के लिए वित्त). वाशिंगटन, डी.सी.: विश्व बैंक. पृ. 150-152
16. गांधी, एम.के. (1941),कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम: इट्स मीनिंग एंड प्लेस (रचनात्मक कार्यक्रम: इसका अर्थ और स्थान). अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 12
17. यूरोपीय संघ, (2007), ट्रीटी ऑफ लिस्बन एमेंडिंग द ट्रीटी ऑन द यूरोपियन यूनियन एंड द ट्रीटी एस्टैब्लिशिंग द यूरोपियन कम्युनिटी (यूरोपीय संघ पर संधि और यूरोपीय समुदाय की स्थापना करने वाली संधि में संशोधन करने वाली लिस्बन संधि), अनुच्छेद 5
18. यूनेस्को,(2015), ग्लोबल सिटिज़नशिप एजुकेशन: टॉपिक्स एंड लर्निंग ऑब्जेक्टिव्स (वैश्विक नागरिकता शिक्षा: विषय और अधिगम उद्देश्य), पेरिस: यूनेस्को. पृ. 15
19. कन्वेंशन ऑन बायोलॉजिकल डाइवर्सिटी (सीबीडी),(1992). आर्टिकल 8(j): ट्रेडिशनल नॉलेज, इनोवेशन्स एंड प्रैक्टिसेज़ (अनुच्छेद 8(j): पारंपरिक ज्ञान, नवाचार और प्रथाएं). रियो डी जनेरो: संयुक्त राष्ट्र

Email- hedayatm60@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 148-150
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

वैदिक संस्कृति में वनस्पति विज्ञान

डा. मीनू तलवाड़
संस्कृत विभागाध्यक्षा,
हंसराज महिला महाविद्यालय, जालन्धर, पंजाब

प्रकृति और मनुष्य का सम्बन्ध अटूट है, वातावरण का प्रभाव मनुष्य के स्वरूप उसकी शारीरिक क्षमताओं, बुद्धि-बल और चिन्तन के विकास आदि पर परिलक्षित होता है। वैदिक वाङ्मय का विकास ही शुद्ध प्राकृतिक वातावरण के बीच में हुआ है यही कारण है कि जितना अधिक उत्कर्ष हमने उस समय किया है उतना हम आज इतने संसाधनों के बीच में भी नहीं कर पा रहे।

ऋषि दयानन्द ने 'ऋग्वेदिदभाष्यभूमिका' में 'वेदविषयविचाराः' प्रकरण में वेद के चार विषय लिखें है- विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान अर्थात् वेदों में चार काण्ड है विज्ञान काण्ड, कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड इनमें से विज्ञानकाण्ड सबसे अधिक महत्वपूर्ण है जहां अध्यात्म ज्ञान आत्मा परमात्मा का बोध करवाता है वहीं भौतिक ज्ञान सभी प्राकृतिक पदार्थों के रहस्य का बोध कराकर प्राकृतिक पदार्थों के उपयोग का बोध मनुष्य को कराता है। वनस्पति शब्द भ्वादि वन् धातु से उभय पद में इसका रूप 'वनोति' और 'वनुते' दोनों ही होता है। भर्तृहरि वन का अर्थ झाड़ी छोटे बड़े पौधों से भरा स्थल भी मानते है एको वासः पत्तने वा वने वा (भर्तृहरि नीतिशतकम्) वैदिक वाङ्मय में वनस्पति की महत्ता स्थान-स्थान पर वर्णित है। सबसे प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में ही वनस्पतियों से सम्बन्धित कई सूक्त है इसी वेद के मन्त्र में कहा गया है कि देवताओं ने सम्पूर्ण भूमण्डल पर वनस्पतियों का निर्माण तीन युगों में किया है।[1] ऋग्वेद में वनस्पतियों को परमेश्वर कहा गया है।[2] वैज्ञानिकों के अनुसार वनस्पतियों का उद्भव दो अरब वर्ष पूर्व का माना गया है। अथर्ववेद में हमारे ऋषियों ने अपने सूक्ष्मावलोकन से जिस तरह वनस्पतियों के विज्ञान को समझा वह आज भी वैज्ञानिकों को शोधपरक चुनौती प्रस्तुत कर रहा है। पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, पेड़, पौधे, जीव-जन्तु आदि से समस्त पृथ्वी-मण्डल का पर्यावरण बनता है। ऋषियों ने प्रकृति के समक्ष स्वयं को पूर्णतः समर्पित किया था। पृथ्वी के प्रति मातृभाव प्रदर्शित करते हुए वह कहता है 'माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः'[3]

वैदिक काल में वनस्पतियों का प्रयोग, उपयोग चिकित्सा कार्य में भी बहुत महत्वपूर्ण माना गया है अतः वनस्पतियों को बढ़ाने की बात कही गई है ऋग्वेद कहता है 'वनस्पति वन आस्थापयध्वम्'।[4] यजुर्वेद में वनस्पतियों को शान्ति का कारण भी बतलाया गया है। 'वनस्पतिं शमितारम्'[5] इसी वेद में पुनः कहा है- हमारे राष्ट्र में पर्जन्य हमारी इच्छानुकूल वर्षा करें (हमारे पौधे फल से युक्त होकर स्वयं पके। हमें अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति हो तथा प्राप्त

वस्तु की रक्षा हो।[6] आधुनिक मानव ने स्थितियां बिल्कुल विपरीत कर दी है। वह आज अपनी अति भोगवादी प्रवृत्ति के कारण प्राकृतिक संसाधनों से खिलवाड़ करता रहा जिसका परिणाम यह हुआ कि हमारे पर्जन्य देव नाराज़ हो गए है कृषिकाल में समयानुकूल वृष्टि के अभाव के कारण फलों को हम जबरदस्ती रसायनों में पका कर खा रहें है। परिणामतः न तो वह स्वादिष्ट रह पाते है न ही पौष्टिक। अन्न एवं वनस्पतियां मानव जीवन का सदा से ही आधार रही है हमारे शास्त्रों में सभी धर्मों का आधार शरीर को कहा है मगर शरीर का आधार वनस्पति एवं अन्न है। शरीर के पुष्टिवर्धन तथा असाध्य रोगों के उपचार आदि के लिए औषधियों की खेती करने का उल्लेख ऋग्वेद (5-83-10, 10-97-1 से 10) में तथा रोगों को दूर करने के लिए औषधियों की चर्चा का बहुत विस्तार से वर्णन है (अश्वत्थ) पीपल को बहुत ही गुणकारी बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण (4-3-3-6) में इसे देव-वृक्ष कहा गया है। अथर्ववेद, अवका और 4-37-8, 2-25-1 से 4, 6-85-1) में अपामार्ग, अवका और पृश्निपर्णी नामक औषधियों का वर्णन है। बेल, उदुम्बर, खदिर (खैर), अजु श्री, कुष्ठ, विमीदक, विसानक, शमी, वर्णावती, जङ्गिड़ और शतावर का वर्णन है। अथर्ववेद (6-10-1) में दूब उगाने की बात भी कही गई है।

अथर्ववेद के अध्ययन से पता चलता है कि ऋषियों का औषधीय ज्ञान अपूर्व था। बहुत विकसित था जो लम्बे अनुभव का परिणाम था। इस वेद के आठवें काण्ड के सातवें सूक्त में औषधियों के रंग, स्वरूप, गुण, धर्म का भी विस्तृत वर्णन है। ऋषि कहते है यह औषधियां भूरे लाल, मटमैले, चितकबरी, नीले, काले रंग की है उन सबको हम बुलाते है।[7] चारों ओर फैलने वाली एक तने वाली, एक जड़ वाली, अनेक जड़ों वाली, अनेक रंगों वाली, पर्वो से युक्त जो अनेक शाखाओं वाली है। वे विश्वदेव सम्बन्धी औषधियां उग्रस्वभाव वाली और जीवनदायिनी है।[8]

ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में वनस्पतियों के प्रकार बताएं गए है जैसे चिकित्सीय पौधे, फ़लदार व छायादार पेड़ (वृक्ष), लताएं एवं झाडियां (वीरुध) और कुछ ऐसे पौधों का भी वर्णन है जिससे काढ़ा एवं रस बनता है। तुलसी, सोम, अश्वत्थ, दूर्वा को पवित्र माना गया। ये केवल धार्मिक प्रतीक नहीं बल्कि स्वास्थ्य और मानसिक शुद्धि से भी जुड़ी है। ऋग्वेद के तीसरे मण्डल के आठवें सूक्त के देवता वनस्पति देव है इस सूक्त में पौधों की उन्नत किसमे वनस्पति शास्त्री द्वारा विकसित करने का भाव प्रकट होता है।[9] अर्जुन की छाल, पीपल एवं खैर, रोहिणी, गुग्गुल, जटामासी इत्यादि सैकड़ो वनस्पतियां जो प्रकृति का अमूल्य उपहार है वनस्पति जगत् पृथ्वी का आवरण है वृक्षों को अपनी बेहिसाब ज़रूरतों को पूरा करने के लिए काटने का अर्थ है पृथ्वी की आयु को कम करना। ऋग्वेद में मात्र वृक्षों के रक्षण ही नहीं नए पेड़ लगाए जाने की प्रेरणा भी मिलती है। आज पर्यावरण प्रदूषण महान् संकट बना हुआ है वैदिक ऋषियों ने इन वनस्पतियों की दिव्यता को बहुत अच्छी प्रकार से समझा। वेदों में वृक्षों को जन्मदाता कहकर उनकी कटाई से मना किया गया उनके संरक्षण को धर्म से जोड़ा गया। यह आज पर्यावरण विज्ञान की मूल भावना से ही पूरी तरह मेल खाता है। अथर्ववेद में वनस्पतियों को सखा कहा गया है मानव मात्र को प्राणवायु प्रदान करने के कारण ऐतरयोपनिषद् का वनस्पति विज्ञान के सम्बन्ध में मत है। प्राणो वै वनस्पति यजुर्वेद में औषधियों के विभिन्न ऋतुओं में उत्पन्न होने का उल्लेख है। सृष्टि के आरम्भ में जो औषधियां देवताओं द्वारा वसन्त, वर्षा, शरद इन तीन ऋतुओं में उत्पन्न हुई। पककर पीत वर्ण से युक्त उन सैकड़ों औषधियों और सप्त धान्यों का ज्ञान हममें है।[11] भारतीय ऋषियों ने वनस्पति विज्ञान को न केवल प्राकृतिक अध्ययन के रूप में लिया बल्कि इसे चिकित्सा कृषि प्राकृतिक अध्ययन के रूप में लिया बल्कि इसे चिकित्सा कृषि अर्थव्यवस्था से जोड़कर उपयोगी भी बनाया। सुश्रुत, चरक, पतंजलि, इत्यादि ऋषियों की विरासत ने भावी पीढ़ियों को अमूल्य सम्पदा से अवगत करवाया है। ऋग्वेद के औषधि सूक्त 10/97 में 23 मन्त्र है। यह चिकित्सा-विज्ञान का एक महत्वपूर्ण आधार है। ऋग्वेद में शारीरिक, मानसिक एवं अदृश्य जैसे तनाव, भय, नकारात्मकता इत्यादि सभी स्तरों पर यह प्रभावी मानी गई है। वेदों के ही यह सिद्धांत आगे चलकर चरक और सुश्रुत संहिता के आधार बनें। वेद वह स्रोत है जिसमें सारा ज्ञान समाहित है वेदों में जो ज्ञान का भण्डार है आज वहीं विज्ञान सिद्ध कर रहा है इस विषय में भी

पुनः एक चिन्तन की आवश्यकता है ताकि वैदिक रहस्य आधुनिक चिन्तकों के सामने आए और नए शोध कार्यों से समाज की उन्नति में एक पहल हो सके यजुर्वेद के शान्ति अध्याय में 'वनस्पतयः शान्ति' कहकर एक बहुत बड़ा सन्देश समाज को दिया गया है।[12] आधुनिक बॉटनी शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के (Botane) शब्द से हुई है जिसका अर्थ शाक (herb) होता है, प्राचीनकाल से ही मानव जाति एवं पौधो का अपना गहरा सम्बन्ध होता है भोजन आवास और कपड़े, औषधियों की आवश्यकता भी व्यक्ति पौधों से ही पूरी करता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनुष्य ने पौधों से संबंधित जानकारियां इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया जिसे आधुनिक युग में 'वनस्पति शास्त्र' का आरम्भ माना जा सकता है। यजुर्वेद में तो औषधियों को माता कहा गया है। वृक्ष संसार की रक्षा करते है उसे प्राणवायु रूपी (आक्सीजन) दूध पिलाते है अतः उन्हें माता कहा गया है।[13] इस प्रकार वैदिक साहित्य में वर्णित वनस्पति विज्ञान अधुनिक विषय विशेषज्ञों के लिए एक नई दिशा निर्धारित कर सकता है। अतः इस प्रकार वेदों के अथाह ज्ञान के सागर में डुबकी लगाकर कुछ मोती चुनकर समाज हित में प्रयोग कर समाज के लिए एक बड़ी देन सिद्ध हो सकती है।

संदर्भ सूची:-

1. या औषधी पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
   मनै नु वभ्रूणामहं शत धामानि सप्त च।। (ऋग्वेद 10.97)
2. अञ्जन्ती त्वाम वरेदेवयन्तो वनस्पते मधुना देव्येन।
   यदूधर्विस्तष्ठा द्रविणे पत्ताद् यद् वा क्षयो मातुरस्य उपस्थे।। (ऋग्वेद 38.1)
3. अथर्ववेद 12/1/12
4. ऋग्वेद 10/101/11
5. यजुर्वेद (28/10)
6. निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः।
   पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।। (यजु. 28/10)
7. या वभ्रवो याश्च शुक्रा रोहिणीरूत पृश्नयः।
   असिक्नीः कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि।। (अथर्व 8/7/1)
8. प्रस्तृणती स्तम्बिनीरेक्शुङ्गा प्रतन्वतीरोषधीरावदामि।
   अंशुमतीः काण्डिनीर्या विशाखा ह्यामि ते विरुधे वैश्वदेवीरूग्राः पुरुषजीवनीः।। (अथर्व 8/7/4)
9. युवा सुवासाः परिवीत आगात्स श्रेयान्भवित जायमानः।
   तं धीरासः कवय उन्नयति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः।। (ऋग्वेद 3.8)
10. ऐतरेयोपनिषद् 2.1.
11. या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुश।
    मनै नु बभ्रूणामहं शतं श्रवामानि सप्त च।। (यजु. 12.75)
12. द्यौ शान्ति अन्तरिक्ष .... (यजु. 36.17)
13. औषधीरीति मातरस्तद्वो देवीरूप ...।
    स्नेयमजवं गां वास आत्मानं तव पूरुष।। (यजु. 12.77)

ईमेल- drmeenutalwar@gmail.com

चलभाष- 8968176726

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 151-156
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना दृष्टि : अस्मिता की खोज तथा प्रतिरोध की अभिव्यक्ति

प्रिंस गुप्ता
पी.एच.डी. शोधार्थी,
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध-सारांश :

यह शोध-पत्र हिंदी दलित साहित्य के महत्वपूर्ण रचनाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना-दृष्टि का विश्लेषण 'अस्मिता की खोज' और 'प्रतिरोध की अभिव्यक्ति' के परिप्रेक्ष्य में करता है। अध्ययन का केंद्रीय उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि वाल्मीकि ने साहित्य को केवल सृजनात्मक अभिव्यक्ति न मानकर सामाजिक न्याय, मानवीय गरिमा और परिवर्तन के औज़ार के रूप में रूपायित किया। उनकी आत्मकथा **जूठन** को दलित जीवन अनुभवों के सामूहिक दस्तावेज़ के रूप में देखते हुए शोध-पत्र यह प्रतिपादित करता है कि अस्मिता-बोध उनके साहित्य का मूल स्वर है, जो व्यक्तिगत पीड़ा से सामूहिक चेतना की ओर विस्तार पाता है। इसी प्रकार उनके काव्य-संग्रह **सदियों का संताप** और **बस! बहुत हो चुका**, तथा कहानी-संग्रह **सलाम** और **घुसपैठिए** में व्यक्त प्रतिरोधी स्वर सामाजिक संरचनाओं की अमानवीयता को चुनौती देते हैं। वाल्मीकि की भाषा अनुभव-आधारित, लोकधर्मी और वैचारिक रूप से प्रतिबद्ध है। उनका प्रतिरोध हिंसक न होकर नैतिक और बौद्धिक है, जो शिक्षा, चेतना और मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना पर आधारित है। इस प्रकार वाल्मीकि जी की रचना-दृष्टि हिंदी साहित्य में एक नए सौंदर्यशास्त्र और आलोचना-दृष्टि का प्रतिमान स्थापित करती है, जो साहित्य को समाज-सापेक्ष और न्यायोन्मुख बनाती है।

बीज शब्द : दलित साहित्य, अस्मिता-बोध, प्रतिरोध-चेतना, सामाजिक न्याय, मानवीय गरिमा, जाति-विमर्श, दलित आत्मकथा, वैचारिक प्रतिबद्धता, सामाजिक यथार्थ,

शोध–पत्र :

हिंदी दलित साहित्य के परिदृश्य में ओमप्रकाश वाल्मीकि का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने साहित्य को केवल सृजन का माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे सामाजिक न्याय और मनुष्यता की पुनर्स्थापना का औज़ार बनाया। उनकी रचना-दृष्टि का मूल स्वर 'अस्मिता की खोज' और 'प्रतिरोध की अभिव्यक्ति' है। वे उन आवाज़ों को शब्द देते हैं जिन्हें सदियों से दबाया गया था। उनके साहित्य में दलित जीवन की यातना, सामाजिक बहिष्कार, श्रम की उपेक्षा, जातिगत अपमान और मनुष्यता के अधिकार के लिए संघर्ष का प्रखर चित्रण मिलता है।

यह शोध-पत्र मुख्य रूप से अस्मिता-बोध और प्रतिरोध के संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचनाओं के जरिए उनकी रचना-दृष्टि का विश्लेषण करता है।

दलित साहित्य की वैचारिक जड़ें भारतीय समाज की जाति-व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष में निहित हैं। डॉ. भीमराव अंबेडकर की विचारधारा ने दलित चेतना को संगठित रूप दिया। **"शिक्षित बनो, संगठित हो, संघर्ष करो"** का उनका आह्वान दलित साहित्य के लिए प्रेरणास्रोत बना। इसी वैचारिक पृष्ठभूमि में ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचनाएँ आकार लेती हैं। उनकी दृष्टि में साहित्य सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है। वे मानते हैं कि साहित्य का उद्देश्य केवल सौंदर्य-बोध नहीं, बल्कि अन्याय के विरुद्ध चेतना जगाना भी है। इसीलिए उनकी रचनाओं में अनुभव की प्रामाणिकता और यथार्थ की तीक्ष्णता स्पष्ट दिखाई देती है।

अस्तित्व और अस्मिता का प्रश्न ही वाल्मीकि जी की लेखन-चेतना का मूल प्रेरक है। यह प्रश्न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं, बल्कि उन सभी वंचित और उत्पीड़ित समुदायों से जुड़ा है, जिन्होंने सदियों तक अपमान, पीड़ा और दमन सहा है। जब शिक्षा और पुस्तकीय ज्ञान के माध्यम से ओमप्रकाश वाल्मीकि को अपने सामाजिक यथार्थ का बोध हुआ, तब उनके भीतर स्वयं की पहचान और अपने समाज के प्रति जागरूकता विकसित हुई। इसी जागृति ने उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति को जन्म दिया। उनकी लेखनी में मुक्ति-संघर्ष की तीव्र अनुभूति और तपे हुए अनुभवों का उग्र वेग दिखाई देता है; साथ ही संवेदनाओं की गहन और सूक्ष्म अभिव्यक्ति भी मिलती है। यह लेखन परंपरागत साहित्यिक मानकों और सौंदर्य-बोध से अलग एक नई दिशा प्रस्तुत करता है। पारंपरिक हिंदी साहित्य जिस सामाजिक यथार्थ और दलित पीड़ा से अनभिज्ञ रहा, उसे वाल्मीकि की रचनाओं ने केंद्र में लाकर स्थापित किया। उपेक्षित समुदायों की करुणा और आक्रोश ही उनके लेखन का वास्तविक आधार बना। अपनी लेखन-प्रक्रिया पर बात करते हुए वाल्मीकि जी लिखते हैं - ***"हिंदी साहित्य में प्रतिष्ठित साहित्यकारों, मानवीय अनुभूतियों और संवेदनाओं की व्याख्या करने वाले विद्वानों व समीक्षकों के अंतःकरण जब संकीर्णताओं और घिनौनेपन से भरे हों, तब चुप कैसे रहा जा सकता है? 'वसुधैवकुटुंबकम' सूत्र वाक्य दोहराने वाले अपने ही धर्म और समाज के एक हिस्से को नरकीय स्थिति में पहुंचाकर उनके मानवीय अधिकार तक छीन ले तो महानता और शब्दों का खोखलापन स्वयं ही नंगा हो जाता है।"*** [1]

हिंदी के अनेक तथाकथित साहित्यकार दलित मुद्दों से कतराते रहे और यदि लिखा भी तो दया या सहानुभूति की दृष्टि से। सवर्ण लेखन दलित जीवन में ठोस परिवर्तन नहीं ला सका; बड़े रचनाकार भी दलित अनुभव का प्रामाणिक प्रतिनिधित्व करने में सफल नहीं हुए। इसलिए ओमप्रकाश वाल्मीकि का मुख्यधारा साहित्य से विश्वास उठ गया और उन्होंने अलग राह चुनी। सामाजिक व्यवस्था ने दलितों को अस्पृश्य बताकर हाशिए पर धकेला और कर्म-भाग्य के नाम पर उनका शोषण किया। अपने ही समाज के इस दमन ने वाल्मीकि को लिखने के लिए प्रेरित किया - यही उनकी लेखनी का मूल कारण बना।

1. आत्मकथा के संदर्भ में :

आत्मकथा भारतीय साहित्य में नई विधा नहीं है, पर इसे स्पष्ट पहचान आधुनिक काल में मिली। प्रारंभ में यह आत्मप्रशंसा तक सीमित थी, किंतु अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से इसका स्वरूप बदला। व्यक्तित्व-बोध और आत्मचेतना बढ़ने पर लेखकों ने अपने जीवनानुभव लिखने शुरू किए। इस प्रकार आत्मकथा लेखन धीरे-धीरे विकसित होकर एक सशक्त साहित्यिक परंपरा बन गया। आत्मकथा लिखना अपने जीवन को पूरी पारदर्शिता के साथ पाठकों के सामने प्रस्तुत करना है, जो सहज कार्य नहीं है। यह विधा साहस की मांग करती है, क्योंकि इसमें निष्पक्षता, ईमानदारी, यथार्थता, प्रामाणिकता और स्पष्ट वक्तव्य आवश्यक होते हैं। हमारी साहित्यिक परंपरा में इन गुणों का अभाव रहा है, इसलिए प्राचीन विधा होने के बावजूद आत्मकथा का विकास अपेक्षित रूप में नहीं हो

सका। **बजरंग बिहारी तिवारी** लिखते हैं कि - ***"आत्मकथा-लेखन की संस्कृति के पिछड़ेपन का कारण शायद यही है कि यह विधा जिस न्यूनतम ईमानदारी की मांग करती है, उसे निभाने का साहस यहां लगभग अनुपस्थित है, पाखंड जहां जीवन शैली का अंग हो, वहां खरेपन की आशा कैसे की जा सकती है?"*** [2]

दलित आत्मकथाएँ महिमामंडन नहीं करतीं, बल्कि लेखक अपने जीवन की कठोर सच्चाइयों को निर्भीकता से उजागर करता है। वे जातिगत अपमान, शोषण और सामाजिक अन्याय के अनुभवों को सामने लाकर जाति-व्यवस्था की अमानवीयता को प्रकट करती हैं। इसीलिए **सुधीश पचौरी** कहते हैं कि - ***"वे नहीं जानते कि दलित लेखन का विमर्श शर्म से शुरू नहीं होता, बल्कि शर्म उतारकर शुरू होता है। क्योंकि शर्म एक ब्राह्मणवादी विमर्श ही है। अनुभवों की विशिष्टता, अनुभव की समग्रता यहां विद्यमान है।"*** [3] दलित आत्मकथाओं ने साहित्य में एक नए विमर्श का सूत्रपात किया है। हिंदी में कल तक जो साहित्य की श्रेष्ठता थी, उस पर इन आत्मकथाओं ने सवालिया निशाना साधा है। **सुधीश पचौरी** कहते हैं- **"दतिल विमर्श के आने के बाद साहित्य वह नहीं रह जाता है जो कहता है कि 'सुरसरी सम सब कहँ हित होई' साहित्य में सबका हित नहीं होता। जिसकी सत्ता वहां बनती है उसी का हित होता है।"** [4] अब तक हिंदी साहित्य में सवर्णों की सत्ता थी और साहित्य भी उसी वर्ग के लिए लिखा जा रहा था। लेकिन दलित विमर्श के आने से एक नयी परम्परा का सूत्रपात हुआ है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा **जूठन** दलित साहित्य की मील का पत्थर है। यह केवल एक व्यक्ति की जीवन-कथा नहीं, बल्कि दलित समाज के सामूहिक अनुभवों का दस्तावेज़ है। 'जूठन' में लेखक ने अपने बचपन से लेकर युवावस्था तक के अनुभवों को अत्यंत मार्मिक और निर्भीक शैली में प्रस्तुत किया है। स्कूल में जातिगत अपमान, समाज में अस्पृश्यता, और श्रम की अवमानना - ये सभी प्रसंग अस्मिता की खोज के संघर्ष को रेखांकित करते हैं। 'जूठन' में अस्मिता की खोज केवल आत्मसम्मान की मांग नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचना को चुनौती देने का साहस भी है। लेखक का यह कथन कि ***"मनुष्य होने के अधिकार के लिए लड़ना पड़ता है"***, उनकी रचना-दृष्टि का मूल है।

2. कहानियों के संदर्भ में :

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियाँ मानवीय मूल्यों और सामाजिक सरोकारों को केंद्र में रखती हैं। उनमें यथार्थ और संवेदना का सशक्त मेल दिखाई देता है, जिसके माध्यम से भारतीय समाज का स्पष्ट चित्र उभरता है। उनकी रचनाएँ विशेषतः दलित जीवन की पीड़ा और संघर्ष को साहित्यिक रूप देती हैं। वे विषय की खोज में बाहर नहीं भटकते, बल्कि उनकी कहानियों की सामग्री उनके अपने जीवन-परिवेश से ही आती है। जिस सामाजिक वातावरण में उनका बचपन बीता, वही उनकी रचनाओं का आधार बनता है और वही उनके कथा-संसार को पोषित करता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं - ***"मेरा पालन-पोषण जिस वातावरण में हुआ, वहाँ सामाजिक ढांचा पूरी तरह सामंतवादी, ब्राह्मणवादी और वर्ण-व्यवस्था पर खड़ा हुआ था। सामाजिक जीवन की जो नारकीयता एक दलित को भोगनी पड़ती है उसका अनुभव भुक्तभोगी ही जान सकता है। शायद वही अनुभव मेरी कहानियों के लिए खाद-पानी का काम कर रहे थे। इसीलिए मैंने जो विषय अपनी कहानियों में उठाए वे मेरे इर्द-गिर्द घटित होनेवाले रोजमर्रा के विषय थे। जिनमें उन अनुभवों का चित्रण था जिसके लिए पारम्परिक सौन्दर्यशास्त्र की कलात्मकता से हटकर नग्न यथार्थ को प्रस्तुत करके ही उस पीड़ा का एहसास हो सकता था।"*** [5]

ओमप्रकाश वाल्मीकि के कहानी-संग्रह सलाम और घुसपैठिए दलित जीवन की विडंबनाओं को चित्रित करते हैं। उनकी कहानियों में पात्र केवल पीड़ित नहीं हैं; वे संघर्षशील भी हैं। 'सलाम' कहानी में दलित पात्र

की आत्मगौरव की भावना, व्यवस्था से टकराती है। 'घुसपैठिए' में सामाजिक बहिष्कार की मानसिकता का तीखा चित्रण है। इन कहानियों में लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि अस्मिता की रक्षा के लिए प्रतिरोध अनिवार्य है। उनकी कथा-दृष्टि यथार्थवादी है, किंतु उसमें संवेदना और करुणा का गहरा स्वर भी है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों के पात्र कल्पित नहीं, बल्कि उनके अपने सामाजिक परिवेश से जुड़े वास्तविक चरित्र हैं। वे स्वाभिमान और आत्मविश्वास की तलाश में संघर्षरत दिखाई देते हैं तथा जातिगत हीनता से मुक्त होने की कोशिश करते हैं। ये पात्र दलित समाज की पीड़ा और संघर्ष को अपने जीवन में ढोते हुए उसे अभिव्यक्ति देते हैं। स्वयं ओमप्रकाश वाल्मीकि जी अपनी कहानियों के पात्रों के विषय में कहते हैं "मेरी कहानियों में दलित पात्र अपनी स्वाभिमान, आत्मविश्वास के लिए संघर्ष करते हैं और जातीय हीनता से मुक्ति होने की जद्दोजहद करते हैं। उनकी कहानियों के पात्र दलित चेतना का मिसाल है। जिसे पढ़कर पाठकों के मन में एक अलग किस्म की ऊर्जा उत्पन्न होती है।

शुरुआती दौर में ओमप्रकाश वाल्मीकि को अपनी कहानियाँ प्रकाशित कराने में अनेक बाधाएँ झेलनी पड़ीं। संपादकों को न उनके विषय स्वीकार्य थे, न उनकी भाषा; परिणामस्वरूप रचनाएँ लंबे समय तक अप्रकाशित रहीं। इन संघर्षों के बावजूद वाल्मीकि ने हार नहीं मानी और दलित अस्मिता के प्रश्न पर अडिग रहे। यही कारण है कि वे हिंदी दलित साहित्य के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। 'घुसपैठिये' कहानी शिक्षण संस्थानों में दलित छात्रों के साथ होने वाले अन्याय और उस पर प्रशासनिक चुप्पी को यथार्थ रूप में उजागर करती है, जहाँ प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को हाशिए पर धकेला जाता है। वहीं 'प्रमोशन' में मजदूर एकता के नारों के बावजूद जातिगत भेदभाव की सच्चाई सामने आती है, जिससे दलित मजदूर स्वयं को ठगा हुआ महसूस करता है। वाल्मीकि को केवल सवर्ण समाज ही नहीं, बल्कि अपने समुदाय के भीतर भी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। 'खानाबदोश' पर राजनीतिकरण का आरोप लगा, 'शवयात्रा' को विभाजनकारी कहा गया और 'अम्मा' को स्त्री-विमर्श के विरोध में माना गया। यही सामाजिक परिस्थितियाँ ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों की आधारभूमि हैं। उनकी रचनाओं का यथार्थ और संवेदनात्मक गहराई इन्हीं अनुभवों से जन्म लेती है। इसलिए ओमप्रकाश वाल्मीकि जी कहते हैं – ***"सामाजिक जीवन की विद्रूपताएं जब नग्नता के साथ मेरे सामने खड़ी होती हैं तब किसी गहरे दबाव के रूप में कहानी उस अंधेरे को चीरकर विकसित होती है।"*** [6] इन सब परिस्थितियों के बावजूद उनकी कहानियों में उभरती दलित चेतना ही उनकी रचनात्मक शक्ति है। यही चेतना सामाजिक जागरूकता का रूप लेकर उन्हें अपने समय और समाज से जोड़े रखती है तथा उनकी कहानियों को जीवंत बनाती है।

3. कविताओं का भीतरी यथार्थ :

ओमप्रकाश वाल्मीकि मूलतः कवि थे और उन्होंने प्रारंभ से ही अभिव्यक्ति के लिए कविता को माध्यम बनाया। कविता में मानवीय संवेदनाओं की व्यापक संभावना होती है, जो उनके सामाजिक अनुभवों से गहराई से जुड़ती है। सामाजिक सक्रियता ने उनकी काव्य-दृष्टि को और तीखा किया। उनके लिए कविता शब्दों का विन्यास नहीं, बल्कि जीवन-संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन का माध्यम थी। सत्तर के दशक में सामने आई दलित रचनाकारों की पीढ़ी ने हिंदी दलित कविता को एक सशक्त सामाजिक आंदोलन का स्वर बना दिया। उसकी तीखी अभिव्यक्ति और प्रतिरोधी तेवरों ने सदियों पुराने जातिगत पूर्वाग्रहों, सामाजिक असमानताओं और वर्णव्यवस्था की अमानवीय संरचना को चुनौती दी। शोषण और दमन से मुक्ति की आकांक्षा ही उसकी केंद्रीय चेतना और ऊर्जा बनी।

ओमप्रकाश वाल्मीकि के काव्य-संग्रह - सदियों का संताप, बस! बहुत हो चुका आदि—प्रतिरोध की तीव्र चेतना से भरे हुए हैं। उनकी कविताओं में दलित जीवन का यथार्थ बिना किसी अलंकारिक आडंबर के प्रस्तुत होता है। वे व्यवस्था से सीधा संवाद करते हैं। उदाहरणतः उनकी कविता में बार-बार यह प्रश्न उठता है कि

क्यों श्रम करने वाला मनुष्य ही अपमानित है? उनकी काव्य-भाषा सरल, तीखी और संप्रेषणीय है। वे प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से सामाजिक विषमता को उद्घाटित करते हैं। 'बस! बहुत हो चुका' शीर्षक ही प्रतिरोध का उद्घोष है - यह अन्याय के विरुद्ध विद्रोह की घोषणा है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में जातिगत पीड़ा अत्यंत तीव्र रूप में व्यक्त हुई है। उनके प्रथम कविता-संग्रह की अधिकांश रचनाएँ जाति-आधारित अत्याचारों के विरुद्ध आक्रोश और प्रतिरोध का स्वर प्रस्तुत करती हैं। इन कविताओं में जाति से उपजे कष्टपूर्ण जीवन का स्पष्ट चित्रण है। दलित के लिए जाति कोई अवधारणा नहीं, बल्कि कठोर यथार्थ है। जिस अमानवीय अनुभव और मानसिक यातना के साथ वह समाज में जीता और बड़ा होता है, उसकी वास्तविक अनुभूति केवल वही कर सकता है। इसीलिए ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी रचनाओं में जाति दंश को स्वीकार करते हुए कहते भी हैं – ***"मेरी रचना प्रक्रिया में जातीय दंश बहुत गहरे हैं। मुझे यह कहने में या स्वीकार कर लेने में भी कोई गुरेज दिखाई नहीं देता कि मेरे लेखन में चाहे कविता हो, कहानी या आत्मकथा हो सभी जगह यह स्वर प्रमुख है।"*** [7]

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविता कल्पनालोक में नहीं, बल्कि जीए गए यथार्थ और गहरी संवेदना में आधारित है। उनकी रचनाएँ सदियों से चले आ रहे शोषण और दमन के विरुद्ध प्रतिरोध की आवाज़ हैं। वे पाठक को मानवीयता के करीब ले जाती हैं, हाशिए पर पड़े लोगों में आशा जगाती हैं और परिवर्तन की चेतना उत्पन्न करती हैं। उन्होंने आरंभ से ही अपनी कविताओं में दलित अस्मिता और पहचान का प्रश्न प्रमुखता से उठाया। मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा उनके काव्य का केंद्रीय उद्देश्य रहा है।

हिंदी दलित आलोचना अभी विकास के चरण में है, फिर भी उसने अपनी विशिष्ट पहचान बना ली है और सामाजिक-साहित्यिक विमर्श में दृढ़ता से अपना पक्ष रखा है। इसने साहित्य को समाज-सापेक्ष और वस्तुनिष्ठ दृष्टि से देखने की पहल की। इसके विपरीत, अनेक पारंपरिक आलोचक दलित साहित्य की अंत:चेतना समझने के बजाय उसे ब्राह्मणवादी-सामंती मानकों से परखते हैं, जिससे वे उसके मर्म तक नहीं पहुँच पाते। ऐसे समय में ओमप्रकाश वाल्मीकि की आलोचना-दृष्टि महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई; उन्होंने दलित साहित्य को नए सौंदर्यबोध से जोड़ते हुए हिंदी साहित्य में एक नया प्रतिमान स्थापित किया।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की भाषा कृत्रिम नहीं है। उसमें लोकजीवन की गंध है। वे शिल्पगत जटिलताओं की बजाय अनुभव की सच्चाई पर बल देते हैं। उनकी शैली में आत्मस्वीकृति और आत्मसंघर्ष की स्पष्टता है। वे अपने समाज की कमजोरियों को भी स्वीकार करते हैं, किंतु साथ ही व्यवस्था की क्रूरता को भी उजागर करते हैं।उनकी भाषा में आक्रोश है, पर वह आक्रोश अराजक नहीं, बल्कि वैचारिक है। यह प्रतिरोध को वैधता प्रदान करता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना-दृष्टि व्यक्तिगत अनुभव से सामूहिक चेतना की ओर बढ़ती है। 'जूठन' में जो व्यक्तिगत पीड़ा है, वह दरअसल दलित समुदाय की सामूहिक स्मृति है। उनके साहित्य में अस्मिता का अर्थ केवल जातीय पहचान नहीं, बल्कि मनुष्य होने का अधिकार है। वे उस सामाजिक संरचना को प्रश्नांकित करते हैं, जिसने दलितों को हाशिए पर धकेल दिया। वाल्मीकि के साहित्य में प्रतिरोध का स्वर बहुआयामी है। कभी वह सीधा आक्रोश है, कभी व्यंग्य, कभी करुणा, तो कभी प्रश्न। उनकी कविताएँ व्यवस्था को चुनौती देती हैं, जबकि कहानियाँ सामाजिक मनोविज्ञान को उजागर करती हैं। 'जूठन' में प्रतिरोध आत्मकथात्मक स्वीकृति के माध्यम से सामने आता है। उनका प्रतिरोध हिंसक नहीं, बल्कि वैचारिक और नैतिक है। वे शिक्षा और चेतना को परिवर्तन का साधन मानते हैं। वाल्मीकि के साहित्य में दलित स्त्री की पीड़ा भी उभरकर आती है। दलित स्त्री दोहरे शोषण की शिकार है—जाति और लिंग दोनों स्तरों पर।'जूठन' में माँ का संघर्ष और श्रम की अवमानना, स्त्री-अस्मिता के प्रश्न

को भी सामने लाती है। इस प्रकार उनकी रचना-दृष्टि केवल जाति-विमर्श तक सीमित नहीं रहती, बल्कि व्यापक सामाजिक संदर्भ ग्रहण करती है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना-दृष्टि का मूल तत्व अस्मिता की खोज और प्रतिरोध की अभिव्यक्ति है। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से दलित समाज की पीड़ा, संघर्ष और स्वाभिमान को स्वर दिया। 'जूठन' जैसी आत्मकथा, 'सदियों का संताप' और 'बस! बहुत हो चुका' जैसे काव्य-संग्रह, तथा 'सलाम' और 'घुसपैठिए' जैसी कहानियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि उनका साहित्य सामाजिक यथार्थ का सशक्त दस्तावेज़ है। उनकी रचना-दृष्टि हमें यह सिखाती है कि साहित्य तब सार्थक होता है, जब वह मनुष्य की गरिमा और न्याय की स्थापना के लिए संघर्ष करे। इस प्रकार ओमप्रकाश वाल्मीकि हिंदी साहित्य में अस्मिता और प्रतिरोध के प्रखर प्रतिनिधि के रूप में स्थापित होते हैं। उनका साहित्य केवल दलित समाज का नहीं, बल्कि समूची मानवता के सम्मान का साहित्य है।

सदर्भ सूची :

1. वाल्मीकि, ओमप्रकाश, मुख्यधारा और दलित साहित्य, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 12
2. तिवारी, बजरंग बिहारी, कागद की लेखी का अंतर, हंस 1997, पृ. 46
3. पचौरी, सुधीश, कुछ उत्तर उपन्यास, कुछ आधुनिक क्षण और कुछ उत्तर औपनिवेशिकवाद, परिवर्तन साहित्य, अंक जनवरी-फरवरी, 2000, पृ. 285
4. वही, पृ. 28
5. वाल्मीकि, ओमप्रकाश, दलित साहित्यः अनुभव, संघर्ष और यथार्थ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 21
6. वही, पृ. 23
7. वाल्मीकि, ओमप्रकाश, दलित साहित्यः अनुभव, संघर्ष और यथार्थ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 21

अन्य सहायक ग्रंथ :

- ओमप्रकाश वाल्मीकि, जूठन, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1997
- ओमप्रकाश वाल्मीकि, सदियों का संताप, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन
- ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस! बहुत हो चुका, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन
- ओमप्रकाश वाल्मीकि, सलाम, नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन
- ओमप्रकाश वाल्मीकि, घुसपैठिए, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन
- भीमराव अंबेडकर, जाति का विनाश, नई दिल्ली: विभिन्न संस्करण
- कंवल भारती, दलित साहित्य की अवधारणा, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन

ई.मेल - prince.gupta.rewa.mp@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 157-161
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की स्थिति: एक अध्ययन

डॉ. अमित कुमार
सहायक प्राध्यापक,
फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, दुबलिया, काँके, राँची.

सारांश :

समावेशी शिक्षा आधुनिक शिक्षा व्यवस्था का एक प्रमुख लक्ष्य है, जिसका उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी व्यक्तिगत भिन्नताओं, क्षमताओं तथा सामाजिक पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना विशेषकर दिव्यांग, सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित, भाषाई अल्पसंख्यक तथा आदिवासी विद्यार्थियों- को समान शैक्षिक अवसर प्रदान कर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराना है। भारत में शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) ने समावेशी शिक्षा को विशेष महत्व प्रदान किया है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करना है। अध्ययन में विद्यालयीय संसाधनों, शिक्षकों की तैयारी, अवसंरचना, शिक्षण-अधिगम प्रक्रियाओं तथा प्रशासनिक समर्थन का परीक्षण किया गया। वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग करते हुए चयनित माध्यमिक विद्यालयों से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया गया।

परिणामों से ज्ञात हुआ कि नीति स्तर पर समावेशी शिक्षा को स्वीकृति प्राप्त है, परंतु विद्यालय स्तर पर संसाधनों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, तथा सहायक उपकरणों की अपर्याप्त उपलब्धता प्रमुख चुनौतियाँ हैं। अध्ययन के आधार पर समावेशी शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु ठोस सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

मुख्य शब्द: समावेशी शिक्षा, माध्यमिक विद्यालय, झारखण्ड, दिव्यांग विद्यार्थी, शैक्षिक समावेशन

प्रस्तावना :

समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) आधुनिक शिक्षा व्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है, जिसका मूल उद्देश्य प्रत्येक बच्चे को- चाहे वह किसी भी सामाजिक, आर्थिक, भाषाई, सांस्कृतिक या शारीरिक भिन्नता से जुड़ा हो- समान शैक्षिक अवसर प्रदान करना है। यह शिक्षा प्रणाली विविधता को स्वीकार करते हुए विद्यालयों को इस प्रकार रूपांतरित करने पर बल देती है कि सभी विद्यार्थी एक साथ सीख सकें और अपनी क्षमताओं का समुचित विकास कर सकें। भारत में समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE, 2009), राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP, 2020) तथा समग्र शिक्षा अभियान जैसी नीतियाँ और कार्यक्रम लागू

किए गए हैं, जिनका उद्देश्य विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (CWSN) सहित सभी विद्यार्थियों को मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ना है।

भारत जैसे बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और सामाजिक रूप से विविध देश में शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि सभी वर्गों के विद्यार्थियों को समान अवसर उपलब्ध कराना भी है। समावेशी शिक्षा इसी विचारधारा पर आधारित है, जो यह मानती है कि प्रत्येक बच्चा, उसकी क्षमता या पृष्ठभूमि चाहे जो भी हो, सामान्य विद्यालयों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार रखता है।

झारखण्ड राज्य जहाँ सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषाई विविधता से परिपूर्ण है। यहाँ बड़ी संख्या में अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अल्पसंख्यक तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के बच्चे विद्यालयों में अध्ययनरत हैं। ऐसे परिदृश्य में समावेशी शिक्षा का प्रभावी क्रियान्वयन विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह न केवल शैक्षिक समानता को बढ़ावा देता है, बल्कि सामाजिक न्याय और समरसता की स्थापना में भी सहायक होता है। माध्यमिक स्तर शिक्षा का वह चरण है जहाँ विद्यार्थियों के बौद्धिक, सामाजिक और भावनात्मक विकास की दिशा तय होती है। अतः इस स्तर पर समावेशी शिक्षा की वास्तविक स्थिति का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है।

यद्यपि सरकार द्वारा समावेशी शिक्षा के लिए अनेक योजनाएँ संचालित की जा रही हैं, तथापि जमीनी स्तर पर इसके क्रियान्वयन में कई चुनौतियाँ देखी जाती हैं, जैसे- अपर्याप्त संसाधन, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, विद्यालयी अवसंरचना की सीमाएँ, सहायक उपकरणों का अभाव तथा शिक्षकों और अभिभावकों में जागरूकता की कमी। विशेष रूप से ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों में इन समस्याओं का प्रभाव अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त बहुभाषिक परिवेश, सामाजिक-आर्थिक विषमताएँ और सांस्कृतिक विविधताएँ भी समावेशी शिक्षा के प्रभावी संचालन को प्रभावित करती हैं।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में "झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की स्थिति: एक अध्ययन" विषय अत्यंत प्रासंगिक है। यह अध्ययन राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के वर्तमान स्वरूप, उपलब्ध संसाधनों, शिक्षकों की तैयारी, विद्यालयी वातावरण तथा नीतियों के वास्तविक अनुपालन की स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास करेगा। साथ ही यह अध्ययन उन बाधाओं और संभावनाओं की पहचान करने में सहायक होगा, जिनके माध्यम से समावेशी शिक्षा को अधिक प्रभावी बनाया जा सके। इस प्रकार यह शोध न केवल शैक्षिक नीतिनिर्माताओं और प्रशासकों के लिए उपयोगी होगा, बल्कि शिक्षकों, शोधार्थियों और समाज के अन्य हितधारकों के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :

समावेशी शिक्षा सामाजिक न्याय और समान अवसर की अवधारणा को साकार करने का माध्यम है। झारखण्ड जैसे राज्य में, जहाँ भाषाई विविधता के साथ ही साथ ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों की बड़ी भागीदारी है, समावेशी शिक्षा की स्थिति का यथार्थ मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। यह अध्ययन निम्न कारणों से महत्वपूर्ण है: यह नीति और व्यवहार के बीच की दूरी को स्पष्ट करेगा। विद्यालयों में उपलब्ध संसाधनों एवं सुविधाओं का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करेगा। शिक्षकों की भूमिका और तैयारी का आकलन करेगा। राज्य सरकार और शिक्षा विभाग को सुधारात्मक कदम उठाने हेतु आधार प्रदान करेगा।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की स्थिति का अध्ययन करना।
2. समावेशी शिक्षा के संदर्भ में विद्यालयीय अवसंरचना और संसाधनों का विश्लेषण करना।
3. समावेशी शिक्षा के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति और तैयारी का अध्ययन करना।

4. समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन में आने वाली प्रमुख चुनौतियों की पहचान करना।

परिकल्पनाएँ :

1. झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा का क्रियान्वयन संतोषजनक स्तर पर नहीं है।
2. ग्रामीण और शहरी माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन में सार्थक अंतर पाया जाता है।
3. प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता समावेशी शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन को प्रभावित करती है।

संबंधित साहित्य की समीक्षा :

विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि समावेशी शिक्षा के सफल क्रियान्वयन के लिए विद्यालयीय वातावरण, शिक्षक प्रशिक्षण, सहायक उपकरण तथा प्रशासनिक समर्थन अत्यंत आवश्यक हैं।

अरोड़ा(2015) ने अपने अध्ययन में निष्कर्ष निकाला कि समावेशी शिक्षा की सफलता काफी हद तक शिक्षकों की सकारात्मक अभिवृत्ति और व्यावसायिक दक्षता पर निर्भर करती है। उनके अनुसार जिन विद्यालयों में नियमित इन-सर्विस प्रशिक्षण आयोजित किए गए, वहाँ समावेशन अधिक प्रभावी पाया गया।

यादव और सिंह (2017) ने माध्यमिक स्तर पर समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन का अध्ययन करते हुए पाया कि सहायक शिक्षण सामग्री और संसाधन कक्ष की उपलब्धता विद्यार्थियों की सहभागिता को बढ़ाती है। उन्होंने विद्यालय प्रबंधन समिति की सक्रिय भूमिका पर भी बल दिया।

UNESCO (2020) की रिपोर्ट के अनुसार विकासशील देशों में समावेशी शिक्षा के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती संसाधनों की असमान उपलब्धता और शिक्षक प्रशिक्षण का अभाव है। रिपोर्ट ने स्थानीय संदर्भ आधारित पाठ्यचर्या विकसित करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

सिंह (2021) के झारखण्ड आधारित अध्ययन में पाया गया कि आदिवासी बहुल क्षेत्रों के विद्यालयों में समावेशी शिक्षा की जागरूकता तो है, परंतु व्यावहारिक क्रियान्वयन सीमित है। विशेष रूप से भाषाई विविधता और अवसंरचना की कमी प्रमुख बाधाएँ पाई गईं। झारखण्ड संदर्भ में किए गए सीमित अध्ययनों से संकेत मिलता है कि नीति स्तर पर प्रगति हुई है, परंतु विद्यालय स्तर पर क्रियान्वयन असमान है। अतः वर्तमान अध्ययन इस शोध अंतर को भरने का प्रयास करता है।

शोध विधि :

शोध की प्रकृति: यह अध्ययन वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि पर आधारित है।

जनसंख्या एवं नमूना : इस अध्ययन में झारखण्ड राज्य के सभी सरकारी एवं सहायता प्राप्त माध्यमिक विद्यालय को रखा गया है। एवं नमूना (Sample) के लिए स्तरीकृत यादृच्छिक नमूना विधि का प्रयोग किया गया। इसमें राज्य के चयनित जिलों से 20 माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया, जिनमें ग्रामीण और शहरी दोनों प्रकार के विद्यालय सम्मिलित थे। प्रत्येक विद्यालय से विषय शिक्षकों को शामिल करते हुए कुल लगभग 60 शिक्षकों को नमूने में लिया गया। साथ ही विद्यालयीय अवलोकन हेतु प्रधानाध्यापक एवं संबंधित अभिलेखों का भी उपयोग किया गया। इस प्रकार चयनित नमूना राज्य में समावेशी शिक्षा की वास्तविक स्थिति को प्रतिनिधित्व करने में सक्षम माना गया।

शोध उपकरण : शिक्षक प्रश्नावली, विद्यालय अवलोकन सूची, साक्षात्कार अनुसूची आदि।

आँकड़ा विश्लेषण: प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत, माध्य तथा तुलनात्मक विश्लेषण द्वारा किया गया।

परिणाम एवं विवेचन: अध्ययन से निम्न प्रमुख निष्कर्ष प्राप्त हुए-

अवसंरचना की स्थिति: अधिकांश विद्यालयों में रैम्प, संसाधन कक्ष और सहायक उपकरणों की कमी पाई गई। केवल कुछ शहरी विद्यालयों में ही न्यूनतम सुविधाएँ उपलब्ध थीं।

शिक्षक तैयारी: कई शिक्षकों ने समावेशी शिक्षा का समर्थन किया, परंतु विशेष शिक्षा प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की संख्या सीमित थी। इससे कक्षा प्रबंधन और व्यक्तिगत सहायता में कठिनाई देखी गई।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया: कक्षाओं में विभेदित शिक्षण (Differentiated Instruction) का प्रयोग सीमित पाया गया। अधिकांश शिक्षक पारंपरिक व्याख्यान पद्धति का उपयोग कर रहे थे।

ग्रामीण- शहरी अंतर: ग्रामीण विद्यालयों में संसाधनों और प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी अधिक स्पष्ट रूप से देखी गई।

प्रमुख निष्कर्ष : समावेशी शिक्षा की अवधारणा के प्रति जागरूकता मौजूद है, पर क्रियान्वयन आंशिक है। भौतिक अवसंरचना अधिकांश विद्यालयों में अपर्याप्त है। विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की कमी एक बड़ी बाधा है। ग्रामीण विद्यालय अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े पाए गए। प्रशासनिक निगरानी को और सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

शैक्षिक निहितार्थ :

यह अध्ययन संकेत देता है कि समावेशी शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए केवल नीतिगत घोषणाएँ पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि विद्यालय स्तर पर ठोस संसाधनों की उपलब्धता, नियमित शिक्षक प्रशिक्षण तथा सतत निगरानी अनिवार्य है। शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में समावेशी शिक्षण रणनीतियों, विभेदित शिक्षण तथा सहायक तकनीकों को अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही झारखण्ड की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता को ध्यान में रखते हुए स्थानीय संदर्भ आधारित समावेशी पाठ्यचर्या का विकास आवश्यक है। इससे विशेष आवश्यकता वाले तथा वंचित वर्ग के विद्यार्थियों की सहभागिता, उपलब्धि और आत्मविश्वास में सार्थक वृद्धि संभव होगी।

सुझाव :

1. सभी माध्यमिक विद्यालयों में बाधारहित (Barrier-free) अवसंरचना विकसित की जाए।
2. शिक्षकों के लिए नियमित समावेशी शिक्षा प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
3. प्रत्येक विद्यालय में संसाधन कक्ष और विशेष शिक्षकों की नियुक्ति की जाए।
4. ग्रामीण विद्यालयों को प्राथमिकता के आधार पर अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध कराए जाएँ।
5. अभिभावकों और समुदाय की सहभागिता बढ़ाई जाए।
6. समावेशी शिक्षा की प्रगति की नियमित निगरानी की जाए।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की दिशा में उल्लेखनीय प्रयास किए जा रहे हैं, परन्तु इसकी प्रभावशीलता अभी अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाई है। सरकारी नीतियों, समग्र शिक्षा अभियान तथा शिक्षा के अधिकार अधिनियम के माध्यम से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों और वंचित वर्गों को मुख्यधारा की शिक्षा से जोड़ने की पहल सराहनीय है। अनेक विद्यालयों में नामांकन बढ़ा है और समावेशी दृष्टिकोण के प्रति जागरूकता में भी कुछ वृद्धि देखी गई है। फिर भी अध्ययन यह संकेत देता है कि जमीनी स्तर पर कई संरचनात्मक और प्रक्रियात्मक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। प्रशिक्षित एवं संवेदनशील शिक्षकों की कमी, समावेशी शिक्षण-प्रशिक्षण का अभाव, सहायक उपकरणों और संसाधनों की अपर्याप्त उपलब्धता, तथा विद्यालयी अवसंरचना की सीमाएँ प्रमुख बाधाओं के रूप में सामने आई हैं। विशेष रूप से ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों के विद्यालय इन समस्याओं से अधिक प्रभावित पाए गए।

अतः आवश्यक है कि समावेशी शिक्षा को केवल नीतिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि व्यवहारिक स्तर पर भी सुदृढ़ बनाया जाए। यदि इन पहलुओं पर समन्वित और सतत प्रयास किए जाएँ, तो झारखण्ड के माध्यमिक विद्यालयों

में समावेशी शिक्षा अधिक प्रभावी और सार्थक रूप में स्थापित हो सकती है, जिससे सभी विद्यार्थियों को समान, गुणवत्तापूर्ण और सम्मानजनक शिक्षा का अवसर प्राप्त होगा।

संदर्भ सूची :

1. अरोड़ा, क.(2015), समावेशी शिक्षा में शिक्षकों की अभिवृत्ति और व्यावसायिक दक्षता का अध्ययन. एपीएच पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, 2015.
2. यादव, र., और प. सिंह. (2017), "माध्यमिक स्तर पर समावेशी शिक्षा का क्रियान्वयन: एक अध्ययन." भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका, खंड 42, अंक 2, 2017, पृ. 115–128.
3. सिंह, अ. (2021) "झारखण्ड के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में समावेशी शिक्षा की स्थिति."झारखण्ड शिक्षा समीक्षा, खंड 9, अंक 1, 2021, पृ. 55–67.
4. यूनेस्को.(2020),सभी के लिए समावेशी शिक्षा: वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट. यूनेस्को,
5. शर्मा, र.(2018), "समावेशी शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वयन में विद्यालयीय वातावरण की भूमिका." शिक्षा और समाज, खंड 6, अंक 1, 2018, पृ. 23–31.
6. वर्मा, एस. (2019) शिक्षक प्रशिक्षण और समावेशी कक्षा प्रबंधन. यूनिवर्सल पब्लिशर्स, 2019.
7. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी).(2016), समावेशी शिक्षा: शिक्षकों के लिए दिशानिर्देश.एनसीईआरटी, 2016.
8. मिश्रा, डी.(2022),"बहुभाषी कक्षाओं में समावेशी शिक्षण की चुनौतियाँ."भारतीय शिक्षाशास्त्र जर्नल, खंड 11, अंक 3, 2022, पृ. 140–152.
9. झारखण्ड शिक्षा परियोजना परिषद.(2021), झारखण्ड में समावेशी शिक्षा की प्रगति रिपोर्ट.जेईपीसी, 2021.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 162-165
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

एआई के दौर में एक इतिहासकार की सामाजिक भूमिका

Jatin
Net history,
Ignou
1274 Vpo Dahola, District – Jind

सारांश

इतिहासकार पुरानी किताबों की धूल से जन्मा—कभी स्याही से, कभी पत्थर पर उकेरी लकीरों से। आज वह धूल डिजिटल है, लेकिन काम वही रहता है: कहानियाँ निकालना। वे कहानियाँ जो एआई के चमकते स्क्रीनों में दब गई हैं, जिन्हें मशीनें "पुराना" कहकर हटा देती हैं। पर ये कहानियाँ पुरानी नहीं—वे ज़िंदा हैं। वे हमारी नसों में बहती हैं, गाँवों की मिट्टी में साँस लेती हैं।

कहानियाँ ही दुनिया बनाती हैं। यूवाल नोआ हरारी कहते हैं—सभ्यता कहानियों पर टिकी है। कोई राष्ट्र तब तक नहीं बनता, जब तक कोई कहानी न बने: "हम सब एक हैं।" कोई धर्म तब तक नहीं, जब तक कोई न बुनता: "ये हमारा भगवान है।" मार्क्स ने इसे अफीम कहा, पर वह अफीम भी एक कहानी थी—गरीब को सहारा, अमीर को वैधता। भारत में ये कहानियाँ पत्थरों से शुरू हुईं—अजंता की गुफाओं के रंगों से, हड़प्पा की ईंटों की चुप्पी से, जब "इंडिया" नाम भी नहीं था।

इन कहानियों को खोदने वाले इतिहासकार पुल हैं। आर.सी. मजूमदार ने दिखाया कि भारत एक नहीं, कई सभ्यताओं का मेल है। इरफ़ान हबीब ने मुग़ल काल के किसान विद्रोहों को स्वाभिमान का पहला कदम बताया। रामचंद्र गुहा ने सिद्ध किया कि 1947 के बाद का भारत भी पुरानी जड़ों से बना—जैसे पुराना पेड़, जिसकी जड़ें अभी भी गहरी हैं। ये किताबें नहीं, पहचान के धागे हैं।

एआई 1857 का विद्रोह बता सकता है—तारीख़, नाम, जगह। लेकिन वह नहीं समझ सकता कि मंगल पांडे ने बंदूक उठाकर सिर्फ़ गोली नहीं, एक आवाज़ छोड़ी थी। वह आवाज़ आज भी दिल्ली की गलियों में गूँजती है—किसान के ट्रैक्टर पर, माँ के बच्चे को सुनाई कहानी में: "तुम्हारे दादा ने आज़ादी के लिए लड़ाई लड़ी।" ये आवाज़ें डेटा नहीं, दिल की धड़कन हैं। इतिहासकार इन्हें डेटा से बाहर निकालकर ज़िंदा रखते हैं।

कुंजी शब्द:

समावेशी दृष्टिकोण, अपवाद, डेटा-चालित, मानवीय भावनाएँ, दायित्व, सभ्यता, जड़ें, गलतियाँ, उपलब्धियाँ, दिशा, जानकारी की असमानता, हाशिए के समूह, अवसाद, अकेलापन, पुरातन काल, , उपनिषद, पुराण, होमर, युवाल नोआ हरारी, ई.एच. कार, रामचंद्र गुहा।

प्रस्तावना

समाज एक इतिहासकार से आज भी वही प्रश्न पूछता है जो दशकों से पूछा जाता रहा है: तुम्हारे युद्ध, तारीखें और फैक्ट्स—इनका आम आदमी की ज़िंदगी में क्या योगदान है? यह प्रश्न इतिहासकार को चुनौती देता है। उसका कार्य केवल तथ्यों को संग्रहित करना नहीं, अपितु समाज की दिशा को समझना है—पिछली सदियों में कौन-सी विचारधाराएँ हमें आगे ले गईं, कौन-सी पीछे धकेलीं। वह मानवता को उसकी गलतियों का बोध कराता है, साथ ही उन उपलब्धियों का गौरव भी—जिन्हें हमने अपनी मेहनत से हासिल किया।

वह सच्चाई को सामने रखता है—न कि भावनात्मक या मनोवैज्ञानिक कथाएँ। जब वह सत्य को जनता के समक्ष प्रस्तुत करता है, तभी वह इतिहास बनता है। ई.एच. कार ने कहा था: "इतिहास तथ्यों का ढेर नहीं, बल्कि वर्तमान से अतीत का निरंतर संवाद है।" ब्रॉडहिल ने लिखा: "अतीत यदि मृत हो गया, तो वर्तमान भी निर्जीव हो जाएगा।"

भारतीय संदर्भ में रामचंद्र गुहा ने भी यही भाव व्यक्त किया: "इतिहास केवल घटनाओं का क्रम नहीं—यह उस समाज की आत्मा है जो अपनी जड़ों से जुड़ी रहती है।"

आज के एआई-युग में यह भूमिका और महत्वपूर्ण हो जाती है। एआई डेटा दे सकता है—तारीखें, नाम, घटनाएँ—पर वह भावनाओं को नहीं समझता। वह मंगल पांडे की बंदूक को सिर्फ़ एक हथियार देखता है, न कि एक आवाज़, एक गुस्सा, एक उम्मीद। एआई डेटा-चालित है, उसके पास दर्द या गर्व नहीं।

इतिहासकार समाज का हिस्सा है—उसके हित उसी समाज से जुड़े हैं। वह उसी मिट्टी में साँस लेता है, उसी आज़ादी की लड़ाई में शामिल रहा। इसलिए वह डेटा से आगे जाकर सच्चाई को जीवंत रखता है। एआई के दौर में भी इतिहासकार ज़रूरी है।

एआई की छाया में इतिहासकार का नया दायित्व

पुरातन से ही इतिहासकार समाज की रीढ़ रहे हैं। होमर ने ग्रीक दुनिया को शौर्य और नैतिकता की वो कहानियाँ दीं, जो आज भी उनके चरित्र को आकार देती हैं। भारत में महाभारत-रामायण ने दिशा तय की—क्या सही, क्या गलत, जीवन कैसे बिताना। उपनिषदों ने सच्चा अर्थ बताया, पुराणों ने संस्कृति को जीवित रखा—भावना और वास्तविकता को बिना झूठ के जोड़कर। ये सब इतिहासकारों ने हाथों से बुना, न कि किसी मशीन ने।

एआई डेटा उगल सकता है, समस्याएँ सुलझा सकता है—पर वो समाज की आत्मा नहीं बना सकता। आज अवसाद फैल रहा है, लोग जड़ों से कट रहे हैं, अकेलापन हर कोने में घुस रहा है। स्क्रीन सब दिखाती है, पर वो गर्माहट नहीं देती। वो गर्व नहीं देती। वो वो बंधन नहीं देती जो सदियों की कहानियों से बनता है।

इतिहासकार अब और ज़रूरी हो गया है। वो सिर्फ़ पुरानी बातें नहीं दोहराता—वो पूछता है: "तुम कौन हो? तुम्हारी साँसें कहाँ से आती हैं?" वो गलतियों से सिखाता है, उपलब्धियों से गर्व भरता है। एआई की ठंडी दुनिया में वो आखिरी आग है जो कहती है—"हमारी कहानी अभी खत्म नहीं हुई।" समाज की दिशा अब भी उसके हाथों में है—क्योंकि वो निर्माण करता है, जो कोड कभी नहीं कर सकता।

इतिहासकार का समावेशी दृष्टिकोण: अपवादों की आवाज़ में छिपी सच्चाई

एआई डेटा-प्रधान है। वह अधिकतम उपलब्ध जानकारी पर केंद्रित रहता है—जिसका ट्रेंड अधिक है, उसी को प्राथमिकता देता है। अल्पविकसित या हाशिए पर पड़ी घटनाएँ उसके लिए प्रायः अदृश्य रह जाती हैं। परिणामस्वरूप, जानकारी की असमानता बढ़ती है—कुछ समूह प्रमुखता पाते हैं, अन्य उपेक्षित रह जाते हैं।

युवाल नोआ हरारी ने चेतावनी दी: "एआई इतिहास नहीं देता—वह डेटा देता है। और डेटा में वे कहानियाँ खो जाती हैं जो कम लोगों ने जिए।" बाराक ओबामा ने भी कहा: "इतिहास हर आवाज़ को महत्व देता है—चाहे वह कितनी छोटी हो। एआई यदि केवल बड़े डेटा को देखे, तो हमें आधा इंसान बना देगा।"

इतिहासकार मानवीय भावनाओं से संपन्न होता है—सहानुभूति, जिज्ञासा, संवेदना। वह अपवादों को पहचानता है। वह समझता है कि किसी घटना या समूह का कम उल्लेख सामाजिक पक्षपात, शक्ति-असंतुलन या उपेक्षा का परिणाम हो सकता है। वह उन कमियों को छिपाता नहीं—उन्हें उजागर करता है। वह पूछता है: "क्यों इसकी अनदेखी हुई?" और फिर उसकी खोज करता है।

एआई यह नहीं कर सकता, क्योंकि उसके पास भावनाएँ नहीं—केवल आंकड़े हैं। इतिहासकार जानकारी के घाट को भरता है। वह हाशिए के समूहों को मुख्यधारा से जोड़ता है—न केवल तथ्यों से, अपितु उनकी कथा, पीड़ा और जीत से।

इस प्रकार, आज के युग में इतिहासकार का दायित्व केवल अभिलेखन नहीं—समावेश सृजन है। वह अपवादों को आवाज़ देता है, क्योंकि सच्चाई तब पूर्ण होती है, जब सबकी कथा समाहित हो।

आने वाली पीढ़ी के लिए: इतिहासकार की नई आँखें, कल की चुनौतियों में

आज का दौर डेटा का युग है—एक क्लिक में सारी जानकारी सामने आ जाती है। पर यह सुविधा ही अब सबसे बड़ी चुनौती बन गई है। जानकारी की कमी अब समस्या नहीं—उसका अतिरेक समस्या है। सत्यता की जाँच, विश्वसनीयता का निर्धारण, और उसमें छिपी भावनाओं का संरक्षण—ये सब नए इतिहासकारों के कंधों पर आ गया है।

आने वाली पीढ़ी के इतिहासकारों का दायित्व अब केवल अभिलेखन नहीं—वह इतिहास को एक जीवंत सर्जन के रूप में बनाए रखना है। उन्हें डिजिटल बाढ़ में से सच्चाई छाँटनी होगी, अप्रासंगिक को अलग करना होगा, और जो बचा है उसे समाज की धड़कन बनाना होगा। उनका काम समाज के उन सूत्रों की रक्षा करना है—जो सदियों की मेहनत से बने, जो जड़ों से जुड़े हैं। ये सूत्र केवल तथ्य नहीं—ये पहचान हैं, बंधन हैं, जो समाज को एक रखते हैं। महात्मा गांधी ने कहा था: "अंतिम व्यक्ति तक पहुँचो—वही समाज का सच्चा मापदंड है।" इसी भावना में नए इतिहासकारों को काम करना होगा—समावेशन को अंतिम छोर तक ले जाना, कोई पीछे न छूटे। रामचंद्र गुहा ने भी लिखा: "इतिहास की सच्ची शक्ति उसकी जड़ों में है, न कि केवल शीर्ष पर।"

ये नई पीढ़ी इतिहास को नई ऊँचाइयों पर ले जाएगी—पर उसकी नींव पुरानी रहेगी। वे उपलब्धियों को संभालेंगे, गलतियों से सिखाएंगे, और समाज को उस दिशा में ले जाएंगे जो सदियों की मेहनत से अर्जित हुई। क्योंकि इतिहास अब केवल किताब नहीं—वह समाज का जीवित ताना-बाना है। और उस ताने-बाने को मजबूत रखने की ज़िम्मेदारी अब उनके हाथों में है।

इतिहास मानव समाज का साझी धरोहर

समाज को आज यह स्वीकार करना होगा कि इतिहास कोई मात्र संख्यात्मक संग्रह नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक-नैतिक निर्माण है—जिसकी व्याख्या और संरक्षण में मानवीय संवेदना, संदर्भ और अपवादों की गहराई अनिवार्य है। यदि हम इसे डेटा-प्रेरित एल्गोरिदम्स के हवाले कर देंगे, तो वह मात्र पैटर्न-आधारित कथा बन जाएगा—जिसमें लाभ-हानि की गणना तो होगी, पर हाशिए पर खड़े व्यक्तियों की अनसुनी आवाज़ें, उनकी अनियमितताएँ और भावनात्मक सत्य हमेशा के लिए खो जाएँगे। एआई की तर्क-व्यवस्था अपवादों को 'शोर' मानती है, जबकि असली इतिहास उन अपवादों में ही साँस लेता है—जो मानवता की सीमाओं को तोड़ने की उस जिद को जीवित रखते हैं, जिसके बिना हमारा विकास स्थिर हो जाएगा। इसलिए, समाज की ज़िम्मेदारी है कि वह इतिहास को मशीन

की निष्पक्षता पर नहीं, बल्कि मानवीय विवेक और सांस्कृतिक निरंतरता पर टिकाए रखे। जैसा कि अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था: "I like the dreams of the future better than the history of the past"—परंतु यह सपना तभी साकार होगा, जब हम इतिहास को जीवित रखें, न कि उसे डिजिटल साँसों में कैद कर दें।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के शब्दों में: "Heritage is not only history, it is a shared consciousness of humanity"—जो हमें याद दिलाता है कि इतिहास सिर्फ़ अतीत नहीं, बल्कि हमारी सामूहिक चेतना है, जिसे कोई एल्गोरिदम कभी नहीं समझ सकता।

निष्कर्ष

इतिहासकार सदियों से समाज की एक अदृश्य रीढ़ रहे हैं—न स्वार्थ से, न लालच से, बल्कि एक गहरी, निःस्वार्थ सेवा से। उन्होंने घटनाएँ नहीं, आत्माएँ संभालीं। नाम नहीं चमकाए—खुद अक्सर अंधेरे में रह गए। फिर भी, उनके हाथों ने राष्ट्र बनाए, धर्म बुने, पहचानें गढ़ीं।

एआई के इस युग में उनकी भूमिका पर सवाल उठ रहे हैं। फैक्ट्स अब हवा में उड़ते हैं—एक क्लिक, और सब सामने। लेकिन ये तेज़ी सिर्फ़ सतह को छूती है। वो गहराई नहीं छूती जहाँ दर्द बसता है, जहाँ गर्व जन्म लेता है, जहाँ समाज की साँसें एक-दूसरे से जुड़ी होती हैं। एआई डेटा देता है—पर वो वो बंधन नहीं देता जो कहानियों से बनता है।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा था: "विकास की असली कसौटी तीन हैं—आर्थिक उन्नति, गरीबी का अंत, और सबसे ऊपर: हमने अपनी संस्कृति, अपनी पहचान, अपने मूल्यों को कितना संभाला।" इतिहासकार इसी तीसरे पैमाने के रखवाले हैं। वे वो आखिरी लौ हैं जो एआई की ठंडी रोशनी में भी जलती रहती है।

समाज को अब ऋणी होना चाहिए—उनसे जो चले गए, उनका सम्मान करना चाहिए। उनकी कहानियाँ अगर भूलीं गईं, तो हमारी जड़ें भी सूख जाएँगी।

और हाँ—उनकी भूमिका खत्म नहीं हुई। वो अब और ज़रूरी हो गई है। एआई दुनिया को तेज़ बना सकता है, पर इतिहासकार उसे जीवित रखते हैं। वे समाज की दिशा बदल सकते हैं—नई पीढ़ी को वो पुरानी आग सौंपकर, जो कभी नहीं बुझी। क्योंकि दुनिया कोड से चल सकती है, लेकिन वो कहानियों से साँस लेती है। और वो कहानियाँ—इतिहासकार ही, आज भी, कल भी, ज़िंदा रखेंगे।

संदर्भ सूची

1. हरारी, युवाल नोआ. सैपियंस.
2. कार, ई.एच. What is History?.
3. गुहा, रामचंद्र. India After Gandhi.
4. कलाम, ए.पी.जे. अब्दुल. Ignited Minds.
5. ओबामा, बाराक. A Promised Land.
6. मजूमदार, आर.सी. Ancient India.
7. हबीब, इरफ़ान. The Agrarian System of Mughal India.
8. होमर. इलियड और ओडिसी.
9. महाभारत एवं रामायण.
10. उपनिषद् एवं पुराण.

9306653846 , jatin.nehra.11@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 166-170
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के संचालन में ई-गवर्नेंस की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० विजयलक्ष्मी देवांगन
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान,
पं देवी प्रसाद चौबे शासकीय महाविद्यालय साजा जिला बेमेतरा छ.ग.

की वर्डस :– सामाजिक सुरक्षा, लोक कल्याण, ई-गवर्नेंस, शासकीय योजनाएं, प्रशासनिक दक्षता, तकनीकी अवसंरचना, संचार प्रौद्योगिकी।

सारांश :- भारतीय संविधान में निहित राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांत सामाजिक न्याय एवं सामाजिक सुरक्षा पर विशेष बल देते हैं। सामाजिक सुरक्षा से आशय उस व्यवस्था से है जिसके माध्यम से समाज अपने सदस्यों को जीवनकाल में उत्पन्न होने वाली आकस्मिक परिस्थितियों जैसे बीमारी, वृद्धावस्था, दुर्घटना, बेरोज़गारी, असमर्थता एवं अभाव से संरक्षण प्रदान करता है। संविधान के नीति-निर्देशक सिद्धांतों में यह स्पष्ट किया गया है कि राज्य अपनी आर्थिक क्षमता एवं विकास की सीमाओं के भीतर, कार्य करने का अधिकार, शिक्षा, सार्वजनिक सहायता तथा सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु प्रभावपूर्ण उपाय करेगा। भारतीय शासन-व्यवस्था में सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ नागरिकों के जीवन-स्तर को सुरक्षित एवं सुदृढ़ बनाने का एक महत्वपूर्ण साधन हैं। वैश्वीकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के साथ शासन के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन हुए हैं, जिनमें ई-गवर्नेंस (Electronic Governance) एक प्रमुख अवधारणा के रूप में उभरा है। ई-गवर्नेंस ने प्रशासनिक प्रक्रियाओं को डिजिटल माध्यमों से अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी एवं दक्ष बनाया है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में ई-गवर्नेंस की भूमिका का विश्लेषण करना है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि डिजिटल तकनीकों के प्रयोग से लाभार्थी की पहचान, सेवा वितरण, पारदर्शिता, भ्रष्टाचार-नियंत्रण तथा प्रशासनिक दक्षता में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। साथ ही, अध्ययन में डिजिटल विभाजन, तकनीकी संरचना, डेटा की सुरक्षा एवं जागरूकता जैसी चुनौतियों पर भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तावना :- सामाजिक सुरक्षा किसी भी कल्याणकारी राज्य की आधारशिला मानी जाती है। इसका उद्देश्य अपने नागरिकों के लिए उत्तम जीवन की व्यवस्था करना है। भारत में सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ आर्थिक एवं सामाजिक न्याय की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। संविधान में निहित राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांत सामाजिक सुरक्षा एवं जन-कल्याण के प्रति राज्य की प्रतिबद्धता को रेखांकित करते हैं। सामाजिक सुरक्षा को समाज में मूर्त रूप देने हेतु समय समय पर अनेकों प्रयास किए गए है। विभिन्न योजनाओ के माध्यम से सामाजिक सुरक्षा की दिशा में कार्य किया जा रहा है, जैसे प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना, प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना और अटल पेंशन योजना द्वारा नागरिकों की सामाजिक सुरक्षा को सुनिश्चित करने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। इसके अलावा भी सरकार द्वारा सामाजिक सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए कई योजनाए चलाई जा रही हैं,प्रधानमंत्री जन धन योजना, स्वास्थ्य बीमा योजना, अन्त्योदय योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना, ग्रामीण कौशल विकास योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, सुकन्या समृद्धि योजना एवं मनरेगा जैसे अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे है। ताकि प्रत्येक नागरिक के हितों की रक्षा हो सके। आधुनिक युग में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के तीव्र विकास ने शासन-प्रणाली को आधुनिक स्वरूप प्रदान किया है। प्रशासनिक सेवाओं में तकनीकी हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप ई-गवर्नेंस की अवधारणा विकसित हुई, जिसका उद्देश्य नागरिकों को सरल, त्वरित एवं पारदर्शी सेवाएँ उपलब्ध कराना है। ऐसे मे इन सभी योजनाओ का संचालन भी डिजिटल माध्यमों के द्वारा किया जा रहा है चाहे वह डाटा का संधारण हो अथवा नगद भुगतान इन सभी क्रियाओ को डिजिटल माध्यम से प्रशासन नागरिकों तक सफलता पूर्वक पहुंचाने का प्रयास कर रही है।सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा ,इतिहास ऍव उद्देश्य :- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसका सम्पूर्ण अस्तित्व सामाजिक जीवन के इस ताने बने मे बस हुआ है व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक है, व्यक्ति समाज के बिना अपने अच्छे जीवन की परिकल्पना भी नहीं कर सकता वही व्यक्तियों के सहयोग से ही समाज का निर्माण होता है। मानव इतिहास पर नजर डालें तो व्यक्ति प्राचीन काल से ही सुरक्षा की खोज में रहा है जो उसे समाज से मिलती भी रही है तथापि मनुष्य का जीवन सहज और आर्थिक जीवन अपेक्षाकृत सरल था।सामाजिक जीवन पारस्परिक सहयोग और सामुदायिक कल्याण ऍव सहभागिता के द्वारा संचालित था व्यक्तियों की समस्याओं का निराकरण भी स्थानीय स्तर पर हो जाता था। किन्तु औद्योगिक क्रांति, पूंजीवाद और आर्थिक असमानता ने उत्पादन, श्रम और आय के स्वरूप को बदल दिया जिसके फलस्वरूप आर्थिक विषमताओं की खाई और बड़ी होती गई।

इन्हीं परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता अनुभव की गई। सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा अत्यंत व्यापक है, जिसमें मानवीय, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सभी आयाम समाहित हैं। समय और परिस्थितियों के अनुसार इसकी परिभाषा एवं आशय विकसित होते रहे है। सामाजिक सुरक्षा के अर्थ को स्पष्ट करने हेतु विभिन्न विद्वानों एवं संस्थाओं ने परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। सर विलियम बेवरीज़ के अनुसार "सामाजिक सुरक्षा से आशय समाज द्वारा आधुनिक जीवन की आकस्मिकताओं—जैसे बीमारी, बेरोज़गारी, वृद्धावस्था, औद्योगिक दुर्घटनाएँ तथा अशक्तता—के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करने से है। ये ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनसे व्यक्ति अपनी निजी सामर्थ्य या दूरदर्शिता के आधार पर प्रभावी रूप से नहीं निपट सकता। "अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के अनुसार "सामाजिक सुरक्षा वह संरक्षण है, जो समाज उपयुक्त संगठनों के माध्यम से अपने सदस्यों को उन जोखिमों एवं आकस्मिकताओं के विरुद्ध प्रदान करता है, जिनका सामना व्यक्ति अकेले या निजी संसाधनों से प्रभावी ढंग से

नहीं कर सकता। इन जोखिमों में प्रमुख हैं—बीमारी, मातृत्व, बेरोज़गारी, कार्यस्थल दुर्घटनाएँ, विकलांगता, वृद्धावस्था तथा मृत्यु।"

इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि सामाजिक सुरक्षा का मूल उद्देश्य व्यक्ति को जीवन की अनिश्चितताओं से संरक्षण प्रदान करना तथा न्यूनतम जीवन स्तर सुनिश्चित करना है।

सामाजिक सुरक्षा का इतिहास :- सामाजिक सुरक्षा की आधुनिक अवधारणा का उद्गम जर्मनी में माना जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जर्मन चांसलर ओट्टो वॉन बिस्मार्क के नेतृत्व में सामाजिक बीमा संबंधी कानून बनाए गए। वर्ष 1883 में जर्मनी में बीमारी बीमा कानून लागू किया गया, जिसके अंतर्गत श्रमिकों को स्वास्थ्य संबंधी सुरक्षा प्रदान की गई। इसके पश्चात अन्य यूरोपीय देशों ने भी इस प्रकार की व्यवस्थाओं को अपनाया। सामाजिक सुरक्षा का अभिप्राय ऐसी संस्थागत व्यवस्थाओं से है, जिनके माध्यम से समाज एवं राज्य नागरिकों को आकस्मिक जोखिमों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। यह केवल आर्थिक सहायता तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें स्वास्थ्य-सुरक्षा, बीमा, पेंशन, आवास, मातृत्व-सहायता एवं अन्य कल्याणकारी उपाय भी सम्मिलित हैं।

सामाजिक सुरक्षा के प्रमुख उद्देश्य न्यूनतम जीवन-स्तर की गारंटी, आर्थिक एवं सामाजिक असमानताओं में कमी, जोखिम-प्रबंधन एवं सुरक्षा, सामाजिक न्याय एवं समावेशन है। भारत में विभिन्न सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ समाज के विविध वर्गों, विशेषकर आर्थिक, सामाजिक रूप से कमजोर, श्रमिक, महिलाएँ एवं वृद्धजन को लक्षित करती हैं।

ई-गवर्नेंस की अवधारणा :- ई-गवर्नेंस (E-Governance) को समझने से पूर्व "ई" (E) और "गवर्नेंस" (Governance) दोनों शब्दों का अर्थ समझना आवश्यक है। यहाँ "ई" का आशय इलेक्ट्रॉनिक या डिजिटल से है। डिजिटल तकनीक वह माध्यम है जिसके द्वारा सूचनाओं और आँकड़ों का संग्रह, संधारण (Processing),भंडारण (Storage) तथा आदान-प्रदान (Transmission) किया जाता है। यह तकनीक प्रशासनिक कार्यों को अधिक तीव्र, सुलभ और व्यवस्थित बनाती है। "गवर्नेंस" अथवा "शासन" का तात्पर्य उन समस्त प्रक्रियाओं, नीतियों और व्यवस्थाओं से है जिनके माध्यम से किसी समाज, संस्था या राज्य का संचालन एवं प्रबंधन किया जाता है। शासन केवल सरकार तक सीमित नहीं है; इसमें सरकारी संस्थाएँ, बाज़ार, निजी क्षेत्र, तथा औपचारिक-अनौपचारिक सामाजिक संरचनाएँ सभी सम्मिलित होते हैं। शासन की अवधारणा का मूल उद्देश्य मार्गदर्शन, नियंत्रण, निर्णय-निर्माण तथा संसाधनों का समुचित प्रबंधन है।

शब्द उत्तपत्ति की दृष्टि से "Governance" शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के Kybernan से मानी जाती है, जिसका अर्थ है दिशा निर्देश देना। इस प्रकार शासन का आशय समाज या राज्य के संचालन से संबंधित समस्त गतिविधी तथा कार्यों का निर्देशन से है। वहीं ई-गवर्नेंस के अंतर्गत सरकार डिजिटल तकनीकों का प्रयोग कर नागरिकों को सेवाएँ प्रदान करती है, नीतियों का क्रियान्वयन करती है तथा प्रशासनिक प्रक्रियाओं को अधिक पारदर्शी, जवाबदेह, त्वरित और प्रभावी बनाती है। अर्थात सूचना प्रौद्योगिकी एवं डिजिटल माध्यमों के उपयोग द्वारा शासन-प्रक्रियाओं, सेवाओं एवं संवाद को प्रभावी बनाना है। यह शासन में पारदर्शिता, जवाबदेही एवं दक्षता को बढ़ाने का एक आधुनिक साधन है। ई-गवर्नेंस केवल तकनीकी परिवर्तन नहीं, बल्कि प्रशासनिक संस्कृति एवं कार्य-प्रणाली में भी परिवर्तन का द्योतक है। जिसके अंतर्गत डिजिटल सेवा वितरण, ऑनलाइन आवेदन एवं ट्रैकिंग, इलेक्ट्रॉनिक डेटा प्रबंधन, नागरिक-केन्द्रित शासन आदि शामिल है। सामान्य भाषा मे ई-गवर्नेंस का अर्थ सरकारी कार्यों तथा सरकार की योजनाओ को इंटरनेट के माध्यम से जनता तक पँहुचाना ताकि समय और संसाधन की बचत हो और आम जनता को

सरकारी कार्यालयों का चक्कर न लगाना पड़े, साथ ही भ्रष्टाचार से निजात पाने की दिशा मे प्रभावी कार्य किए जा सके।

ई-गवर्नेंस को मुख्यत : 6 श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

1) G2G (सरकार से सरकार तक(2) G2C (सरकार से नागरिक तक(3) G2B (सरकार से व्यवसाय तक(4) G2E (सरकार से कर्मचारी तक(5) C2C (नागरिक से नागरिक तक(6) G2N (सरकार से गैरलाभकारी संगठ-न तक(

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में ई-गवर्नेंस का योगदान :- ई-गवर्नेंस नागरिकों के लिए बेहतर सूचना और गुणवत्तापूर्ण सेवाओं को पहुँचाता है,जिससे दक्षता बढती है। इससे कम समय में कार्य सम्पन्न हो जाता है। भ्रष्टाचार में कमी आती है, दलालों की भूमिका समाप्त हो जाती है, तथा सरकार में विश्वास बढता है। ई-गवर्नेंस ने योजनाओं के संचालन में पारदर्शिता को सुदृढ़ किया है। डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से लाभार्थियों की जानकारी, आवेदन-स्थिति एवं भुगतान-विवरण आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इससे प्रशासनिक प्रक्रियाओं में दक्षता, उत्तरदायित्व और जवाबदेही बढ़ती है। आम नागरिको की सहभागिता बढती है। लागत में कमी आती है और कागजों और स्टेशनरी पर होने वाला व्यय कम होता है। इसमें सभी आँकड़े सदा उपलब्ध होते है उसके आधार पर भविष्य में सही नीतियाँ बनाई जा सकती है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में ई-गवर्नेंस की प्रमुख चुनौतियाँ :- ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के मध्य डिजिटल सुविधाओं एवं साक्षरता में असमानता एक बड़ी चुनौती है। तकनीकी संसाधनों की कमी से अनेक नागरिक डिजिटल सेवाओं का लाभ नहीं उठा पाते।

तकनीकी संरचना- सुदृढ़ इंटरनेट संचालन के लिए, हार्डवेयर एवं सॉफ़्टवेयर की उपलब्धता आवश्यक है। अवसंरचना की कमी योजनाओं के प्रभावी संचालन में बाधा बन सकती है। खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी अवसंरचना सुदृढ़ की जाए। ईगवर्नेंस के माध्यम से सेवाओं के- क्रियान्वयन और रखरखाव में सरकार को भारी लागत आती है ई गवर्नेंस एक-राष्ट्रीय योजना है जो किसी साफ्टवेयर या मॉडुल को शामिल करता है। जिसके मॉडुल ऐसा होना चाहिए जिसे पुनः प्रयोग में लाया जा सके। ई गवर्नेंस की-परियोजनाओ के क्रियान्वयन में वित्तीय संसाधन सीमित है।

डेटा सुरक्षा एवं गोपनीयता- डिजिटल प्रणाली में डेटा संरक्षण एवं साइबर सुरक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। व्यक्तिगत जानकारी के दुरुपयोग का जोखिम बना रहता है। नागरिकों द्वारा प्रदान किए गए डाटा की गोपनीयता की गारंटी होनी चाहिए, बिल भुगतान, ऑनलाइन लेनदेन, बीमा, बैंकिंग, जैसे क्षेत्रों मे साइबर ठगी की आशंका बनी रहती है जिसका उचित समाधान होना चाहिए।

जागरूकता एवं प्रशिक्षण- ई-गवर्नेंस के सफल क्रियान्वयन हेतु नागरिकों एवं कर्मचारियों में डिजिटल साक्षरता एवं प्रशिक्षण आवश्यक है। डेटा सुरक्षा के लिए कठोर नीतियाँ लागू हों। प्रशासनिक कर्मचारियों के नियमित प्रशिक्षण की व्यवस्था हो। आम नागरिक इसके संभावित खतरे और बचाव के तरीके समझ पाएंगे तो यह सभी के लिए सरल ऍव प्रभावी होगा इस हेतु प्रशिक्षण ऍव जागरूकता का प्रसार किया जाना आवश्यक है। नागरिक-केन्द्रित डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का विस्तार किया जाए।

निष्कर्ष :- ई-गवर्नेंस ने सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के सफल रूप से क्रियान्वयन में एक अभूतपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किया है। इससे पारदर्शिता, दक्षता एवं सेवा-गुणवत्ता में सुधार हुआ है। यद्यपि इसके सफल संचालन हेतु बदलते परिवेश में तकनीकी एवं सामाजिक चुनौतियाँ विद्यमान हैं, तथापि की नीतिगत उपायों एवं उचित तथा मजबूत

अवसंरचनात्मक विकास के द्वारा से इन बाधाओं को दूर किया जा सकता है। ई-गवर्नेंस आज के वर्तमान युग की आवश्यकता है बदलते हुए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय अवधारणा में एक बेहतर शासन की आवश्यकता है जो अपने नागरिकों के हितों की पूर्ति करने में सहायक हो, जिसके लिए सामाजिक सुरक्षा तंत्र को अधिक समावेशी एवं प्रभावी बनाने में ई-गवर्नेंस की भूमिका भविष्य में और अधिक महत्वपूर्ण होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, अशोक, ई-गवर्नेंस : केस स्टडी, यूनिवर्सिटी प्रेस हैदराबाद 2007.
2. भटनागर, सुभास ई-गवर्नेंस सेज प्रकाशन नई दिल्ली 2002
3. भट्टाचार्य वी.आर. सम ऐस्पेक्ट ऑफ सोशल सेक्यूरिटीस मिसर इन इन इंडिया,मेट्रोपॉलिटन बुक क. नई दिल्ली 1970.
4. गुप्ता, डी के, ई-ऐड्मिनिस्ट्रैशन, रजत प्रकाशन नई दिल्ली 2003
5. राज बी., ई-गवर्नेंस टेक्निक : इंडियन एण्ड ग्लोबल इक्स्पीरीअन्स, न्यू सेन्चरी पब्लिकैशन 2008.
6. सचदेवा डी. आर., सोशल वेल्फेर ऐड्मिनिस्ट्रैशन इन इंडिया, किताब महल इलाहाबाद,2000.
7. वरंदानी, जी. सोशल सेक्यूरिटीस फॉर इन्डस्ट्रीअल वर्कर इन इंडिया ऍस चंद एण्ड को. नई दिल्ली1989.
8. वर्मा नीता ई-गवर्मेंट टूलकिट फॉर डेवेलोपींग कंटरीस,यूनेस्को पब्लिकैशन नई दिल्ली, 2005.

10 https://www.mygov.in/digidhan/index.html.

11 http://www.egazette.bih.nic.in/.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 171-175
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

नासिरा शर्मा के उपन्यासों में स्त्री का परिवर्तित स्वरूप

नेहा
पीएच-डी० शोधार्थी,
हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ पिन-160014

शोध सार

हिंदी उपन्यास परंपरा में नासिरा शर्मा का लेखन स्त्री-जीवन के बदलते विभिन्न सामाजिक, पारिवारिक और मानसिक आयामों को यथार्थवादी रूप से प्रस्तुत करता है। उनके उपन्यासों में स्त्री केवल पीड़िता नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय लेने वाली, संघर्षशील और चेतनासंपन्न व्यक्तित्व के रूप में उभरती हुए हमारे समक्ष है। नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में स्त्री मन के विभिन्न भावों, पीड़ाओं, और संघर्षों को बखूबी उकेरा है। उन्होंने अपने उपन्यास 'शाल्मली' तथा 'अक्षयवट' की पात्रों के माध्यम से उनके वैवाहिक जीवन के संघर्षों और रिश्तों की जटिलताओं को बेहद मार्मिक तरीके से चित्रण किया है। वहीं उनके दूसरे उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' में महरुख समाज और पारिवारिक ताने-बाने में अपने आत्मसम्मान और बच्चों के भविष्य के लिए लड़ाई लड़ती है। नासिरा शर्मा के उपन्यास समाज में स्त्री की स्थिति और बदलाव के लिए प्रेरणा का स्रोत है। यह शोध-पत्र नासिरा शर्मा के प्रमुख उपन्यासों के आधार पर स्त्री के परिवर्तित स्वरूप-स्वायत्तता, शिक्षा, विवाह-बोध, मातृत्व, आर्थिक चेतना और परम्परागत, आधुनिकता के द्वंद्व का विश्लेषण करता है।

बीज शब्द- स्त्री, परिवर्तित स्वरूप, आत्मनिर्भर, आत्मसम्मान,

प्रस्तावना

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री-विमर्श ने सामाजिक संरचनाओं पर प्रश्न उठाए हैं। नासिरा शर्मा ने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री का व्यक्तित्व परंपरागत ढाँचों से बाहर निकलकर एक नवीन, जागरूक एवं सशक्त पहचान के रूप में विकसित हुआ है। ऐतिहासिक रूप से स्त्री को परिवार और गृहस्थी की सीमाओं में बाँधकर देखा गया, किंतु नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों में स्त्री के परिवर्तित स्वरूप को सामाजिक, शैक्षिक और वैचारिक परिवर्तन तथा स्वतंत्र चेतना और आत्मनिर्णय की क्षमता से युक्त व्यक्तित्व बनाकर उभारा है। जहाँ स्त्री शिक्षा, रोजगार और सार्वजनिक जीवन में सक्रिय सहभागिता के माध्यम से न केवल अपनी आर्थिक आत्मनिर्भरता स्थापित कर रही है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं को भी नई दिशा दे रही है। वह विवाह, मातृत्व, करियर तथा व्यक्तिगत जीवन से जुड़े निर्णयों में समान अधिकार और सम्मान की आकांक्षा रखती है। स्त्री का परिवर्तित स्वरूप केवल व्यक्तिगत बदलाव तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज के समग्र विकास और लोकतांत्रिक मूल्यों का संवाहक है।

"सामाजिक जीवन और साहित्यिक विरासत का रिश्ता द्वंद्वात्मक है। समाज के बगैर साहित्य की परिकल्पना करना असंभव है उसी तरह साहित्य के बगैर समाज की कल्पना असंभव है। साहित्य के माध्यम से समस्त सांस्कृतिक-राजनीतिक प्रक्रियाओं का अध्ययन एवं उसके निर्माण की प्रक्रिया का ज्ञान संभव है। इसी तरह स्त्री-पुरुष के बगैर समाज की कल्पना संभव नहीं है। स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं और एक-दूसरे से भिन्न एवं स्वायत्त भी हैं। सामाजिक विकास की प्रक्रिया में पूरक तत्व पर इस कदर जोर दिया गया कि पुरुष ने स्त्री की अस्मिता एवं सत्ता को ही हजम कर लिया...ऐतिहासिक विकास के क्रम में स्त्री की स्वायत्त पहचान का लोप हो गया और पहचान के नाम पर सिर्फ शरीर भर रह गया जो उसका नहीं था अपितु वह पुरुष का था। जीवन को संचालित करने वाले संस्थान, कलारूप, नियम, मूल्य और पैमाने सबके सब पुरुष केंद्रित हो गए, स्त्री हाशिए पर थी या निष्क्रिय थी। जीवन-जगत का पर्याय पुरुष था, स्त्री को तो प्रकृति का पर्याय बना दिया गया।"[i]

"आधुनिक काल से पूर्व हिंदी साहित्य में मीरा, दया बाई, सहजो बाई आदि मध्यकालीन संत कवयित्रियों के अतिरिक्त नारी का प्रतिनिधित्व सीमित रहा। इस समय साहित्य में नारी मातृ रूप, पत्नी रूप, प्रेयसी रूप में अधिक प्रस्तुत की गई थी। मनुष्य रूप में नारी तथा उसकी महत्वाकांक्षा, सपने, लक्ष्य, इच्छाएँ, सबलताएं, दुर्बलताएं आदि विषय आधुनिक युग में ही हिंदी साहित्य के केंद्र में आए। हिन्दी का आधुनिक काल नारी जागरण की दृष्टि से, उसके स्वत्व और व्यथा का समर्थ व्याख्याकार रहा है। कवियों के कंठ से भारत की जय के साथ-साथ नारी की जय भी ध्वनित हुई। बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय, रविन्द्रनाथ ठाकुर, शरतचंद, मैथिलीशरण गुप्त, प्रसाद, पंत, निराला ने भी भारतीय नारी की महिमा की परिधि में उसकी युगान्त दीर्घ मर्म व्यथा को वाणी दी। महिलाओं ने इस रचना पर्व में महत्त्वपूर्व सहयोग दिया, यह हेमन्त कुमारी चौधरानी, सरोजनी नायडू, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा, तोरण देवी आदि की रचनाओं से प्रकट होता है। हिन्दी गद्य साहित्य में महादेवी वर्मा, बंग महिला, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि ने नारी की अस्मिता के प्रश्न को उठाया।[ii]"

आधुनिक समय में स्त्री का स्वरूप परंपरागत सीमाओं से निकलकर एक सजग, आत्मनिर्भर और निर्णयक्षम व्यक्तित्व के रूप में उभरा है। जहाँ पहले स्त्री को मुख्यतः गृहस्थी और पारिवारिक दायित्वों तक सीमित माना जाता था, वहीं आज वह शिक्षा, राजनीति, साहित्य, प्रशासन, विज्ञान और रोज़गार के प्रत्येक क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभा रही है। स्त्री अब केवल सहनशीलता और त्याग की प्रतिमूर्ति ही नहीं रही, बल्कि अपने अधिकारों, अस्मिता और स्वतंत्रता के प्रति सचेत भी है। वह विवाह, परिवार, मातृत्व और करियर से जुड़े निर्णय स्वयं लेने लगी है, जो आधुनिक समाज की प्रगतिशील चेतना को परिलक्षित करता है। इसी कड़ी में, इक्कीसवीं सदी में नारी अस्मिता के प्रश्न पर विमर्श करते हुए साहित्यकार नारी के परिवर्तित स्वरूप को साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत कर रहे हैं- जैसे राजेन्द्र यादव, शिवमूर्ति, पंकज सुबीर, जगदीश्वर चतुर्वेदी, मन्नू भण्डारी, अलका सरावगी, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, इत्यादि है, किन्तु इनमें नासिरा शर्मा का महत्वपूर्ण स्थान है।

नासिरा शर्मा ने उपन्यास 'कुइयाँजान' में समीना के माध्यम से स्त्री के परिवर्तित स्वरूप को चित्रित किया है। पुरातन समाज में स्त्री का दायरा मुख्यतः घर-गृहस्थी तक सीमित था; सामाजिक-आर्थिक निर्णयों में उसकी सहभागिता न्यून थी, वहीं आधुनिक समय में वह सशक्त, आत्मनिर्भर और जागरूक रूप में हमारे समक्ष है। लेखिका ने समीना के चरित्र के माध्यम से स्त्री के सशक्त और निर्णयक्षम पहचान को उभारा है। समीना अपने पति कमाल का आर्थिक सहयोग करने में सक्षम है और परिवार की जिम्मेदारियों में सक्रिय भूमिका निभाती है- "समीना 'मिस मेरी स्कूल' जाते हुए रास्ते में सोच रही थी कि मेरे नौकरी करने पर बड़ी अम्मी नाराज तो नहीं होंगी या फिर कमाल को ही मेरा स्कूल में पढ़ाना पसंद न आए? जो होगा सो देखा जाएगा...कमाल अलबत्ता चकित हुआ था, मगर कुछ बोला नहीं था। समीना ने स्कूल जाना शुरू कर दिया। उसे कमाल को यों अकेला छोड़ना अच्छा नहीं लगा, मगर

वह यह नौकरी भी तो उसी के लिए कर रही थी, ताकि उसके कामों में अड़चनें न आएं।"[iii] लेखिका ने उपन्यास में स्त्री के परिवर्तित स्वरूप के सकारात्मक पक्ष को हमारे समक्ष रखा है, जहाँ वह समानता, सहयोग और आत्मसम्मान के साथ आधुनिक समाज में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराती है- यह दृष्टि नासिरा शर्मा की प्रगतिशील सामाजिक सोच को प्रतिध्वनित करती है।

'अक्षयवट' उपन्यास में नासिरा शर्मा ने उपन्यास की पात्र सिपतुन के माध्यम से स्वयं के प्रति परिवर्तित सोच को प्रस्तुत किया है। जहाँ पुरातन समय में स्त्रियाँ अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए पुरुषों पर आश्रित रहती थीं, वहीं आधुनिक समय में वह सक्षम दिखाई देती हैं। उपन्यास की पात्र सिपतुन विधवा होने के बावजूद सास द्वारा सुझाई गई दूसरी शादी से इंकार कर देती है, क्योंकि वह अपने और अपने बच्चे के पालन-पोषण की जिम्मेदारी स्वयं उठाने में समर्थ है। यह दृष्टिकोण स्त्री की आत्मविश्वासी चेतना और स्वतंत्र निर्णय क्षमता को रेखांकित करता है- "मर्द ही औरत के लिए सब कुछ नहीं होता है। उसकी जितनी अहमियत है, मैं उसको मानती हूँ मगर हर एक औरत की जरूरत वही तो नहीं है, जो आप समझ रही हैं? अगर जमाना बदला है दूसरी शादी करने के लिए तो जमाना इस तरह भी बदला है कि एक औरत अकेले अपने फर्ज के साथ भी जी सकती है। उसमें भी उसको खुशियाँ और तसल्ली मिल सकती है। रही जहीर को बाप मिलने की बात तो सौतले बाप की शिफकतों को मैं देख चुकी हूँ। जहीर किसी की आँखों का खार बने, यह मुझे पसन्द नहीं होगा।"[iv] इस प्रकार उपन्यास में नासिरा शर्मा ने स्त्री की आत्मनिर्भरता और स्वयं के प्रति परिवर्तित सोच को स्पष्ट रूप से उभारा है। सिपतुन का दूसरी शादी से इंकार करना इस तथ्य का प्रतीक है कि आधुनिक स्त्री अब अपनी पहचान और अस्तित्व के लिए पुरुष पर निर्भर नहीं है। वह अपने निर्णय स्वयं लेने में सक्षम है।

उपन्यास 'अक्षयवट' में ही नासिरा शर्मा ने स्त्री के परिवर्तित और सशक्त रूप को स्पष्ट रूप से उकेरा है। जहाँ परंपरागत समाज में स्त्री की भूमिका केवल घरेलू कार्यों तक सीमित मानी जाती थी, वहीं आधुनिक शिक्षित स्त्री आर्थिक उत्तरदायित्वों को भी आत्मसम्मान के साथ निभाने लगी है। उपन्यास की स्त्री पात्र फ़िरोजजहाँ घर की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने हेतु नौकरी करना अपना कर्तव्य समझती है और पुरुष पर निर्भर रहने के स्थान पर आत्मनिर्भर बनने का मार्ग अपनाती है। उपन्यास में स्त्री का रूप एक सजग, सक्षम और निर्णयशील व्यक्तित्व के रूप में उभरता है, जो सामाजिक परिवर्तन और स्त्री-सशक्तीकरण का सशक्त उदाहरण है- "घर में आमदनी नाम की कोई चीज थी नहीं। विरासत तो फिरदौस वेगम के जमाने से ही छिन चुकी थी। अब तो सिर्फ यह लम्बा-चौड़ा घर था। जमा हुआ रुपया धीरे-धीरे करके पानी के घड़े में छेद की तरह टपक-टपककर खाली हो चुका था...एक दिन उनको ख्याल आया, क्यों न नौकरी कर लूँ। उम्र तो नहीं है तो भी जान-पहचान के नाते किसी स्कूल में पार्ट टाइम तो लग सकती हूँ...इतना पढ़कर घर इस तरह बैठी हैं, क्यों कुछ कीजिए ना, आखिर आपका दिल भी लगा रहेगा। अरे आण्टी। आप हमारे स्कूल में आ जाएँ, नया-नया खुला है। आपका दिल लगेगा और हमको किसी बड़े का साया मिल जाएगा...आखिर उन्होंने अँग्रेजी और हिस्ट्री पढ़ाने की तैयारी 'मिस मेरी' स्कूल में कर आपली ली...फिरोजजहाँ को एक नया आसमान मिल गया था।"[v] अतः यह स्पष्ट होता है उपन्यास में लेखिका ने स्त्री के परिवर्तित स्वरूप को यथार्थपूर्ण ढंग से चित्रित किया है। लेखिका यह सिद्ध करती हैं कि आधुनिक स्त्री केवल पारंपरिक घरेलू दायित्वों तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह शिक्षा और रोजगार के माध्यम से परिवार की आर्थिक सुदृढ़ता में सक्रिय भूमिका निभा रही है। उपन्यास की स्त्री पात्र पुरुषों पर निर्भर न रहकर स्वयं निर्णय लेने में सक्षम दिखाई देती है। स्त्री की सामाजिक-आर्थिक चेतना, आत्मसम्मान और स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास को रेखांकित करता है तथा समकालीन समाज में स्त्री-सशक्तीकरण की सार्थक दिशा को उजागर करता है।

'शाल्मली' उपन्यास में नासिरा शर्मा ने कामकाजी स्त्री की आत्मनिर्भरता और वैचारिक दृढ़ता को प्रभावी रूप में प्रस्तुत किया है। शाल्मली का पति चाहता है कि वह नौकरी छोड़कर केवल घर की जिम्मेदारी संभाले, जो पारंपरिक पितृसत्तात्मक सोच को दर्शाता है। इसके विपरीत शाल्मली अपने करियर के प्रति सजग और प्रतिबद्ध दिखाई देती है। वह स्पष्ट रूप से कहती है कि उसने अपने कार्यक्षेत्र में लंबा संघर्ष कर एक मुकाम हासिल किया है और वह पीछे नहीं लौटना चाहती। साथ ही वह पति से सहयोग की अपेक्षा करती है, यह विश्वास व्यक्त करते हुए कि दोनों के साथ चलने से घर और अधिक सुदृढ़ होगा। उपन्यास में यह तथ्य उभरकर आता है कि जहाँ पुरुष स्त्री को अपने साथ लेकर आगे बढ़ने से हिचकता है, वहीं स्त्री समानता और सहयोग के आधार पर पारिवारिक और सामाजिक जीवन को आगे बढ़ाना चाहती है- "अधूरा काम छोड़ते मुझे बुरा लगेगा। मुझे क्षमा करना, नरेश! अब मैं इतना आगे निकल चुकी हूं कि मेरा वापस लौटना नामुमकिन है। तुम आगे बढ़ो और चलो मेरे साथ! हमें ठहरना नहीं, आगे बढ़ना है। शाल्मली ने नरेश का हाथ थामा…यह जान लो तुम, यह फैसला मेरी भावनाओं के मूल्य पर नहीं, बल्कि इस घर के मूल्य पर कर रही हो। हाथ सेंटक कर उठ बैठा नरेश। जानती हूं और मुझे विश्वास है, हमारा घर अधिक ठोस और अधिक मजबूत धरती पर खड़ा होगा। कहते हुए शाल्मली सामान रखने लगी। उसने छत की तरफ जाते हुए नरेश को नहीं रोका और मन-ही-मन सोचा, अपने पुरुष को उगता सूरज मैं नहीं दिखाऊंगा, तो फिर कौन दिखायेगा।"[vi] इस प्रकार से लेखिका ने उपन्यास में नासिरा शर्मा ने स्त्री की सकारात्मक सोच और साझेदारी आधारित पारिवारिक दृष्टिकोण को सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है। शाल्मली का नौकरी न छोड़ने का निर्णय उसके आत्मसम्मान, श्रम-साध्य उपलब्धियों और वैचारिक परिपक्वता का प्रतीक है। आधुनिक समय में स्त्री पुरुष से प्रतिस्पर्धा नहीं, बल्कि सहयोग की अपेक्षा रखती है और विश्वास करती है कि समान भागीदारी से ही परिवार अधिक स्थिर और सुदृढ़ बन सकता है। उपन्यास की पात्र शाल्मली स्त्री-सशक्तीकरण और समकालीन पारिवारिक चेतना का सार्थक चित्रण किया है।

'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास में नासिरा शर्मा ने महरुख के चरित्र के माध्यम से स्त्री के परिवर्तित और आत्मनिर्भर स्वरूप को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। पुरुष द्वारा किए गए विश्वासघात के बाद महरुख टूटने के बजाय अपने जीवन को नई दिशा देने का निर्णय लेती है और अपने सपनों को साकार करने का संकल्प करती है। पूर्वकाल में आर्थिक निर्भरता के कारण स्त्रियाँ ऐसे स्वतंत्र निर्णय लेने में सक्षम नहीं होती थीं, किंतु आधुनिक समय में आत्मनिर्भरता ने उन्हें यह शक्ति प्रदान की है। महरुख भी इसी आत्मनिर्भर चेतना का प्रतीक है। वह अपना पूरा जीवन विद्यालय और बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में समर्पित कर देती है। इस प्रकार उपन्यास में स्त्री का स्वरूप संघर्ष से उबरकर उद्देश्यपूर्ण, कर्मठ और सामाजिक उत्तरदायित्व से जुड़ा हुआ दिखाई देता है- "महरुख के सामने जिन्दगी की सिर्फ़ एक मंजिल थी, वह थी स्कूल; एक उद्देश्य था, वह था स्कूल। स्कूल के अलावा वह कुछ सोच नहीं पाती थी। कभी उसे जिन्दगी रेंगती-सी लगती थी, अब दौड़ती हुई लगती है। इस दौड़ से वह थकती नहीं थी, बल्कि उसकी उमंग, जोश दुगना बढ़ जाता था, घर-घर से बच्चों को निकलवाकर स्कूल लाने की मुहिम जारी थी। रात-दिन कब गुजर जाते हैं, उसे मालूम नहीं पड़ता, बल्कि कभी-कभी उसे वक़्त की कमी महसूस होने लगती थी।"[vii] संक्षेप में कहा जा सकता है कि उपन्यास में नासिरा शर्मा ने महरुख के चरित्र के माध्यम से आधुनिक स्त्री के आत्मनिर्भर, दृढ़ और उद्देश्यपूर्ण व्यक्तित्व को उभारकर प्रस्तुत किया है। आर्थिक स्वतंत्रता ने स्त्री को यह सामर्थ्य प्रदान की है कि वह व्यक्तिगत आघातों से उबरकर अपने जीवन को नए अर्थ दे सके। महरुख का जीवन बच्चों की शिक्षा और उनके उज्ज्वल भविष्य को समर्पित होना इस बात का प्रतीक है कि आज की स्त्री केवल अपने लिए नहीं, बल्कि समाज के निर्माण में भी सक्रिय भूमिका निभा रही है।

अतः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्री के परिवर्तित स्वरूप के विविध आयामों को चित्रित किया है। उनके उपन्यासों में आधुनिक स्त्री शिक्षित, जागरूक और आत्मनिर्भर रूप में उभरती है, जो अपने जीवन से जुड़े सामाजिक, पारिवारिक और व्यक्तिगत निर्णय स्वयं लेने में सक्षम है। इसके विपरीत, पुरातन समाज में स्त्री आर्थिक और वैचारिक रूप से परनिर्भर थी, जिससे उसकी निर्णय-क्षमता सीमित रहती थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

i. चतुर्वेदी, जगदीश्वर, स्त्रीवादी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ल्ली, संस्करण: 2011, पृ सं 1

ii. सिंह, कंचना, महिला सशक्तिकरण विचारणीय मुद्दे, प्रकाशन कुटीर, नई दिल्ल्ली, संस्करण: 2018 पृ सं 167-171

iii. शर्मा, नासिरा, कुइयाँजान, समसामयिक प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2008, पृ सं 45-46

iv. शर्मा, नासिरा, अक्षयवट, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण: 2003 पृ सं 138

v. वही, पृ सं 142

vi. शर्मा, नासिरा, शाल्मली, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण:2018 पृ सं 47

vii. शर्मा, नासिरा, ठीकरे की मंगनी, किताबघर प्रकाशन,नयी दिल्ली, संस्करण: 2023 पृ सं 122

फोन 8629841399

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 176-180
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना

राहुल कुमार
शोध छात्र,
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय ,लखनऊ उत्तर प्रदेश
डॉ० प्रशांत सिंह
सहायक आचार्य हिंदी विभाग,
(केन ग्रोअर्स नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज गोला,खीरी)

सारांश
यह शोध पत्र आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना के स्वरूप, विकास और अभिव्यक्ति का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में आए सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों ने मध्यवर्ग को एक प्रमुख वर्ग के रूप में स्थापित किया। आधुनिक हिंदी कहानियों में यह वर्ग अपनी आकांक्षाओं, असुरक्षाओं, नैतिक द्वंद्वों, पारिवारिक तनावों तथा आर्थिक दबावों के बीच उपस्थित होता है। प्रेमचंदोत्तर कथाकारों से लेकर नई कहानी आंदोलन और समकालीन रचनाकारों तक मध्यवर्गीय जीवन की जटिलताओं को गहराई से उकेरा गया है। यह अध्ययन चयनित आधुनिक हिंदी कहानियों के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि मध्यवर्गीय चेतना किस प्रकार आधुनिक समाज की अंतर्विरोधी संरचना और मूल्य-संकट को अभिव्यक्त करती है।

बीज शब्द : आधुनिक हिंदी कहानी, मध्यवर्ग, चेतना, सामाजिक यथार्थ, नई कहानी

1. प्रस्तावना

भारतीय समाज की संरचना में मध्यवर्ग का उदय आधुनिकता, शिक्षा, शहरीकरण और औपनिवेशिक व्यवस्था के प्रभाव से हुआ। स्वतंत्रता के पश्चात यह वर्ग सामाजिक परिवर्तन का वाहक बना, किंतु साथ ही यह वर्ग अनेक अंतर्विरोधों से भी घिरा रहा। आधुनिक हिंदी कहानियों ने मध्यवर्गीय जीवन की इसी द्वंद्वात्मक स्थिति को अपना केंद्रीय विषय बनाया।

मध्यवर्गीय चेतना केवल आर्थिक स्थिति का बोध नहीं है, बल्कि यह एक विशिष्ट मानसिकता, जीवन-दृष्टि और मूल्य-बोध को भी अभिव्यक्त करती है। नौकरी की अनिश्चितता, सामाजिक प्रतिष्ठा की चिंता, पारिवारिक दायित्व और नैतिक संघर्ष आधुनिक हिंदी कहानी के प्रमुख सरोकार बन गए हैं। इस संदर्भ में आधुनिक हिंदी कहानी समाज का दर्पण बनकर उभरती है।

यह शोध पत्र आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना के विविध पक्षों—आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और मनोवैज्ञानिक—का विश्लेषण करता है तथा यह स्पष्ट करता है कि यह चेतना आधुनिक भारतीय समाज को समझने की एक महत्वपूर्ण कुंजी है।

'आधुनिक हिंदी कहानी भारतीय समाज की उस ऐतिहासिक प्रक्रिया की साहित्यिक अभिव्यक्ति है जिसमें सामाजिक संरचना, आर्थिक व्यवस्था और मानवीय चेतना निरंतर परिवर्तनशील रही है। इस परिवर्तन-प्रक्रिया में जिस वर्ग की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण रही है, वह मध्यवर्ग है। मध्यवर्ग न तो पारंपरिक रूप से विशेषाधिकार-संपन्न रहा है और न ही पूर्णतः शोषित वर्ग की श्रेणी में आता है, बल्कि वह दोनों के बीच स्थित होकर सामाजिक, आर्थिक और मानसिक द्वंद्वों से गुजरता रहा है। यही द्वंद्व आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना के रूप में अभिव्यक्त हुआ है' [1]।

'मध्यवर्गीय चेतना केवल आर्थिक स्थिति का परिणाम नहीं है, बल्कि यह एक जटिल मानसिक संरचना है जिसमें आकांक्षा, असुरक्षा, आत्मसम्मान, नैतिकता और समझौते की प्रवृत्ति एक साथ विद्यमान रहती है' [2]। आधुनिक हिंदी कहानी ने इस चेतना को सामाजिक यथार्थ के भीतर स्थापित करके प्रस्तुत किया है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि आधुनिक हिंदी कहानी का वास्तविक नायक मध्यवर्गीय व्यक्ति ही है।

'औपनिवेशिक शासन, अंग्रेज़ी शिक्षा और शहरीकरण ने भारतीय समाज में एक नए शिक्षित वर्ग को जन्म दिया। यह वर्ग परंपरागत मूल्यों से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाया, किंतु आधुनिक जीवन-शैली को अपनाने के लिए विवश था' [3]। इस दोहरे दबाव ने मध्यवर्गीय चेतना को तनावग्रस्त और अंतर्विरोधपूर्ण बना दिया। आधुनिक हिंदी कहानी इसी मानसिक स्थिति की सशक्त अभिव्यक्ति बनकर सामने आई।

मध्यवर्ग वह सामाजिक वर्ग है जो उच्च और निम्न वर्ग के बीच स्थित होता है तथा जिसकी पहचान शिक्षा, पेशा, आय और जीवन-शैली के आधार पर की जाती है। भारतीय संदर्भ में मध्यवर्ग की अवधारणा पश्चिमी समाज से भिन्न रही है। यहाँ यह वर्ग परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

मध्यवर्गीय चेतना में सुरक्षा की आकांक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा की चिंता, भविष्य के प्रति अनिश्चितता और नैतिक मूल्यों का आग्रह प्रमुख तत्व हैं। आधुनिक हिंदी कहानियों में यह चेतना पात्रों के व्यवहार, निर्णयों और मानसिक संघर्षों के माध्यम से व्यक्त होती है।

आलोचकों के अनुसार मध्यवर्गीय चेतना एक संक्रमणशील चेतना है, जो निरंतर बदलती सामाजिक परिस्थितियों के साथ अपना स्वरूप बदलती रहती है। यही कारण है कि आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्ग कभी संवेदनशील, कभी अवसरवादी और कभी विद्रोही रूप में सामने आता है।

आधुनिक हिंदी कहानी का वास्तविक विकास बीसवीं शताब्दी के तीसरे और चौथे दशक से माना जाता है, जब भारतीय समाज औपनिवेशिक शासन, शिक्षा के प्रसार और नगरीकरण के प्रभाव में तीव्र परिवर्तन से गुजर रहा था। इस परिवर्तन ने जिस सामाजिक वर्ग को सबसे अधिक प्रभावित किया, वह मध्यवर्ग था। परिणामस्वरूप हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय जीवन, उसकी समस्याएँ और उसकी चेतना प्रमुख विषय के रूप में उभरकर सामने आई। प्रेमचंद के बाद हिंदी कहानी ने सामाजिक यथार्थ को नए दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया। अब कहानी का केंद्र केवल ग्रामीण जीवन नहीं रहा, बल्कि शहरी और अर्ध-शहरी मध्यवर्गीय समाज भी कथा का महत्वपूर्ण आधार बना। इस दौर की कहानियों में नौकरीपेशा जीवन, शिक्षा, पारिवारिक दायित्व और सामाजिक प्रतिष्ठा की चिंता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। मध्यवर्गीय पात्र अपनी सीमित आय और बढ़ती आकांक्षाओं के बीच संघर्ष करता हुआ नजर आता है।

स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय चेतना और अधिक जटिल होती चली गई। विभाजन की त्रासदी, राजनीतिक अस्थिरता और सामाजिक पुनर्गठन ने मध्यवर्ग को मानसिक रूप से झकझोर दिया।

इस समय की कहानियों में मध्यवर्गीय व्यक्ति आशा और निराशा के द्वंद्व से गुजरता हुआ दिखाई देता है। यशपाल और भीष्म साहनी जैसे कथाकारों ने इस दौर के मध्यवर्ग की वैचारिक और नैतिक उलझनों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया।

नई कहानी आंदोलन ने आधुनिक हिंदी कहानी को एक नई दिशा दी। इस आंदोलन के केंद्र में मध्यवर्गीय व्यक्ति की आंतरिक दुनिया थी। अब कहानी का फलक बाहरी घटनाओं से अधिक व्यक्ति की मानसिक अवस्थाओं, कुंठाओं और अकेलेपन की ओर केंद्रित हो गया। मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेंद्र यादव की कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन की ऊब, संबंधों की टूटन और अस्तित्वगत संकट गहराई से उभरते हैं।

इस प्रकार आधुनिक हिंदी कहानी का विकास मध्यवर्गीय संदर्भों से गहराई से जुड़ा हुआ है। मध्यवर्ग केवल कहानी का पात्र नहीं, बल्कि आधुनिक हिंदी कहानी की संवेदनात्मक और वैचारिक संरचना का मूल आधार बन गया है।

प्रेमचंद और मध्यवर्गीय चेतना

'हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय चेतना की ठोस शुरुआत प्रेमचंद से मानी जाती है। यद्यपि प्रेमचंद को मुख्यतः किसान और निम्नवर्ग का कथाकार कहा जाता है, फिर भी उनकी अनेक कहानियों में उभरता हुआ मध्यवर्ग स्पष्ट रूप से दिखाई देता है'4।

''नमक का दरोगा' का वंशीधर ईमानदारी और नौकरी की विवशता के बीच संघर्ष करता हुआ मध्यवर्गीय व्यक्ति है। यह संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि पूरे मध्यवर्ग की मानसिक स्थिति का प्रतिनिधित्व करता है'5।

'पंच परमेश्वर' में अलगू चौधरी का चरित्र सामाजिक न्याय, नैतिकता और व्यक्तिगत संबंधों के द्वंद्व को उजागर करता है। प्रेमचंद का मध्यवर्ग आदर्शवादी है, किंतु यथार्थ से टकराकर बार-बार समझौता करने को विवश होता है' [6]।

स्वतंत्रता-पश्चात हिंदी कहानी और मध्यवर्ग

'स्वतंत्रता के बाद हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय चेतना का स्वरूप अधिक जटिल हो जाता है। राजनीतिक स्वतंत्रता के बावजूद बेरोज़गारी, आर्थिक असमानता और प्रशासनिक जटिलताओं ने मध्यवर्ग को नई समस्याओं से घेर लिया' [7]। अब कहानीकारों का ध्यान बाहरी संघर्षों के साथ-साथ आंतरिक तनावों पर भी केंद्रित हुआ। इस दौर में मध्यवर्गीय पात्र अपनी पहचान, भूमिका और अस्तित्व को लेकर असमंजस में दिखाई देता है। यही असमंजस आधुनिक हिंदी कहानी की केंद्रीय संवेदना बनता है।

नई कहानी आंदोलन और मध्यवर्ग

'नई कहानी आंदोलन ने मध्यवर्गीय चेतना को हिंदी कथा-साहित्य के केंद्र में स्थापित कर दिया। मोहन राकेश, कमलेश्वर और राजेंद्र यादव की कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन की आंतरिक जटिलताएँ प्रमुखता से उभरती हैं' [8]।

'मोहन राकेश की कहानी 'आर्द्रे की मौत' में मध्यवर्गीय संवेदनहीनता और आत्मकेंद्रित मानसिकता उजागर होती है। यहाँ पात्र सामाजिक रूप से सक्रिय है, किंतु मानवीय संवेदना से कटा हुआ है' [9]।

'कमलेश्वर की कहानियों में मध्यवर्गीय व्यक्ति भावनात्मक
असुरक्षा और संबंधों की विफलता से ग्रस्त दिखाई देता है' [10]।

'राजेंद्र यादव ने मध्यवर्गीय चेतना को सामाजिक पाखंड और अवसरवाद के संदर्भ में प्रस्तुत किया। उनका मध्यवर्ग नैतिक मूल्यों की बात करता है, किंतु व्यवहार में सुविधा को प्राथमिकता देता है'[11]।

आर्थिक दबाव और नौकरी की असुरक्षा

'आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना का सबसे प्रमुख पक्ष आर्थिक दबाव है। सीमित आय, बढ़ती महँगाई और नौकरी की अनिश्चितता मध्यवर्गीय जीवन को निरंतर तनावग्रस्त बनाती है'[12]।

कहानियों में नौकरी-पेशा व्यक्ति आत्मसम्मान और आर्थिक सुरक्षा के बीच झूलता हुआ दिखाई देता है।

उपभोक्तावाद और मध्यवर्ग

'समकालीन हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय चेतना उपभोक्तावाद से गहराई से प्रभावित है। आधुनिक मध्यवर्ग सुविधा, वस्तुओं और सामाजिक प्रतिष्ठा की दौड़ में शामिल हो चुका है' [13]।

इस दौड़ ने जीवन को बाहरी चमक तो दी है, किंतु भीतर से उसे खोखला भी किया है।

पारिवारिक विघटन और संबंधों का संकट

'आधुनिक हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय परिवार टूटन और तनाव का प्रतीक बन गया है। संयुक्त परिवारों का विघटन, पति-पत्नी के बीच संवादहीनता और पीढ़ीगत संघर्ष मध्यवर्गीय चेतना को गहराई से प्रभावित करते हैं' [14]।

यह पारिवारिक संकट मध्यवर्गीय व्यक्ति को मानसिक रूप से अकेला बना देता है।

स्त्री और मध्यवर्गीय चेतना

'मध्यवर्गीय चेतना के अध्ययन में स्त्री-पात्रों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। मध्यवर्गीय स्त्री पारंपरिक अपेक्षाओं और आधुनिक आकांक्षाओं के बीच फँसी हुई दिखाई देती है' [15]।

कहानियों में यह स्त्री न तो पूरी तरह विद्रोही है और न ही पूर्णतः समर्पित, बल्कि निरंतर संघर्षरत है।

मानसिक कुंठा और अस्तित्वगत संकट

'नई और समकालीन हिंदी कहानी में मध्यवर्गीय चेतना का एक प्रमुख स्वर मानसिक कुंठा और अस्तित्वगत संकट है' [16]।

आर्थिक स्थिरता के बावजूद पात्र जीवन की सार्थकता पर प्रश्न करता है। यही प्रश्न आधुनिक हिंदी कहानी को दार्शनिक गहराई प्रदान करते हैं।

नैतिक द्वंद्व और समझौते की संस्कृति

'मध्यवर्गीय चेतना का मूल स्वर नैतिक द्वंद्व है—ईमानदारी बनाम सुविधा, आदर्श बनाम व्यवहार' [17]।

आधुनिक हिंदी कहानी में यह द्वंद्व बार-बार उभरता है और पात्र को समझौते की ओर धकेलता है।

समकालीन हिंदी कहानी और नया मध्यवर्ग

'वैश्वीकरण के बाद मध्यवर्ग आर्थिक रूप से सशक्त हुआ है, किंतु मानसिक रूप से अधिक अस्थिर' [18]।

तकनीक, बाज़ार और प्रतिस्पर्धा ने मध्यवर्गीय जीवन को यांत्रिक बना दिया है।

निष्कर्ष

इस प्रकार आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना भारतीय समाज की बदलती संरचना का जीवंत दस्तावेज है। हिंदी कहानी ने मध्यवर्ग को केवल सामाजिक वर्ग नहीं, बल्कि मानसिक और वैचारिक अवस्था के रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रेमचंद से लेकर समकालीन कथाकारों तक मध्यवर्गीय चेतना निरंतर विकसित होती रही है और आधुनिक हिंदी कहानी की केंद्रीय संवेदना बन गई है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. बच्चन सिंह. हिंदी कथा साहित्य का विकास. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृ. 112–118.
2. कमलेश्वर. नई कहानी की भूमिका. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2012, पृ. 59–65.
3. नामवर सिंह. कहानी: नई कहानी. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 45–52.
4. नामवर सिंह. दूसरी परंपरा की खोज. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 156–160.
5. प्रेमचंद. प्रतिनिधि कहानियाँ. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 67–72.
6. राजेंद्र यादव. हिंदी कहानी: यथार्थ और प्रयोग. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 77–83.

7. रामविलास शर्मा. आधुनिक हिंदी साहित्य की भूमिका. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 134–140.
8. रमेशचंद्र शाह. हिंदी कहानी की वैचारिकी. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ. 91–97.
9. विश्वनाथ त्रिपाठी. समकालीन हिंदी कहानी. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2014, पृ. 142–149.

ई मेल rahulkpuc27@gmail.com
मोबाइल नंबर 9452809023

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 181-186
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

"आचार्य रामचंद्र शुक्ल पूर्व हिंदी आलोचना में कबीर "

डॉ. प्रशांत सिंह
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग
केन ग्रोअर्स नेहरू डिग्री कॉलेज गोला खीरी

सारांशः प्रस्तुत लेख में आचार्य रामचंद्र शुक्ल के पूर्व हिंदी आलोचना में कबीर पर किन विद्वानों ने अपनी बात रखी है, चाहे उसका स्वरूप प्रशंसा परक परिचयात्मक लेख हो या आलोचनात्मक टिप्पणी इस पर बात की गयी है। साथ ही भक्ति कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक सहित सभी क्षेत्रों की जर्जर, सड़ी गली मान्यताओं,स्थितियों, पद्धतियों, मृत संस्कारों के प्रति कबीर के निरंतर विद्रोही चेतना/संघर्ष का भी जिक्र किया गया है। यह विद्रोह कबीर की कविताओं में स्पष्ट रूप से अनुगुंजित होता है।

मुख्य शब्दः भक्तिकाल, शुक्ल पूर्व हिंदी आलोचना, विद्रोह, सामाजिक वैषम्य, प्रगतिशील चेतना, सांस्कृतिक चेतना।

ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक इन सभी दृष्टियों से विचार किया जाय तो भक्ति आन्दोलन के रूप में एक युगान्तकारी घटना घटी। जिसने सामन्तवादी यथास्थितिवाद पर एक ऐसी चोट मारी, जिसका प्रभाव किसी न किसी रूप में अब तक भारतीय जनमानस पर देखा जा सकता है। इसे इतिहास एवं साहित्य दोनों ही दृष्टियों से युगान्तकारी घटना के रूप में देखा जाता है। भक्तिकाल को अपने पूववर्ती काल से सांस्कृतिक विरासत में क्या मिला था ? आदिकाल की वही जर्जर, रूढ़िवादी सामन्ती चेतना, भोग–विलास, युद्धोन्माद की प्रवृत्ति, स्त्री को भोग–विलास की सामग्री मानना, अन्यान्य जो टूटते समाज की पहचान होते हैं, ऐसी विश्रृंखलित परम्परा ही। चूँकि सामन्तवादी सामाजिक व्यवस्था तथा सांस्कृतिक मूल्यों का सामाजिकता एवं सांस्कृतिकता के स्तर पर मूल्यांकन करे तो उसमें लोक की चिन्ता कहीं दिखाई ही नहीं पड़ती। मध्यकाल में वर्ण व्यवस्था (यथास्थितिवाद की पोषक) अपने पैर जमा चुकी थी। उच्चवर्णीयों (ब्राह्मण, क्षत्रिय) ने अपना प्रभुत्व एवं वर्चस्व स्थापित कर लिया था। इन्होंने परस्पर तालमेल और समझौतावादी दृष्टि का परिचय देते हुये समाज की बहुसंख्यक जनता यानि की शूद्र (दलित, अन्त्यज, अछूत आदि) वर्णों पर तमाम प्रतिबन्ध लगा दिये। इस सवर्ण ने समाज में बहुसंख्यक जनता का जीवन नारकीय बना दिया था।समाज में राजे–रजवाड़ेऔर उनके सामन्तों ने ब्राह्मणों को आश्रय देकर समाज की निरीह जनता पर धार्मिक कर्मकाण्डों का ऐसा वितंडावाद रचा कि सारा समाज उसी में उलझकर दम तोड़ने को विवश था। इस काल की पृष्ठभूमि में ब्राह्मण की इच्छा ही धर्म का नियम था। हिन्दू धर्मग्रन्थों ने भारत की आम जनता पर अपना मानसिक साम्राज्य थोप दिया। लेकिन जब बहुत अति हो गयी तो इसी निम्नवर्ग कहे जाने वालों के बीच से, सोये हुए समाज को जगाने वाले कुछ समाजचेता आगे आये और धर्म के जिन कर्मकाण्डों का आश्रय लेकर उच्च वर्णीय सवर्ण समाज उनका शोषण कर रहा था, उसे छोड़ने/त्यागने के लिए कहा।

ये समाजचेता वही संत एवं भक्त कवि हैं जिन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से 'मानव सत्य' की बात की। इन्होंने भक्ति के स्तर पर समानता का संदेश देते हुये भक्ति को सबके लिये सुलभ बना दिया। जो कि अब तक ब्राह्मणों की इच्छा पर आश्रित थी। वस्तुतः इस काल में भक्ति से कहीं अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक एवं धार्मिक मामलों के विषय में लोगों की धार्मिक संवेदनाओं और सोच में आये परिवर्तन थे। इन भक्त कवियों की कविता में हमें अन्याय, शोषण, दमन एवं सत्ता के प्रति गहरा रोष दिखाई पड़ता है। ये प्रत्येक मनुष्य की स्वतंत्रता, समानता एवं प्रेम के साथ जीने की बात का समर्थन करती है। भक्तिकालीन कविता हमें प्रश्न करना सिखाती है। वह हमें सोचने पर विवश करती है। भक्तिकाव्य में उस समय के समाज की वास्तविकताएं हैं और उनकी आलोचना भी है, सामाजिक व्यवस्थाओं के चित्र हैं एवं व्यवस्था के बन्धनों को तोड़ने की आकांक्षा भी है, सामन्ती सत्ता के अनेक रूप हैं तथा उनके आतंक के विरुद्ध निर्द्वन्द्व निडरता भी है। उसमें कहीं शास्त्र (वेद सम्मत) की रूढ़ियों का अस्वीकार है तो कहीं लोक बन्धनों की उपेक्षा का साहस है और साथ ही कहीं लोक और शास्त्र के बीच समन्वय का प्रयास भी है। उसमें उस काल के सामाजिक–सांस्कृतिक अन्तर्विरोधों की अभिव्यक्ति हैं, कहीं अन्तर्विरोधों के बीच संघर्ष की चेतना अधिक है तो कहीं समन्वय की चेष्टा।

इन तमाम बातों को ध्यान से देखें तो पता चलता है कि समूची भक्ति कविता 'लोक की चिन्ता' का काव्य है। यह संघर्ष सिर्फ राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक ही नहीं है बल्कि भाषा के स्तर पर भी 'काउण्टर कल्चर'/प्रति संस्कृति विकसित करती है। गौर करें कि यह सारी बातें अगर किसी भक्त कवि के यहाँ सर्वाधिक सशक्त रूप में अभिव्यक्त होती हैं, तो वह कबीरदास हैं। कबीर की कविता में तत्कालीन यथास्थितिवाद का सर्वाधिक विरोध है। उनकी कवितायें तद्युगीन समाज का यथार्थ चित्र हमारे सम्मुख उपस्थित करती हैं। जहाँ कबीर अपने समय के समाज में व्याप्त विसंगतियों, बुराइयों, आडम्बरों का विरोधकर जो सही है उसकी बात रखते हुये आज के समाज में सबसे प्रगतिशील एवं प्रासंगिक ठहरते हैं। वहीं समकालीन विमर्श (विशेषकर स्त्री विमर्श) की दृष्टि से कबीर नारी विरोधी/नारी निन्दक ठहरते हैं, जो कि कबीर की सामाजिक सजग छवि पर एक दाग की तरह है।हिन्दी का भक्ति–साहित्य, विशेषकर निर्गुण धारा का साहित्य, आलोचकों का प्रिय क्षेत्र रहा है। इसका कारण भक्तिकालीन साहित्य की आलोचना रही, जिसके केंद्र में प्रमुख कवि के रूप में कबीर हमारे सम्मुख आते हैं। हमें कबीर की आलोचना के कई स्तर दिखाई पड़ते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल से पूर्व ही कबीर के व्यक्तित्व एवं विचारधारा के बारे में समालोचनापरक टिप्पणी/बातें समकालीन या परवर्ती विद्वानों तथा इतिहासकारों की पुस्तकों/ग्रंथों में हमें मिलती है। यहाँ हिंदी आलोचना में कबीर की बात करने से पूर्व विभिन्न विद्वानों द्वारा कबीर पर की गयी टिप्पणियों का उल्लेख कबीर आलोचना की पूर्वपीठिका के रूप में किया जा सकता है, ताकि कबीर पर पूर्व में की गयी आलोचना परंपरा एवं उसके स्वरूप को समझा जा सके, जिस पर परवर्ती हिंदी आलोचना–संवाद की प्रक्रिया के जरिये कबीर के विभिन्न रूपों को और उनकी कविता के विविध पहलुओं को रेखांकित करने में सफल रही है। कबीर का जीवन तथा उनकी कविता हिंदी आलोचना के सर्वाधिक विचारणीय काव्य क्षेत्रों में शामिल रहा है। इसकी व्यापक, सुदीर्घ लोकप्रियता एवं क्रांतिकारी परिवर्तन की भूमिका की भी पड़ताल की है। कबीर के पश्चात धर्म एवं समाज के विषय में अभिरुचि रखने वाले सभी कवियों और इतिहासकारों ने कबीर की प्रशंसा की है, चाहे वे हिंदू हों या मुसलमान। उनकी (कबीर) वाणी ने वर्ण, वर्ग, जाति, समय, संप्रदाय तथा समाज के सभी स्तरों को लांघकर समान रूप से जनता को प्रभावित किया। सांप्रदायिक कवियों/रचनाकारों का काव्य/कृति अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना से पूर्ण होता है। फिर भी उन अतिरंजनाओं के मूल में तथ्य बीजरूप में अवश्य उपस्थित रहता है। धरमदास (संवत 1475) कबीर के शिष्य थे और कबीर के पश्चात यही गद्दी पर आसीन हुए। इन्होंने कबीर के बारे में लिखा है–''सतजुग नाम अचिंत कहाये, खोडस हंस को दई सरना।
त्रेता नाम मुनेन्द्र कहाये, मधुकर विप्र को दई सरना।
द्वापर करुनामय कहलाये, इंद्रमती के दुख हरना।
कलयुग नाम कबीर कहाये, धर्मदास अस्तुति बरना। ''1 थोड़े फेरबदल के साथ इसी से मिलता– जुलता एक अन्य पद भी मिलता है जो इस प्रकार है–
'जुगन जुगन लीन्हा अवतारा। रहौ निरंतर प्रगद् प्रसारा।।

सतयुग सतसुकृत कह टेरा। त्रेता नाम मुनेन्दहिं मेरा।।
द्वापर में करुनामय कहाये। कलियुग नाम कबीर रखाये।।
चारों युग में चारों नाउँ। माया रहित रहै तिहि ठाऊँ।।
जो जाया पहुंचे नहीं कोई। सुर नर नागर रहे मुख गोई।। '

अर्थात कबीर अजर अमर हैं। प्रत्येक युग में अलग—अलग नाम धारण करके अवतार लेते हैं। सतयुग में अचिंत/सतसुकृत नाम था। त्रेता में मुनीन्द्र, द्वापर में करुनामय तथा कलियुग में कबीर। कबीर चारों युग में इन चार अलग नामों से मायारहित होकर विराजमान रहे। अंतिम दो पंक्तियों पर ध्यान दें तो वे कबीर के व्यक्तित्व एवं उपदेश से मेल खाती हैं कि वे जीवनपर्यंत माया के बंधन से परे रहने का उपदेश देते हैं। चाहे माया महाठगिनी हम जानी ...या अन्य पद, जो माया से बचे रहने के लिए कबीर ने प्रयुक्त/कहे हैं। हिंदी आलोचना के उद्‌भव के पूर्व के रचनाकार नाभादास का भक्तमाल (जिसे उत्तर भारत के भक्ति काव्य का विश्वकोश भी कह सकते हैं) में कबीर के संबंध में एक प्रसिद्ध छप्पय मिलता है—''कबीर कानि राखी नहीं वर्णाश्रम षट दरसनी। भक्ति विमुख जो धर्म सो अधरम कर गायौ। जोग, जग्य व्रत, दान भजन विनु तुच्छ दिखायो। हिन्दू तुरक प्रमान, रमैनी, शबदी, साखी। पक्षपात नहीं बचन, सबही के हित की भाखी। आरुढ दसा हे जगत् पर मुखदेखी नाहिन भनी । कबीर कानि राखी नहीं, वर्णाश्रम षटदर्शनी ।''2 (छप्पय 516)

अगर इस छप्पय पर गौर करें तो पाते हैं कि कबीर के आधुनिक सहृदय आलोचकों ने उनके क्रांतिकारी व्यक्तित्व और सामाजिक विचारों के बारे में जो कुछ विस्तार से लिखा है, वह सब मूल रूप से नाभादास के इस छंद में स्पष्ट है। चाहे वह भक्ति विमुख धर्म को अधर्म कहने की बात हो, भजन बिना यज्ञ, व्रत, योग,दान को तुच्छ बताना और सबका हित करने वाली साखी, सबद, रमैनी में अपनी बात सुनाने की और किसी की मुँह देखी नहीं करना चाहे वह कितना बड़ा (सामर्थ्यवान/शक्तिशाली) हो। अकबर के समय में अबुल फजल ने मध्यकालीन इतिहास ग्रंथ'आइन—ए—अकबरी' में कबीर का पृष्ठ 126 पर परिचय देते हुए 'मुवाहिद' (एकता प्रेमी) शब्द का प्रयोग किया है। ''कबीर मुवाहिद यहाँ विश्राम करते हैं और आज तक तक उनके कारण और कृत्यों के संबंध में अनेक विश्वस्त जनश्रुतियाँ कही जाती हैं। वे हिंदू और मुसलमान दोनों के द्वारा अपने उदार सिद्धांतों और पवित्र जीवन के कारण पूज्य थे।''3 कबीर के गुरुभाई पीपा और रैदास ने प्रायः एक जैसे शब्दों में कबीर की प्रशंसा की है—

''जाकै ईद बकरीद नित गठरे बध करै मानिये सेप सहीद पीरां।
बापि वैसी करी पूत ऐसी धरी नाव नव खंड परसिध कबीरा।। ''4

वहीं रैदास कहते हैं—

'' जाक ईद बकरीदि कुल गठरे बधि करहि, मानियहि सेल सहीद पीरा।
बापि वैसी करी पूत सरी तिहुरे, लोक परसिधा कबीरा।। ''5

अर्थात् जिसके कुल में गोवध होता था, लोग बाह्य आडंबरों में लीन रहते थे, उसी कुल के कबीर का ऐसा आचरण था कि वे तीन लोक नौ खंड में प्रसिद्ध हो गए। यानि कुल के कर्म के विपरीत आचरण (विद्रोही प्रवृति का द्योतक) कबीर का दिखता है, जो कि कबीर की अपनी मूल प्रवृत्ति/विशेषता भी है। पीपा अन्यत्र भी लिखते हैं—

''जो कलि मांझ कबीर न होते।
तौ लै वेद अरु कलियुग मिलि करि भगति रसातलि देते।।''6

मिर्जा मोहसिन फानी ने अपनी इतिहास ग्रंथ पुस्तक' दविस्ताने मजाहिब' में कबीर के बारे में लिखा है कि—

''कबीर जुलाहान जाद कि श्रज मोवव्हिदान मशहूर हिंद अस्त।
मर्दुम बारामानन गुफतन्द दरीशहर जुलाहान जादेम्त।।''7

अर्थात् भारतवर्ष (हिंद) के जुलाहों में कबीर प्रसिद्ध अद्वैत ब्रह्म का उपासक था। लोग रामानंद से कहते हैं कि इस प्रकार के एक जुलाहे का लड़का है जो अपने को आपका शिष्य कहता है। गुरुग्रंथ साहिब में संकलित गुरुवानी, भट्टवानी एवं भक्तवानी में रैदास, फरीद, पीपा, धन्ना के साथ कबीर के भी 229 पद तथा 243 साखियाँ संग्रहीत हैं। एक पद दृष्टव्य है—

''हरि के नाम कबीर उजागर जनम जनम के काटे कागर।''8 (रागु बिलावल)

अबुल फजल, मोहसिन फानी के अतिरिक्त अब्दुल हक देहलवी, सरदार जाफरी तथा पश्चिम के विद्वान रेवरेंड जी.एच.वेस्टकाट (कबीर एंड कबीर पन्थ), फर्कुहर, जार्ज ग्रियर्सन, विल्सन (स्केच ऑफ द रिलीजस सेक्टर्स ऑफ हिंदू) आदि ने भी कबीर पर समालोचनात्मक टिप्पणी की है। रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा कबीर के पदों का ''हंड्रेड पोयम्स ऑफ कबीर'' का एवलिन अंडरहिल (पुस्तक की भूमिका अंडरहिल ने लिखी) के सहयोग से सन् 1915 ई. में अंग्रेजी में अनुवाद किया गया, जिसमें कबीर के रहस्यवादी, आध्यात्मिक, भक्ति दर्शन/पक्ष का परिचय मिलता है। रवींद्रनाथ टैगोर ने कबीर को 'मुक्तिदूत' तथा' भारत पथिक' की संज्ञा से अभिहित किया है। कबीर पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल से पूर्व विद्वानों ने जो कुछ कहा–लिखा, उसमें आलोचना के दर्शन तो नहीं होते, किंतु कबीर के व्यक्तित्व एवं विचारधारा के दर्शन अवश्य होते हैं। कबीर की आलोचना के कई स्तर दिखाई पड़ते हैं, जो मिश्र बंधुओं से शुरू होता है। मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि हिंदी के कवियों तथा उनके साहित्य को विषय बनाकर लिखने की शुरूआत मिश्र बन्धुओं ने अपनी पुस्तक हिन्दी नवरत्न में की है, जिसे अमूनन आधुनिक हिन्दी आलोचना की प्रथम पुस्तक होने का भी गौरव प्राप्त है। इससे हिन्दी में शास्त्रीय ढंग की काव्यालोचना पर बल मिला ही, साथ ही नवरत्नों में श्रेणीक्रम–निर्धारण के कारण तुलनात्मक आलोचना की भी शुरूआत हो गई। जिससे आलोचना की एक नई पद्धति का विकास हुआ जो अपने से पूर्ववर्ती समीक्षा से पूर्णतया अलग थी।

इस पुस्तक में 'पारम्परिक काव्यशास्त्रीय दृष्टि' तथा 'आधुनिकता के प्रतिमानों का एक द्वन्द्व दिखाई पड़ता है। मिश्रबन्धुओं ने 'समालोचना में दो बातों पर विशेष बल दिया है, वो हैं– 'सच्चाई' एवं 'पक्षपातहीनता'य जो किसी भी सफल आलोचक के लिए प्रारम्भिक माँग है। साहित्य में सर्वोत्कृष्ट की माँग मिश्रबन्धुओं के यहाँ दिखती है। जब वे कहते हैं कि– ''कवि को कुछ कहना था या नहीं, और उसने उसे कैसा कहा है? संक्षिप्त रीति से कहने में पहला प्रश्न यों भी कहा जा सकता है कि उसका क्या संदेश है ?.......यदि संदेश सबल होगा तो साहित्य गौण होकर फीका पड़ जाएगा और यदि साहित्य सबल रक्खा जाय, तो संदेश डूब जाएगा।''9

परन्तु समस्या यह है कि वे इस क्या और कैसे के बीच का तादात्म्य सही से कहीं बैठा पाते हैं तो कहीं पर नहीं। इसी तादात्म्य सम्बन्ध को सही से न बैठा पाने के कारण ही वे 'हिन्दी नवरत्न' के प्रथम संस्करण में कबीर को स्थान नहीं देते। परन्तु सामाजिक आग्रह के दबाव में मिश्रबन्धु जब कबीर को शामिल भी करते हैं तो द्वितीय संस्करण (हिन्दी नवरत्न में) में नौ कवि पूर्व के तो रहते ही हैं, एक और कवि बढ़ा देते हैं– कबीर को। मिश्रबन्धु अपनी तरफ से उन्हें न शामिल करने का कारण लगाते हैं कि कबीर भक्त अधिक हैं, कवि कम। परन्तु जब उन्हें वे दूसरे संस्करण में सम्मिलित करते हैं तो कहते हैं कि, उन्हें शामिल करने की वजह कवि से अधिक उनका महात्मापन था। मिश्रबन्धुओं के नवरत्न में कबीर को स्थान देना मिश्रबन्धुओं की आलोचना द्विधा को सबके सामने लाता है। क्योंकि उनके सामने प्रस्तुत प्रश्न यह था कि अच्छा धर्मोपदेश करने के बावजूद कबीर बड़े कवि क्यों नहीं हैं ?

''ब्रह्मानन्दी एक कवि भी होता है या नहीं ?......ब्रह्मानन्द का उद्गार कविता में अच्छा होगा क्योंकि यह उसका माध्यम है......हिन्दी नवरत्न में ईश्वरी विचार से आप सबसे ऊँचे मनुष्यं हैं, इसमें हमें सन्देह नहीं। सम्भव है, कोई अन्य महाशय गोस्वामी तुलसीदास और सूरदास को बढ़कर या इनके बराबर बतलायें। हमारी समझ में ये महात्मा लोग कबीरदास की ईश्वर सम्बन्धी धार्मिक उच्चता को नहीं पहुँचे।''10

इसी महात्मापन के कारण 'कबीर' हिन्दी–नवरत्न के प्रथम संस्करण में स्थान नहीं बना पाते, परन्तु दूसरे संस्करण में इनको स्थान देने का सबसे प्रभावी कारण इनका यही महात्मापन रहा। इसी आलोचना द्विधा को आधार बनाकर जो बात विश्वनाथ त्रिपाठी ने सूर और तुलसी को लक्ष्य करके लिखा है, वो बात स्वयं सूर और तुलसी पर तो लागू नहीं होती किन्तु कबीर पर यह बात सौ फीसदी फिट बैठती है–

''स्पष्ट है कि यहाँ (हिन्दी–नवरत्न पुस्तक में) तुलसी और सूर की रक्षा उनके 'महात्मापन' ने की है, कविता ने नहीं।''11

परन्तु इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि मिश्रबन्धुओं ने पहली बार कबीर के महत्त्व को पहचाना तथा उन्हें अपने ग्रन्थ में स्थान दिया। शुक्ल पूर्व आलोचना में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का भी नाम लिया जाता है। सन् 1916 ई० में हरिऔध जी ने कबीर वचनावली नाम से कबीर के सबसे उत्तम भजनों और साखियों का संग्रह किया। इनका महत्वपूर्ण कार्य यह रहा कि इन्होंने आदिग्रन्थ तथा अन्य ग्रन्थों में से

कबीर सम्बन्धी पद एवं दोहे छाँट कर एकत्रित किया। इसे हिन्दी जगत में कबीर सम्बन्धी पहली पुस्तक होने का गौरव प्राप्त है। इसमें हरिऔध ने कबीर के सम्बन्ध (कृतित्व एवं व्यक्तित्व) में लगभग 90 पृष्ठों का मुखबन्ध लिखा। वह भी कबीर के सम्बन्ध में विधवा ब्राह्मणी का पुत्र होने सम्बन्धी किंवदन्ती को स्वीकार करते है। अपने पक्ष में वे तर्क भी देते हैं कि, दरअसल कबीर अपने को जोलाहा इसलिए कहते हैं क्योंकि वे अपने जन्मकाल से ही उसी (जोलाहा परिवार) परिवेश में पले थे, तो उनका कोई दूसरा संस्कार हो ही नहीं सकता था। उनके मन में यह बात समा भी नहीं सकती थी कि मैं हिन्दू की सन्तान हूँ।

हरिऔध की 'कबीर वचनावली' के बारह वर्ष बाद आचार्य श्यामसुन्दर दास ने कबीर ग्रन्थावली (1928 ई०) सम्पादित की। इसमें भी उन्होंने कबीर को हिन्दू रक्त के गर्भ से उत्पन्न बताया। इसका कारण भी बताया कि मुसलमान के घर पले–बढ़े होने के बावजूद हिन्दू विचारों से प्रभावित होना उनके शरीर में बहने वाले ब्राह्मण या कम से कम हिन्दू रक्त की ओर ही इशारा करता है। एक जगह और वे कबीर की प्रशंसा तो करते हैं, किन्तु इसके पीछे उनकी वही ब्राह्मणवादी मानसिकता काम कर रही थी। जो कबीर को सामन्ती चेतना/ब्राह्मणवादी सोच को मजबूती देने वाली ही सिद्ध करती है। वैसे भक्ति की शुरूआत तो निर्गुण भक्ति से होती है क्योंकि तत्कालीन परिस्थिति में इतना निराशा का भाव था कि हर प्रकार की भक्ति के लिए जनता तैयार नहीं थी। वे निर्गुण भक्ति का मात्र डूबते हुये को तिनके का सहारा मात्र मानते है और कहते हैं कि 'सहायता की आशा से बढ़े हुये हाथ को वास्तविक सहारा सगुण भक्ति से ही मिला तथा केवल राम की भक्ति ही उसे किनारे पर लाकर सर्वथा निरापद कर सकी। परन्तु इससे जनता पर होने वाले कबीर के उपकार का महत्व कम नहीं हो जाता है। क्योंकि आगे समय (काल) के प्रवाह में कबीर की यह निर्गुणोपासना, भक्ति के रूप में असफल भले सिद्ध हुई किन्तु आगे कबीर की निर्गुण भक्ति ने सूर एवं तुलसी के सगुणवाद के लिए मार्ग परिष्कृत करने का काम किया ही।'

श्यामसुन्दर दास भी कबीर को वैष्णव ही सिद्ध करना चाहते हैं। ''संतों में भी कहीं–कहीं अनजान में सगुणवाद आ गया है और विशेषकर कबीर में क्योंकि भक्ति गुणों का आश्रय पाकर ही हो सकती है।''12

इसके लिए डॉ० श्यामसुन्दर दास तर्क देते हैं कि कबीर ने वैष्णव की जितनी प्रशंसा की है, वह उनके वैष्णवी (सगुणवादी सामंती चेतना) का पक्षधर होना परिलक्षित करता है। भले ही उन्होंने कहीं भी अपने को स्पष्ट तौर पर वैष्णव नहीं कहा है।

''मेरे संगी द्वै जणा एक वैष्णव एक राम।
वे है दाता मुक्ति का वो सुमिरावे नाम ।।
कबीर धनि ते सुन्दरी जिनि जाया वैसनों पूत।
राम सुमिरि निरभै हुआ सब जग भया अऊत।''13

अपने पक्ष में वे और भी तर्क देते हैं जैसे कि रामानन्द को उनका गुरु बताना तथा उन्हें शाक्तनिन्दक कहना। क्योंकि वैष्णवों शाक्तों का विरोध जगजाहिर है।

'साकत सुनहा दुनो भाई, एक नीदै एक भौंकत जाई।' हरिऔध की 'कबीर वचनावली' के अतिरिक्त बेलवेडियर प्रेस की 'कबीर साहब की शब्दावली'गोविन्दराम दुर्लभराम द्वारा सम्पादित ग्रन्थ शब्दावली मुंशी शिवव्रत लाल की 'सत्य कबीर की शब्दावली तथा 'संत कबीर कर साखी स्वामी युगलानन्द की 'कबीर की साखी, हुजूर साहब की 'कबीर की साखी, विचारदास शास्त्री की सद्गुरु कबीर साहब का साखी ग्रन्थ, महाराज राघवदास का 'सटीक साखी ग्रन्थ, रामचन्द्र श्रीवास्तव की 'कबीर साखी सुधा आदि के नाम लिये जा सकते हैं। कबीर साहित्य सम्बन्धी कार्यों के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि उनकी वाणी पर मुख्यतः दो क्षेत्रों में कार्य हुआ है, पहला साहित्यिक विद्वानों द्वारा और दूसरा कबीरपंथियों द्वारा। यद्यपि इसके अपवाद भी हैं। इनमें बाबू श्यामसुन्दर दास, डॉ० पारसनाथ तिवारी, डॉ० माताप्रसाद गुप्त तथा डॉ० शुकदेव सिंह द्वारा पाठ–निर्धारण एवं प्रामाणिकता सम्बन्धी किये गये कार्य अधिक वैज्ञानिक और सुसंगत हैं। फिर भी इनमें से कोई ग्रन्थ ऐसा नहीं है जो कबीर के समूचे साहित्य को एक साथ उपलब्ध कराता हो। इसका परिणाम यह हुआ कि साहित्यिक विद्वानों द्वारा कबीर ग्रन्थावली (जिसमें साखियों एवं पदों का महत्व दिया गया है) अपनाये जाने के कारण हिन्दी साहित्य के छात्रों का अध्ययन साखियों एवं पदों तक ही सीमित रह गया है। वे रमैनियों से अछूते ही रहे हैं, जबकि उन्हें रमैनियों से परिचित होना आवश्यक है।

निष्कर्ष:

इस तरह हम कह सकते हैं कि शुक्ल पूर्व आलोचना में कबीर काव्य का कई प्रतिमानों के आधार पर विश्लेषण किया गया है इसलिए कबीर तथा उनके काव्य की उत्तरजीविता साहित्यिक आलोचनाओं/समीक्षाओं/विमर्शों पर निर्भर नहीं है। हिंदी साहित्य जगत तथा उसके बाहर भी कबीर के समीक्षकों/आलोचकों की बहुलता है। कबीर पर आधुनिक काल में शोध परक ग्रंथों की लंबी फेहरिस्त है, किंतु कबीर के व्यक्तित्व का शुरुआती मूल्यांकन भक्ति परंपरा में ही मिलता है। आधुनिक काल में जब कबीर के ऐतिहासिक व्यक्तित्व की पड़ताल शुरू हुई तब भक्ति परंपरा का महत्व कम होने लगा, फिर भी कबीर संबंधी जानकारियों का मौलिक आधार यही स्त्रोत बने रहे। हिंदी आलोचना की कई धाराएं विकसित हुई।भारतीय विद्वानों के साथ–साथ मध्यकालीन इतिहासकार एवं विदेशी विद्वान भी कबीर की आलोचना एवं समालोचना कर्म में प्रवृत्त हुए।कबीर के महत्त्व को सबसे पहले पहचानने का श्रेय मिश्रवन्धुओं को जाता है, जिन्होंने उन्हें (कबीर) अपने ग्रंथ में स्थान दिया। अयोध्या सिहं उपाध्याय हरिऔध ने महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि इन्होंने आदिग्रन्य तथा अन्य ग्रन्थों/स्त्रोतों में से कबीर सम्बन्धी पद एवं दोहे छाँटकर सम्पादित किया, जिसे हिन्दी साहित्य जगत में कबीर सम्बन्धी पहली पुस्तक होने का गौरव प्राप्त है। वहीं डॉ० श्यामसुन्दरदास अपनी कबीर ग्रन्थावली में कबीर की प्रशंसा करते हुए उन्हें हिन्दू विचारधारा से जोडने को प्रयास करते हैं तथा निर्गुण के रास्ते उन्हें सगुण समर्थक सिद्ध करना चाहते हैं। जो कि उनकी आलोचनात्मक दुविधा को प्रदर्शित करता है।

इस तरह क्रमशः हिन्दी आलोचना संवाद प्रक्रिया के जरिए कबीर के विभिन रूपों को और उनकी कविता के विविध पक्षों को रेखांकित करने में सफल रही है। भक्तिकाल एवं कबीर संबंधी यह आलोचना क्रम निरंतर जारी है।

संदर्भ–सूची

1. धनी धरम दास जी की शब्दावली (जीवन चरित सहित) , सन् 1912 ई., बेल्वेडियर स्टीम छापाखाना, इलाहाबाद, पृष्ठ 84–85
2. प्रकाश नारायण दीक्षित (सं) भक्तमालःएक अध्ययन, प्रथम संस्करण, 1961 साहित्य भवन प्रा. लि. इलाहाबाद, पृष्ठ 69
3. कबीर ग्रंथावली/कबीर का युग–विकिस्त्रोत https%//hi-wikisource-org/wiki/%E0%A4%95%E0%A4%AC%E0%A5%80%E0%A4%B0_%E0%A4%97%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%82%E0%A4%A5%E0%A4%BE%E0%A4%B5%E0%A4%B2%E0%A5%80/%E0%A4%95%E0%A4%AC%E0%A5%80%E0%A4%B0_%E0%A4%95%E0%A4%BE_%E0%A4%AF%E0%A5%81%E0%A4%97
4. वही
5. वही
6. वही
7. वही
8. श्री गुरु ग्रंथ साहिब, अंग:721, यहाँ (गुरु ग्रंथ साहिब) में पृष्ठ के स्थान पर अंग लिखा गया है।
9. हिन्दी नवरत्न अर्थात् हिन्दी के नव सर्वोत्कृष्ट कवि, मिश्रबन्धु, गंगा पुस्तक माला, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ–1987, पृष्ठ 31
10. वही, पृ० 420
11. हिन्दी आलोचना, विश्वनाथ त्रिपाठी, पृ० 33, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली–2010
12. कबीर ग्रन्थावली, डॉ० श्यामसुन्दर दास, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, पृष्ठ 12, प्रस्तावना, 25वीं संस्करण 2064 वि०
13. वही, पृष्ठ 12

Email:prashantsinghchauhan27@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 187-189
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

చిగురు నవలిక – సమీక్ష

డా. పి. శర్వాణి
తెలుగు అధ్యాపకురాలు
మహారాజా స్వయంప్రతిపత్తి కళాశాల, విజయనగరం

పరిచయం

ఆంగ్ల సాహిత్య ప్రభావంతో వచ్చిన కవిత్వం, కథ, నవలతోపాటు **నవలిక** కూడా తెలుగు సాహిత్యంలో ప్రాచుర్యం పొందింది. ఇది కథకన్నా పెద్దది, నవలకన్నా చిన్నది. కాబట్టి ఈ ప్రక్రియను *నవలిక* అన్నారు. నవలలాగే ఈ నవలిక కూడా మానవ జీవితంలోని యథార్థ సన్నివేశాలను చిత్రిస్తుంది. ఇందులో ఇతివృత్తం, నేపథ్యం, పాత్రలు, శైలి, దృక్కోణం వంటి అంశాలు కనిపిస్తాయి.

ఇతివృత్తం

చిగురు నవలికలో రమాపతి విమలను తన మూడో భార్యగా ఇంటికి తీసుకువచ్చాడు. అతని మొదటి భార్యకు హరి అనే కొడుకు ఉన్నాడు. అతను విమలతో దాదాపు ఒకే వయస్కుడు. రెండో భార్యకు నలుగురు సంతానం. రమాపతి ఇంటిని, పిల్లలను చూసుకోవడానికి ఈ వివాహం చేసుకున్నాడు.

విమల తన కుటుంబ పరిస్థితుల వల్ల ఈ ఇంటికి వచ్చింది. బిక్కచచ్చిపోయిన విమలకు హరి అన్ని విషయాలు వివరించాడు. విమల మెల్లగా ఇంటి పరిస్థితులను అర్థం చేసుకుంటూ మసలసాగింది.

ఒక రోజు వచ్చిన విమల తల్లి రమణమ్మ, కూతురు పరిస్థితిని చూసి బాధపడింది. ఆ బాధలోనే మరణించింది. ఆమె బాలవితంతువు. కానీ రంగారావు అనే మంచి మనసున్న వ్యక్తిని పెళ్లి చేసుకుని జీవితాన్ని దిద్దుకుంది. చివరకు కూతురు పరిస్థితి తెలుసుకుని మనోవేదనతో మృతి చెందింది.

హరి డాక్టర్ చదువుతూ తనతో పాటు చదువుతున్న మాలను పెళ్లి చేసుకున్నాడు. ఆమెకు అప్పటికే ఒక కొడుకు ఉన్నాడు; భర్త మరణించాడు. పెద్ద కూతురు శాంత తాను

ఇష్టపడిన వ్యక్తితో వెళ్లిపోయింది. ఇలాంటి కుటుంబ పరిస్థితులలో చివరకు రమాపతి విమలను ఆదరించడంతో నవలిక పూర్తవుతుంది.

నేపథ్యం

చిగురు కథ మధ్యతరగతి నేపథ్యంలో జరిగింది. రమాపతి కలెక్టరాఫీసులో గుమస్తా. అతని జీవితం ఒడుదుడుకులు లేకుండా సాగుతుంది. విమల కూడా మధ్యతరగతి కుటుంబం నుంచే వచ్చింది. ఇంటి పరిస్థితులు తెలుసుకుని మసలుకుంది.

పితృస్వామ్య వ్యవస్థలో స్త్రీల పరిస్థితి ఎలా ఉంటుందో ఈ నవలిక స్పష్టంగా వివరిస్తుంది.

పాత్రలు

రమాపతి

చిగురు నవలికలో ప్రధాన పాత్ర రమాపతి. తన ఇంటిని, పిల్లలను చూసుకోవడానికి మూడు పెళ్లిళ్లు చేసుకున్నాడు. అతనికి ఆర్థికంగా ఎటువంటి బాధ లేదు. కానీ అతని మనస్తత్వం “తనకు అంగీకారంగా ఆడది కావాలి” అనే భావనతో ఉంది. దాన్ని ఎలా సాధించాలో తెలియదు. సక్రమంగా కట్టుకున్న ఇల్లాలిని ఆదరించడమే తెలియదని పెద్ద కొడుకు హరి చేత రచయిత్రి చెప్పించారు.

హరి

రమాపతి మొదటి భార్య కొడుకు. తాతగారు తల్లి పసుపు-కుంకుమ ద్వారా వచ్చిన డబ్బుతో హరిని డాక్టర్ చదివిస్తున్నారు. తన వయస్కురాలే తండ్రికి భార్యగా వచ్చి ఆదరణ పొందలేకపోతే, కొడుకుగా ఆమెకు అండగా నిలిచాడు. చదువు పూర్తయ్యాక తన స్నేహితురాలు మాలను – భర్త మరణం తరువాత కొడుకుతో బాధపడుతుంటే – ఆదర్శవివాహం చేసుకున్నాడు.

విమల

స్త్రీ పాత్రల్లో ప్రధాన పాత్ర విమల. తన తండ్రి పరిస్థితి వల్ల రమాపతిని పెళ్లి చేసుకోవాల్సి వచ్చింది. మొదట్లో పరిస్థితి అర్థంకాకపోయినా హరి సహకారంతో ఇల్లు చక్కబెట్టుకోవడం ప్రారంభించింది. తరువాత ఇంటి కోసం, పిల్లల కోసం తనను పెళ్లి చేసుకున్నాడని తెలుసుకుని తన పోరాటం తానే చేయాలనుకుంది.

రమణమ్మ

విమల తల్లి రమణమ్మ బాలవితంతువు. టీచర్ ట్రైనింగ్ చదువుతున్న రంగారావు రమణమ్మ తమ్ముళ్లకు చదువు చెప్పడానికి ఇంటికి వచ్చేవాడు. ఆమె పరిస్థితికి బాధపడి, ట్రైనింగ్ పూర్తయ్యాక రమణమ్మను పెళ్లి చేసుకున్నాడు. తన జీవితం దిద్దుకుందిగానీ, కూతురు పరిస్థితికి బాధతో కుంగిపోయి మరణించింది.

శైలి

మధ్యతరగతి జీవితానికి, పాత్రలకు తగినట్లుగా రచయిత్రి సున్నితమైన పదాలను వాడారు. ఉదాహరణకు –

1. *"విమల అలా మనసు సర్దుకుంది. ఆహార్యం మార్చుకుంది. కానీ ఇవన్నీ నాటకంలోని వేషంలా, ఆమె వయసు తక్కువను పట్టిచేస్తున్నాయి. మరి అనుభవాలు అలాంటివి."*

2. *"రెండు రోజులు నరకయాతన అనుభవించాడు. అతని గుండెలోని బాధ ఏమిటో నాకు తెలుసు. మాల పచ్చి మంచి నీళ్ళు ముట్టడంలేదు. సుఖమా దుఃఖమా గానీ ఏదో నిర్వేదంలో పడిపోయింది."*— ఇది మాల భర్త మరణయాతనను సూచిస్తుంది.

3. సంభాషణ

4. సంభాషణలు సందర్భానికి తగినట్లుగా రచయిత్రి రాయడంలో నేర్పు చూపించారు. తండ్రి-కొడుకుల భోజన సమయంలోని సంభాషణ ఉదాహరణగా—
5. "ఆ రోజు రాత్రి తండ్రితో కావాలనే హరి కూడా భోజనానికి కూర్చున్నాడు. తండ్రిని సరదా వాతావరణంలోకి తీసుకురావాలనిపించింది.
నాన్నా! అదేమిటో చెప్పుకో చూద్దాం.
రమాపతి ఒక్కసారి హరి పక్కకు భయంగా చూశాడు.
అదా... అది పచ్చడి.
ఏం పచ్చడి?
ఏం పచ్చడా... ఏం పచ్చదిరా చిన్నా? వంకాయ పచ్చడిలా ఉందీ.
అదిగో నాన్న కనిపెట్టేశాడు. చాలా బావుంది కదూ నాన్నా! వంకాయ పచ్చడి చేయడంలో పిన్ని ఎక్స్పర్టు."

6. ముగింపు

7. ఈ విధంగా చిగురు నవలికలో రచయిత్రి పి. సరళా దేవి ఇతివృత్తం ఎంపికలో, పాత్రల నిర్మాణంలో, శైలిలో, సంభాషణలో మధ్యతరగతి జీవన విధానానికి తగిన సహజత్వాన్ని, సున్నితత్వాన్ని తనదైన బాణిలో ప్రదర్శించారు. అందువల్ల ఈ నవలిక పాఠకుల గుండెల్లో నిలిచిపోయింది.

ఆధార గ్రంథాలు

1. తెలుగు కథానిక స్వరూప స్వభావాలు – పోరంకి దక్షిణామూర్తి
2. తెలుగు నవల – అంపశయ్య నవీన్
3. చిగురు, కొమ్మా బొమ్మగా – పి. సరళా దేవి

మొబైల్: 9848361522

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 190-195
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

आधुनिक समाज और तीसरे जेंडर के जीवन की त्रासदी

डॉ० प्रियंका सिंह
हिंदी अनुवादक
केंद्रीय विद्यालय संगठन, क्षेत्रीय कार्यालय, रांची

आज समाज का विकास बहुत ही तीव्र गति से हो रहा है| लोग चाँद तक जा पहुँचे हैं और मंगल पर जीवन की तलाश की जा रही है| कृत्रिम मानव का भी निर्माण हो चुका है| अर्थात् ज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मनुष्य आज बहुत आगे निकलता जा रहा है| समाज का अत्याधिक विकास हो रहा है| क्या यही विकास संवेदना के स्तर पर भी हो रहा है? क्या मानव में मानवीय मूल्यों का भी विकास उसी तरह हो रहा है? समाज में तीसरे जेन्डर की स्थिति को देखकर तो ऐसा प्रतीत नहीं होता है| समाज का एक अंश होने के बावजूद उसे समाज से काटकर अलग-थलग कर दिया जाता है| उन्हें उस बात की सजा मिलती है जिसमें उनका कोई दोष नहीं होता| जीवन के प्रत्येक पहलू से उनको वंचित रहना पड़ता है| वे परिवार, विभिन्न मानवीय रिश्ते, घर, सम्पत्ति, शिक्षा, रोजगार, प्रेम,संतुलित भोजन आदि सब से वंचित रहते है| उनको अपने परिवार का साथ नहीं मिलता| माता-पिता, भाई-बहन हर रिश्तों से उन्हें केवल निराशा ही हाथ लगती है| वे किसी से प्रेम नहीं कर सकते| शादी भी नहीं कर करते| अगर किसी से वह भावनात्मक रूप से जुड़ गये तो उन्हें दूसरी तरफ से केवल निराशा ही मिलती है| शिक्षा से भी उन्हें वंचित रहना पड़ता है| शिक्षा जो एक ऐसा माध्यम है जिससे जन्म, जाति, धर्म, वर्ग आदि के बन्धन को तोड़ा जा सकता है| शिक्षा प्राप्त करने का मौका भी उन्हें नहीं मिलता है| शिक्षा के अभाव में वह रोजगार भी प्राप्त नहीं कर सकते है| नौकरी तो दूर की बात है उन्हें कोई छोटा-मोटा काम भी करने नहीं देता है| उन्हें दुत्कार कर भगा दिया जाता है| गुलाम मंडी की यह पंक्तियाँ इस बात का गवाह देती है- "हिजड़े से बरतन मंजवायेगे क्या? मैंने कह दिया|........से बरतन थोड़ी माँजते है, माँजते तो हाथ से ही है न| तो धराती ने थाने में रिपोर्ट कर दी| हिजड़ा घर आकर औरतों को छेड़ रहा है| अश्लील बातें कर रहा है| पुलिस मुझे पकड़कर ले गयी मारा भी रेप भी किया|"1 ऐसी स्थिति में वे क्या कर सकते है| समाज उन्हें पैसे कमाने का कोई साधन नहीं देता| यह मानव समाज की कैसी असंवेदनशीलता है| उनके सामने पैसे मांगने के अलावा कोई और माध्यम नहीं रह जाता है और ऐसा करने पर समाज उन्हें बड़ी हिकारत की दृष्टि से देखता है| किसी के घर बच्चा हो या शादी व्याह का मौका उनके आशीर्वाद के लिए उन्हें बड़े आदर भाव से बुलाया जाता है लेकिन वह कभी रास्ते आड़े आ जाये तो अपशकुन मानने लगते है| "जिनके

नवजात शिशुओं को ढूंढ़-ढांढ़ नाच-गाने आशीषने पहुँचते हैं आप, उन्हीं के घर दूसरे रोज पहुँचकर देखिए? घर का दरवाजा आपके मुंह पर भेड़ दिया जाएगा|”2

साहित्य एक ऐसा माध्यम है जो क्रांति लाने की क्षमता रखता है| दलित विमर्श स्त्री विमर्श पर काफी कुछ लिखा जा रहा है| यह इसी का परिणाम है कि समाज में स्त्री और दलितो की स्थिति पर ध्यान दिया जा रहा है और बहुत सुधार भी देखने को मिला है| उसी तरह हिन्दी उपन्यासों में थर्ड जेन्डर की कथा को भी बड़ी तत्परता से लिखा जा रहा है| यमदीप, तीसरी ताली, किन्नर कथा, गुलाम मंडी एवं पोस्ट बॉक्स नं० २०३ नाला सोपारा आदि ऐसे ही उपन्यास हैं जिसमें थर्ड जेन्डर के जीवन की त्रासदी का बड़ा ही मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है| इन सभी उपन्यासों में चित्रा मुद्गल द्वारा रचित उपन्यास नाला सोपारा अपने-आप में एक अनूठा उपन्यास है| जिसमें समाज में थर्ड जेन्डर की स्थिति को बड़ी ही साफगोही के साथ सामने रखा गया है| इसमें यह दिखाया गया है कि एक थर्ड जेन्डर के व्यक्ति को कैसी-कैसी परिस्थितियों में जीवन जीना पड़ता है| कैसी-कैसी मानसिक एवं शारीरिक प्रताड़ना सहनी पड़ती है| इसी समाज में जन्म लेने के बावजूद उसे इसी समाज का हिस्सा रहने नहीं दिया जाता है| उनका अस्तित्व, वज़ूद सब ताक पर रख दिया जाता है| और ऐसी परिस्थिति में समाज क्या उनका अपना परिवार भी उनका साथ छोड़ देता है| किसी बच्चे का अपने माता-पिता के प्रति निम्नलिखित कथन उसकी मानसिक स्थिति को स्पष्ट ही बयां कर रही है- "तूनें, मेरी बा, तूने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाइयों के हाथ मासूम बकरी सा सौप दिया|”3 बचपन के नाजुक पलो में उनको अपने घर से बाहर निकाल दिया जाता है और मज़बूरन उन्हें थर्ड जेन्डर के समूह ने जाकर शामिल होना पड़ता है जो उन्हें बिल्कुल भी मंजूर नहीं होता है| उनके बीच पहुँच कर भी उन्हें कई प्रकार की प्रताड़नाओं का सामना करना पड़ता है| शारीरिक यातनाओं से लेकर मानसिक यातनाएँ भी और ऐसे में उनका परिवार भी उनका साथ नहीं देता| उनके इस परिस्थितियों के सामने कानूनी नियम और संविधान बौने से हो जाते है| संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार भी उनके पास नहीं होता है जिसके अनुसार वह अपनी मर्जी से अपना जीवन जी सके| उसे किन्नर समूहों द्वारा जबरन उठाकर ले जाया जाता है और इसमें पुलिस या कानून भी कुछ नहीं करता है| "उनके पास पक्की खबर है| वे मुझे देखना चाहते हैं, साथ ले जाना चाहते है| साथ ले जाने से उन्हें कोई रोक नहीं सकता| दुनिया की कोई ताकत नहीं|”4 किन्नर समूहों को यह अधिकार कौन देता है कि वे एक बच्चे को उसके परिवार से अलग कर अपने साथ ले जाएं| यह किसी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के खिलाफ है। लेकिन वे ऐसा करते है और उनका कोई कुछ बिगाड़ नहीं पाता है| न ही उनके खिलाफ कोई कानूनी कारवाई होती है|

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज का निर्माण विभिन्न मानवीय संबंधों से होता है| विभिन्न मानवीय संबंधों से परिवार बनता और परिवार से समाज| इस समाज के विभिन्न मानवीय संबंधों में पति-पत्नी, माता-पुत्र, पिता-पुत्र, भाई-बहन, दोस्त, रिश्तेदार आदि संबंध आते है| इन सभी संबंधों में अगर सबसे श्रेष्ठ और अटूट रिश्ता किसी को कहा जाए तो वह है माँ-बच्चे का रिश्ता| इस संबंध का विस्थापन कोई अन्य सम्बंध नहीं कर सकता है| एक बच्चे का अपनी माँ से या एक माँ का उसके बच्चे से संबंध उस समय ही बन जाता है जब वह इस धरती पर आया भी नहीं होता है| पूरे नौ महीने माँ अपनी कोख़ में उसे पालती है| फिर जब वह इस संसार में आता है तो उसका लालन-पालन करती है| उसे चलना सिखाती है, बोलना सिखाती है संसार के अनुसार ढ़लना सिखाती है| माँ-बच्चे का रिश्ता अनमोल रिश्ता है| जब एक माँ को अपने हृदय के टुकड़े को स्वयं अपने घर से बाहर निकालना पड़ता है तो सोचिए उस बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ता है| विनोद का यह कथन इस बात पर प्रकाश डालता है कि उस बच्चे की मानसिक स्थिति कितनी दयनीय हो जाती है| उसे अपनी माँ से बात करने के लिए पत्र का सहारा लेना पड़ता है और तो और उसकी माँ विनोद के पत्र को 'अपने बच्चे के पत्र को' सबसे छुपा कर पढ़ती

है| इतना ही नहीं विनोद की बा उसे घर पर पत्र लिखने से मना कर देती है उसके लिए वह पोस्ट बॉक्स नं० लेती है जिसपर विनोद अपनी माँ को पत्र भेज सके| "रूक-रूक बा! फोन नहीं करूंगा तो तू मुझे पोस्ट बाक्स नम्बर कैसे दे सकेगी|..... तीन रोज बाद तूने पोस्ट बॉक्स नम्बर दे दिया था| तेरी फुर्ती देख मैं दंग रह गया था|"5 यह कैसा समाज है कि एक माँ को अपने बच्चे से बात करने के लिए पोस्ट बॉक्स नं० लेना पड़ा।

नाला सोपारा के आरम्भ के कुछ पृष्ठों को पढ़ने से आँखे स्वयं को रोक नहीं पाती है और वह छलक ही उठती है| अपनी माँ से बिछड़ने का दर्द सोच से भी परे है। यह थर्ड जेन्डर के जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना है कि माँ अपने बच्चे को अपने पास रखना चाहती है, बच्चा भी अपनी माँ के पास रहना चाहता है लेकिन यह समाज उन्हें अपने परिवार से दूर कर देता है और उनके तर्क निराधार होते है|

भारत एक गणतांत्रिक देश है| यहाँ पर सभी को अपनी स्वेच्छा से कहीं भी आने-जाने एवं रहने का पूरा अधिकार है| सभी व्यक्ति समान है| कोई किसी पर अत्याचार नहीं कर सकता| किसी भी दुर्बल या असहाय को सताया नहीं जाता। अगर कोई किसी पर अत्याचार करता है तो उसके विरूद्ध कड़े कानून है| विभिन्न प्रकार के दण्ड का भी प्रावधान है। लेकिन जब एक हिजड़ा समूह बड़ी निर्दयता से एक बच्चे को उसके घर से जबरन उठा ले जाता है तो कोई कुछ नहीं करता है| उसके खिलाफ कानून भी कोई कदम नहीं उठाता है| सभी उनके सामने बोलने से डरते है| ये कैसी विडम्बना है कि स्वतंत्र राष्ट्र में भी एक व्यक्ति स्वतंत्र नहीं है| उसपर अत्याचार हो रहे है और कोई कुछ नहीं करता है| विनोद का निम्न कथन इस बात पर प्रकाश डालता है- "मेरी सुरक्षा के लिए कोई कानूनी कार्रवाई क्यों नहीं की? मनसुख भाई जैसे पुलिस अधीक्षक पप्पा के गहरे दोस्त के रहते हुए?"6 विनोद द्वारा कहा गया यह कथन थर्ड जेन्डर की मानसिक पीड़ा को उजागर कर रहा हैं कि सुरक्षा के लिए जो सभी पुलिस व्यवस्था पर विश्वास करते हैं वे पुलिसकर्मी भी थर्ड जेन्डर के संदर्भ में कुछ नहीं कर पाते है| सारे कानून अपने हाथ खड़े कर देते है| ऐसी स्थिति में वह बिल्कुल निःसहाय महसूस करता है|

समाज में तीसरे जेन्डर की स्थिति शारीरिक रूप से असमर्थ व्यक्तियों से भी खराब है गुलाम मंडी की अंगूरी कहती है- "और नहीं तो क्या दुत्कार दुत्कार के तो भगा देते हैं सब जगत से| लंगड़े-लूले को तो कोई नहीं दुत्कारता, अन्धे-काने से तो कोई नफरत नहीं करता| वैसे ही हमको खुदा ने बनाया, जैसे है और नहीं तो क्या?"7 समाज का प्रत्येक व्यक्ति विकलांग लोगों जैसे-अंधे, लंगड़े बहरे आदि व्यक्तियों से कहीं न कहीं सहानुभूति की भावना रखता है| लेकिन वहीं वह किसी थर्ड जेन्डर के व्यक्ति को देखते ही उससे मजाक करने लगते है| उन पर हँसना प्रारम्भ कर देते है| कई तो अभद्र तरीकों से उन्हें छेड़ते है| "गद्गद तिवारी जी पांचवी बार इठलाए, 'देखो पूनम, एक नृत्य तुम्हें हमारी फरमाइश पर भी करना होगा? 'बोलिए'! 'वही, लौंडा नाच| चेहरे पर घूंघट खींच तुम जो लोच खाती हुई बल-खा-बल खा गजब ढ़ाती हो, वही, वही|"8 तिवारी जी की तरह समाज में आते जाते ऐसे कई लोग मिल जाते हैं जो इन्हें कुदृष्टि से देखते है| ऐसी स्थिति में एक तीसरे जेन्डर के व्यक्ति के मन पर क्या गुजरती है इस बात को केवल वे ही समझ सकते है| धीरे-धीरे तो वे ऐसी हरकतो के आदि हो जाते है| फिर उन्हें कोई असर नहीं पड़ता है कि यह उनके आत्मसम्मान को ठेंस पहुँचा रहा है| वह भी उनकी हँसी में अपनी हँसी मिला देते है और अपने आत्म-सम्मान की बली दे देते है| गुलाम मंडी की पात्र अंगूरी अपनी कहानी सुनाते समय भी इस प्रकार की घटना का उल्लेख करती है- "मेरे दाढ़ी-मूंछ नहीं निकले| आवाज छोरियों जैसी रह गयी तो सब मेरे को मारते-चिढ़ाचे-खिझाते थें| बाप भी जब देखो, हाथ छोड़ देता था|"9 अंगूरी के इस बात से उसके मन की पीड़ा को महसूस किया जा सकता है कि बालक मन पर ऐसे व्यवहार का क्या प्रभाव पड़ा है| उसे कितना दुख हुआ होगा।

तीसरे जेन्डर के जीवन की यह त्रासदी होती है कि उन्हें अपने जीवन में कभी न कभी शारीरिक शोषण का शिकार होना पड़ता है| रेप, बलात्कार जैसी अमानवीय घटनाएँ उनके साथ होती है और कोई उनकी सुनने वाला नहीं होता है| अंगूरी अपनी कहानी बताते समय यह बताती है कि किस प्रकार काम ढूंढ़ने के क्रम में पुलिस उसे पकड़कर ले जाती है और उसका रेप भी करता है- "पुलिस मुझे पकड़कर ले गयी| मारा भी और रेप भी किया| अब पूछो कानून के रखवालों से, भला हिजड़ों को पुरूष थाने में क्यों भेजते हैं| नहीं तो बनाएँ तीसरा थाना। नहीं क्या|"10 यहाँ अँगूरी की मनः स्थिति साफ ही समझी जा सकती है| वह रेप के बात को बड़ी सरलता से कह जाती है और अपने अधिकार पर अधिक जोर डालती है कि "बनाएं तीसरा थाना| नहीं क्या|" थर्ड जेन्डर की यह स्थिति हो जाती है कि रेप जैसी बात तो उनके जीवन में घटते ही रहता है| उनके मन की यह कठोरता हमारे समाज का ही देन है| रेप जैसी घटनाओं का उल्लेख प्रायः सभी थर्ड जेन्डर विषयक उपन्यासों में देखने को मिल ही जाती है| नाला सोपारा में पूनम जोशी के साथ भी बलात्कार की घटना घटती है जो दिल दहला देने वाली है| विधायक जी के भतीजे और उसके चार दोस्तो ने मिलकर पूनम जोशी का बलात्कार करते हैं| "खामोशी से वह उन्हें अपना गुप्तांग दिखा दे तो वह देखकर चुपचाप खाना खाने निकल लेंगे|"...... "वहशियों ने उठाकर झुलाते हुए उसे बेरहमी में फर्श पर चित्त पटक दिया"|.... दीमक की आड़ी-तिरछी रेंगती बाम्बियां लहू की नदियों में बदल चुकी थीं| ...."पाश्विकता का नृशंस नाच चरम पर पहुँचकर बारी-बारी श्रृंखलित हो गया|"11 पूनम जोशी के साथ घटी यह घटना इस बात की ओर संकेत देती है कि ऐसी घटनाएँ होती रहती है जिसके खिलाफ कोई कारवाई नहीं की जाती है| थर्ड जेन्डर के जीवन की महत्वकांक्षाओं को विधायक जी के भतीजे जैसे जानवरों द्वारा उसे तार-तार किया जाता है| और सभ्य समाज अपने कान बंद किये विकास के पथ पर आगे बढ़ता जा रहा है|

जहाँ तक शिक्षा के अधिकार की बात है- हम सभी जानते है कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद २१ (क) में वर्णित है कि 'राज्य ६ से १४ वर्ष के आयु के समस्त बच्चों को ऐसे ढ़ग से जैसा कि राज्य, विधि द्वारा अवधारित करें, निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करेगा|" (भारतीय संविधान ८६ वां संशोधन) अर्थात् अनिवार्य शिक्षा प्रत्येक बच्चे का संवैधानिक अधिकार है| लेकिन थर्ड जेन्डर के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है कि उन्हें शिक्षा जैसे अनमोल रत्न से वंचित रहना पड़ता है| कुछ बच्चों को अगर उसकी पहचान छुपाकर स्कूल भेजा जाता है तो भेद खूलने पर उसका परिणाम भयानक होता है| "बड़े मजे से कह रही है स्कूल जाने की उम्र हो गयी थी| कोई भरती करता क्या पाठशाला में? पहले पूछते मेल कि फिमेल| अपनी वे शर्मिला है न, छोरा बन के भरती हुई थीं, तो बहनजी ने एक दिन चड्डी उतरवा ली थी उसकी और जूते मार के स्कूल से निकलवा दिया था उसको|"12 हम ऐसे समाज में रह रहे है जिसमें एक शिक्षक की मानसिकता भी इतनी संकिर्ण हो जाती है कि वह सही गलत विचार करना भूलकर केवल यह बात ध्यान में रखते है कि थर्ड जेन्डर स्कूल में अन्य बच्चों के साथ नहीं पढ़ सकते| साथ ही साथ वह मेल चुने या फिमेल। ये भी बहुत बड़ी स्मस्या सामने आती है| नाला सोपारा का नायक विनोद भी अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर पाता है| उसे किन्नर समूह से बचने के लिए पढ़ाई छोड़ घर पर बैठना पड़ता है| विनोद का कथन है- "मुझे छुट्टी नहीं करनी| मेरी पढ़ाई बर्बाद हो रही है| पिछड़ जाऊंगा मैं अपनी कक्षा में।पिछड़ना नहीं चाहता मैं| मैं बोर्ड टॉप करना चाहता हूँ| मैं टॉप कर सकता हूँ पप्पा! मैं टॉप करके दिखाऊँगा| मुझे स्कूल जाने दो...प्लीज पापा प्लीज|"13 विनोद का यह कथन हृदय की पिघला देने वाला है| जिसमें उसके मन में बसे सपने साफ दिखाई दे रहे हैं| वह अपनी जीवन में कुछ करना चाहता है लेकिन उसकी चाहत पूरी नहीं हो पाती| और इसका कारण है समाज की खोखली रूढ़िवादी विचारधारा|

थर्ड जेन्डर की जीवन की त्रासदी का मुख्य कारण है उनका अधूरा पन| उनके जननांग अविकसित होते है| वे अपने ही समान संतान की उत्पन्न करने में असमर्थ होते है| जिसके कारण उनके विवाह में परेशानी होती है| कोई

उनसे विवाह नहीं करना चाहता या कह सकते है कि नहीं करता है| इस तरह उनकी अपनी कोई वंश परम्परा नहीं होती है और उनका अपना परिवार भी नहीं होता है| मूलतः इन्हीं कारणों से इन्हें घर से निकाल दिया जाता है या फिर कुछ मानसिक एवं शारीरिक प्रताड़ना को न सहते हुए स्वयं घर छोड़ देते है या फिर किन्नर समूह इन्हें अपने साथ लेकर चला जाता है| जिसका जिक्र विनोद अपनी किन्नर सभा में करता है- "उनका जन्म कलंक है| मात्र इसलिए, वे लिंग दोषी है? सन्तान पैदा नहीं कर सकते| भोग सुख नहीं उठा सकते| भोग सुख दे नहीं सकते|"14

तीसरे जेन्डर के जीवन की यह बड़ी त्रासदी है कि उनका अपना कोई पहचान नहीं होता है| जब किन्नर समाज में उन्हें मिलाया जाता है तो उनका नाम बदल दिया जाता है| उनका अपना अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है| किसी किसी को तो अपना पहचान ही पता नहीं होता है कि वो ये कौन? उनका परिवार कहाँ है? वे किस धर्म जाति के थे? आदि| नाला सोपारा की पूनम जोशी का अपने माता-पिता के संदर्भ में कही गई बातें हास्यास्पद होते हुए भी तीखी भेदन क्षमता रखती है- "रोज आईने में पच्चीसों दफे अपना थोबड़ा देखते हुए मैं उन्हें अपने में देखती हूँ|'... चलो एक काम करते है| तुम्हारी माँ और बाबूजी का नामकरण कर देते हैं| अभी इसी वक्त|' 'माँ के लिए सविता देवी कैसा रहेगा?' 'सविता नहीं कविता'... कविता थोड़ा माडर्न नाम है|... कविता माडर्न है, तो है| मुझे पसन्द है| मां का नाम कविता ही होगा|"15 यहाँ वर्तालाप में भले ही मजाक किया गया है लेकिन यह कितनी बड़ी त्रासदी है कि इनको अपने नाम के साथ अपने माता-पिता का भी नाम बदलना पड़ता है| व्यक्ति का नाम ही उसकी पहचान है वह भी उनसे छिन लिया जाता है| गुलाम मंडी की रानी अपना परिचय देते हुे कहती है- "मेरा नाम रानी नहीं, राजा था".... नाम ही राजा नहीं, मैं तो थी भी राजा बेटा|"16 एक थर्ड जेन्डर की मानसिक स्थिति का पता रानी द्वारा दिये गये परिचय से ही लगाया जा सकता है कि उनके मन में कितनी पीड़ा है| और उनकी पीड़ा पर सभी हँसते है| नाला सोपारा के विनोद का भी नामकरण बिमली के रूप में किया जाता है लेकिन वह उसे कभी मानता नहीं है|

इस प्रकार तीसरे जेन्डर के जीवन की त्रासदी की कोई सीमा नहीं है| उनके जीवन की त्रासदी को शब्दो में प्रकट नहीं किया जा सकता है| उन्हें जीवन की मूल भूत आवश्यकता भी उपलब्ध नहीं हो पाती है| सरकार एवं समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपने सोच में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है| सबसे पहले परिवार को लोकापवाद के कारण अपने बच्चे को जीते-जी नरक में नहीं ढकेलना चाहिए| चित्रा मुद्गल विनोद के माध्यम से यह कहलाती है कि लिंग दोषी बिरादरी की घर वापसी को वह सुनिश्चित होनी चाहिए| सरकार कानून बनाए| बाध्य करे अभिभावकों को| घर से बहिष्कृत बच्चों को वह जिस भी उम्र के पड़ाव में हो, अपने साथ रखे| उन्हें चुनने की सुविधा दिया जाए वे जिसे खाने को वे स्वयं के लिए चूनना चाहें, जो होना चाहें| सभी या पुरूष।खामोशी से चुन पाए। उन्हें अलग से चिह्नित करना घोर अमानवीय कृत्य है| किन्नर चाहे जिस भी वर्ग की संतान हों, चाहे जिस जाति-बिरादरी, समुदाय से संबंधित हों, उसी जाति-वर्ग के अनुसार उन्हें अपना सामान्य जीवन जीने की सुविधा मिलनी चाहिए| अगर वे आरक्षित श्रेणी के माता-पिता की सन्तानें है तो वे उन आरक्षित श्रेणी को प्राप्त होने वाली सुविधाओं की हकदार हो। समाज में सबके लिए बराबर स्थान और संसाधन है। आवश्यकता है संवेदनशीलता और जागरुकता की।

संदर्भ ग्रंथ:-

1. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-71
2. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-186

3. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-11
4. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-12
5. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-19
6. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018, पृष्ठ संख्या-11
7. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-69
8. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018,पृष्ठ संख्या-116
9. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-71
10. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-71
11. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018,पृष्ठ संख्या-205
12. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-69
13. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018,पृष्ठ संख्या-15
14. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018,पृष्ठ संख्या-185
15. मुद्गल चित्रा, नाला सोपारा- पोस्ट बॉक्स न. 203 स्पेस पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, 2018,पृष्ठ संख्या-55
16. भुराड़िया निर्मला, गुलाम मंडी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2016, पृष्ठ संख्या-72

rsdpriyankasingh@gmail.com
8250929504

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 196-199
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

विकसित होता समाज और नारी अस्मिता के प्रश्न

डॉ० दीपमाला
असिस्टेंट प्रोफेसर ,
हिंदी विभाग, धर्म समाज कालेज, अलीगढ़, 202001

शोधसार (Abstract)
प्रस्तुत शोध आलेख 'विकसित होता समाज और नारी अस्मिता के प्रश्न' के माध्यम से समकालीन समाज में स्त्री के अस्तित्व, पहचान और स्वत्व के अवधारणात्मक विस्तार का विवेचन करता है। 'अस्मिता' को मात्र एक शब्द न मानकर 'होने के बोध' और 'स्वतंत्र चेतना' के रूप में परिभाषित करते हुए, यह आलेख रेखांकित करता है कि नारी की पहचान को रिश्तों की परिधि से मुक्त कर उसे एक स्वायत्त मानवीय इकाई के रूप में स्वीकार करना अनिवार्य है।
बीज शब्द : नारी अस्मिता, अवधारणात्मक विस्तार, संवेदन शून्यता, संस्कार विहीन शिक्षा, दृष्टिकोण परिवर्तन।

प्रस्तावना

'अस्मिता' शब्द संस्कृत की 'अस्मि' धातु से बना है, जिसका अर्थ है— "मैं हूँ" या "होने का बोध"। अतः नारी अस्मिता का सीधा और गहन अर्थ है— स्त्री का अपने अस्तित्व, अपनी पहचान और अपने स्वत्व के प्रति पूर्ण सजग होना। यह मात्र एक शब्द नहीं, बल्कि एक चेतना है जो स्त्री को किसी के 'सापेक्ष' नहीं, बल्कि 'स्वतंत्र' रूप में परिभाषित करता है।

नारी अस्मिता का अर्थ उसे केवल 'माता', 'पुत्री', 'पत्नी' या 'बहन' के रिश्तों की परिधि से मुक्त करना है जिसमें उसकी पहचान उसकी अपनी मेधा प्रतिभा और आत्मसम्मान से हो।सदियों से समाज ने नारी को 'पर-परिभाषित'किया है। कहने का अभिप्राय यह है कि नारी को केवल दूसरे की दृष्टिकोण से देखा गया ,उसकी अपनी भी कोई इच्छा है उसका अपना भी कोई आत्म सम्मान है, इन सबको कभी भी नजर में नहीं रखा गया ,हमेशा उसे दूसरे की दृष्टिकोण से ही परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। उसकी अपनी प्रसन्नता ,उसका आत्मसम्मान ,उसकी अपनी गरिमा, उसकी अपनी अस्मिता, पहचान इन सबको ध्यान में नहीं रखा गया। इस पर भी विचार करना होगा। उसकी अस्मिता तब तक

सुरक्षित नहीं है जब तक उसे एक स्वायत्त मानवीय इकाई के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता। अस्मिता का अर्थ है कि उसकी पहचान उसके जैविक स्वरूप से नहीं, बल्कि उसकी मेधा, उसके विचारों और उसके निर्णयो से है।

अस्मिता का एक अनिवार्य आयाम है— स्वयं के लिए निर्णय लेने का अधिकार। चाहे वह शिक्षा हो, कैरियर हो या उसके शरीर से जुड़े निर्णय; यदि स्त्री के पास अपने जीवन की दिशा तय करने की शक्ति नहीं है, तो वह 'अस्मिता विहीन' है। अस्मिता वह स्वर है जो सामाजिक दबावों के बीच भी अपनी मौलिकता को बचाए रखता है।

नारी अस्मिता का अर्थ है स्वयं को 'उपभोग की वस्तु' (Object) समझने वाली दृष्टि को नकारना। जब एक स्त्री समाज की उन कुत्सित मान्यताओं को चुनौती देती है जो उसे केवल एक देह मानती हैं, तब उसकी अस्मिता जागृत होती है। यह 'स्व' (Self) की वह पहचान है जो उसे आत्म-सम्मान के साथ खड़े होने और शोषण के विरुद्ध मुखर होने का साहस देती है।

दार्शनिक स्तर पर नारी अस्मिता उस 'पूर्णता' का नाम है जिसमें वह प्रकृति की सृजन शक्ति भी है और आधुनिक युग की बौद्धिक मानवीय संपदा भी। यह वह 'आंतरिक प्रकाश' है जो उसे यह बोध कराता है कि वह विकास की किसी भी प्रक्रिया में पुरुष के पीछे चलने वाली छाया नहीं, बल्कि उसके समानांतर चलने वाली एक स्वतंत्र प्रकाश-पुंज है। इस विषय में महादेवी वर्मा ने लिखा है- "स्त्री को अपने अस्तित्व को पुरुष की छाया बना देना चाहिए ,अपने व्यक्तित्व को उसमें समाहित कर देना चाहिए इस विचार का पहले कब आरंभ हुआ यह निश्चय पूर्वक कहना कठिन है परंतु इसमें यह संदेह नहीं कि यह किसी आपत्तिमूलक विषवृक्ष का ही विषमय फल रहा होगा ।जिस अशांत वातावरण में पुरुष अपनी इच्छा और विश्वास के अनुसार स्त्री को चलाना चाहता था उसमें इस भ्रमात्मक धारणा को कि स्त्री स्वतंत्र व्यक्तित्व से रहित पद की छाया मात्र सिद्धांत का रूप दे डाला ।इस भावना ने इतने दिनों में कितना अपकार कर डाला है यह इस जाति की युगांतर तक भंग ना होने वाली निद्रा और निश्चेष्टता देखकर ही जाना जा सकता है उसके पास ना अपनापन है और ना वह अपनापन चाहती ही है"1

जब हम एप्स्टीन केस या समाज के प्रबुद्ध वर्ग की संवेदनहीनता की चर्चा करते हैं, तो हम वास्तव में इसी 'अस्मिता' के हनन की बात कर रहे होते हैं। जब कोई व्यक्ति नारी का अनादर करता है, तो वह केवल एक अपराध नहीं करता, बल्कि वह उस स्त्री की 'अस्मिता' (उसके होने के बोध) को कुचलने का प्रयास करता जो कि स्त्री के प्रति पाशविक सोच को दर्शाती है। इतना प्रबुद्ध शिक्षित होने के बाद भी यदि मनुष्य संवेदनशील ना बन पाए तो फिर भौतिक विकास का कोई अर्थ नहीं रह जाता।

-इक्कीसवीं सदी का मानव स्वयं को 'सभ्य', 'शिक्षित' और 'विकसित' होने का दंभ भरता है। हम अंतरिक्ष की दूरियाँ नाप रहे हैं और तकनीक के शिखर पर हैं, लेकिन प्रश्न यह उठता है कि क्या मनुष्य वास्तव में मानसिक रूप से विकसित हुआ है? विकास के तमाम दावों के बीच जब हम 'नारी अस्मिता' और उसके प्रति समाज के व्यवहार को देखते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है कि मनुष्य अपनी आदिम 'पशु प्रवृत्ति' से रत्ती भर भी ऊपर नहीं उठ पाया है। आज भी स्त्री के प्रति पुरुष की दृष्टि संकुचित और भोगवादी बनी हुई है, जो मानवता के लिए एक गंभीर चेतावनी है।

सबसे विडंबनापूर्ण स्थिति तब उत्पन्न होती है जब समाज का वह वर्ग, जिसे हम 'शिक्षित', 'बुद्धिजीवी' या 'प्रबुद्ध' कहते हैं, अपराध की एप्सटीन फाइल जैसी घटनाओं में अपराधी की भूमिका में खड़े नजर आते हैं। शासन, सत्ता और उच्च पदों पर बैठे ये तथाकथित लोग, जिनके पास समाज को दिशा देने की जिम्मेदारी है, जब स्वयं स्त्री के प्रति अपनी संकुचित और विकृत मानसिकता को उजागर करते हैं, तब पूरी मानवता शर्मसार होती है।

यहाँ प्रश्न यह है कि क्या ये तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग के लोग एक क्षण के लिए भी यह सोचते हैं कि यदि ऐसा ही अमानवीय व्यवहार उनकी अपनी पुत्री, बहन या परिवार की किसी महिला के साथ हो, तो उन्हें कैसा लगेगा? या यदि वे स्वयं स्त्री होते और उनके साथ ऐसा व्यवहार होता, तो उनकी आत्मा पर क्या गुजरती? संवेदनशीलता का यह अभाव ही उनकी 'घृणित मानसिकता' का परिचायक है।

यह कटु सत्य है कि समाज में कुछ ही ऐसे लोग होते हैं जो ऐसे घृणास्पद मानसिकता वाले होते हैं और उनके कारण पूरी मानवता पूरी मनुष्य जाति संदेह के घेरे में आ जाती है। समाज के कुछ मुट्ठी भर व्यक्तियों की नृशंस और क्रूर हरकतें पूरी मानव जाति के माथे पर कलंक लगा देती हैं। जब रक्षक ही भक्षक बन जाए या शिक्षित वर्ग ही कुंठित मानसिकता का पोषण करने लगे, तो समाज का ताना-बाना बिखरने लगता है। उच्च शिक्षा और ऊंचे पदों का तब तक कोई मूल्य नहीं है, जब तक वे व्यक्ति को एक संवेदनशील मनुष्य न बना सकें।

स्त्री को केवल एक 'वस्तु' समझने की दृष्टि ही सभी अपराधों की जड़ है। इस विषय में महादेवी वर्मा का कथन है-"पुरुष के समान स्त्री भी कुटुंब समाज नगर और राष्ट्र की विशिष्ट सदस्य है तथा उसकी प्रत्येक क्रिया का प्रतिफल सबके विकास में बाधा भी डाल सकता है और उनके मार्ग को प्रशस्त भी कर सकता है। प्रायः पुरुष का जीवन अधिक स्वच्छंद वातावरण में विशिष्ट व्यक्तियों के संसर्ग द्वारा बनता है और स्त्री का संकीर्ण सीमा में परंपरागत रूढ़ियों से- जिससे ना उसे अपने कुटुंब से बाहर किसी वस्तु का अनुभव होता है ना अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान।कहीं यह विषमता और कहीं इसकी प्रतिक्रिया जीवन को एक निरर्थक रण क्षेत्र बनाकर उसकी सारी उर्वरता को नष्ट तथा सरसता को शुष्क किए दे रही है"2 आधुनिकता का चोला ओढ़ने मात्र से विकास नहीं होता। वास्तविक विकास तब माना जाएगा जब समाज का हर व्यक्ति—चाहे वह किसी भी पद पर हो—स्त्री को पूर्ण सम्मान और गरिमा के साथ देखने की दृष्टि विकसित करेगा। जो लोग अपनी क्रूर हरकतों से मानवता को शर्मसार कर रहे हैं, उन्हें यह समझना होगा कि उनकी पाश्विकता न केवल एक स्त्री का जीवन नष्ट करती है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के विश्वास और समाज की नैतिकता की नींव को भी हिला देती है।

एन० एफ० एच० एस० की रिपोर्ट के अनुसार विश्व भर में महिलाओं के प्रति अपराध एक गंभीर मानवाधिकार मुद्दा हैजो हर 11 मिनट में एक महिला की हत्या (करीबी साथी/परिवार द्वारा) और हर तीन में से एक महिला के जीवनकाल में यौन या घरेलू हिंसा का सामना करने के साथ महामारी के रूप में व्याप्त है। 2023 में ~85,000 महिला हत्याओं में से 60% घरेलू हिंसा से संबंधित थीं जिसमें ऑनलाइन शोषण व कार्यस्थल पर उत्पीड़न भी तेजी से बढ़ रहा है।

महिलाओं के खिलाफ वैश्विक अपराधों का मुख्य विवरण:

घरेलू और यौन हिंसाः विश्व स्तर परलगभग 25% युवा महिलाओं ने 25 वर्ष की आयु तक अपने साथी द्वारा हिंसा का अनुभव किया है।

घरेलू और यौन हिंसा : विश्व स्तर परलगभग 25% युवा महिलाओं ने 25 वर्ष की आयु तक अपने साथी द्वारा हिंसा का अनुभव किया है।

महिला हत्या (Femicide) : 2020 में 81,000 और 2023 में 85,000 महिलाओं की जानबूझकर हत्या की गई।

क्षेत्रीय आंकड़ेः अफ्रीका में प्रति जनसंख्या महिला हत्या की दर सबसे अधिक हैइसके बाद अमेरिका और ओशिनिया का स्थान है।

इस प्रकार समाज में विकास का ग्राफ तो बहुत ऊंचा उठा है लेकिन इसके साथ यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि महिलाओं से संबंधित आपराधिक घटनाओं का ग्राफ भी ऊंचा हुआ है जो कि सिद्ध करता है कि शिक्षा तो बढ़ी

लेकिन संस्कार नहीं बढ़े।आधुनिक युग में नारी हर क्षेत्र में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां स्त्रियों ने अपना पदार्पण ना किया हो लेकिन इसके बावजूद भी वह समाज से जिस सम्मान की अपेक्षा रखती है वह सम्मान उसे अभी भी मिल नहीं पाया है। यह हमारे संस्कारों से रहित शिक्षा को बयां करता है। संस्कारों से रहित शिक्षा अशिक्षा से भी बुरी होती है यह भी बात ध्यान देने योग्य है। इस विषय में महादेवी वर्मा का कथन है "आधुनिक भौतिकवाद प्रधान युग की नारी को यही दुख है कि वह पुरुष के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता पाकर भी संसार के अनेक आश्चर्य में से एक बन गई है। उसके हृदय की एकांत श्रद्धा की पात्री बनने का सौभाग्य उसे प्राप्त न हो सका ।संसार उसे देखकर विस्मय से अभिभूत होकर चकित सा ताकता रह जाता है परंतु नतमस्तक नहीं होता ।इसका कारण उस व्यक्तित्व का अभाव है जिसके सम्मुख मानव समाज को बालक के समान स्वयं ही झुक जाना पड़ता है।" 3

निष्कर्ष

इस प्रकार विकसित होते समाज में नारी के प्रति बढ़ते अपराध मानसिक और सांस्कृतिक संवेदन शून्यता का परिणाम है। एप्स्टीन फाइल जैसी घटनाएं और एनसीआरबी के आंकड़े यह प्रमाणित करते हैं कि उच्च शिक्षा और ऊंचे पद व्यक्ति को 'साक्षर' तो बना सकते हैं, लेकिन 'संवेदनशील' और 'मानवीय' नहीं। , नारी अस्मिता की प्राप्ति केवल कानूनी अधिकारों से नहीं, बल्कि समाज के उस 'दृष्टिकोण परिवर्तन' से संभव है जहाँ स्त्री को पुरुष के पीछे चलने वाली छाया नहीं, बल्कि एक समानांतर प्रकाश-पुंज स्वीकार किया जाए।

मूल्य-आधारित शिक्षा (Value-based Education): केवल डिग्री आधारित शिक्षा के स्थान पर पाठ्यक्रम में 'लैंगिक संवेदनशीलता' (Gender Sensitivity) को अनिवार्य रूप से जोड़ा जाना चाहिए।संस्कार रहित शिक्षा अशिक्षा से भी बुरी है।" अतः बचपन से ही लड़कों को स्त्री के प्रति सम्मान और समानता का भाव सिखाना प्राथमिक समाधान है।

महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के साथ-साथ उन्हें अपने शरीर, शिक्षा और करियर से जुड़े निर्णय स्वयं लेने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। अस्मिता की शुरुआत 'स्वयं के बोध' से होती है।

एप्स्टीन केस जैसे उदाहरण बताते हैं कि शक्तिशाली लोग कानून से ऊपर खुद को समझते हैं। ऐसे में 'फास्ट ट्रैक' अदालतों और साइबर अपराधों के लिए सख्त कानूनों का क्रियान्वयन जरूरी है ताकि 'रक्षक ही भक्षक' बनने की प्रवृत्ति पर अंकुश लगे।

मीडिया और साहित्य को स्त्री के 'देह' (Objectification) के चित्रण के बजाय उसकी 'मेधा' और 'विचारों' को प्रमुखता देनी चाहिए। पितृसत्तात्मक रूढ़ियों को चुनौती देने वाले विमर्श को जन-आंदोलन बनाना होगा।

सामूहिक उत्तरदायित्व: यह केवल स्त्रियों की लड़ाई नहीं है। प्रबुद्ध पुरुष वर्ग को आगे आकर अपनी जमात के उन 'मुट्ठी भर नृशंस' लोगों का सामाजिक बहिष्कार करना होगा जो पूरी मानवता को कलंकित करते हैं।

संदर्भ सूची

1. महादेवी वर्मा- श्रृंखला की कड़ियां (पंचम संस्करण) 2019, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृ०-13
2. वहीं, पृ०-17
3. वहीं, पृ०-16

मो. 8604078750

deepmalamishra996@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 200-202
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता-प्रतिरोध: एक अध्ययन

Dr.Jisha M N
Assistant professor, Department of Hindi,
Mar Athanasius College (Autonomous) Kothamangalam Ernakulam,Kerala

सारांश

यह शोध पत्र समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता के विरुद्ध प्रतिरोधी स्वरों का विश्लेषण करता है। रघुवीर सहाय, नागार्जुन, मुक्तिबोध, केदारनाथ सिंह, अरुण कमल, राजेश जोशी एवं आलोक धन्वा की कविताओं के माध्यम से सत्ता-प्रायोजित सांप्रदायिकता, भीड़ मनोविज्ञान, मनुष्यता एवं जन-प्रतिरोध को समझा गया है। मुख्य निष्कर्ष यह है कि हिंदी कविता सत्य, संवाद एवं सामाजिक न्याय की भाषा से सांप्रदायिक जहर का प्रतिकार करती है।

कुंजी शब्द: सांप्रदायिकता, हिंदी कविता, प्रतिरोध, सत्ता-भाषा, मनुष्यता

भूमिका

भारतीय लोकतंत्र की बुनियाद बहुलता, सहिष्णुता और धर्मनिरपेक्षता पर आधारित रही है। किंतु उत्तर-स्वतंत्रता काल में राजनीति ने धर्म को सत्ता-साधना का उपकरण बनाया, जिसके परिणामस्वरूप सांप्रदायिकता एक गंभीर सामाजिक समस्या के रूप में उभरी। समकालीन हिंदी कविता इस संकटग्रस्त समय की सृजनात्मक प्रतिक्रिया है। यह कविता सत्ता-भाषा को प्रश्नांकित करती है और मनुष्य को मनुष्य के विरुद्ध खड़ा करने वाली राजनीति का प्रतिरोध करती है।

नामवर सिंह के शब्दों में—

“समकालीन कविता अपने समय की नैतिक बेचैनी की सबसे प्रामाणिक अभिव्यक्ति है।”[1]

समकालीन कविता हिंदी साहित्य के आधुनिक दौर की वह धारा है जो अपने समय की जटिलताओं, विशेष रूप से नैतिक संकटों और आंतरिक बेचैनियों को सबसे सच्चे रूप में व्यक्त करती है। यह कथन समकालीन कविता की विद्रोही, आक्रोशपूर्ण और यथार्थवादी प्रकृति को रेखांकित करता है।

सांप्रदायिकता: अर्थ और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

सांप्रदायिकता केवल धार्मिक आस्था का प्रश्न नहीं, अपितु धर्म का राजनीतिक दुरुपयोग है। यह समाज को धर्म के आधार पर कठोर पहचान रेखाओं में विभाजित कर ‘हम’ और ‘वे’ का द्वंद्व रचती है।

रघुवीर सहाय की पंक्तियाँ इसका प्रमाण हैं—

“जो लोग सच बोलते हैं / वे मारे जाते हैं / क्योंकि सच सत्ता की भाषा नहीं होता।”[2]

यह 'सत्ता की भाषा' प्रायः सांप्रदायिक राजनीति की भाषा बन जाती है।[३]जो झूठे नैरेटिव रचकर जनता को विभाजित करती है। कविता इस द्वंद्व को तोड़ने का शक्तिशाली माध्यम है। यह मानवीय संवेदनाओं को जगाकर एकता का संदेश देती है, सांप्रदायिक जहर को परास्त करती है। हिंदी कविता में नागार्जुन, मुक्तिबोध जैसे कवियों ने सांप्रदायिकता की आलोचना कर समाज को जागृत किया। अंततःसांप्रदायिकता से मुक्ति तभी संभव जब हम धर्म को आस्था तक सीमित रखें और राजनीतिक शोषण का प्रतिकार करें।

रघुवीर सहाय: सत्ता, भाषा और सांप्रदायिकता

रघुवीर सहाय की कविता लोकतंत्र के खोखलेपन और सत्ता की क्रूरता को उजागर करती है। उनकी प्रसिद्ध पंक्ति—

"भीड़ के हाथ में जब सच चला जाता है / तो वह पत्थर हो जाता है।"४

यह पंक्ति सांप्रदायिक उन्माद की मानसिकता को गहराई से उद्घाटित करती है। सत्ता की भाषा सच को पत्थर बनाकर फेंकने को प्रेरित करती है, जो सांप्रदायिक हिंसा का रूप ले लेती है। सहाय की अन्य कविताएँ जैसे 'लोग भूल गए हैं' में भीड़ की अमानवीयता दिखती है।सहाय की कविता प्रतिरोध का माध्यम है, जो सांप्रदायिकता को सत्ता का औजार बताकर जन-जागरण का संदेश देती है। शोधों में इसे नई कविता की राजनीतिक चेतना का उदाहरण माना गया है। सांप्रदायिकता से मुक्ति सत्य की भाषा अपनाने में है।उनकी कविता पर आलोचनात्मक अध्ययन भी इस राजनीतिक चेतना की पुष्टि करते हैं।

केदारनाथ सिंह: मनुष्यता और संवाद की कविता

केदारनाथ सिंह की कविता प्रत्यक्ष राजनीतिक नारेबाज़ी से दूर रहकर मानवीय संबंधों की टूटन को रेखांकित करती है। उनकी कविता संवाद, स्मृति और पड़ोस की संस्कृति को बचाने का प्रयास है। सांप्रदायिक संकीर्णता के दौर में सिंह की कविताएँ सार्वभौमिक मनुष्यता का आह्वान करती हैं, जहाँ व्यक्तिगत दुख सामूहिक पीड़ा बन जाता है। वे ग्रामीण लोक-संस्कृति के माध्यम से विभाजनकारी शक्तियों का प्रतिकार करते हैं, संवाद की भाषा को प्राथमिकता देते हैं।

वे लिखते हैं—"एक आदमी का दुख / पूरी पृथ्वी का दुख होता है।" ५ यह पंक्ति सांप्रदायिक संकीर्णता के विरुद्ध सार्वभौमिक मनुष्यता का घोष है। जहाँ व्यक्तिगत संवेदना वैश्विक एकता में विलीन होती है। सिंह की कविताएँ 'बाघ', 'अकाल में सारस' आदि में पड़ोसी संबंधों की टूटन दिखाती हैं, जो सांप्रदायिक हिंसा की पृष्ठभूमि में प्रासंगिक हैं। शोधों में इसे नई कविता की मानवीय संवेदना का प्रतीक माना गया है।
सिंह की कविता सांप्रदायिक द्वंद्व को संवाद से परास्त करने का माध्यम है। यह हमें स्मृति और पड़ोस की संस्कृति को पुनर्स्थापित करने की प्रेरणा देती है।

अरुण कमल और राजेश जोशी: जनपक्षधर प्रतिरोध

अरुण कमल और राजेश जोशी की कविताएँ सीधे जनजीवन से जुड़ी हैं। इनमें सांप्रदायिक हिंसा के शिकार आम लोग—मज़दूर, बच्चे, स्त्रियाँ—कविता के केंद्र में आते हैं। दोनों कवि नई कविता की जनपक्षधर परंपरा को आगे बढ़ाते हैं, जहाँ सांप्रदायिकता को सत्ता का हथियार बताकर प्रतिरोध दर्ज करते हैं। अरुण कमल की कविताएँ शोषण और सामाजिक विषमता पर केंद्रित हैं, जबकि राजेश जोशी लोकतंत्र के संकट में जन-आवाज़ उठाते हैं।

अरुण कमल लिखते हैं—"नफरत सबसे सस्ती राजनीति है।"६ यह पंक्ति सांप्रदायिक राजनीति की सस्ती चाल को उजागर करती है। राजेश जोशी की कविता में लोकतंत्र के पक्ष में स्पष्ट हस्तक्षेप दिखाई देता है—"यह समय चुप रहने का नहीं है।" ७ यह पंक्ति चुप्पी तोड़ने का आह्वान है। इन कविताओं में हिंसा के शिकार व्यक्तियों की पीड़ा के माध्यम से सामाजिक न्याय की मांग उठती है।

ये कवि सांप्रदायिकता को वर्गीय शोषण से जोड़ते हैं, जन-प्रतिरोध को मजबूत बनाते हैं।

आलोकधन्वा: युवा चेतना और क्रांतिकारी स्वर

आलोकधन्वा की कविता सांप्रदायिकता के विरुद्ध प्रत्यक्ष और तीखे स्वर में सामने आती है। उनकी कविता में भविष्य के प्रति विश्वास और परिवर्तन की आकांक्षा है। नक्सल प्रभावित युवा कविता की परंपरा में धन्वा हिंसा और अन्याय को चुनौती देते हैं, सांप्रदायिकता को सामाजिक अन्याय का हिस्सा मानते हैं।"जब तक एक भी आदमी भूखा है / तब तक यह लड़ाई जारी रहेगी।"८ यह पंक्ति सांप्रदायिक राजनीति को व्यापक सामाजिक अन्याय से जोड़ती है।आलोक धन्वा की कविताएँ 'जनता का आदमी' आदि में शोषित वर्ग की लड़ाई को क्रांतिकारी स्वर देते हैं, सांप्रदायिक विभाजन को तोड़ने का संकल्प व्यक्त करते हैं। युवा चेतना इनमें विद्रोह और आशा का मिश्रण है। यह कविता सांप्रदायिकता के विरुद्ध सतत संघर्ष का प्रतीक है।

निष्कर्ष:

रघुवीर सहाय, नागार्जुन, मुक्तिबोध, अरुण कमल, केदारनाथ सिंह, राजेश जोशी एवं आलोक धन्वा की कविताएँ सांप्रदायिकता के विरुद्ध हिंदी साहित्य का मजबूत प्रतिरोध दर्शाती हैं। सहाय सत्ता की भाषा एवं भीड़ की हिंसा पर केंद्रित हैं, नागार्जुन जन-एकता का आह्वान करते हैं, जबकि मुक्तिबोध विनाशकारी द्वंद्व की चेतावनी देते हैं। अरुण कमल राजनीतिक नफरत को उजागर करते हैं, केदारनाथ सिंह सार्वभौमिक मनुष्यता पर जोर देते हैं। राजेश जोशी लोकतांत्रिक हस्तक्षेप करते हैं, आलोक धन्वा युवा क्रांति एवं सामाजिक न्याय से जोड़ते हैं।

मुख्य निष्कर्ष:

- ये कवि सांप्रदायिकता को सत्ता का राजनीतिक दुरुपयोग मानते हैं, जो 'हम-वे' द्वंद्व रचती है।
- कविताएँ सत्य, संवाद एवं जन-पीड़ा की भाषा से प्रतिकार करती हैं, सामाजिक एकता का संदेश देती हैं।
- हिंदी कविता नई चेतना का माध्यम बनकर सांप्रदायिक जहर को परास्त करती है, न्यायपूर्ण समाज की आकांक्षा व्यक्त करती है।
- शोधों में इन्हें सामाजिक-राजनीतिक विमर्श का आधार माना गया है, जो समकालीन भारत के लिए प्रासंगिक हैं।

सांप्रदायिकता से मुक्ति इन कविताओं के स्वरों—प्रतिरोध, संवाद एवं मनुष्यता—में निहित है।

संदर्भ :

१ नामवर सिंह,*कविता के नए प्रतिमान*. राजकमल प्रकाशन, 2000, पृ. 45

२ अवधेश त्रिपाठी, "कविता की खबर: रघुवीर सहाय की कविता और पत्रकारिता," *अपनी माटी* 15, सं. 112 अप्रैल 2022 : 1–10.

३ सत्यवन्त यादव, "रघुवीर सहाय की भाषा-शैली," *अपनी माटी* 16, सं. 119 जुलाई 2022: 45–52.

४ रघुवीर सहाय, *रघुवीर सहाय संचयिता*, संपा. कृष्ण कुमार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली: 2003, 88–90.

५ केदारनाथ सिंह, *अकाल में सारस* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1988, 76.

६ अरुण कमल, *सबसे सस्ती राजनीति* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1998, 45.

७ राजेश जोशी, *दो पंक्तियों के बीच* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 1995, 112.

८ आलोक धन्वा, *यह समय*: राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1980, 67.

Email:jishamn@macollege.in, Mob.no:9496826235

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 203-207
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

ਸੰਤੋਖ ਧੀਰ ਰਚਿਤ ਕਹਾਣੀ 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ': ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਦੰਰਭ ਅਤੇ ਸਮਕਾਲ

ਸਵਿਤਾ ਰਾਣੀ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,ਪੋਸਟ-ਗ੍ਰੈਜੁਏਟ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ।
ਡੀ.ਏ.ਵੀ. ਕਾਲਜ, ਅਬੋਹਰ-152116(ਪੰਜਾਬ)।

ਭੂਗੋਲਿਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਵਸੀਲੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਜੀਵਨ ਦਾ ਆਧਾਰ ਬਣਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਵਸੀਲਿਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਅਨੁਸਾਸ਼ਨ ਸਥਾਪਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਭਿਆਚਾਰ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਇਹਨਾਂ ਅਨੁਸ਼ਾਸ਼ਨਾਂ ਨੂੰ ਹੀ ਸੰਬੋਧਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਬੁਨਿਆਦੀ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਭਿਆਚਾਰ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਜੀਵਨ ਵਿਧੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਜੀਵਨ ਦੌਰਾਨ ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜਿਕ ਭੂਗੋਲਿਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਬੌਧਿਕ, ਆਰਥਿਕ, ਮਾਨਸਿਕ ਸਰੰਚਨਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਬੱਝਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜਿੰਦਗੀ ਜਟਿਲਤਾ ਦੀ ਧਾਰਣੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਜਟਿਲਤਾਵਾਂ ਇੱਕ ਮਨੁੱਖ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਮਨੁੱਖ, ਇੱਕ ਸਮਾਜ ਤੋਂ ਦੂਜੇ ਸਮਾਜ ਤੱਕ ਆਪਣਾ ਰੂਪ ਬਦਲਦੀਆਂ ਰਹਿੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜੀਵਨ ਪ੍ਰਤੀਕੂਲ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਆਪਣਾ ਮੁਹਾਂਦਰਾ ਤਲਾਸ਼ਦਾ ਹੈ।
ਪੰਜਾਬ ਵਿੱਚ ਆਪਸੀ ਮੇਲ-ਮਿਲਾਪ ਅਤੇ ਭਾਈਚਾਰਕ ਸਾਂਝ ਸਭ ਤੋਂ ਉੱਚੀ ਮਰਿਆਦਾ ਵਜੇ ਸਥਾਪਤ ਸੀ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ **'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ'** ਦਾ ਮਸਲਾ ਇਸ ਸਾਂਝ ਸਾਹਮਣੇ ਸੰਕਟ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ। ਹੁਣ ਦੇ ਸਮੇ ਵਿੱਚ ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਪੇਂਡੂ ਰਹਿਤਲ ਵੱਲ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ, ਤਾਂ ਅੱਜ ਛੋਟੇ ਪਰਿਵਾਰਾਂ, ਪੱਛਮੀ ਸੋਚ, ਆਰਥਿਕ ਦਬਾਅ ਅਤੇ ਬਦਲਦੇ ਮੁੱਲਾਂ ਕਾਰਨ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਫਿੱਕ ਵਿੱਚ ਪੈ ਰਹੀ ਹੈ। ਉਸਨੂੰ ਧੀਰ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ ਪ੍ਰਤੀਕ ਨੂੰ ਜਦੋਂ ਅਸੀ ਗਹਿਰਾਈ ਨਾਲ ਸਮਝਦੇ ਹਾਂ ਤਾਂ ਇਸ ਵਿੱਚ ਸਾਰੇ ਸਮਾਜ ਦੀ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨਕ ਤਸਵੀਰ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ। ਕੰਧ ਦਾ ਸੰਕੇਤ ਸਿਰਫ ਇੱਟਾਂ ਤੋਂ ਉਸਾਰੀ ਗਈ ਕੰਧ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਅਹੰਕਾਰ, ਪਰਿਵਾਰਕ ਭਰਾਵਾਂ ਵਿਚਲੀ ਈਰਖਾ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਬਦਲ ਰਹੀਆਂ ਮਨੁੱਖੀ ਸੰਵੇਦਨਾਵਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ।

ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਨੇ ਕਵਿਤਾ, ਕਹਾਣੀ, ਨਾਵਲ ਅਤੇ ਸਵੈ ਜੀਵਨੀ ਆਦਿ ਸਾਹਿਤਿਕ ਵਿਧਾਵਾਂ ਤੇ ਆਪਣਾ ਹੱਥ ਅਜਮਾਇਆ। ਸੰਤੋਖ ਧੀਰ ਦਾ ਜਨਮ 2 ਦਸੰਬਰ 1920 ਬੱਸੀ ਪਠਾਣਾ (ਫਤਹਿਗੜ੍ਹ ਸਾਹਿਬ) ਵਿੱਚ ਹੋਇਆ। ਧੀਰ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਰਚਨਾ-ਵਸਤੂ ਪਿੰਡ ਦੇ ਨਿਮਨ ਵਰਗਾਂ ਨਾਲ ਮੁੱਖ ਤੌਰ ਤੇ ਸੰਬੰਧਿਤ ਹੈ, ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਛੋਟੇ ਕਿਸਾਨਾਂ, ਖੇਤ ਮਜ਼ਦੂਰਾਂ ਤੇ ਹੋਰ ਆਰਥਿਕ ਤੌਰ ਤੇ ਗਰੀਬ ਸ਼੍ਰੇਣੀਆਂ ਦੇ ਆਰਥਿਕ ਸੰਕਟ ਨੂੰ ਸਿਰਜਦੇ ਹੋਏ ਸਮਾਜਵਾਦੀ ਤੇ ਸਾਮਵਾਦੀ ਆਦਰਸ਼ ਦਾ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕੀਤਾ। ਉਸ ਦੀ ਰਚਨਾ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਉਸਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਵਿਤਕਰਿਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਬੜੀ ਸ਼ਿੱਦਤ ਨਾਲ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਸੰਕਟ ਬਾਰੇ ਵੀ ਉਸ ਨੇ ਕੁਝ ਕਹਾਣੀਆਂ ਲਿਖੀਆਂ ਹਨ। ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਵਿਚ ਇਕ ਅਨੋਖਾ ਸਾਹਿਤਕ ਨਖ਼ਰਾ ਹੈ। ਇਹ ਨਖ਼ਰਾ ਲਿਖਤ ਦਾ ਖਰੜਾ ਤਿਆਰ ਕਰਨ ਸਮੇਂ ਅਤੇ ਫੇਰ ਉਹਨੂੰ ਛਪਵਾਉਣ ਸਮੇਂ ਖ਼ਾਸ ਕਰਕੇ ਉਜਾਗਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।'

ਵਿਚਾਰ ਅਧੀਨ ਕਹਾਣੀ '**ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ**'**(ਮੇਰੀਆਂ ਸ੍ਰੇਸ਼ਟ ਕਹਾਣੀਆਂ)** ਇਸ ਕਥਾ-ਵਸਤੂ ਨੂੰ ਦ੍ਰਿੜਾਉਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਖ਼ੂਨ ਦੇ ਰਿਸ਼ਤੇ ਸਦੀਵੀਂ ਹੁੰਦੇ ਹਨ ਤੇ ਭੱਜੀਆਂ ਬਾਹਾਂ ਹੀ ਗੱਲ ਨੂੰ ਆਉਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਕੰਧ ਜਿਸ ਦਾ ਝਗੜਾ ਹੈ, ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਦਰਬਾਰਾ ਸਿੰਘ ਵਿਚਕਾਰ ਸਾਂਝੀ ਹੈ। ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਦਾ ਘਰ ਢਹਿਣ ਕਾਰਨ ਉਹ ਦਰਬਾਰੇ ਨੂੰ ਆਖਦਾ ਹੈ ਕਿ ਆਪਾਂ ਸਾਂਝੀ ਕੱਚੀ ਕੰਧ ਢਾਹ ਕੇ ਦੁਬਾਰਾ ਪੱਕੀ ਕੰਧ ਕਰ ਲਈਏ, ਪਰ ਦਰਬਾਰਾ ਨਹੀਂ ਮੰਨਦਾ, ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਨੂੰ ਕੰਧ ਬਨਾਉਣ ਦੀ ਜ਼ਿਆਦਾ ਲੋੜ ਨਹੀਂ ਸੀ ਅਤੇ ਆਰਥਿਕ ਪੱਖੋ ਵੀ ਕਮਜ਼ੋਰ ਸੀ, ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹਨਾਂ ਵਿਚ ਝਗੜਾ ਵੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਅੰਤ ਤੇ ਦਰਬਾਰੇ ਦੇ ਬਿਮਾਰ ਹੋਣ 'ਤੇ ਓੜਕ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਫਿਰ ਉਸ ਦਾ ਪਤਾ ਲੈਣ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤੇ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਰਿਸ਼ਤੇ ਦੀ ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ ਉਸਰ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਸਧਾਰਨ ਪੇਂਡੂ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਵਿਹਾਰ ਵਿੱਚੋਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸਹਿਜ ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਪੱਖ ਨੂੰ ਉਭਾਰਨਾ ਧੀਰ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਗੁਣ ਹੈ। '**ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ**' ਕਹਾਣੀ ਅੰਦਰ ਭਰਾਵਾਂ ਵਿਚਲੀ ਸ਼ਰੀਕੇਬਾਜੀ ਨੂੰ ਉਭਾਰਿਆ ਹੈ। ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ, ਦਰਬਾਰਾ ਸਿੰਘ ਨੂੰ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਕੰਧ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਦੇਣ ਲਈ ਕਹਿੰਦਾ ਤਾਂ ਦਰਬਾਰਾ ਪੈਰਾਂ ਉੱਤੇ ਪਾਣੀ ਹੀ ਨਹੀਂ ਪੈਣ ਦਿੰਦਾ। ਜਦੋਂ ਕੋਈ ਵਾਹ ਨਾ ਚੱਲੀ ਤਾ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਨੇ ਦਰਵਾਜੇ ਇਕੱਠ ਕੀਤਾ। ਦਰਬਾਰੇ ਨੂੰ ਸੱਥ ਵਿੱਚ ਬੁਲਾਇਆ, ਅਖੀਰ ਪੰਚਾਇਤ ਨੇ ਸਮਝਾ ਧਮਕਾ ਕੇ ਮਨਾ ਹੀ ਲਿਆ। ਰਿਆਇਤ ਵਜੋਂ ਬਣੀ ਰਕਮ ਦੋ ਲੰਮੀਆਂ ਕਿਸ਼ਤਾਂ ਵਿੱਚ ਵੰਡ ਦਿੱਤੀ। ਅਗਲੇ ਦਿਨ ਪੰਚਾਇਤ ਦੇ ਚਾਰ ਆਦਮੀ ਆਏ ਤੇ ਕੰਧ ਢੁਹਾ ਕੇ ਨੀਂਹ ਪਟਵਾਉਣ ਲੱਗੇ ਤਾਂ, ਦਰਬਾਰੇ ਤੇ ਕਪੂਰ ਵਿਚਕਾਰ ਲੜਾਈ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋ ਗਈ।

'ਦਰਬਾਰੇ ਨੇ ਝਟ ਗਾਲ੍ਹ ਕੱਢ ਕੇ ਆਖਿਆ, "ਜੰਮਿਆ ਕੋਣ ਐ ਓਏ ਮੇਰੇ ਪਾਸੇ ਕਰਨ ਆਲਾ ਬੰਦਾ ਭਾਵੇ ਲੱਖ ਨਰਮ ਹੋਵੇ, ਪਰ ਗਾਲ੍ਹ ਕਿਸੇ ਤੇ ਕੋਈ ਕਿਉਂ ਖਾਵੇ? ਪੂਰ ਜ਼ੋਸ਼ ਨਾਲ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਨੇ ਵੰਗਾਰ ਕੇ ਮੁੱਕਾ ਮਾਰਿਆ।'[1]

ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਨੇ ਪੇਂਡੂ ਕਿਰਤੀ ਕਿਸਾਨ ਵਰਗ ਦੀ ਮੰਦੀ ਆਰਥਿਕ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਦਸ਼ਾ ਨੂੰ ਆਪਣੀਆਂ ਸਾਰੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਬਣਾਇਆ। '**ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ**' ਕਹਾਣੀ ਵੀ ਅਜਿਹਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ। ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਦੀ ਆਰਥਿਕ ਹਾਲਤ ਕਮਜ਼ੋਰ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਉਹ ਵਾਰ-ਵਾਰ ਕੰਧ ਬਣਾਉਣ ਲਈ ਵਿੱਚ ਹਿੱਸਾ ਪਾਉਣ ਲਈ ਦਰਬਾਰੇ ਦੀਆਂ ਮਿੰਨਤਾ ਕਰਦਾ।

'ਪੈਸੇ ਵੱਲੋਂ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਅੱਗੇ ਹੀ ਕਮਜ਼ੋਰ ਸੀ। ਖ਼ਬਰੇ ਕਿਵੇਂ ਅੰਦਰ-ਅੰਦਰ ਕਬੀਲਦਾਰੀ ਤੋਰਦਾ ਸੀ। ਪਹਿਲਾ ਉਹ ਮਕਾਨ ਵਾਸਤੇ ਕਰਜੇ ਲਈ ਜਿਲ੍ਹੇ ਦੇ ਦਫ਼ਤਰ ਵਿੱਚ ਧੱਕੇ ਖਾਂਦਾ ਰਿਹਾ। ਉੱਥੇ ਵਜੀਰਾ ਦੀਆ ਸਿਫ਼ਾਰਸ਼ਾ ਚਲਦੀਆ ਹਨ। ਹਾਰ ਕੇ ਉਸਨੂੰ ਦਸ ਵਿਘੇ ਤੋਂ ਬੈਅ ਕਰਨੀ ਪਈ।'[2]

'**ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ**' ਕਹਾਣੀ ਅੰਦਰ ਸ਼ਰੀਕੇਬਾਜੀ, ਰਾਜਸੀ ਮੁਫਾਦ ਅਤੇ ਚੁੱਕ ਜੋ ਪੇਂਡੂ ਜੀਵਨ ਦਾ ਅਟੁੱਟ ਅੰਗ ਹੈ, ਪ੍ਰਤੱਖ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਪਿੰਡ ਅੰਦਰ ਕੋਈ ਝਗੜਾ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾ ਉਸ ਝਗੜੇ ਦਾ ਨਿਪਟਾਰਾ ਪੰਚ ਅਤੇ ਸਰਪੰਚ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਲੰਬੜਦਾਰ ਵੀ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਮੁਹਤਬਰ ਬੰਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਅੰਦਰ ਵੀ ਜਦੋਂ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਦਰਬਾਰੇ ਵਿਚਕਾਰ ਝਗੜਾ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਤਾ ਧੰਮੇ ਸਰਪੰਚ ਵਰਗੇ ਲੋਕ ਝਗੜੇ ਦਾ ਨਿਪਟਾਰਾ ਕਰਵਾਉਣ ਦੀ ਥਾਂ ਦੋਵਾਂ ਭਰਾਵਾਂ ਦੀ ਖਿੱਚੋਤਾਣੀ ਵਿੱਚੋਂ ਸੁਆਦ ਲੈਂਦੇ ਹਨ। 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਕਹਾਣੀਕਾਰ ਯਤਨਸ਼ੀਲ ਹੈ ਕਿ ਲੋਕ ਚੇਤੰਨ ਹੋ ਕੇ ਕਿਸੇ ਦੀ ਚੁੱਕ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਆਉਣਗੇ। ਅਗਿਆਨਤਾ ਦੇ ਕਾਰਣ ਕਿਰਤੀਆਂ ਵਿਚ ਪਈ ਹੋਈ ਫੁੱਟ, ਵੰਡ ਇਕ ਦਿਨ ਜ਼ਰੂਰ ਖ਼ਤਮ ਹੋਵੇਗੀ ਤੇ ਉਹ ਜ਼ਰੂਰ ਇਕ ਹੋ ਜਾਣਗੇ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ 'ਦਰਬਾਰਾ' ਤੇ 'ਕਪੂਰ' ਦੋਵੇਂ ਭਰਾ ਆਪਸ ਵਿਚ ਝਗੜ ਪੈਂਦੇ ਹਨ, ਪਰ ਜਦੋਂ ਦਰਬਾਰੇ ਨੂੰ ਅਸਲੀਅਤ ਦਾ ਗਿਆਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ 'ਮੈਨੂੰ ਤਾਂ ਸਹੁਰਾ ਸਰਪੰਚ ਭਖਾਉਂਦਾ ਰਿਹਾ, ਨਹੀਂ ਮੈਂ ਕਿਹੜਾ ਤੇਰਾ ਦੋਖੀ ਸੀ।'

ਸਰਪੰਚ ਵਰਗੇ ਲੋਕ ਸਾਧਾਰਨ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਪਾੜੋ ਤੇ ਰਾਜ ਕਰੋ ਦੀ ਨੀਤੀ ਤਹਿਤ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਚੌਧਰੀ ਬਣੇ ਰਹਿਣਾ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ ਤੇ ਆਪਣੇ ਹਿੱਤਾਂ ਨੂੰ ਸੁਰੱਖਿਅਤ ਰੱਖਣਾਂ ਚਾਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਅਗਿਆਨਤਾ ਦਾ ਕਾਰਨ ਸਿਰਫ ਆਰਥਿਕਤਾ ਜਾਂ ਚੁੱਕਬਾਜ਼ੀ ਹੀ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਸੱਤਾ ਦਾ ਭਾਰੂ ਹੋਣਾ ਹੈ।

ਕਹਾਣੀ ਸਿਰਜਣਾ ਵਿੱਚ ਪਾਤਰ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਤਾ ਦਾ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਧੀਰ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਸਿਰਜਨਾ ਦੀ ਵੱਡੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਸਮੱਸਿਆ ਨੂੰ ਸਮਾਜਕ – ਯਥਾਰਥਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸੋਸ਼ਤ ਸ਼੍ਰੇਣੀ ਦੇ ਪਾਤਰਾਂ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਤਰਸ ਜਾਂ ਹਮਦਰਦੀ ਤੋਂ ਨਿਰਲੇਪ ਰਹਿ ਕੇ ਚਿੱਤਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਇੱਕ ਸਿੱਟਾ ਇਹ ਨਿਕਲਦਾ ਹੈ ਕਿ ਧੀਰ ਦੇ ਪਾਤਰ ਪਾਠਕ ਦੇ ਮਨ ਵਿਚ ਤ੍ਰਾਸ ਦਾ ਭਾਵ ਉਦਭਵ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦੇ ਭਾਵ ਸੰਚਾਰਿਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਮਾਨਵੀ-ਸੁਹਿਰਦਤਾ ਨਾਲ ਲਬਰੇਜ਼ ਮਾਨਵੀ ਅਸਤਿੱਤਵ ਤੇ ਸਵੈਮਾਨ ਨੂੰ ਸਹਿਜ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਰੂਪਮਾਨ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਹ ਪਾਤਰ ਅਸੰਤੁਲਿਤ ਸ਼੍ਰੇਣੀ-ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਸਮਾਜਿਕ-ਆਰਥਿਕ ਅਸਮਾਨਤਾਵਾਂ ਨਾਲ ਜੂਝਦੇ ਵੀ ਦਿਖਾਈ ਪੈਂਦੇ ਹਨ।

ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਨੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿਚ ਪੇਂਡੂ ਪੰਜਾਬੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਦੀਆਂ ਏਨੀਆਂ ਪਰਤਾਂ ਖੋਲ੍ਹੀਆਂ ਹਨ, ਜੋ ਬਹੁਤ ਘੱਟ ਕਹਾਣੀਕਾਰਾਂ ਦੇ ਹਿੱਸੇ ਆਈਆਂ ਹਨ। '**ਸਾਡੀ ਕੰਧ**' ਕਹਾਣੀ ਅੰਦਰ ਪਿੰਡ ਦੀਆਂ ਘਟਨਾਵਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟਾਇਆਂ ਗਿਆ ਹੈ। ਧੀਰ ਦੀ ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਸਮਾਜਿਕ, ਆਰਥਿਕ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਤਸਵੀਰ ਵੀ ਪੇਂਡੂ ਮਾਹੌਲ ਦੀ ਸਿਰਜੀ ਗਈ ਹੈ। 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪਿੰਡ ਦੀ ਰੋਜਮਰ੍ਹਾ ਜਿੰਦਗੀ, ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਆਪਸੀ ਸੰਬੰਧ ਅਤੇ ਟਕਰਾਅ ਨੂੰ ਕੇਂਦਰ ਵਿੱਚ ਰੱਖਿਆਂ ਗਿਆ ਹੈ। ਪਿੰਡ ਦਾ ਜੀਵਨ ਆਪਸੀ ਨੇੜਤਾ ਤੇ ਅਧਾਰਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਇਹ ਨੇੜਤਾ ਕਈ ਵਾਰ ਟਕਰਾਅ ਦਾ ਕਾਰਨ ਬਣ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਵਿਚਲਾ ਘਰ, ਵਿਹੜਾ, ਕੰਧ, ਅਤੇ ਗਲੀ ਵਰਗੇ ਤੱਤ ਪੇਂਡੂ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਜੀਵੰਤ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ।

'ਦਰਬਾਰੇ ਵਾਲੀ ਇਹ ਕੰਧ ਵਡਾਰੂਆਂ ਵੇਲੇ ਦੀ ਕੱਚੀ ਤੇ ਥਾਂ-ਥਾਂ ਤੋਂ ਗਈ ਹੋਈ ਸੀ। ਕਈ ਥਾਂ ਚਾਰ ਚਾਰ ਉਂਗਲ ਦੀਆਂ ਭਗਾਂ ਖੁਲ੍ਹੀਆਂ ਹੋਈਆਂ ਸਨ। ਉਞ ਦੀ ਥੋਬੜ ਜਿਵੇਂ ਰੇਹੀ ਦੀ ਖਾਧੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, ਆਰ ਪਾਰ ਕਈ ਮੋਰੀਆਂ ਪਿੱਛੋਂ ਕੋਠੜੀ ਦੇ ਸ਼ਤੀਰ ਦਬੇ ਹੋਏ ਤੇ ਛੱਤ ਝੁਕੀ ਹੋਈ ਸੀ।'[3]

'ਸਾਡੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਅੰਦਰ ਪੈਸਾ ਪ੍ਰਧਾਨ ਕੀਮਤਾਂ ਦਾ ਬੋਲਬਾਲਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪੈਸਾ ਸਿਰਫ ਲੈਂਣ ਦੇਣ ਦਾ ਸਾਧਨ ਹੀ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦਾ ਸਗੋਂ ਉਹ ਮਨੁੱਖੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ, ਭਰਾਤਰੀ ਭਾਵਨਾਂ ਅਤੇ ਸਾਂਝ ਦੀ ਥਾਂ ਲੈ ਲੈਦਾਂ ਹੈ। 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਜਦੋਂ ਕੰਧ ਦੀ ਨੀਂਹ ਰੱਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਕੰਧ ਦੀ ਮੋਟਾਈ, ਲੰਬਾਈ, ਅਤੇ ਜ਼ਮੀਨ ਦੇ ਇੰਚ-ਇੰਚ ਦੀ ਕੀਮਤ ਮਨੁੱਖੀ ਅਹਿਸਾਸਾਂ ਨਾਲੋਂ ਵੱਡੀ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਪ੍ਰਤੀਕੂਲ ਹੋਣ ਤੇ ਪੈਸੇ ਦਾ ਲਾਲਚ ਸਾਂਝੇ ਵਿਰਸੇ ਨੂੰ ਟਕਰਾਅ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਅਖੀਰ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਅਨੁਕੂਲ ਹੋਣ ਤੇ ਮੁੜ ਪੰਜਾਬੀ ਸਭਿਆਚਾਰ ਦੀ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਉੱਤੇ ਪਕੜ ਇੰਨੀ ਪੀਡੀ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਪੈਸਾ ਕੀਮਤਾਂ ਭਾਰੂ ਹੋਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਅੰਤ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਮੁੱਲ ਹੀ ਭਾਰੂ ਰਹੇ।
'ਦਰਬਾਰੇ ਦੇ ਮਨ ਵਿੱਚ ਹੂਕ ਉੱਠੀ,ਮੈ ਤਾ ਤੇਰੇ ਅੱਗੇ ਵੀ ਪੈਸੇ ਦੇਣੇ ਐ ਬਾਈ ---ਕੰਧ ਆਲੇ---।
" ਤੂੰ ਹਾਲੇ ਤਕੜਾ ਹੋ ਦਿੰਦਾ ਰਹੀ ਪੈਸੇ,ਪੈਸਿਆ ਸਾਲਿਆਂ ਨੇ ਨਾਲ ਜਾਣੈ ?"

ਸੰਤੋਖ ਧੀਰ ਆਪਣੀ ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਤੀਕਆਤਮਕ ਕਹਾਣੀ ਵੀ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਭਾਵੇਂ ਅੱਜ ਹਿੰਦੁਸਤਾਨ ਅਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਦੇ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੇ ਮੁਲਕ ਹਨ। ਪਰ ਅਸਲ ਵਿੱਚ 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਦੇ ਦਰਬਾਰਾ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਕਪੂਰ ਸਿੰਘ ਹੀ ਹਨ। ਇੱਕੋ ਰਹਿਣੀ, ਇੱਕੋ ਲਹੂ। ਜੇ ਅੱਜ ਲੜਦੇ ਹਨ ਤਾ ਕਦੇ ਮਿਲਣਗੇ ਵੀ ਜਰੂਰ।
'ਇਹ ਵਿਸ਼ੇਗਤ ਵਿਵਿਧਤਾ ਧੀਰ ਦੇ ਅਨੁਭਵ ਦੀ ਵਿਸ਼ਾਲਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਮਾਣ ਤਾਂ ਹੈ ਹੀ, ਇਹ ਵਿਵਿਧਤਾ ਇਹ ਵੀ ਦਰਸਾਉਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਧੀਰ ਸੁਚੇਤ ਭਾਂਤ ਲਿਖਤ ਨੂੰ ਸੱਜਰੇਪਨ ਤੇ ਮੌਲਿਕਤਾ ਦੀ ਕਸਵੱਟੀ ਉਤੇ ਪੂਰਾ ਉਤਾਰਨ ਦਾ ਯਤਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇੰਞ ਇਕ ਕਥਾਕਾਰ ਵਜੋਂ ਜਿਹੜੀ ਗੱਲ ਧੀਰ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਡਾ ਗੁਣ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, ਉਹ ਹੈ ਪੇਂਡੂ ਭਾਈਚਾਰੇ ਦੇ ਵਿਵਿਧ ਤੇ ਦੀਰਘ ਅਨੁਭਵ ਨੂੰ ਖੂਬਸੂਰਤੀ ਨਾਲ ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਗੁੰਦ ਸਕਣ ਦੀ ਉਸ ਦੀ ਕੁਸਲਤਾ।'[4]

'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ' ਕਹਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਧੀਰ ਨੇ ਸਾਂਝ ਪੈਂਦਾ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਹਰ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਨੂੰ ਜਿਹੜੇ ਬਾਹਰੀ ਖਤਰੇ ਹਨ,ਉਹਨਾ ਤੋਂ ਸੁਚੇਤ ਕਰਵਾਇਆਂ। ਅਕਸਰ ਸਿਆਣੇ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਕਿ ਇੱਕੋ ਖਾਰੀ ਦੌ ਭਾਂਡੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਖੜਕਦੇ ਹਨ। ਜੇ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਕੋਈ ਅਣਸੁਖਾਵੀ ਘਟਨਾ ਵਾਪਰ ਜਾਂਦੀ ਤਾਂ ਉਸ ਤੇ ਪਰਦਾ ਪਾਓ, ਨਾ ਕਿ ਉਸ ਗਲਤੀ ਨੂੰ ਵਾਰ -ਵਾਰ ਉਛਾਲੋ। ਕਹਾਣੀ ਵਿਚਲੀ ਕੰਧ ਅੱਜ ਦੇ ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਅਦ੍ਰਿਸ਼ ਕੰਧਾਂ ਦਾ ਰੂਪਕ ਹੈ। ਆਪਣਾ ਕੌਣ ਹੈ ਤੇ ਬਿਗਾਨਾ ਕੌਣ ਹੈ,ਸਾਨੂੰ ਪਛਾਣ ਹੋਈ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੀ ਉਲਝੀ ਹੋਈ ਤਾਣੀ ਨੂੰ ਤਾਂਹੀ ਸੁਲਝਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਕਹਾਣੀ ਵਿੱਚ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਪਦਾਰਥਵਾਦੀ ਬਿਰਤੀ ਕਿਵੇਂ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਵੰਡ ਪੈਦਾ ਕਰ ਸਕਦੀ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਅਹੰਕਾਰ ਕਿਵੇਂ ਪਰਿਵਾਰਕ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਕਮਜ਼ੋਰ ਕਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਸਮੱਸਿਆਂ ਦਾ ਹਲ ਕੰਧ ਬਣਾਉਣ ਵਿੱਚ ਨਹੀਂ, ਸਗੋਂ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਵਿੱਚ ਸਾਂਝ, ਸਮਝ, ਪਿਆਰ, ਗੱਲਬਾਤ ਹੀ ਉਹ ਅਮੁੱਲਕ ਮੁੱਲ ਹਨ, ਜੋ ਕਿਸੇ ਵੀ ਕੰਧ ਨੂੰ ਢਾਹ ਸਕਦੇ ਹਨ।

ਹਵਾਲੇ:-

1) **ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ,ਮੇਰੀਆਂ ਸ੍ਰਸ਼ੇਟ ਕਹਾਣੀਆਂ, ਆਰਸੀ ਪਬਲੀਸ਼ਰ,ਚਾਂਦਨੀ ਚੌਂਕ,ਦਿੱਲੀ, ਪੰਨਾ ਨੰ-77**
2) **ਉਹੀ, ਪੰਨਾ ਨੰ-85**

3) **ਉਹੀ,ਪੰਨਾ ਨੰ-76**
4) **ਡਾ. ਸੁਰਿੰਦਰ ਕੁਮਾਰ ਦਵੇਸ਼ਵਰ,ਸੰਤੋਖ ਸਿੰਘ ਧੀਰ ਦੀ ਸਾਹਿਤ ਚੇਤਨਾ ਲੋਕਗੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਸਰਹਿੰਦ,ਪੰਨਾ ਨੰ-42**

ਮੋਬਾ.ਨੰ-7814559595,

Gmail-amritkamboj96@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 208-212
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

दोहरा अभिशाप में दलित जीवन की त्रासदी

डॉ.अनीश के.एन.,
सह आचार्य, भारतीय भाषा केंद्र,
स्कूल ऑफ लैंग्वेज, लिटरेचर एंड कल्चर स्टडीज़
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली – 110067,

सारांश :

कौशल्या बैसंत्री की आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' में दलित महिलाओं के संघर्ष और जीवन उत्पीड़न की गाथा है। महिलाओं को समाज में अपने-आपको साबित करने के लिए 'दोहरा संघर्ष' करना होता है। 'दोहरा अभिशाप' आत्मकथा मात्र दलित महिलाओं की वेदना नहीं, समाज की संपूर्ण महिलाओं की वेदना है। यह आत्मकथा दलित समाज में महिला जीवन के तमाम संघर्षों का चिट्ठा खोलती है। लेखिका ने अपनी आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' में गरीबी, अभाव, अशिक्षा, अज्ञान, अंधकार, सामाजिक असमानता, अंधविश्वास और जातीय नफरत से बच्चों, स्त्रियों और विशेषकर दलित बालिकाओं के मानसिक स्तर पर पड़ रहे प्रभावों का मार्मिक वर्णन किया है।

बीज शब्द :

आत्मकथा-दलित आत्मकथा –स्त्री आत्मकथा – जीवन यथार्थ – दलित स्त्री - अभाव ग्रस्त जीवन – कौसल्या बैसंत्री ।

मुक्ति की कामना औरतों की जिंदगी का अभीष्ट है। हिंदी में लिखी पहली दलित आत्मकथा कौसल्या बैसंत्री की 'दोहरा अभिशाप' का निचोड़ भी यही है। कौसल्या अपने जीवन की कथा कहते हुए जीवन की कठिनाइयों का वर्णन करती हैं।साथ ही वे बिना किसी लफ्फाज़ी के इस बात की स्थापना करती हैं कि स्त्रियों की मुक्ति का एक ही तरीका है 'शिक्षा'। शिक्षा का महत्व उन्हें डॉ. आंबेडकर के दर्शन से मिला है, क्योंकि छोटी-सी उम्र में ही वह उनके आंदोलन से जुड़ गई थीं। हालांकि आंदोलन से जुड़ने के बावजूद वह एक ऐसे व्यक्ति से विवाह करती हैं, जो अपनी तमाम शिक्षा के बावजूद अपनी पत्नी के लिए अंततः 'मर्द' ही साबित हुआ। पितृसत्ता के अपमानजनक चक्र से मुक्ति पाने का फैसला करने में कौसल्या जी को 40 साल लग गए। दरअसल हुआ यह कि पितृसत्ता के अभिशाप से मुक्ति पाने के लिए शादी के इतने सालों के बाद अपने पति के ख़िलाफ़ पुलिस में शिकायत करने और कोर्ट में केस करने का उन्होंने साहस किया था। उनका यह कदम प्रेरणादायक है।क्योंकि आज भी पढ़ी-लिखी औरतें अपमान सहते हुए अलग होने का फैसला नहीं कर पाती हैं। "पुत्र, भाई, पति सब मुझ पर नाराज़ हो सकते हैं, परंतु मुझे भी तो

स्वतंत्रता चाहिए कि मैं अपनी बात समाज के सामने रख सकूँ। मेरे जैसे अनुभव और भी महिलाओं को हुए होंगे। परंतु समाज और परिवार के भय से अपने अनुभव समाज के सामने उजागर करने से डरती हैंऔर घुटन में जीती हैं। समाज की आँख खोलने के लिए ऐसे अनुभव सामने आने की ज़रूरत है।"[1]

आज़ादी की यह चाह कौसल्या बैसंत्री को विरासत में मिली थी। उनकी आजी (नानी) के माता-पिता बचपन में ही गुजर गए थे। उन्हें उनके भाई-भाभी ने उन्हें पाला था। बचपन में ही उनकी शादी हो गई और गौना होने से पहले आजी के पति की मौत हो गई। कौसल्या जब दस बरस की थीं तब उनकी आजी (नानी) की मौत हो गई। उनकी आजी का उनके ऊपर गहरा प्रभाव था।"आजी के पास मरते समय एक गठरी और एक पीतल का लोटा था। गठरी खोलने पर उसमें चार-पांच गज सफ़ेद कपड़ा था और एकदम नया और एक छोटे कपड़े की थैली में कुछ रुपए बंधे थे, साथ में सिंदूर अबीर-गुलाल और विठोबा के मंदिर का प्रसाद था। आजी हर दम कहा करती थीं कि वह अपनी लड़ाई खुद लड़ेंगी, किसी पर बोझ नहीं बनेंगी। अपने कफ़न का सामान भी वह खुद जुटाएंगी और उन्होंने अपनी बात पूरी करके दिखाई।"[2]

स्वाभिमान की यह लहर कौसल्या जी तक उनकी आई (मां) से होती हुई आई थी। इसके बाद कौसल्या बैसंत्री अपने जीवनानुभवों को पन्ने-दर-पन्ने दर्ज करती रहीं। उनके आई-बाबा (माता-पिता) अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए जी-तोड़ संघर्ष करते हैं। बच्चों को पढ़ाने के कारण उन्हें बस्ती और समाज वाले बहुत कुछ सुनाते थे, लेकिन वे किसी की कुछ नहीं सुनते थे। उनको पढ़ाने की खातिर उनके माता-पिता को बहुत संघर्ष करना पड़ा। वह लिखती हैं–"जब बड़ी भिड़े कन्याशाला में पांचवीं में प्रवेश लिया तब स्कूल की फीस ज़्यादा थी। …बाबा ने हमारी हेड मिस्ट्रेस से बहुत विनती की कि वे फीस नहीं दे सकते। बहुत मुश्किल से वह मान गई और कहा कि अच्छी पढ़ाई-लिखाई न करने पर स्कूल से निकाल देगी। बाबा ने हेड मिस्ट्रेस के चरणों के पास अपना सर झुकाया दूर से, क्योंकि वे अछूत थे, स्पर्श नहीं कर सकते थे। बाबा का चेहरा कितना मायूस लग रहा था उस वक्त! मेरी आंखें भर आई थीं। अब भी इस बात को याद करके बहुत व्यथित हो जाती हूं। अपमान महसूस करती हूं। जाति-पांति बनाने वाले का मुंह नोंचने का मन करता है। अपमान का बदला लेने का मन करता है।"

जैसे-जैसे कौसल्या पढ़ाई करती गईं, उनकी चेतना जागृत और विकसित होती गई। उनके समाज के लोगों ने अपनी शैक्षणिक समस्याओं को लेकर एक समिति बनाई थी। 'अस्पृश्य विद्यार्थी परिषद'। उस वक्त वह नौवीं कक्षा में पढ़ती थीं। वह इस संगठन की उप-सचिव थीं। 1943 में नागपुर में इसका अधिवेशन किया गया। उनके घर में संगठन से जुड़े लड़के आते थे। इसके लिए भी समाज परिवार के लोग बुरा-भला कहते थे। लेकिन वे लोग चुपचाप पढ़े जाते। कल्पना करने की बात यह है कि 40 के दशक में जब औरतों का सांस लेना दूभर था, उस वक्त उनके माता-पिता समाज से पंगा ले रहे थे। दलित समाज को यह ताकत डॉ. आंबेडकर के विचारों से मिली थी। कौसल्या बैसंत्री लड़कपन से ही उनके प्रभाव में आ गई थीं। वह लिखती हैं कि उन्होंने उनका पहला भाषण दस साल की उम्र में नागपुर के कस्तूरचंद पार्क में सुना था। वहां डॉ. आंबेडकर ने कहा था– "अगर हिंदू हमें अपनी बराबरी का नहीं समझेंगे तो हम धर्मांतरण करेंगे।"

वह कहती हैं कि डॉ. आंबेडकर के विचारों का अस्पृश्य समाज के लोगों के ऊपर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। यह प्रभाव पड़ना स्वभाविक ही था, क्योंकि उन्होंने ही पहली बार अस्पृश्य समाज में यह बोध जगाया कि वे भी इंसान हैं। इस देश पर उनका हक़ है, उन्हें भी सम्मानित जीवन जीने का अधिकार है। डॉ. आंबेडकर ने उनकी हिम्मत बढ़ाई और अपने मानवीय हक़ के वास्ते लड़ने के लिए प्रेरित किया। आज जो भी उन्नति अस्पृश्य समाज कर रहा है और करने के लिए अग्रसर हो रहा है, यह बाबा साहब की देन है। वह बताती हैं कि अस्पृश्यों की बस्तियों में

चक्की में गेहूं पीसती हुई औरतें बाबा साहब के गीत गाती थीं। लड़का पैदा होने पर उसे झूले में डालने के समय और बच्चे के जन्म दिवस पर भी बाबा साहब के गीत गाए जाते और कामना की जाती कि बच्चा बाबा साहब जैसा बने।

कौसल्या अपनी बस्ती की औरतों की कहानी सुनाती हैं। ज़्यादातर औरतें मेहनतकश लेकिन ज़्यादातर पितृसत्ता के दंश से दुखी। ठुमी अपने पति की दूसरी पत्नी है, जो सुबह से शाम तक काम करती है और हर साल बच्चा पैदा करती है। उनके घर में ढेर सारे बच्चे थे। बच्चों के लिए बाज़ार से पुराने कपड़े आते। उनके घर में हमेशा आलू-बैगन की सब्जी बनती थी।

एक अन्य महिला सोगी मरे हुए जानवर का मीट बेचती थी। एक अन्य महिला रामकुंवर मिल में काम करती थी। उसका पति जयराम निठल्ला था। पहली तारीख को मिल के गेट पर खड़ा हो कर पत्नी की पगार छीन लेता। उसकी पत्नी को मिल में ही किसी से इश्क हो गया। इसकी उसे सज़ा मिली। उसे निर्वस्त्र करके गधे पर बस्ती में घुमाया गया। अपमान बर्दाश्त न कर पाने के कारण उसने कुंए में छलांग लगा दी और मर गई। और अंततः एक कहानी बन गई।

समाज में स्त्री का दर्जा मात्र एक दासी का है, चाहे वह दलित हो या सवर्ण स्त्री। लेकिन समाज में दलित स्त्रियों का तिहरा शोषण होता है। एक तो दलित महिलाएँ दिन-रात मजूरी करती खटती है। दलित होने के कारण उनका शोषण तो होता ही है साथ ही स्त्री होने के कारण भी सवर्ण पुरुषों के साथ-साथ पति के शोषण का भी शिकार होना पड़ता है। इस संबंध में लेखिका लिखती है- ‘‘सखाराम की औरत दिहाड़ी पर मजदूरी कर रही थी वह सीमेंट-ईंट ढोकर मिस्त्री को देती थी वह देखने में सुन्दर थी। मिस्त्री बदमाश था। वह आते-जाते उसे छेड़ता था। एक दिन उसने सीमेंट का गोला बनाकर उसकी छाती पर मारा उस औरत ने उसे गालिया दी परंतु वह बेशर्म हँसता रहा। साथ में वहाँ खड़े मजदूर भी उसे देखकर हँस रहे थे। यह बात उस औरत ने अपने पति से कही। पति का काम था जाकर उस बदमाश को डांटे-फटकारे। परंतु उसने अपनी औरत को डांटना शुरू कर दिया मारा और कहने लगा कि और औरतें भी तो वहाँ काम करती है, उन्हें वह कुछ नहीं कहता और तुम्हे ही क्यों छेड़ता है? तुम ही बदचलन हो, यह कहकर उसे रात भर घर से बाहर रखा। वह बिचारी घर के पीछे रात भर डर-डर के रही और सवेरे उसे गधे पर बैठाया गया बस्ती से बाहर निकालने के बाद वह बेचारी झाड़ी में छिपी रही, क्योंकि उसके बदन पर पूरे कपड़े नहीं थे। वह रात में बस्ती के कुएँ में कूद गई सबेरे उसका शरीर पानी के ऊपर तैर रहा था। उसके माँ-बाप आए और कहने लगे कि इसने हमारी नाक कटवाई, अच्छा ही हुआ कि यह कुलटा मर गई।[3]

बाबा साहब की जलाई लौ हमेशा उनके अंदर जलती रही। संभवतः इसी कारण से जातीय अपमान का दंश उन्हें बहुत सालता था। वे कहती हैं– ‘‘मैं अस्पृश्य हूं, यह भावना मन से कभी जाती ही नहीं थी।’’[4] लेकिन, स्कूल में, समाज में हर जगह तमाम जातीय उत्पीड़न और अपमान का सामना करते हुए भी उन्होंने बाबा साहब द्वारा दिए गए शिक्षा का मूल मंत्र कभी नहीं त्यागा।

21 वर्ष की आयु में कौसल्या बैसंत्री की शादी बिहार के रहने वाले देवेंद्र कुमार से हुई। तब वह एम.ए,एल.एल.बी करके बनारस विश्वविद्यालय से डीलिट कर रहा था। उस समय के हिसाब से अपनी बड़ी उम्र के दबाव, देवेंद्र कुमार की उच्च शिक्षा और सामाजिक कामों की सक्रियता के कारण कौसल्या ने दबे मन से इस विवाह के लिए हामी भर दी थी। देवेंद्र से विवाह के लिए हामी भरने का खामियाजा लेखिका को जिंदगी भर ‘तू ही मेरे पीछे पड़ी थी’ कहकर चुकाना पड़ा। लेखिका कहती है- ‘‘मैंने शादी कि थी जरुर, पर यह कोई बड़ा अपराध नहींथा। मैंने कोई जोर जबरदस्ती नहीं की थी। फिर भी मुझसे बार-बार कहता थाकि तुम्हे कोई नहीं मिला, इसलिए मेरे साथ शादी की। एक बार मेरे छोटे लड़के ने टोका कि आपकी शादी को चालीस साल हो गए और आप बार-बार इसकी रट

लगाते हो तब वह उसके ऊपर नाराज हो गया।"[5]दलित होने के बावजूद देवेंद्र कुमार भयंकर सामंती आदमी था। किसी भी समस्या में अपनी पत्नी से सलाह लेना उसकी मर्दानगी के ख़िलाफ़ था। वह घर चलाने के लिए एक पैसा उनके हाथ में नहीं रखता। सब्जी आदि के लिए गिन कर पैसा रखता। बाकि तेल, साबुन, चीनी सब अपनी अलमारी में बंद रखता। बाद में वह लेबर इंस्पेक्टर हो गया। कौसल्या का जीवन नरक बन चुका था। वह बात-बात पर गंदी गालियाँ देता और भयंकर क्रूरता से मारता। उनके पति से उन्हें दुःख के अलावा कुछ नहीं मिला। वह जिद्दी, घमंडी और क्रूर था। वह मानता था पत्नी सिर्फ खाना बनाने और उसकी शारीरिक भूख मिटाने के लिए होती है वह कहती है- "देवेन्द्र कुमार को सिर्फ खाना बनाने और उसकी शारीरिक भूख मिटाने के लिए चाहिए थी।"[6]आज़ाद रहने वाली कौसल्या पति की गुलाम बनकर रह गई। इतनी पढ़ी-लिखी लड़की विवाह संस्था में दासी बन गई। वह कौसल्या के प्रति हमेशा असम्पृक्त रहता। ख़ासतौर से जब उनके बच्चे होते तो वह उनकी खैरख्वाह लेने भी नहीं जाता।

भोपाल के हमीदिया अस्पताल में पैदा हुए उनके पाँचवे बच्चे की पैदाइश का ज़िक्र उन्होंने विस्तार से किया है। जिस दौरान पता होने के बावजूद वह दौरे पर निकल जाता है और लौटने के बाद भी उससे मिलने तक नहीं आता। अपने पति के बारे में वे भूमिका में लिखती हैं- "मेरे उच्च शिक्षित पति, लेखक और भारत सरकार में उच्च पद पर सेवारत रहे। उन्हें ताम्रपत भी मिला है और स्वतंत्रता सेनानी की पेंशन भी। पति ने मेरी कभी कदर ही नहीं की बल्कि रोज-रोज के झगड़े, गालियों से मुझे मजबूरन घर छोड़ना पड़ा और कोट केश करना पड़ा।"[7]कौसल्या अपमान के घूंट पीकर रह जाती हैं। वह लिखती हैं– "क्या ऐसे पति से प्यार श्रद्धा हो सकती है? इस प्रसंग की याद आते ही मेरा खून खौलने लगता है।"[8] डॉ. धर्मवीर लेखिका को आरोपित करते हुए लिखते हैं-"यदि वे अच्छे हाथ-पाँव लेकर भी द्विज नारी की तरह भरण-पोषण पर पालनेवाली डायनासोर की नस्ल की औरत न होती तो दलित कानून का सहारा लेकर अपने जीवन की धरा को पूर्णतया बदल सकती थी। पति के अत्याचार सहने में जो लाचार है वह द्विज नारी है क्योंकि ब्राह्मण विवाह की वजह से तलाक लेने का विकल्प नहीं है। लेकिन नारी निठल्ला होकर ही शिकायत कर सकती है कि उसका पति क्रूर है।"[9]इतना अपमान झेलने के बाद भी इस रिश्ते से निकलने का फैसला करने में उन्हें 40 साल का वक्त लगा।

भोपाल से वह दिल्ली आ गई। उनके बच्चे बड़े हो गए थे। उन्होंने एक बार फिर से अपना सामजिक काम शुरू किया और दलितों तथा महिलाओं के संघर्ष के साथ जुड़ गईं 24 जून, 2011 को वे भगवान् को प्यारी हो गई।

निष्कर्ष :

कौसल्या बैसंत्री की पूरी आत्मकथा में उनकी लेखन शैली बिलकुल बिखरी-बिखरी है, अधिक तारतम्यता नहीं है। जैसे किसी की जीवन डायरी के लिखे पन्ने हों जिन्हें पुनर्सृजित कर दिया गया हो। लेकिन मुझे लगता है शायद यही उसकी खूबसूरती भी है। उनकी समूची जिंदगी भी तो कितनी बिखरी-बिखरी थी। इसलिए उनकी इस आत्मकथा की अपनी एक भाषा शैली है, अपना व्याकरण है और सबसे जुदा अपना एक सौंदर्यशास्त्र है। मूलतः मराठी भाषी होते हुए, हिंदी में लिखना एक चुनौती भी थी। दरअसल सभी साहित्यकार अपनी भाषा अपने साथ भी लेकर आते हैं। कौसल्या बैसंत्री की भी अपनी अलग भाषा है, जो बिना किसी लाग-लपेट के अपनी बात कहती चलती हैं और यही उनका सौन्दर्यशास्त्र भी है।

इस तरह कौसल्या यह बताने की कोशिश करती हैं कि एक ओर तो औरतें घिनौने पितृसत्ता की मार झेल रही थीं तो दूसरी ओर उनका पूरा परिवार, समाज दलित होने का अपमान झेल रहा था। इसे ही कौसल्या बैसंत्री 'दोहरा अभिशाप' कहती हैं शायद!

सन्दर्भ ग्रंथ:

1. दोहरा अभिशाप- कौशल्या बैसंत्री,किताब घर, प्रकाशन, नई दिल्ली: भूमिका

2. दोहरा अभिशाप- कौशल्या बैसंत्री,पृ.सं. 29
3. दोहरा अभिशाप, पृ. सं. 56
4. दोहरा अभिशाप. पृ. सं. 53
5. दोहरा अभिशाप. पृ. सं. 105
6. दोहरा अभिशाप. पृ. सं. 106
7. दोहरा अभिशाप, पृ. सं. 07
8. दोहरा अभिशाप, पृ. सं. 07
9. हँस पत्रिका, दलित विशेषांक, अंक-1, अगस्त- 2004, संपादक- राजेन्द्र यादव, दिल्ली, पृ. सं. 70

9446426447

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 213-216
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

पुराण साहित्य में अवसाद निवारण के उपाय

डॉ0 कुमुद कुमार पाण्डेय
अतिथि अध्यापक–संस्कृत,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उ0प्र0

प्रस्तावना :

पुराण अन्नत ज्ञान–राशि के भण्डार है इनका साहित्य अत्यन्त विशाल है। लौकिक तथा पारलौकिक ज्ञान–विज्ञान के सभी विषयों का इनमें प्रचुरता से समायोजन हुआ है। पुराणों का अविर्भाण वेदार्थ के उपवृंहण के लिए हुआ है आज तक जितने ज्ञान–विज्ञान, कला तथा विद्या के क्षेत्रों का और उसकी शाखाओं उपशाखाओं का विकास हुआ है, पूर्व द्रष्टा ऋषियों ने उनका सूक्ष्म रूप पुराणों में संनिवेश क्रिया है। यद्यपि पुराणों में कथा भाग अधिकता से वर्णित है, किन्तु यत्र–तत्र जिज्ञासु पाठकों के लिए अनेकों विद्याएं कलाएं विज्ञान आदि का वर्णन होता है। इन पुराणों में वर्णित कलाएं अनन्त है।

पुराणों में भारतीय कलाओं को प्राचीन काल से ही संरक्षण प्राप्त था। पुराणों में विभिन्न विषयों से सम्बन्धित ललित कलाओं को नामोल्लेखपूर्वक समाविष्ट किया गया है। गृह निर्माण कला त्र वास्तुकला के साथ शिल्पकला, चित्रकला, प्रतिमाशास्त्र कला संगीत, नृत्यकला आदि का वर्णन उत्कृष्टता के साथ प्राप्त होता है।[1]

वास्तुकला– वास–स्थान या निवास स्थान को वास्तु कहते है तत्सम्बन्धी कला को वास्तुकला कहते है। मुख्य रूप से वास्तुकला के अन्तर्गत भूमि सम्बन्धी नगर आदि रचना सम्बन्धी तथा गृह के शुभा–शुभ होने पर ही भूमि शोधन करना चाहिए। नारदीय पुराण के अनुसार गृह आदि बनाना हो तो पहले गन्ध, वर्ण, रस तथा आकृति के द्वारा क्षेत्र (भूमि) की परीक्षा कर लेनी चाहिए यदि उस स्थान की मिट्‌टी में मधु (शहद) के समान गन्ध होतो ब्राह्मणों के पुष्प सदृश गन्ध हो तो क्षत्रियों के आम्ल (खटाई) के समान गन्ध हो तो वैश्यों के और मांस की सी गन्ध हो तो वह स्थान शूद्रों के वसाने योग्य है। वहां की मिट्‌टी का रंग श्वेत हो तो ब्राह्मणों के लाल, हो तो क्षत्रियों के पीत (पीला) हो तो वैश्यों को कृष्ण (काला) हो तो वह शूद्रों के निवास के योग्य है।[2] ईशान, पूर्व और दिशा में प्लव (नीची) भूमि सबके लिए अत्यन्त वृद्धि होने वाली होती है।[3]

पुराणों में वर्णित गृह निर्माण कला तत्कालीन समाज की समृद्धता का एवं वैभवता की उत्कृष्टता को प्रदर्शित करती है। प्रायः सभी पुराणों में सुरम्य महल एवं उन्नत गृह उच्चकला के साथ ज्ञान की उत्कृष्टता को प्रदर्शित करते है। स्थापत्य कला का ही सम्बन्ध वास्तुकला से है। जिसमें नगर निर्माण, ग्राम निर्माण भवन निर्माण, राज प्रसाद–निर्माण, देवमन्दिर निर्माण, शयन गृह साज–सज्जा, आयुध गृह, विभिन्न प्रतिमाओं का निर्माण तथा मन्त्रादि का निर्माण बहुत श्रेष्ठता के साथ वर्णित है। इन वास्तुकलाओं का विशेष रूप से मत्स्य पुराण में है।[4] विष्णुधर्मोत्तर पुराण (द्वितीय खण्ड अध्याय, 29 तृतीय खण्ड अध्याय 94–95), अग्नि पुराण अध्याय 93, 104–106) तथा गरुड़ पुराण आदि में वास्तुशास्त्र के महत्त्व पूर्ण विषयों का वर्णन किया गया है मत्स्य पुराण[5] में वास्तुशास्त्र के भृगु, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, नग्नजित्,

भगवान शंकर, इन्द्र, ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश्वर, शौनक गर्ग, वासुदेव, अनिरुद्ध, शुक तथा वृहस्पति ये अठारह आचार्य बनाये गये है जिनमें वेदताओं के शिल्पी के रूप में विश्वकर्मा की तथा दानवों के शिल्पी के रूप में भय की अधिक प्रसिद्धि है।

वास्तु के प्रार्दुभाव के कथा–विषय में मत्स्यपुराण[6] में बताया गया है कि प्राचीन काल में अन्धकासुर के वध के समय भगवान शंकर के ललाट से पृथ्वी पर जो स्वेद विन्दु गिरे उनसे एक भयंकर आकृति वाला पुरुष प्रकरण हुआ जो विकराल मुख फैलाये था उसने अन्धगणों का रक्तपान किया किन्तु तब भी उसकी तृप्ति नही हुई वह भूख प्यास से व्याकुल होकर त्रिलोकी को भक्षण करने के लिए उद्यत हो गया वाद में शंकर आदि देवताओं ने उसे पृथ्वी पर सुलाकर वास्तुदेवता के रूप में प्रतिष्ठित किया और उसके शरीर में सभी देवताओं में वास किया, इसलिए वह वास्तु (वास्तुपुरुष या वास्तुदेवता) के नाम से प्रसिद्ध हो गया। देवताओं ने उसे गृह निर्माण के वैश्वदेव वलि के साथ पूजन–यज्ञ–यगादि के समय पूजित होने का वर देकर प्रसन्न किया इसलिए आज भी वास्तुदेवता का पूजन होता है। वास्तु देवता के शरीर में 64 तथा 81 देवताओं के स्थित होने की बात पुराणों में वर्णित है। अग्नि आदि पुराणों में इसके पूजन की विस्तृत विधि निर्दिष्ट है। वाराही संहिता की महोत्पली व्याख्या में इस विषय का संगोपांग विवेचन हुआ है।

शिल्पकला :

विविध कलाएं जो मुख्य रूप से हाथों से सम्पादित होती है शिल्प कही जाती है। इसे शिल्प विद्या भी कहते है। इसके अन्तर्गत प्रसाद शिल्प, आभूषण–घट्टन शिल्प–धातु एवं रंगों के मिश्रण–सम्बन्धी, काष्ठ–शिल्पकला, उद्यान रचना शिल्प, पात्र शिल्प, शास्त्र–निर्माण शिल्प, वायुयान निर्माण शिल्प, भित्ति शिल्प, आदि विविध कलाओं का समावेश है।[7]

विश्वकर्मा प्रभासस्य पुत्रः शिल्पीं प्रजापतिः।[8]

पुराणों में प्रभास नामक अष्टम वस्तु के पुत्र विश्वकर्मा के समस्त शिल्पकलाओं का आचार्य बताया गया है। इन्होंने अपने पुत्रों तथा शिष्यों के साथ शिल्पशास्त्र का प्रसार–प्रचार किया विविध शिल्पों के ज्ञाता वास्तुकार, रथकार, मालाकार, कास्यकार, लौहकार काष्ठकार, स्वर्णकार, मणिकार, कुरभकार आदि नामों से जाने जाते है। मत्स्य तथा विष्णु धर्मोत्तर पुराण में शिल्प कला का विस्तार से वर्णन किया गया है।

चित्रकला :

चित्रकला या चित्रशाला अत्यन्त प्राचीन विद्या है। पुराणों में भगवान नारायण को इस कला का आद्याचार्य या प्रवर्तक कहा गया है विश्वकर्मा ने उनसे यह कला सीखी और फिर सर्वत्र इसका प्रचार–प्रसार हुआ। विश्व में संवर्न्धित चित्रकला के मूल सूत्र पुराणों में वर्णित है इस सम्बन्ध में पुराणों में एक कथा प्राप्त होती है।[9]

भगवान नर–नारायण वदरिका श्रम में लोक–कल्याण की कामना से तपस्यारत थे देवराज इन्द्र को उनकी तपस्या से शंका हुई कही मेरा इन्द्रासन न छिन जाय इन्द्र ने उनकी तपस्या मे विहन डालने के लिए कामदेव को अप्सराओं के साथ भेजा किन्तु वे उनकी तपस्या को भंग न कर सके और उनके शाप से भयभीत हो गये। उसी समय नारायण में आंखे खोली वे इन्द्र की चाल समझ गये उन्होंने अप्सराओं एवं गन्धर्वो को अभय प्रदान करते हुए कहा–इन्द्र के कहने पर तुम्हे भी यह विश्वास था कि तुम मुझे तपस्या से च्युत कर दोगे, तुम्हे अपने सौन्दर्य पर अति गर्व है। अव तुम सभी मेरी भी रचना देखों ऐसा कहकर उन्होंने आम्रवृक्ष के रस से पृथ्वी पर नारी की एक सुन्दर आकृति तैयार की और वह आकृति सजीव हो गयी। तैलोक्य सुन्दरी तथा अद्वितीय रूपालवण्यसम्पन्न वह और कोई नहीं, उर्वशी अप्सरा भी नारायण ने और भी कई नारी–चित्रों की रचना कर उन्हें प्राणवान बनाया। उनमें जो सबसे सुन्दर हो उसे देवलोक ले जाने की अज्ञा दी वे उर्वशी को लेकर चले गये उक्त कथानक में चित्र कला उद्भव के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण विवरण है। पुराणों में इसकला के विषयों पर तथा चित्रों की रचना पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण तृतीय खण्ड के प्रथम तथा द्वितीय अध्याय में और विष्णुधर्मोत्तर पुराण[10] में विस्तार से देवता ऋषि, मुनि, मनुष्य, गन्धर्व, अप्सरा, दैत्य, दानव, पशु–पक्षी, सूर्य चन्द्र, शंख, पद्मादि निधियों, समुद्रसागर शैल शिखर, प्रकृतिक दृश्यों उद्यानों प्रातःकाल, सांयकाल, रात्रि, दिन तथा सर्वतोभद्रमण्डलादि के सुन्दर चित्रों के आकार–प्रकार, उन्हें बनाने की विधि निर्दिष्ट है। चित्रकला के महत्म्य के कहा है–

यथा सुमेरुः प्रवरो नगानां यथाण्डजानां गरुडः प्रधानः।
यथा नराणं प्रवरः क्षितीशस्तथा कलानामिह चित्रकल्पः।।[11]

अर्थात्, जैसो पर्वतों में सुमेरुगिरि पक्षियों में गरुड़, मनुष्यों में राजा श्रेष्ठ है वैसे ही कलाओं में चित्र–कला सर्वश्रेष्ठ है।

मूर्तिकला :

इसे मूर्तिशास्त्र भी कहते है यद्यपि चित्रकला से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। तथापि मूर्तिकला में मुख्य रूप उपासना के योग्य देवी प्रतिमाओं के लक्षण, उनका परिणाम तथा रचना विधि निर्दिष्ट रहती है। प्रति मामण्डल काश्यपशिल्पम् शिल्परत्नम् अंशुमतभेदागम्, सुप्रभेदागम तथा पा<चरात्रागम् आदि प्रतिमाशास्त्र के ग्रन्थों में विस्तार से देवताओं की विभिन्न प्रतिमाओं और शिवलिंगादि के संयोयांग रचना की विधि दी हुई है, किन्तु पुराणों में भी इस विषय का संक्षेप में परन्तु स्पष्ट विवेचना प्राप्त होता है। मुख्य रूप से विष्णु धर्मोत्तरपुराण, अग्निपुराण[12] तथा मत्स्य पुराण[13] आदि पुराणों में यह विषय विशेष रूप से वर्णित है।

पुराणों में विभिन्न देवताओं यथा सपरिकर विष्णु, वासुदेवादि चतुर्व्यूह, रमादि अवतार, सद्योजात–वामदेव आदि शिव तथा उनका परिवार शिवलिंग अश्विनीकुमार, शची सहित इन्द्र, चित्रगुप्त सूर्यादि नवग्रह, चौसठ, योगिनियों, अष्टदिकृपाल आदि अन्यान्य देवों की प्रतिमाओं परिमाण तथा निर्माण की विधि प्राप्त होती है। साथ परिमाण तथा निर्माण की विधि प्राप्त होती है। साथ ही देवताओं के स्वरूप को बताया गया है। प्रतिमाओं के सात्विक, राजस तथा तामस–ये तीन भेद बताये गये है साथ ही यह भी वर्णित है कि घर में पूजा के लिए बनने वाली देव प्रतिमा तथा मन्दिर आदि में स्थापित मूर्तियों में क्या अन्तर होना चाहिए। इस प्रकार पुराणों में मूर्तिकला के विषय में प्रर्याप्त वर्णन प्राप्त होता है।[14]

संगीतकला :

संगीत कला की महत्ता को लक्षित करते हुए राजा भर्तृहरि के अपने नीतिशास्त्र में कहा है कि जो मनुष्य संगीत से अग्निभिज्ञ है वह पशु के समान है संगीता कला को संगीत विज्ञान अथवा गान्धर्व विद्या कहकर अष्टादश विद्याओं के स्थान दिया गया है। पुराणों में 12 गन्धर्वों का उल्लेख प्राप्त होता है।

ह्मह, हूहू, तुम्बुरु, नारद विवावसु, उग्रसेन
वसुरूचि, चित्रसेन, उर्णायु धृतराष्ट और सूर्यवर्चस।[15]

पुराणों में गन्धों के साथ संगीत का पुराना सम्बन्ध बताया गया है। संगीत कला वैदिक काल से उन्नत थी, पूर्व में यज्ञानुष्ठान के समय संगीतकाल का प्रयोग किया जाता था। सोमलता के प्रयोग में मंत्रगान की प्रथा थी।[16]

जातक ग्रन्थों में संगीतकला, गार्न्धवेद के नाम से अभिहित है। संगीत के वाद्य यंत्रों का प्रयोग भी वर्णित है। पौराणिक वाद्ययत्रों में वीणा, वेणु, मृदंग, तूर्य, भेरी, शंख, काहल, गोमुखों का नामोल्लेख प्राप्त होता है।[17]

नृत्यकला :

पौराणिक साहित्य में नृत्यकला भी संगीतकला का प्रमुख अंग थी। संगीत को नृत्य तथा नृत्य को संगीत का सहयोगी तथा महान उपकारी माना जाता था ये दोनों परस्पर अन्योन्यश्रित थे। स्वर्ग की अप्सराएं इस कला निष्णात थी देवताओं के साथ अप्सराओं के नृत्यों के प्रसंग का उल्लेख पुराणों में प्राप्त होता है। लोलापुरुषोत्तम भगवान् श्री कृष्ण नृत्यकला में पारंगत आचार्य थे उन्होंने कालीय नाग के फलों के ऊपर अद्भुत नृत्य किया था नृत्य के समय कालीय नाग के मुख से रक्त निकलने लगा था भी कृष्ण जब उच्च स्तर में मधुर गीतों को गाते थे तब गोपियाँ धन्य कृष्ण। इस ध्वनि के साथ ऊँचे गीत गाती थी।

रासगेयं जगौ कृष्णो यावत्तरस्वरध्वनिः।
साधु कृष्णोति कृष्णोति तावता द्विगुणं जगुः।।[18]

पुराणों में हिरण्यकाशिपु के स्फटिक के महत्त्व में अप्सराओं के नृत्यं का प्रसंग प्राप्त होता है। ऋग्वेद में भी कुमारी युवती और कन्याओं के नृत्य का प्रसंग मिलता है।

निष्कर्ष :

पुराण साहित्य में अवसाद निवारण के अनेक कलाएं विद्यमान है जैसे शिल्पकला नृत्यकला संगीत कला, मूर्तिकला चित्रकला आदि कलाओं के द्वारा अवसाद का निवारण किया जा सकता है।

सारांश :

पुराण अनन्त–ज्ञान राशि के भण्डार है। इनका साहित्य अत्यन्त विशाल है। लौकिक तथा पारलौकिक ज्ञान–विज्ञान के सभी विषयों का प्रचुरता से समायोजन हुआ हैं पुराणों में भारतीय कलाओं को प्राचीन काल से संरक्षण प्राप्त था। पुराणों में विभिन्न विषयों से सम्बन्धित ललित कलाओं को नामोल्लेख पूर्वक समाविष्ट किया गया है। गृहनिर्माणकला त्र वास्तुकला के साथ, शिलपकला, चित्रकला, प्रतिमाशास्त्र, संगीतकला, नृत्यकला आदि का वर्णन उत्कृष्टता से प्राप्त होता है। पुराणों में सभी कलाओं का न्यूनाधिक रूप से प्रतिपादन प्राप्त होता है। किन्तु मुख्य रूप से वास्तुकला, संगीतकला, वाद्यकला, नृत्यकला, वहुलता से प्रदर्शित की गयी है। यद्यपि चित्रकला का विवेचन संक्षिप्तता के साथ वर्णित है। तथापि वहा सूक्ष्मता के साथ अनुभूति कराती है फिर भी इन सभी कलाओं में वास्तुकला, संगीतकला नृत्यकला पौराणिक युग में उन्नत शिखर पर विद्यमान थी। अतः अवसाद निवारण के लिए पुराणों का अनुशीलन नितान्त आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. चौखम्भा सुरभारती माला–6.51
2. नारदीय पुराण– 1/2/540–541
3. वही–1/2/542
4. अग्निपुराण–93, 104–106
5. मत्स्यपुराण अध्याय– 252
6. मत्स्युपुराण अध्याय 251
7. चौखम्भा सुरभारतीमाला–5.52
8. वहीं
9. वहीं
10. विष्णुधर्मोत्तरपुराण अध्याय 35 से 43
11. विष्णुधर्मोत्तरपुराण 3.43.39
12. अग्निपुराण–अध्याय 44–55
13. मत्स्यपुराण– 258–263
14. चौखम्भा सुरभारती–6.53
15. वही,
16. वही
17. वही
18. वही

Email-kumudkumarpandey2021@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 217-222
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

ચતુર્વિધ યોગ અને તેનું ફળ

કંચનબહેન કાંતિભાઇ બારીઆ
શોધાર્થી (સંસ્કૃત)
શ્રી ગોવિંદ ગુરુ યુનિવર્સિટી, ગોધરા
સંલગ્ન
શ્રી એમ સી. રાઠવા આર્ટ્સ કોલેજ, પાવી જેતપુર

યોગ શબ્દ સંસ્કૃતના 'યુજ' ધાતુથી બન્યો છે. તેનો અર્થ છે જોડવું. યોગનો આધ્યાત્મિક અર્થ એ થાય છે કે જે સાધન દ્વારા યોગીને જીવાત્મા અને પરમાત્માની એક્તાનો અનુભવ થાય છે- જીવાત્માનો પરમાત્મા સાથે જ્ઞાનપૂર્વક સંયોગ થાય છે, એ ગુપ્ત જ્ઞાન શીખવાડવાવાળું શાસ્ત્ર યોગશાસ્ત્ર છે. યોગ એક એવી આધ્યાત્મિક વિદ્યા છે જે જીવાત્માને પરમાત્માની સાથે જોડવાની પ્રક્રિયા સમજાવે છે. યોગ એ એવી પરમાર્થવિદ્યા છે જે આત્માને ઇન્દ્રિયગત બાહ્ય જગતની જાળમાંથી મુક્ત કરે છે અને તેને અખંડ આનંદ, પરમશાંતિ, શાશ્વત જ્ઞાન, શાશ્વત સુખ અને શાશ્વત જીવનના સ્વાભાવિક ગુણોથી યુક્ત પરમાત્મા સાથે ઐક્ય સાધી આપે છે. યોગનો વ્યાપક અર્થ કરીએ તો તેની અંદર કર્મયોગ, ભક્તિયોગ, રાજયોગ, ધ્યાનયોગ, હઠયોગ, મંત્રયોગ, લયયોગ અથવા કુંડલિનીયોગ વગેરે બધા પ્રકારના યોગોનો સમાવેશ થાય છે. તેનો સંકુચિત અર્થ કરવાથી તે ફક્ત અષ્ટાંગયોગ અથવા મહર્ષિ પતંજલિ દ્વારા પ્રવર્તિત રાજયોગનો જ ઉલ્લેખ થાય છે.

ચતુર્વિધ યોગ -

જેવી રીતે શરીરનો એક ભાગ જુદા જુદા વ્યક્તિઓના ઉપયોગમાં આવી શકતો નથી, એવી જ રીતે એક જ માર્ગ બધા લોકો માટે અનુકૂળ ન હોઇ શકે. જગતમાં ચાર પ્રકારના મનુષ્યો છે – કર્મપ્રધાન, ભક્તિપ્રધાન, યોગપ્રધાન અને દાર્શનિક અથવા બુદ્ધિપ્રધાન. આથી તેના સ્વભાવને અનુરૂપ ચાર માર્ગ છે, જો કે બધાનું લક્ષ્ય એક જ છે – પરમતત્વની પ્રાપ્તિ. ઉપરોક્ત ચાર પ્રકારના મનુષ્યો ના જુદા જુદા દ્રષ્ટિકોણથી આ પરમ સત્યને પ્રાપ્ત કરવા માટે ચાર માર્ગોનું

વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તેમને કર્મયોગ, ભક્તિયોગ, રાજયોગ અને જ્ઞાનયોગ કહેવામાં આવે છે.

આ ચાર માર્ગો એકબીજાના વિરોધી નથી પરંતુ એકબીજાના સહાયક છે. ધર્મ દ્વારા સમગ્ર માણસને તેના હ્રદય, મગજ અને હાથ ત્રણેય અંગોનો સંસ્કાર અને વિકાસ કરવો જોઇએ, ત્યારે જ તે પૂર્ણતા પ્રાપ્ત કરી શકે છે. કર્મયોગ ગંદકીનો નાશ કરે છે, મનને શુદ્ધ કરે છે અને હાથમાં કૌશલ્ય લાવે છે. ભક્તિયોગ વિક્ષેપ દૂર કરે છે અને હ્રદયનો વિકાસ કરે છે. રાજયોગ મનની સ્થિરતા અને એકાગ્રતા ઉત્પન્ન કરે છે. જ્ઞાનયોગ અજ્ઞાનનો પડદો દૂર કરે છે, ઇચ્છા અને બુદ્ધિનો વિકાસ કરે છે અને આત્મજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે, તેથી, સાધકે ચાર પ્રકારના યોગનો અભ્યાસ કરવો જોઇએ. આધ્યાત્મિક માર્ગમાં આગળ વધવા માટે આપણે જ્ઞાનયોગને મુખ્ય આધાર બનાવીને અન્ય યોગને સહાયક સાધન બનાવી શકીએ.

કર્મ, ભાવના અને બુદ્ધિ- આ ત્રણ ઘોડા-શરીરના રથ સાથે જોડાયેલા છે. રથ સરળતાથી ચાલે તે માટે તેમની ગતિવિધિઓ સંપૂર્ણ સુમેળમાં હોવી જોઇએ. બધા અવયવો વિકસિત હોવા જોઇએ. મગજ શંકર જેવું, હ્રદય બુદ્ધ જેવું અને આપણા હાથ જનક જેવા હોવા જોઇએ. ભક્તિ વિનાનું વેદાંત સંપૂર્ણપણે સ્વાદહિન બની જાય છે. જેણે આત્મસાક્ષાત્કાર કરી લીધો છે, આત્મા સાથેની એકતાનો અનુભવ કરી લીધો છે તે વિશ્વની સેવા કર્યા વિના કેવી રીતે રહી શકે ? ભક્તિ જ્ઞાનથી અલગ નથી. જ્ઞાન એ ભક્તિનું આવશ્યક અંગ છે કે નહીં તે અંગે લોકોમાં ઘણો મતભેદ છે. કેટલાક દલીલ કરે છે કે જ્ઞાન એ ભક્તિનું સાધન છે. તેઓ દલીલ કરે છે કે ભગવાનની જાણ્યા વિના, આપણે ખરેખર તેમની પૂજા કેવી રીતે કરી શકીએ ? કેટલાક પ્રખ્યાત ભક્તો કહે છે કે જ્ઞાન અને ભક્તિ સંપૂર્ણપણે સ્વતંત્ર સાધન છે. તેઓ પોતાના અનુભવના આધારે સંપૂર્ણ ખાતરી સાથે કહે છે કે ભક્તિ પોતે જ ધ્યેય છે અને તેની સફળતા માટે જ્ઞાનની જરૂર નથી. જો કોઇ ઇજનેર જે વીજળીના રહસ્યોને જાણે છે તે અંધારી રાતે ગાઢ જંગલમાં જાય છે અને કોઇ રસ્તો શોધી શકતો નથી, તો તેને ફક્ત વીજળીનું જ્ઞાન શું કામનું ? શું ફક્ત ખોરાકનું જ્ઞાન કોઇની ભૂખ સંતોષી શકે છે ?

ભક્તિ અને જ્ઞાન એકબીજાના વિરોધી છે એમ કહેવું એ સંપૂર્ણ મૂર્ખતા છે. સંપૂર્ણ જ્ઞાન એ પ્રેમ છે, અને સંપૂર્ણ પ્રેમ એ જ્ઞાન છે. સંપૂર્ણ ભક્તિ અને જ્ઞાન એક જ છે. ભગવાન કૃષ્ણ કહે છે –

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ॥ [१]

'આ રીતે જેઓ મારામાં સતત મન લગાવીને પ્રેમથી મારુ ભજન કરે છે તેમને હું તે જ્ઞાન આપું છું જેના દ્વારા તેઓ મને પ્રાપ્ત કરી લે છે'. ગીતામાં અન્યત્ર પણ કહ્યું છે કે – 'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्' [२]

(૧) રાજયોગ –

રાજયોગના યમ, નિયમ, આસન, પ્રાણાયામ, પ્રત્યાહાર, ધારણા, ધ્યાન અને સમાધિ- આ આઠ અંગ છે. યમનો અર્થ આત્મસંયમ છે. એટલે કે અહિંસા (કોઇને દુ:ખ ન આપવું), સત્ય,

અસ્તેય(ચોરી ન કરવી), બ્રહ્મચર્ય અને અપરિગ્રહ (લોભ ન કરવો). શૌચ(અંદર અને બહાર શુદ્ધતા), સંતોષ, તપ (પોતાના ધર્મનું પાલન કરવા માટે દુ:ખ સહન કરવું), સ્વાધ્યાય (વેદ અને ઉત્તમ શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ અને ભગવાનના નામનો જાપ-કિર્તન વગેરે) અને ઇશ્વરપ્રણિધાન (ઇશ્વરની ઉપાસના કરવી અને બધા કર્મોનું ફળ તેમને અર્પણ કરી દેવું) - આ પાંચ નિયમ છે. યમ અને નિયમના અભ્યાસથી યોગાભ્યાસીની ચિત્તશુદ્ધિ થાય છે. મૈત્રી, કરૂણા અને આનંદ વધવાથી ધૃણા, ઈર્ષા અને હ્રદયની કઠીનતાનો નાશ થાય છે અને મનને શાંતિ મળે છે. આસનોનો અભ્યાસ કરવાથી શરીર સ્થિર અને દૃઢ બને છે. પ્રાણાયામના અભ્યાસથી મનનો વિક્ષેપ દૂર થાય છે. પ્રાણાયામ કરવાવાળાનું શરીર હલકું બને છે. પ્રત્યાહાર(ઇન્દ્રિય વિષયોનો ત્યાગ) નો અભ્યાસ સાધકને મનોબળ અને માનસિક શાંતિ આપે છે. મનને એકાગ્ર કરવાનું નામ ધારણા છે. કોઇ વસ્તુનું સતત ચિંતન એ ધ્યાન છે. તુરીય અવસ્થાનું નામ સમાધિ છે. ધારણા, ધ્યાન અને સમાધિના એક સાથે અભ્યાસને સંયમ કહે છે. બાહ્ય પદાર્થોમાં સંયમ કરવાથી અનેક પ્રકારની સિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત થાય છે અને આ પંચમહાભૂતોથી બનેલા જગત અને તેનાથી પણ સૂક્ષ્મ પાંચ તન્માત્રાઓનું જ્ઞાન થાય છે. ઇન્દ્રિય, અહંકાર, મન વગેરે પર સંયમ પ્રાપ્ત કરવાથી અનેક પ્રકારની સિદ્ધિઓનો અનુભવ થાય છે.

અષ્ટસિદ્ધિઓ[3]આ મુજબ છે -અણિમા (પોતાને અણું જેટલું સૂક્ષ્મ બનાવવું), મહિમા (પોતાને પર્વત જેટલું વિશાળ બનાવવું), લઘિમા (પોતાના શરીરને રૂ જેટલું હલકું બનાવવું), ગરિમા (પોતાના શરીરને લોખંડના પર્વત જેટલું ભારે બનાવવું), પ્રાપ્તિ (આંગળીથી ચંદ્રને સ્પર્શ કરવા જેવું), પ્રાકામ્ય (બધી ઇચ્છાઓ પુરી થઈ જવી), ઈશિત્વ (સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન કરવાની શક્તિ) અને વશિત્વ(બધા પર શાસન કરવાની અને પંચમહાભૂતો પર વિજય મેળવવાની શક્તિ).

યોગી ક્રમશ: યોગની જુદી જુદી ભૂમિકાઓ પર પહોંચીને અનેક પ્રકારના અનુભવ, જ્ઞાન અને શક્તિ મેળવે છે. પહેલા સવિતર્ક અને નિર્વિતર્ક સમાધિ સિદ્ધ થાય છે. પછી સવિચાર અને નિર્વિચાર સમાધિમાં પ્રવેશ કરે છે. અંતે તે સાનન્દ અને સસ્મિત સમાધિનો આનંદ લે છે. જો કે આ સમાધિથી મોક્ષની પ્રાપ્તિ નથી થતી. જે યોગી સૌથી ઉંચી અસંપ્રજ્ઞાત સમાધિ પ્રાપ્ત કરવા માગે છે તેના માટે આ નિમ્ન સ્તરની સમાધિ અંતરાયરૂપ છે. અસંપ્રજ્ઞાત સમાધિ સિદ્ધ થવાથી જન્મ-મૃત્યુના કારણ એવા સંસ્કારરૂપ બીજ સંપૂર્ણપણે બળી જાય છે.

રાજયોગીઓના ચાર પ્રકાર છે. છે. પહેલી શ્રેણીમાં 'પ્રથમકલ્પિત' આવે છે. તેઓ સમ્પૂર્ણ શિખાઉ હોય છે. તેમની અંદર ફક્ત પ્રકાશની ઝલક દેખાય છે. તેઓ સિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત કરતા નથી. આ લોકો સવિતર્ક સમાધિનો અભ્યાસ કરે છે. બીજી શ્રેણીમાં 'મધુભૂમિક' આવે છે. તેઓ નિર્વિતર્ક સમાધિમાં પ્રવેશ કરે છે અને ઋતુમ્ભરા પ્રજ્ઞાને પ્રાપ્ત કરે છે. તેને 'મધુમતી' કહેવામાં આવે છે કારણકે તેમાં આપણને એવું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે જે મધ જેટલું આનંદદાયક અને સંતોષકારક હોય છે. ત્રીજી શ્રેણીમાં 'પ્રજ્ઞાજ્યોતિ' આવે છે. આ લોકોએ પંચમહાભૂતો અને ઇન્દ્રિયોને જીતી લીધેલી હોય છે. આ શ્રેણીના યોગીઓ દેવતાઓ દ્વારા પણ લલચાતા નથી. આ તબક્કાને

'મધુપ્રતીક' કહેવામાં આવે છે. ચોથી શ્રેણીના યોગીનું નામ છે 'અતિક્રાન્તભણનીય'. આ યોગીઓ 'વિશોકા' અને 'સંસ્કારશેષા' નામની ભૂમિકા પર આરૂઢ હોય છે, તેઓ કૈવલ્ય પ્રાપ્ત કરે છે. રાજયોગી કોઇપણ સંયમ વિના પ્રતિભા દ્વારા બધી પૂર્ણતાઓ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. સર્વોચ્ચ જ્ઞાનને 'પ્રસંખ્યાન' કહેવામાં આવે છે. આ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર યોગીની અંદર હવે 'ધર્મમેઘ' સમાધિ ઉત્પન્ન થાય છે, જેના દ્વારા જન્મ અને મૃત્યુનું કારણ બનતા બધા સંસ્કાર બળી જાય છે. આ સ્થિતિ પ્રાપ્ત કરનાર યોગી આંખો વિના જુએ છે, જીભ વિના સ્વાદ ચાખે છે, કાન વિના સાંભળે છે, નાક વિના સૂંઘે છે, ત્વચા વિના સ્પર્શ કરે છે. તે ઇચ્છાશક્તિથી અસંખ્ય ચમત્કારો કરી શકે છે.

તૈત્તિરીય આરણ્યકમાં આ સ્થિતિનું વર્ણન આ પ્રકારે મળે છે.[૪] – ' આંધળા માણસે મોતી ગૂંથી દીધું, આંગળી વગરના માણસે તેને દોરીથી બાંધ્યું, ગળા વગરના માણસે તેને ગળાના હાર તરીકે પહેર્યું અને જીભ વગરના માણસે તેની પ્રશંસા કરી'.

આખરે વ્યક્તિ પોતાના ઐશ્વર્યમય અથવા કૈવલ્ય સ્વરૂપને પ્રાપ્ત કરે છે. તે પ્રકૃતિ અને તેના કાર્યોથી સંપૂર્ણપણે અલગ થઈ જાય છે. તે પોતાને સંપૂર્ણપણે મુક્ત અનુભવે છે અને કૈવલ્યને પ્રાપ્ત કરે છે, જે એક રાજયોગીનું અંતિમ લક્ષ્ય છે.

(૨) હઠયોગ -

હઠયોગીઓ આસન, બંધ, મુદ્રા અને પ્રાણાયામ પર વધારે ભાર આપે છે. તેમને શરીરના નીચેના ભાગમાં રહેલ મૂલાધારચક્રની અંદર સૂતેલી કુંડલિની- શક્તિને જાગૃત કરીને બાકીના પાંચ ચક્રો દ્વારા તેને સહસ્રારચક્રમાં લઈ જવાની ધુન સવાર હોય છે. આ સહસ્રારચક્ર માથાના ઉપરના ભાગમાં બ્રહ્મ-રન્ધ્રની પાસે રહેલ છે. અહીં કુંડલિની-શક્તિનો શિવ સાથે સંયોગ થઈ જાય છે. ત્યારે યોગી નિર્વિકલ્પ સમાધિમાં રહીને મુક્તિ અને ભુક્તિ (આધ્યાત્મિક આનંદ) બન્ને પ્રાપ્ત કરે છે. પ્રાણાયામનો અભ્યાસ કરતી વખતે તેને ચાર અવસ્થાઓનો અનુભવ થાય છે જેને 'આરંભાવસ્થા'. 'ઘટ-અવસ્થા', 'પરિચ્છાયા-અવસ્થા' અને 'નિષ્પત્તિ-અવસ્થા' કહે છે.

(3) ભક્તિયોગ –

ભક્ત શ્રવણ, કીર્તન, સ્મરણ, પાદસેવન, અર્ચન, વન્દન, દાસ્ય, સખ્ય અને આત્મનિવેદનરૂપ નવધા ભક્તિનો અભ્યાસ કરે છે. તે પોતાની રુચિ, સ્વભાવ, સાધનક્ષમતા અને સ્થિતિ અનુસાર શાન્ત, દાસ્ય, સખ્ય, વાત્સલ્ય અને માધુર્ય એ પાંચ ભાવોમાંથી કોઇ એક ભાવ પસંદ કરે છે અને સાલોક્ય, સામીપ્ય, સારુપ્ય તથા સાયુજ્ય-મુક્તિ પ્રાપ્ત કરે છે. આ પ્રકારની મુક્તિને ક્રમમુક્તિ કહેવામાં આવે છે. જે ભક્ત આ ક્રમમુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે બ્રહ્મલોકમાં જાય છે અને મહાપ્રલય સુધી બ્રહ્મા પાસે રહે છે અને પછી ઇશ્વર સાથે જ નિર્ગુણ બ્રહ્મમાં લીન થઈ જાય છે.

(૪) જ્ઞાનયોગ –

જ્ઞાનયોગનો સાધક મુક્તિના ચાર સાધનો વિવેક, વૈરાગ્ય, ષટ્સંપત્તિ (શમ, દમ, તિતિક્ષા, ઉપરતિ, શ્રદ્ધા, સમાધાન) અને મુમુક્ષુત્વમાં વધારો કરે છે. પછી તે શાસ્ત્રો સાંભળે છે, પછી મનન કરે છે અને અંતે નિદિધ્યાસન કરે છે. તે પ્રણવ (ઓમ્કાર) તથા જીવ અને બ્રહ્મની એક્તાનું

પ્રતિપાદન કરનાર વાક્ય 'तत्त्वमसि' ના સાચા અર્થનું ધ્યાન કરે છે. આ સાધનને આંતરિક સાધન કહેવામાં આવે છે. ત્યારે તેને આત્મ-સાક્ષાત્કાર અથવા બ્રહ્મનો અનુભવ થાય છે. શરૂઆતમાં તેને સવિકલ્પ શ્રેણીની શબ્દાનુવિદ્ધ અને દૃશ્યાનુવિદ્ધ સમાધિ થાય છે પછી અદ્વૈતભાવનારૂપ (વૃત્તિ રહિત) સમાધિમાં પ્રવેશ કરે છે અને અંતે અદ્વૈતવસ્થાનરૂપ (વૃત્તિરહિત) સમાધિ પ્રાપ્ત કરે છે. જ્ઞાનયોગની સાત ભૂમિકાઓ છે, જેના પર સાધક ધીમે ધીમે આગળ વધે છે. તેના નામ છે શુભેચ્છા, સુવિચાર, તનુમાનસી, સત્વાપત્તિ, અસંસક્તિ, પદાર્થભાવની અને તુરીય. જ્ઞાની વ્યક્તિ સદ્યોમુક્તિ અથવા આત્યંન્તિક પ્રલયને પ્રાપ્ત કરે છે. તે કોઇ ચોક્કસ દુનિયામાં જતો નથી. તેના પ્રાણોનું ઉત્ક્રમણ થતું નથી. સ્થૂળ શરીરનું પતન થશે અને તે બ્રહ્મમાં લીન થઈ જશે.

ભક્ત અને જ્ઞાનીની સરખામણી -

જ્ઞાનયોગી આ દુસ્તર ભવસાગરને તરીને પાર કરે છે. ભક્તિયોગી ભક્તિરૂપ નૌકા પર સવાર થઈને પાર કરે છે. જ્ઞાની આત્મનિર્ભરતા અને આત્મવિશ્વાસ પર આધાર રાખીને જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે. ભક્ત આત્મસમર્પણ દ્વારા ભગવાનનો સાક્ષાત્કાર કરે છે. જ્ઞાની પોતાના સાચા સ્વરૂપને ઓળખીને પોતાના અહંકારને વિસ્તૃત કરે છે. ભક્ત પોતાને ભગવાનને સમર્પિત કરે છે અને તેમની સમક્ષ નમ્ર બને છે. ભક્ત ખાંડનો સ્વાદ ચાખવા માગે છે. જ્ઞાની ખાંડ બનવા માગે છે. ભક્ત ધીમે ધીમે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરે છે. જ્ઞાની તરત જ મુક્તિ પ્રાપ્ત કરે છે. બિલાડીના બચ્ચાની જેમ ભક્ત ભગવાનની મદદની રાહ જુએ છે. જ્ઞાની વાંદરાના બચ્ચાની જેમ તેની માતાના સ્તનને મજબૂત રીતે વળગી રહે છે.

જ્ઞાની અને રાજયોગીની સરખામણી -

જ્ઞાની માણસ ચાલતા-ફરતા, ખાતા-પીતા અને વાત કરતી વખતે પણ પોતાની આધ્યાત્મિક સાધનાનો અભ્યાસ કરી શકે છે. તેને એકાંત રૂમમાં આસન પર બેસવાની જરૂર નથી. રાજયોગીને અભ્યાસ માટે આસન અને અલગ સ્થાન બન્નેની જરૂર હોય છે. જ્ઞાની માણસ હંમેશા સમાધિ (સહજ અવસ્થા) ની સ્થિતિમાં હોય છે. તેની નિત્યદ્રષ્ટિ હોવાથી, માયામાં ફસાઈ શકતો નથી. જ્ઞાની માટે 'સમાધિ' અને 'વ્યુત્થાન' ની કોઇ સ્થિતિ હોતી નથી. પરંતુ જ્યારે યોગી સમાધિમાંથી નીચે ઉતરે છે ત્યારે માયા ફરી એક વાર તેને ઘેરી લે છે. જેમ આપણે બોટલને ઢાંકણથી બંધ કરીએ છીએ, તેમ રાજયોગી, પોતાના પ્રયત્નો દ્વારા, મનની બોટલને બંધ કરી દે છે, જેનાથી તેની અંદર વિચારોનો પ્રવાહ બંધ થઈ જાય છે. બીજા શબ્દોમાં કહીએ તો તે મનના પાત્રને સંપૂર્ણપણે ખાલી કરી દે છે. જ્ઞાની આ રીતે પોતાના વિચારોને રોકતો નથી, તે તેમના સાક્ષી બને છે. તે પોતાના સાત્વિક અંતરાત્મામાંથી બ્રહ્મ જેવા વિચારો ઉત્પન્ન કરે છે. જ્ઞાની પોતાના સારા ઇરાદાઓ દ્વારા સિદ્ધિઓ પ્રગટ કરે છે. રાજયોગીનો અભ્યાસ મનથી શરૂ થાય છે. જ્ઞાનીનો પોતાનો અભ્યાસ બુદ્ધિ અને ઇચ્છાશક્તિ પર આધારિત છે.

હઠયોગી અને રાજયોગીની સરખામણી -

હઠયોગનો સંબંધ સ્થૂળ શરીર અને પ્રાણવાયુના નિયંત્રણ સાથે છે. રાજયોગનો સબંધ મન સાથે છે. રાજયોગ અને હઠયોગ એકબીજા પર આધારિત છે. તેઓ એકબીજાના આવશ્યક અને સહાયક

અંગો છે. બન્નેના જ્ઞાન વિના, વ્યક્તિ સંપૂર્ણ યોગી બની શકતો નથી જ્યાં હઠયોગનો અભ્યાસ સમાપ્ત થાય છે, ત્યાંથી રાજયોગ શરૂ થાય છે. હઠયોગનો અભ્યાસ શરીર અને પ્રાણથી શરૂ થાય છે. રાજયોગનો અભ્યાસ મનથી શરૂ થાય છે. હઠયોગીઓ પ્રાણ અને અપાન વાયુઓને ભેગા કરે છે અને તેમને જુદા જુદા ચક્રોમાં લઈ જાય છે, ત્યારે તેમને સિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત થાય છે. રાજયોગીને ઉપરોક્ત સંયમ દ્વારા સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે.

ઉપસંહાર –

શાસ્ત્રો અનંત છે, શીખવા માટે ઘણી બધી બાબતો છે. સમય ખૂબ જ ઓછો છે, અને અવરોધો પુષ્કળ છે. તેથી માણસે ફક્ત સાર ગ્રહણ કરવો જોઇએ, જેમ હંસ પાણીમાં ભળેલા દૂધમાંથી ફક્ત દૂધ જ લે છે અને પાણી છોડી દે છે.

સંદર્ભસૂચિ –

૧. શ્રીમદ્ ભગવદ્ગીતા (૧૦/૧૦)
૨. શ્રીમદ્ ભગવદ્ગીતા (૪/૩૯)
૩. યોગસૂત્ર અને માર્કણ્ડેય પુરાણ
૪. તૈત્તિરીય આરણ્યક (૧/૨૫)

સંદર્ભ ગ્રંથ -

૧. શ્રીમદ્ ભગવદ્ગીતા
સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર, અમદાવાદ.
૨. યોગસૂત્ર
સંસ્કૃત સાહિત્ય અકાદમી, ગાંધીનગર.
૩. તૈત્તિરીય આરણ્યક
चौखम्बा पब्लीकेशन, वाराणसी.
૪. कल्याण (योगांक)
गीता प्रेस, गोरखपुर

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 223-225
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

अमृतलाल वेगड़ के यात्रा-वृत्तांतों में 'प्रकृति चित्रण' के परिप्रेक्ष्य में

बबिता,
शोधार्थी,
हिन्दी अध्ययनशाला, सम्राट विक्रमादित्य विश्व विद्यालय उज्जैन,

अमृतलाल वेगड़ हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध यात्रा- वृत्तांतकार हैं। उन्होंने नर्मदा पद यात्रा के दौरान प्रकृति के विभिन्न पहलुओं को नजदीक से देखा और नर्मदा के सौंदर्य को अपनी लेखनी से शब्दों में संजोकर रखा। नर्मदा का प्राकृतिक सौंदर्य और उसका स्नेहमयी आँचल सिर्फ पशु-पक्षियों और जानवरों को निवास एवं शांति प्रदान नहीं करता अपितु , मनुष्य को भी अपने अनुपम सौंदर्य से आकर्षित करता है। मनुष्य जब अपनी जिंदगी से परेशान होकर प्रकृति की गोद में शरण लेता है, वही प्रकृति उसे मां के आँचल की तरह स्नेह एवं शांति देती है।

'डॉ.अनिल 'के शब्दों में कहें तो "प्रकृति कहीं यात्री की थकान उतार कर उसे स्फूर्ति एवं सबल प्रदान करती है, तो कहीं उसकी मोहक छवि उसे अपनी ओर बरबस खींचती है। मन व परिवेश की अवस्था के कारण कहीं उसके हृदय में रोमांस और खुशी जागृत करती है, तो कहीं उसे कालानुसार प्रकृति भूतही पिशाचनी व राक्षसी रुप में भयानक दिखाई पड़ती है। यात्रा करने वाले को कहीं उसमें रहस्यात्मकता नजर आती है तो कहीं प्रकृति से शिक्षाप्रद प्रेरणा मिलती है।"

लेखक ने नर्मदा के विभिन्न रुपों की जो छवि प्रकट की है,वह अत्यंत दुर्लभ है। नर्मदा भी लेखक की तरह यात्री ही है,वह जन्म लेते ही यात्रा पर निकल पड़ती है। और अनवरत बिना थके चलती रहती है। जब सारे चराचर प्राणी यात्रा पूरी कर अपनी थकान मिटाने हैं,तब भी नर्मदा चरैवेति चरैवेति अर्थात अपने पथ पर चलते रहो, चलते रहो इसी संकल्प के साथ अविराम चल रही है।

"नदी है जन्मजात यात्री। जन्म लेते ही चल पड़ती है। और एक बार जो चली, तो एक क्षण के लिए भी रुकती नहीं। धरती जब गहरी नींद में सोई रहती है,तब भी वह अबाध गति से चलती रहती है - दिन और रात,रात और दिन। थकना या रूकना तो वह जानती ही नहीं। बस,चलती रहती है अविराम। चरैवेति चरैवेति। यही उसका व्रत है, यही उसका जीवन संदेश है।"

परोपकार प्रकृति का प्रमुख गुण है। प्रकृति सिर्फ देती है। अपने लिए मांगती नहीं,चाहे आक्सीजन हो, पानी हो, हवा हो या फिर कन्दमूल फल,जिस पर पृथ्वी के सभी प्राणी निर्भर हैं। इसीलिए लेखक सम्मान से पीपल और सागौन को भाई कहकर सम्बोधित करते हैं, क्योंकि भाई हमारे रक्षक होते हैं। सम्पन्नता हो या विपन्नता अपना स्नेहमयी आशीर्वाद हमेशा रखते हैं।और प्रकृति भी इसी संबंध का निर्वहन करती है। "भाई पीपल भाई सागौन,गरमी के वार तुम अपने ऊपर लेते हो। तुम्हारी विपन्नता के पीछे तुम्हारी पर दुख कातरता है। तुम्हारी विराट नग्नता के पीछे

तुम्हारा आत्मदान है।अन्य पेड़ों के लिए ममता भरा आशीर्वाद है।" प्रकृति की यही उदारता लेखक को अपनी तरफ खींचती है।

समुद्र यात्रा पर निकलना ऐसा रोमांस भरा क्षण था, इसलिए अमृतलाल वेगड़ ने समुद्र यात्रा के समय प्रकृति के क्षण-क्षण बदलते स्वरूप को व्यक्त करते हैं। प्रकृति का स्वरूप कभी स्थिर नहीं रहता। उसमें प्रत्येक क्षण परिवर्तन होता रहता है,भोर के समय शीतल सुगन्धित पवन रक्त में ऊर्जा का संचार कर देती है, तो समुद्र का किनारा और उसमें उठती तेज लहरें समुद्र तट को और भी सुशोभित कर देते हैं। एक ओर रात्रिकालीन तारे धीरे-धीरे विदा लेते हैं तो दूसरी ओर पूरब में समुद्र के गर्भ से सूरज का ललछौहा गोला अपनी सम्पूर्ण किरणें पृथ्वी पर बिखरे देता है। " भोर वेला में समुद्र की गोद में होना पावन लग रहा है। स्वच्छ शीतल पवन रक्त में उत्साह भर रहा है। समुद्र का सौंदर्य और उसकी शान्ति मेरे हृदय में आ विराजती है। हृदय अपूर्व आनन्द से भर जाता है। तारे धीरे-धीरे विदा हो जाते हैं। और पूरब के आकाश में उजाला भरने लगता है। देखते -देखत समुद्र के गर्भ से सूरज का ललछौहा गोला निकलता है और अपने मोरपंख फैला देता है।"

यात्रा वृत्तांतकार यात्रा पर निकलना सहज कार्य नहीं है। यात्रा के दौरान अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है। नदी, पहाड़,घने जंगल, चट्टानों को पार कर ही यात्री अपने प्रिय स्थान पर पहुंचता है। लेखक यात्रा के समय कड़ी धूप में चलकर परेशान हो जाता है,किन्तु आकाश में बादल आ जाने से कुछ सुकून मिलता है, जैसे ही वह पास के गांव में पहुंचते हैं तो वर्षा शुरू हो जाती है और पूरा गांव कीचड़ और पानी से भर जाता है। मजबूत होकर लेखक को रात्रि उसी गांव में बितानी पड़ी। "पर आज आकाश में बादल थे पथरकुचा तक पहुंचते -पहुंचते आकाश बादलों से घिर गया।..... भोजन करके चले ही थे कि तेज वर्षा के कारण भागकर गांव में शरण लेनी पड़ी। थोड़ी देर की वर्षा में इतना कीचड़ हो गया कि चलना मुश्किल हो गया। इसीलिए रात वहीं रह गये।"

लेखक ने प्रकृति का मानवीकरण सुन्दर ढंग से किया है कभी वह जीवन दायिनी नर्मदा को शिल्पकार बना देता है तो कभी भोला-भाला बालक,जो मेहमान के आने पर कुछ समय के लिए अपनी शैतानियां बंद भोला-भाला बालक बने रहने का का नाटक करता है, लेखक नर्मदा को शैतान बालक इस लिए कहता है,कि नर्मदा का उदगम मैदानी भाग से होता है। अमरकंटक का पहाड़ आधा निकल जाने पर पचहत्तर किलोमीटर लम्बा डिंडौरी का मैदान पड़ता है। जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि नर्मदा का मानो पहाड़ों से कोई वास्ता ही नहीं है।वह सीधी-साधी अपने रास्ते चली जा रही हैं भोले भाले बालक की तरह। किंतु डिंडौरी से पहाड़ों की भूल-भुलैया का आरम्भ होता है। छोटे- बड़े पहाड़ों के बीच नर्मदा का कभी दाएं मुड़ना और कभी बाएं मुड़ना, झाड़ी दुर्गम मार्ग आदि में उछल-कूद करना बिल्कुल शैतान बालक की तरह हो जाती हैं। " नर्मदा पहाड़ी नदी है,पर आरम्भ वह मैदान से करती है। अमरकंटक का पहाड़ वह आधे दिन में उतर जाती है। फिर शुरू होता है प्रायः पचहत्तर किलोमीटर लंबा डिंडौरी तक का मैदान। नर्मदा को मानो पहाड़ों से कोई सरोकार ही न हो पर वह तो किसी शैतान बालक के मेहमान के आगे थोड़ी देर के लिए भोला-भाला बनकर बैठने जैसा है। डिंडौरी से पहाड़ों की भूल-भुलैया शुरू होती है।..... नर्मदा को कभी दाएं तो कभी बाएं मुड़ने को मजबूत करते हैं। इसलिए डिंडौरी और मंडला के बीच जितने घुमाव -फिराव हैं।उतने शूलपाण की झाड़ी को छोड़कर और कहीं नहीं।...नर्मदा का मानो यहां बालकांड पूरा होता है और सुन्दरकांड शुरू होता है।"

प्रकृति की खूबसूरती निहारना हो तो पैदल यात्रा करना,रात्रि में खुले आसमान के नीचे बैठकर तारों को घंटों निहारना, चांद पर बादलों का चढ़ना-उतरना, उसके साथ अठखेलियां करना,नदी के तट पर बैठ कर घंटों नदी की धारा निहारना,भोर के समय पक्षियों की चहचहाहट सुनना इत्यादि प्रकृति की सुन्दरता है। तो बरबस मनुष्य को अपनी तरफ आकर्षित करता है। लेखक नर्मदा की शोभा देखने जाते हैं,तो उन्हें पानी रहित नर्मदा खुली किताब की तरह की तरह दिखाई देती हैं जिसके किसी भी कोने को आसानी से पढ़ा जा सकता है। नर्मदा ने अपनी वेगवती धारा से

चट्टानों को काटा और तराशा है। प्रकृति के किसी भी कण को देखना हो तो खुली किताब की तरह देखना चाहिए जैसे बिना चंद्रमा के तारों को देखना, पेड़ के गठन को समझना हो तो पतझड़ के समय निरखना आदि। "पानी के न रहने से एक फायदा था -नदी का पाट खुली किताब की तरह सामने था। वेगवती धाराओं ने चट्टानों को कैसा काटा व तराशा था.... तारों की शोभा हम तभी देख सकते हैं,जब चांद न हो। पेड़ के गठन को तभी देख सकते हैं,जब पतझड़ हो। आज़ हमें यही मौका मिला था। पानी ने चट्टानों को तराशा तो था ही।"

लेखक ने एक तरफ प्रकृति की सुकुमारत का चित्रण किया है तो दूसरी तरफ उसके भयावह रूप को भी चित्रित किया है। गर्मी के मौसम में प्रकृति का रूप बदल जाता है। सूर्य आग के गोले का रूप धारण कर लेता है और हवा लूं का रूप सारे चराचर प्राणी को गर्मी से त्रस्त कर देती है। "आज पहला दिन था। पहले दिन को सबसे भारी होना ही था। सूरज आग उगल रहा था। हवा दमघोंटू थी।प्यास के कारण बुरा हाल था। दूर तक फैले सूखे खेत लूं के झोंके भेज रहे थे।"

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अमृतलाल वेगड़, सौंदर्य की नदी नर्मदा, मध्यप्रदेश ग्रन्थ, अकादमी, भोपाल, दशम संस्करण
2. वही पृ.176
3. वही पृ.168
4. वही पृ.48
5. वही पृ.50
6. वही पृ.59
7. अमृतलाल वेगड़, अमृतस्य नर्मदा, मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल प्रथम, द्वितीय संस्करण
8. वही पृ.59
9. डॉ.अनिल कुमार, स्वातंत्र्योत्तर यात्रा-साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन, हिंदी बुक सेंटर, प्रथम संस्करण, 2007
10. पृ.5

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor: 8.642 March 2026 Page No. : 226-231
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Between Tradition and Exploitation: Historical Origins, Colonial Impact, and Socio-Cultural Practices of the Bedia Community in Central India

Abhya Singh
Ph.D Scholar (JRF),
Visva-Bharati University

Abstract
The Bedia community of central and western India, also known as Beria, Bedni, or Berni, occupies an uneasy place in the social history of the subcontinent. They are at once the bearers of a vibrant performance tradition and the subjects of one of the more troubling forms of hereditary exploitation documented in India. This article traces how that contradiction came to be. It draws on the ethnographic record of R.V. Russell, the socio-historical scholarship of Rabindra K. Jain on medieval Bundelkhand, the contemporary analyses of Joseph Anthony Gathia and Neha Rajput, Meena Radhakrishna's definitive study of the Criminal Tribes Act, and Anuja Agrawal's anthropological fieldwork on Bedia kinship and patriarchy, to argue that the community's present condition cannot be understood without recovering what was lost, a pre-colonial social world in which Berni women occupied a ritualised, if unconventional, social position, and in which performance was inseparable from community dignity. British colonial policies, particularly the Criminal Tribes Act and the destruction of zamindari patronage, shattered that world and, as Radhakrishna's research reveals, also erased the community's own memory of who they had been before. What replaced it was not simply poverty but a systematic reorganisation of the Bedia's options that left commercial sex as one of the few viable routes to survival. The article pays particular attention to the Rai dance as a living cultural form that holds both the memory of an older dignity and the marks of its degradation.

Keywords: Bedia community, Berni, Rai dance, Criminal Tribes Act, colonial India, hereditary prostitution, Bundelkhand.

Introduction

There is a familiar tendency, when writing about the Bedia community of central India, to begin with what appears as the "problem"—prostitution, criminality, poverty—and then to work retrospectively in search of its causes. This article deliberately resists that approach. To start from the "problem" is already to accept a particular framing: one that casts the present condition of the Bedia as the inevitable culmination of a historical trajectory, rather than as the consequence of

specific, identifiable decisions and transformations. Such a view obscures more than it reveals. The history, in fact, is both more complex and more analytically compelling.

The Bedia, known also as Beria, and in Bundelkhand as Bedni or Berni, were, before colonialism reshaped the social landscape of the subcontinent, ritual performers. They sang, danced, told stories from the Mahabharata and Ramayana, and marked the auspicious occasions of the communities among whom they moved. Their relationship with the elites who patronised them was exploitative in its own ways, but it was also structured by recognisable norms of obligation and reciprocity. The Berni women of Bundelkhand, as Jain's historical work makes clear, occupied a position that was ritualised rather than merely transactional. That position was not a comfortable one by modern standards, but it was a position that carried social meaning, and it was governed by rules.

What happened to the Bedia between the mid-nineteenth century and the present is not simply a story of tradition persisting into modernity. It is a story of a particular social arrangement being dismantled by colonial policy, stripped of the protections and meanings that had made it coherent, and refashioned into something far cruder, a hereditary prostitution sustained by economic marginalisation, middleman exploitation, and the manipulation of cultural memory.

Who Are the Bedia? Origins and the Problem of Identity

The question of where the Bedia come from does not have a clear answer, and the various proposed answers reveal much about the people asking than about the community itself. Russell, writing in 1916 from within the administrative and intellectual frameworks of the colonial state, describes the Beria as a nomadic caste closely related to the Sansias, tracing both groups to two brothers from the Bharatpur territory — Sains Mul, from whom the Sansias descend, and Mullanur, the ancestor of the Berias or Kolhatis. He connects them, with some admiration and some condescension, to the Gypsies of Europe: light, agile, sharp-featured, and noted by Babu Rajendra Lal Mitra for the unusual symmetry of their limbs.

But within the community itself, a different story circulates. Many Bedia families claim Rajput descent, and they adopt Rajput surnames to press the point. The version that seems most plausible to later scholars is that the Bedia were originally court performers and retainers in the Rajput kingdoms of central India, and that the collapse of those kingdoms under Colonial pressure left them stranded without patronage or protection. Bereft of the social structures that had sustained them, they gradually became associated with vagrancy, and eventually with the kinds of activity such as theft, begging, itinerant performance, and eventually prostitution, that colonial administrators would later treat as proof of hereditary criminality.

The Kolhatis, Russell notes, belong mainly to the Deccan and are a branch of the Berias named after the long pole used in their acrobatic performances. The community known as Bediya in Bundelkhand goes by several other names, Banchhada, Bachhda, Sansi, Nat, a proliferation that reflects both the dispersal of related groups across central India and the instability of caste identities in nomadic populations. Rajput's more recent ethnographic work notes that numerically, the Bedia are not a large community, but their presence ramifies across the socio-economic life of the rural areas they inhabit in ways that simple headcounts do not capture.

The Bernis in Medieval Bundelkhand: Ritual Status and Social Recognition

Perhaps the most historically significant and underappreciated aspect of the community’s past is the position that Berni women occupied in medieval Bundelkhand, a position that Jain's historical scholarship has done more than any other work to recover. To describe the Bernis simply as prostitutes is to import a modern category into a social world that organised sexual and gender relations by quite different rules. Jain argues that in the medieval period, the Bernis functioned as

something closer to ritual prostitutes or public brides, women whose sexual roles were not merely tolerated but institutionalised, embedded in ceremony, and governed by recognisable social obligations.

Two features of this arrangement deserve particular attention. The first is that children born to Berni women were given the name of their father, a practice that is easy to overlook but that carries considerable social weight. Patrilineal naming is, in most Indian social contexts, a marker of legitimate connection: it acknowledges the child as belonging to a recognised social network, with the claims and protections that membership implies. For the children of Berni women to carry their father's name was for the community to acknowledge, however tacitly, that these relationships had a status beyond pure commerce.

The second feature is the custom of ritual marriage with the man who first slept with the Berni, a ceremony that ritualised her entry into her social role and gave it a structure that pure transactionality would not have required. These were not the practices of a community considered simply disposable. They were the practices of a community whose role, however marginal and however subject to the power of their patrons, was recognised as a role, something with social meaning and social rules around it.

The Colonial Rupture: Criminalisation and the Destruction of Livelihood

The British colonial state was not indifferent to the Bedia. It was deeply interested in them, but in the manner of a government that has decided, before investigation, what kind of people it is dealing with. The logic that produced the Criminal Tribes Act of 1871 was not empirical but administrative: certain communities were itinerant, certain itinerant communities were associated with crime, therefore, those communities must be criminally disposed by nature. Meena Radhakrishna, in her foundational study Dishonoured by History: Criminal Tribes and British Colonial Policy (2001), argues that this was not even a genetic claim about hereditary criminality so much as an occupational one — colonial interventions had already destroyed many traditional livelihoods, and the British, well aware of the mass unemployment they had created, concluded that crime was the only thing left for these communities to do. The reasoning was circular and self-serving, but it had the force of law behind it.

For the Bedia, the consequences were compounding. Their participation in the 1857 uprising against British rule had already marked them as politically suspect in colonial eyes. Gathia notes that the Bedia had supplied food, intelligence, and arms to the insurgents, and that after 1857, the British treated this as confirmation of an inherent lawlessness rather than as political agency. The Criminal Tribes Act simply formalised that suspicion into law. Under its provisions, as Radhakrishna documents, the government could deport members to any distance from their homes, employ them in any form of labour, and punish with fine and imprisonment those who refused to comply or attempted to leave. Crucially, these powers applied not to convicted criminals but to all members of a designated group, men, women, and children alike. Unlike an ordinary criminal conviction, there was no concept of release.

The land settlement system imposed by the British Raj delivered a separate but equally devastating blow. The Bedia had never been landowners in the conventional sense; their economy ran on movement and patronage, not on agriculture. The new settlement system, which organised revenue collection around fixed village boundaries and property registers, had no place for them. They could not own land in revenue villages, could not till fields, and, under the provisions of the Criminal Tribes Act, could not stay overnight in any village without reporting to the local police thana. The spatial freedom that had made their way of life possible was systematically withdrawn.

Russell's account from 1916 captures the community as the colonial order had already reshaped it. The Beria women he describes are professional prostitutes; the men are housebreakers. He notes that in a Beria colony of sixty families in Jubbulpore (now Jabalpur), only eight weddings could be remembered over fifty years, marriage having been effectively displaced by an arrangement in which girls were reserved for prostitution, and men sought wives from outside the community. When a potential bridegroom was assessed, the question put to him was not about his character or his prospects but about how many thefts he had committed without detection. Russell reads this as evidence of hereditary criminality. It reads more plausibly as evidence of a community that had adapted, with bleak ingenuity, to the options that were left to it.

One of Radhakrishna's most arresting findings, though drawn from her case study of the Koravas of Madras rather than the Bediya of central India, has direct relevance here. Her archival research establishes that the communities subjected to the Criminal Tribes Act had, before colonial intervention, been functioning and honourable parts of sedentary society. Yet through sustained rupture and the imposition of a criminal identity from without, their members eventually lost memory of that earlier history. They came to share the widespread belief in their community's intrinsic, ancient criminality. The colonial project, in other words, was not merely economic or administrative; it was deeply psychological. It rewrote communities' understanding of themselves. Something very similar appears to have happened with the Bediya, where what was once a ritualised social role has been flattened, over generations, into a simple story of hereditary prostitution.

The Criminal Tribes Act was repealed after independence in 1952. These communities were formally denotified, their legal status as criminals erased. But denotification did not restore land, it did not revive patronage networks, and it did not dismantle the stigma that a century of criminal classification had built. The police manuals, Gathia notes with some bitterness, have not changed for these communities in free India.

Patronage, Decline, and the Making of the Sex Trade

If the Criminal Tribes Act was the colonial state's direct assault on the Bedia, the quieter destruction came through the abolition of zamindari after independence. The zamindars had been, for all their exploitation, the patrons without whom the Bedia's performance traditions could not function. They provided the occasions, weddings, festivals, and harvest celebrations, at which Bedia performers were engaged. When the zamindari system was dismantled, those occasions did not disappear, but the money and the prestige that had sustained professional performance largely did.

Radio and cinema completed what policy had begun. By the middle of the twentieth century, the demand for itinerant folk performers had collapsed across much of rural India. The market for what the Bedia had historically provided, live music, dancing, storytelling, had been captured by technologies that could deliver these things more cheaply and without the social complications of hosting a community of performers. Women who had previously made a living through performance found themselves without a livelihood, and the drift into commercial sex, which had always been adjacent to their work, became more systematic.

What is particularly important to understand, and what Gathia's analysis makes clear, is that poverty alone does not explain the persistence of hereditary prostitution in the Bedia community. Plenty of poor communities in India do not practice it. What sustains it, beyond the initial economic desperation, is the active work of middlemen who have an interest in keeping the practice going. These middlemen, often family members, connected to larger networks based in

cities, exploit the cultural resources available to them: the idea that this is what these women have always done, that it is their tradition, their destiny. They invoke a version of the past to foreclose the future.

The results, within the community, are visible in its internal social organisation, and this is where Anuja Agrawal's anthropological study Chaste Wives and Prostitute Sisters: Patriarchy and Prostitution among the Bedias of India (2007) provides the most detailed and uncomfortable account available. Agrawal, based at the Delhi School of Economics, conducted sustained fieldwork with Bedia communities and identified a pattern that Russell had observed in outline but not fully explained: a strict internal division between the women who prostitute and the women who do not. Only unmarried Bedia women, sisters and daughters of the household, engage in prostitution, and they do so to support their natal families. Married women who enter the household as wives are entirely exempt. Bedia men are not permitted to form liaisons, marital or otherwise, with the prostituting women of their own community. The wife, in Agrawal's framing, becomes a repository of female purity that compensates, within the community's own moral economy, for the compromised status of the sister. It is a system of extraordinary internal coherence, and one that makes visible how thoroughly patriarchal logic has been woven into what is often described simply as tradition.

Agrawal also attends to the community's own account of its identity. The Bedias, she observes, claim Rajput origin and invoke upper-caste norms of patriliny and hypergamy, the idea that their women's relationships with higher-caste men are not degrading but in some sense appropriate, even status-conferring. This claim is historically contested, as noted earlier, but its social function is not hard to read: it is a way of asserting dignity against a world that offers very little. The tragedy, of course, is that this very assertion, this insistence on upper-caste connection, also serves to legitimise the practice that makes those connections possible. The ideology of Rajput origin does not liberate Bedia women. It helps to keep them in place.

The Rai Dance: Memory, Dignity, and Contested Meaning

To speak only of prostitution when discussing the Bediya is to miss something important and to repeat, in a different register, the reductiveness that has always characterised outsiders' accounts of these communities. The Rai dance is not a footnote to their story. It is, for many within the community, the core of what it means to be Bediya.

The Rai is a folk dance particular to the Bediya of Bundelkhand and the surrounding regions of Madhya Pradesh. It is performed by women, particularly Bednis, who dance in circular formations to the accompaniment of the dholak, timki, mridanga, dhapala, and other instruments played by the men of the community. The movements are distinctive: thumki, the rhythmic undulation of the body; chakri, a spinning motion; girdi, wide circular sweeps; mor chaal, the slow, high-stepping gait of a peacock. The dancers wear bright, shiny clothes and keep half their faces veiled. The effect is, by most accounts, striking, amorous and ceremonial at once.

The name itself comes from the mustard seed, rai in Hindi, that was thrown into the fire torches used to light night-time performances in earlier times. As the night wore on and the torches threatened to dim, mustard seeds were cast into the flames to revive them. There is something poignant about that etymology: a dance named for the effort required to keep the light burning.

Rajput's ethnographic work emphasises that the Rai is not merely entertainment but carries genuine religious weight. It is believed that those who witness a Bedni performance receive divine blessings; no major auspicious occasion in rural Bundelkhand was traditionally considered complete without one.

Yet the Rai cannot be entirely separated from the other realities of Bedia life. Performance at elite households had always implied more than dancing; sexual availability was part of what was offered, or at least part of what was assumed. Over time, and particularly as the structured social norms around Bedia performance eroded, the distance between the dance and the sex trade narrowed. Today, the Rai functions simultaneously as a living heritage and as a point of entry for the middlemen who induct young women into prostitution. That is a deeply uncomfortable duality to sit with, but sitting with discomfort is, arguably, what this history requires.

Conclusion

What this article has tried to do, in tracing the history of the Bedia community in central and western India from the medieval period to the present, is to make visible the distance between where they started and where they have ended up, and to ask who and what is responsible for that distance. The Bernis of medieval Bundelkhand were not prostitutes in the modern commercial sense. They were women whose sexual and social roles were governed by recognisable norms, whose children bore their fathers' names, who were ritually married at the moment of their induction into their role. That is not a comfortable history, but it is a different history from the one that followed.

What followed was colonial criminalisation, the destruction of patronage, the collapse of the performance economy, and the filling of that vacuum by organised commercial sex. British policies began the process of pauperisation, as Gathia argues, and the post-independence state failed to reverse it. The middlemen who now profit from Bedia women's bodies did not create the conditions that made their work possible; they have certainly refined the mechanisms by which those conditions are perpetuated, including the cynical invocation of tradition to disguise what is, in practice, exploitation.

At the same time, the Bedia have not simply been destroyed. The Rai dance continues. There is a living culture here, one that has survived colonial stigmatisation, administrative neglect, and commercial exploitation. Any intervention that does not reckon with that, that sees only the prostitution and not the Bednis keeping the torches burning through the night, will miss what is actually at stake. More honest and sustained scholarship, and policy that takes history seriously, is the least the Bedia community is owed.

References

1. Agrawal, A. (2007). *Chaste wives and prostitute sisters: Patriarchy and prostitution among the Bedias of India*. Routledge India.
2. Gathia, J. A. (1999). *Child prostitution in India*. Concept Publishing Company.
3. Jain, R. K. (2002). *Between history and legend: Status and power in Bundelkhand*. Orient Blackswan.
4. Radhakrishna, M. (2001). *Dishonoured by history: Criminal tribes and British colonial policy*. Orient Longman.
5. Rajput, N. (2018). The traditional Rai dancers of Madhya Pradesh. *Proceedings of the Indian History Congress, 79*, 933–939. https://www.jstor.org/stable/26906334
6. Russell, R. V. (1916). *The tribes and castes of the Central Provinces of India*. Macmillan and Co., Limited.

Email- abhs763@gmail.com
Contact- 7042346780

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/1 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ राजू देसाई
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),
पीएम श्री उत्कृष्ट शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय खरगोन मध्य प्रदेश

for the paper titled

“भारतीय ज्ञान परंपरा में प्राचीनज्ञान का आधुनिकीकरण”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 11-16

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/2

https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

सुमन देवी

शोधार्थी,

हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, 124001

प्रो॰ पून चंद टंडन

शोध निर्देशक,

हिन्दी विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, 124001

for the paper titled

“वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में मीना अग्रवाल के साहित्य का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 17-19

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/3 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. राजेश कुमार शुक्ला
सहायक आचार्य,
(समाजशास्त्र विभाग)
श्री किशुन महाविद्यालय खेजुरी, बलिया (उत्तर प्रदेश)

for the paper titled

“नवीन शिक्षा नीति और सामाजिक न्याय : शिक्षा में समान अवसर और समावेशन की संभावनाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 20-23

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/4 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. राजनिधि सिंह
सह प्राध्यापक,
(ग्रह विज्ञान विभाग)
शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

for the paper titled

“खाद्य सुरक्षा जागरूकता और घरेलू स्तर पर खाद्य स्वच्छता व्यवहार का अध्ययन"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 24-27

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा
Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/5 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

पूजा

एम.ए. हिंदी (नेट उत्तीर्ण)

363(H-NO) SEC 20 HUDA KAITHAL

for the paper titled

आदशब्वाद - एक सुधारवादी दृष्टिकोण

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 28-30

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/6 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

प्रतिभा दुबे
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (मध्यप्रदेश) भारत - 486003
डॉ० ओम प्रकाश द्विवेदी
प्राचार्य,
यमुना प्रसाद शास्त्री महाविद्यालय सिरमौर, रीवा (मध्यप्रदेश) भारत - 486448

for the paper titled

भगवतीचरण वर्मा की कहानियों में लोकचेतना का स्वरूप

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 31-33

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/7 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Divya,

UGC NET (English)

House no. 15/327 Bhagat Singh Colony

Barnala Road Sirsa Haryana-125055

for the paper titled

Social Media Language and Its Impact on Modern English Communication

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 34-39

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा
Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/8 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. S.Madhurambika

Assistant Professor (SS) Dept. of Sanskrit

Ethiraj College for Women, Chennai

for the paper titled

Khurali–Martial Art in the light of Sahendravilasa

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 40-42

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/9 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० करन सिंह
सहा प्राध्यापक समाजशास्त्र
शास महाविद्यालय पिछोर जिला ग्वालियर म प्र

for the paper titled

“सहरिया जनजाति का प्रकृति प्रेम”

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 43-47

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/10 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. ज्योति पटेल
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),
प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय जिला -टीकमगढ (म.प्र.) -472001

for the paper titled

भारतीय ज्ञान परंपरा में हिन्दी साहित्य की भूमिका

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 48-50

9 772395 711007

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/11 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

राजेश समीर कचछप

शोधार्थी,

मानवशास्त्र विभाग सोना देवी विश्वविद्यालय, घाटशिला, पू. सिंहभूम

for the paper titled

पूर्वी सिंहभूम जिले के सबर आदिम जनजाति - एक मानवशास्त्रीय अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 51-56

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/12 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Karunarathne Rasika R A,
Research Scholar,
Department of Post Graduate Studies and Research in Sociology,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje.
ORCID 0000-0002-5681-2919

Praveena D,
Department of Postgraduate Studies and Research in Political Science,
Mangalore University, Mangalagangothri, Konaje
ORCID 0009-0002-9710-5572

for the paper titled

The Role and Relevance of Clinical Sociology in Contemporary Society

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 57-60

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/13 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

ડૉ. મનીષ પટેલ
તુલનાત્મક સાહિત્ય વિભાગ,
વીર નર્મદ દક્ષિણ ગુજરાત યુનિવર્સિટિ, સુરત

for the paper titled

બાબાસાહેબ આંબેડકરના વિચારોની આજના સમયમાં પ્રસંગિકતા.

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 61-63

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/14 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. शैलेषकुमार भरतसिंह झाला
अध्यापक सहायक,
तुलनात्मक साहित्य विभाग,
वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत

for the paper titled

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में युगबोध

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 64-67

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/15 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. रणजीत सिंह 'अशर्

लेखक / ब्लॉगर / व्याख्याता ,

अवंतिका रेसीडेन्सी, सोमवार पेठ, पुणे - 411011

for the paper titled

वणजारे: गुरु पंथ खालसा के अमर प्रहरी
(इतिहास, शहादत और परंपरा)

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 68-78

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/16 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ.मंजू

सह-प्राध्यापिका हिंदी विभाग,

इंदिरा प्रियदर्शनी शासकीय महिला महाविद्यालय नामपल्ली, हैदराबाद, तेलंगाना

for the paper titled

महादेवी वर्मा की काव्य-संवेदना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 79-81

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/17 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

परम सिंह बरडे

सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र)

वीर बलिदानी खाज्या नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेन्धवा, जिला बड़वानी (म.प्र.)

for the paper titled

आत्मनिभर् भारत : अवसर, चुनौतियाँ एवं नीतिगत पहल

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 82-84

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/18 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. जिनु जॉन

सहायक आचार्या, हिंदी विभाग,

मार अत्तनेशियस कॉलेज(आटोनोमस), कोतमंगलम, केरल - 686666

for the paper titled

'आप न बदलेंगे' एकांकी में मध्यवर्गीय गृहणी के पारिवारिक संघषर्और तनाव

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 85-87

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/19 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Dr. Anupama

Assistant Professor, Department of Hindi,

Mount Carmel College, Autonomous,

58, Palace Road, Abshot Layout, Vasanth Nagar, Bangalore-560001.

for the paper titled

कबीर के काव्य में सामाजिक विद्रोह और समन्वयवादी दृष्टि

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 88-93

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/20 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

ਸੋਨਾ ਸਿੰਘ

ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫ਼ੈਸਰ

ਪੋਸਟ-ਗ੍ਰੈਜੂਏਟ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ ਡੀ.ਏ.ਵੀ.ਕਾਲਜ,ਅਬੋਹਰ (ਫਾਜ਼ਿਲਕਾ)

for the paper titled

ਮਾਨਵੀ ਰਿਸ਼ਤਿਆਂ ਦੇ ਤਿੜਕਣ ਦਾ ਸਿਰਜਕ -ਕਿਰਪਾਲ ਕਜ਼ਾਕ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 94-98

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/21 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ.स्वालियाबेगम आर. कोप्पल
अतिथि प्रवक्ता हिंदी विभाग,
स्नातक विभाग,कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय ,विजयपुर

for the paper titled

नासिरा शमार् `कउपन्यासों में स्त्री :सत्ता , स्वायत्तता और संघषर्

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 99-102

Editor

9 772395 711007

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/22 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

गणेश नारायण शमार्
शोधार्थी,
सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, फागी, जयपुर।
डॉ. अदिति शमार्
शोध-निर्देशक,
सहायक आचार्य, भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

for the paper titled

श्रीनिंबाकर्तीथर्(सलेमाबाद) अजमेर के प्रमुख दशर्नीय स्थल

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 103-109

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/23 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

RADHARANI RAJAK

शोधार्थी,

DR. AJAY KUMAR

शोध निर्देशक (असिस्टेंट प्रोफेसर),

डिपार्टमेंट ऑफ संस्कृत

बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय

for the paper titled

भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन की महत्त्व

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 110-112

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/24 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० नकुल पाण्डेय
सहायक प्राध्यापक,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड ।

for the paper titled

पाणिनी व्याकरण में ध्वनि विज्ञान

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 113-116

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/25 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. राजकुमारी परिहार
अतिथि व्याख्याता (अर्थशास्त्र),
शासकीय स्नातक महाविद्यालय डभरा जिला-शक्ति (छ.ग.)

for the paper titled

आथिक् विकास एवं सतत विकास

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 117-122

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/26 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Parul Bordoloi

Independent Researcher,

Nagaon, Assam.

for the paper titled

Interwoven Destinies: Caste, Gender, and Hope in Masaan

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 123-126

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/27 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

ज्योतिका बशिष्ठ
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम, 781014

for the paper titled

मणिपुर में अन्याय के विरुद्ध खड़ी 'मइरापाइबी' (विशेष संदभर्: हिन्दी-अनूदित मणिपुरी कहानियाँ)

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 127-130

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/28 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Amisha Mishra

Research Scholar

Department of Sociology and Social Anthropology, Igntu, Amarkantak MP

for the paper titled

Modernity, "Ethnic Consolidation" and "Cultural reproduction": The Role of Bhumkas in strengthening Gond Tribal Community Identity in Contemporary Society.

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 131-134

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/29 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

स्वप्नाली आत्माराम सोनवणे
शोध छात्र,
प्रो.डॉ. संघप्रकाश मधुती दुड्डे
मार्गदर्शक,
हिंदी विभाग, संगमेश्वर कॉलेज सोलापुर(स्वायत्त)

for the paper titled

विवेकी राय के उपन्यासों में लोक संस्कृति का स्वरूप और सामाजिक संदभर्

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 135-137

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/30 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

पवन कुमार
शोधार्थी,
प्रो. (डॉ.) रमेश चन्द्रराय
शोध निर्देशक,
स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर,बिहार-812007

for the paper titled

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के दौर में मौलिक अधिकारों का बढ़ता उत्कषर्
व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच उभरता संघषर्

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 138-142

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/31 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. मो० हेदायतुल्लाह
राजनीति विज्ञान,
ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

for the paper titled

वैश्वीकरण के दौर में गाँधीवाद की प्रासंगिकता

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 143-147

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/32 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डा. मीनू तलवाड़
संस्कृत विभागाध्यक्षा,
हंसराज महिला महाविद्यालय, जालन्धर, पंजाब

for the paper titled

वैदिक संस्कृति में वनस्पति विज्ञान

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 148-150

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/33 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

प्रिंस गुप्ता
पी.एच.डी. शोधार्थी,
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

for the paper titled

ओमप्रकाश वाल्मीकि की रचना दृष्टि : अस्मिता की खोज तथा प्रतिरोध की अभिव्यक्ति

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 151-156

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/34 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. अमित कुमार

सहायक प्राध्यापक,

फातमा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, दुबलिया, काँके, राँची.

for the paper titled

झारखण्ड राज्य के माध्यमिक विद्यालयों में समावेशी शिक्षा के क्रियान्वयन की स्थिति: एक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 157-161

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/35 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Jatin

Net history,

Ignou

1274 Vpo Dahola, District – Jind

for the paper titled

एआई के दौर में एक इतिहासकार की सामाजिक भूमिका

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 162-165

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/36 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० विजयलक्ष्मी देवांगन

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान,

पं देवी प्रसाद चौबे शासकीय महाविद्यालय साजा जिला बेमेतरा छ.ग.

for the paper titled

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के संचालन में ई-गवर्नेंस की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 166-170

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/37 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

नेहा

पीएच-डी० शोधार्थी,

हिन्दी-विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ पिन-160014

for the paper titled

नासिरा शमार् `कउपन्यासों में स्त्री का मिवतित्र स्वरूप

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 171-175

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/38 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

राहुल कुमार
शोध छात्र,
हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग लखनऊ
विश्वविद्यालय ,लखनऊ उत्तर प्रदेश
डॉ॰ प्रशांत सिंह
सहायक आचार्य हिंदी विभाग,
(केन ग्रोअर्स नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज गोला,खीरी)

for the paper titled

आधुनिक हिंदी कहानियों में मध्यवर्गीय चेतना

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 176-180

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/39 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ. प्रशांत सिंह

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग

केन ग्रोअर्स नेहरू डिग्री कॉलेज गोला खीरी

for the paper titled

“आचायर्रामचन्द्रशुक्ल पूवर्हिंदी आलोचना में कबीर"

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 181-186

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/40 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

డా. పి. శర్వాణి
తెలుగు అధ్యాపకురాలు
మహారాజా స్వయంప్రతిపత్తి కళాశాల, విజయనగరం

for the paper titled

చిగురు నవలిక – సమీక్ష

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 187-189

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/41 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० प्रियंका सिंह
हिंदी अनुवादक
केंद्रीय विद्यालय संगठन, क्षेत्रीय कायाल्रय, रांची

for the paper titled

आधुनिक समाज और तीसरे जेंडर के जीवन की त्रासदी

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 190-195

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा
Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/42 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ॰ दीपमाला
असिस्टेंट प्रोफेसर ,
हिंदी विभाग, धर्म समाज कालेज, अलीगढ़, 202001

for the paper titled

विकसित होता समाज और नारी अस्मिता के प्रश्न

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 196-199

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/43 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Dr.Jisha M N

Assistant professor, Department of Hindi,

Mar Athanasius College (Autonomous) Kothamangalam Ernakulam,Kerala

for the paper titled

समकालीन हिंदी कविता में सांप्रदायिकता-प्रतिरोध: एक अध्ययन

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 200-202

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/44 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

ਸਵਿਤਾ ਰਾਣੀ

ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,ਪੋਸਟ-ਗ੍ਰੈਜੁਏਟ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ।

ਡੀ.ਏ.ਵੀ. ਕਾਲਜ, ਅਬੋਹਰ-152116(ਪੰਜਾਬ)।

for the paper titled

ਸੰਤੋਖ ਧੀਰ ਰਚਿਤ ਕਹਾਣੀ 'ਸਾਂਝੀ ਕੰਧ': ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਸਦੰਰਭ ਅਤੇ ਸਮਕਾਲ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 203-207

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/45 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ.अनीश के.एन.,
सह आचार्य, भारतीय भाषा केंद्र,
स्कूल ऑफ लैंग्वेज, लिटरेचर एंड कल्चर स्टडीज़
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली - 110067,

for the paper titled

दोहरा अभिशाप में दलित जीवन की त्रासदी

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 208-212

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/46 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

डॉ० कुमुद कुमार पाण्डेय

अथिति अध्यापक-संस्कृत,

महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उ० प्र०

for the paper titled

पुराण साहित्य में अवसाद निवारण के उपाय

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 213-216

9 772395 711007

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/47 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

કંચનબહેન કાંતિભાઇ બારીઆ
શોધાર્થી (સંસ્કૃત)
શ્રી ગોવિંદ ગુરૂ યુનિવર્સિટી, ગોધરા
સંલગ્ન
શ્રી એમ સી. રાઠવા આર્ટ્સ કોલેજ, પાવી જેતપુર

for the paper titled

ચતુર્વિધ યોગ અને તેનું ફળ

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 217-222

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/48 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

बबिता,
शोधार्थी,
हिन्दी अध्ययनशाला, सम्राट विक्रमादित्य विश्व विद्यालय उज्जैन,

for the paper titled

अमृतलाल वेगड़ के यात्रा-वृत्तांतों में 'प्रकृति चित्रण' के परिप्रेक्ष्य मे

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115
March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 223-225

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

ISSN:2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

Impact Factor : 8.642

INTERNATIONAL PEER REVIEWED REFERED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Email : grsbohal@gmail.com Website : www.bohalshodhmanjusha.com

Ref. No. March 2026/49 https://doi.org/10.5281/zenodo.18581839

Certificate of Publication

is awarded to

Abhya Singh

Ph.D Scholar (JRF),

Visva-Bharati University

for the paper titled

Between Tradition and Exploitation: Historical Origins, Colonial Impact, and Socio-Cultural Practices of the Bedia Community in Central India

Publised in Bohal Shodh Manjusha ISSN:2395-7115

March 2026, Vol. 23, Issue-3, Page No. 226-231

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

9 772395 711007

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152